सम्पादकीय वक्तव्य

श्रावकाचार-सग्रहका यह पचम भाग पाठकोके कर-कमलोमे उपस्थित करते हुए मुझे महान् हर्ष हो रहा है। ऐ० पन्नालाल दि० जैन सरस्वती भवनमे पदम कविकृत 'श्रावकाचार'की एक प्रति विद्यमान है, उसे देखकर और पढकर उसकी महत्ताने हृदयपर यह प्रभाव अकित किया कि इसका भी प्रकाशन हो जाना चाहिए। उसमे यत श्रावककी ५३ क्रियाओका वर्णन किया गया है अत प० किशनसिंह जी और प० दौलतरामजीके क्रियाकोषोको प्रस्तुत सग्रहमे सकलन करनेकी भावना उत्पन्न हुई और गत वर्ष इसी मईमे श्रद्धेय, परम पूज्य मुनि श्री १०८ समन्तभद्र जी महाराजके चरण-सान्निध्यमे कुम्भोज पहुचा। वहांपर सस्थाके मानद मत्री श्री वालचन्द्रजी देवचन्द्रजी शहा पहिलेसे ही उपस्थित थे। तथा श्री ब्र० प० माणिकचन्द्रजी चवरे कारजा, श्री ब्र० प० माणिकचन्द्रजी भिसीकर और श्री रायचन्द्रजीकी भक्त मण्डली भी मौजूद थी। उन सबके सामने मैंने उक्त तीनोका प्रकाशन श्रावकाचार-सग्रहके पांचवें भागके रूपमे करनेका प्रस्ताव रखा। सबके द्वारा समर्थन और अनुमोदन किये जानेपर सस्थाके मत्रीजीने प्रकाशनकी स्वीकृति दी और इस विषयमे जीवराज-ग्रन्थमालाके प्रधान-सम्पादक श्रीमान् प० कैलाशचन्द्रजी सिद्धान्त-शास्त्रीके साथ परामर्श करनेको कहा। यथा समय मैंने उनसे परामर्श किया और तदनुसार हिन्दी छन्दोवद्ध श्रावकाचारोका यह पांचवां भाग पाठकोके सामने उपस्थित है।

हिन्दी भाषामे रचित होनेसे उनका अर्थ देनेकी आवश्यकता प्रतीत नही हुई। पदम कवि-रचित श्रावकाचारका सम्पादन ऐ० सरस्वती भवनकी एक मात्र प्रतिके आधारपर हुआ है। प्रयत्न करनेपर भी अन्य स्थानसे दूसरी प्रति उपलब्ध नही हुई। शेष दोनो क्रियाकोषोका सम्पादन पूर्व-मुद्रित प्रतियोके आधारपर हुआ है और उसमे किशनसिंहजीके क्रियाकोषका सशोधन श्रीमान् सर सेठ भागचन्द्र जी सोनी अजमेरके निजी भडारकी हस्तलिखित प्रतिके आधारपर हुआ है। प० दौलतरामजीके क्रियाकोषका सशोधन ऐ० सरस्वती भवनकी हस्तलिखित प्रतिके आधार-पर हुआ है, अत हम उक्त सभीके आभारी हैं।

इस भागके शीघ्र प्रकाशनार्थ गतवर्ष नवम्बरमे मैं वाराणसी आया। एक मासके वाद ही मैं दमेसे वीमार पड गया और देश वापिस जाना पडा। दमेके शान्त होते ही हृदय-रोगसे पीडित गया और कुछ स्वस्थ होते ही पुन वाराणसी मार्चके प्रारम्भमे आया। कमजोरी अधिक होनेसे श्रीमान् प० फूलचन्द्रजी सिद्धान्तशास्त्री और महावीर प्रेसके मालिक प० वावूलालजी फागुल्ल एव अन्य वाराणसी-स्थित विद्वानोंने मुझे सर्व प्रकारसे सभाला और स्वास्थ्य-लाभमे सहायक वने। इसके लिए मैं उक्त सभी विद्वानोका वहुत आभारी हूँ।

सस्थाके मानद मत्री श्रीमान् सेठ वालचन्द्र देवचन्द्र शहा और ग्रन्थमालाके प्रधान सम्पादक श्रीमान् प० कैलाशचन्द्रजी सिद्धान्त शास्त्रीका आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होने पत्रोंके द्वारा एव मौखिक सत्परामर्श देकरके समय-समयपर मुझे अनुगृहीत किया है। वर्धमान मुद्रणालयने तत्प-रताके साथ इसका मुद्रण किया है इसके लिए मैं आप सबका आभारी हूं।

धवलश्रेष्ठी दुरमती हो, मदन मजूषा करी आम ।
धन जस भ्रष्ट थयो हो, सहे दुर्गति-वास, रे जीवडा ॥८१
अमृता महादेवी नामे हो, कुब्ज लपट कुनार ।
छट्ठी नरक भूमि उपनी हो, जसोधर कत मार, रे जीवडा ॥८२
ए आदें बहु नर नारी हो, जेणे शील न रक्ष ।
तेह दु ख सुवर्णवु हो, ससार दु ख तणा दोष, रे जीवडा ॥८३

वस्तु छन्द

शील पालो शील पालो, भविजन भविजन भावे करी ।
शील चिन्तामणि कामधेनु, शील कल्प वृक्ष अमूल्य ।
मनोहर सुर नर वर पद देई ने, अनुक्रम आपे मोक्ष निरभर ॥
जे नर नारी शील पालसी, टाले सर्व अतीचार । जिन सेवक पदमो कहे, धन धन्य ते अवतार ॥८४

अथ पचम अणुव्रत वर्णन । ढाल विणजारानी

चौथो कह्यो शीलव्रत, पाचमो व्रत हवे साभलो विणजारा रे ।
परिग्रह सज्ञानाम, थूल अणुव्रत ऊजलो, विणजारा रे ॥१
क्षेत्र वास्तु धन धान्य, द्विपद वली चतुष्पद, विणजारा रे ।
आसन शयन कुप्य भाड, आदि पद दश भेद, विणजारा रे ।।२
क्षेत्र करो मर्याद, हल भूमि सख्या लीजिये, विणजारा रे ।
हाट घर तणा वास, कोटि-कोटि सख्या कीजिये, विणजारा रे ॥३
धन सोवण रत्न रूप्य, अर्थ मर्यादा कीजिये, विणजारा रे ।
गोधूम चणका शालि, कोग कोदव आदें सक्षेपिये, विणजारा रे ॥४
दासी दास कर्मकारि, चौपद महिषी गोकुल, विणजारा रे ।
शकट सिंहासन रथ, जान जपान चकडोल, विणजारा रे ॥५
ढोल खाट पट पाटि, वस्त्र आभूषण नारीना, विणजारा रे ।
धातुतणा भाजन, क्रयाणा वस्तु-रक्षण, विणजारा रे ॥६
क्षेत्र आदि दस विध परिग्रह तणी सख्या करो, विणजारा रे ।
छाडि ममता मोह, निज मनें सतोष धरो, विणजारा रे ॥७
छोडो बहु आरंभ, आरभथी हिंसा घणी, विणजारा रे ।
हिंसा तृष्णाकारी पाप, तृष्णा पाप दुख खाणी, विणजारा रे ॥८
परिगह पाप नु मूल शूल-समो साले सदा, विणजारा रे ।
जिम जिम मिले बहुधन, तिम तिम लोभ वाधे तदा, विणजारा रे ॥९
लोभ ए दावानल वन, इंधन अधिको बले सही, विणजारा रे ।
तृष्णा तेल सचित अधिक पर्णे घणु तल फले, विणजारा रे ॥१०
लोभें करे सहु क्षोभ, लोभके हर्ने माने नही, विणजारा रे ।
लोभे बहु अवगुण, लोभे दु ख सदा सहे, विणजारा रे ॥११
सतोष पाणी पूर, लोभ अनल ते उछले, विणजारा रे ।
तृष्णा तजो पाप बीज, मन सुधे ते योग वो, विणजारा रे ॥१२

धन काजे सहे कष्ट, वन सागर दे समे फिरे, विणजारा रे।
वरषा शीत उष्ण काल, वात शीतलु अणुसरे, विणजारा रे ॥१३
धन काजे करे सेव, घोटक आगल सचरे, विणजारा रे।
मस्तक धरे बहुभार, धन काजे कष्ट घणु करे, विणजारा रे ॥१४
कष्टे मिले जो धन, तो दुर्जन राजा हरे, विणजारा रे।
जल अग्नि धन विघ्न, गोत्री धन इच्छा करे, विणजारा रे ॥१५
धन उपजता होय कष्ट, जो आव्यो तो कष्टे रहे, विणजारा रे।
कष्टें आव कष्ट देय जाय, धिग धिग रा धन कष्ट वहे, विणजारा रे ॥१६
मोटा करे मनोरथ, पुण्य विना ते किम फले, विणजारा रे।
उदय होय जो पुण्य, तेह सहिजे सहु मिले, विणजारा रे ॥१७
इम जाणी करो पुण्य, पुण्य नियम थी ऊपजे, विणजारा रे।
नियम करो सग सीम, सीमे सतोष ऊपजे, विणजारा रे ॥१८
नियम विना नही पुण्य, पुण्य विना सुक्ख नही, विणजारा रे।
नियम विना मन प्रसार, मन प्रसरे, पाप उपजे, विणजारा रे ॥१९
मन तृष्णा महापाप, सालसिक्थ ए माछलो, विणजारा रे।
मन तृष्णा करि तेह, नरकें गयो ते कसमलो, विणजारा रे ॥२०
करो मन गज सवर, मन गज गाढो बधीए, विणजारा रे।
परिग्रह-सख्या ते सीम, नियम-अकुश ते साधी ए, विणजारा रे ॥२१
मन मोकले महादुक्ख, छिन एकें त्रिभुवन फिरे, विणजारा रे।
पवन थी मन चचल, सबलि सघले ते सवरे, विणजारा रे ॥२२
परिग्रह तणा मनोरथ, मन प्रसर पाप कारण, विणजारा रे।
अणमिलता चिंते जेह, तेह कीजे निवारण, विणजारा रे ॥२३
जिम किम रहे निज ठाम, त्याम पणे मल सवरो, विणजारा रे।
बुद्धि वले धरि सतोष, रोष राग ते परिहरो, विणजारा रे ॥२४
नियम विना नर-नारि, असज्ञी पशुसम जाणिये, विणजरा रे।
तेह भणी सग सीम, यथाशक्ति तिम आणिये, विणजारा रे ॥२५
परिग्रह सख्य अणव्रत, थूल पणें पचमु ँ कही, विणजारा रे।
छोडो पच व्यतीपात तेह भेद सुणो सही, विणजारा रे ॥२६
अतिवाहन पहिलो नाम, अतिसग्रह अतिविस्मय, विणजारा रे।
अति लोभ चोथो भेद, अति भारारोपण पचम, विणजारा रे ॥२७
अतिवाहन ते जोइ, वैल आदि पशु खेडे घणु, विणजारा रे।
नियम उलघी जेम यदि, अतिवाहन दूषण तेह तणु, विणजारा रे ॥२८
सग्रहे धान अत्यन्त, कुहि कीट पडे घणु विणजारा रे।
वेंचे नही अति लाभ, लोभे करी करे घणु, विणजारा रे ॥ २९
लेय वेंचे क्रयाणु, वस्तु सार मूल्य देई, विणजारा रे।
पछें करे विसवाद, तृष्णा पणें विस्मय लेई, विणजारा रे ॥३०

विणजी वस्तु अत्यन्त, लाभ लेय विक्रीय करी, विणजारा रे ।
पछे करे मन क्षोभ, वहुमूल्य ममता धरे, विणजारा रे ॥३१
सखर बेईल महिप, जीव जेता भार वहे, विणजारा रे ।
मान अधिक छाले भार, अतिभारा रोप दोप लहे विणजारा रे ॥३२
इणि परि पचे अतिचार, पचम व्रत, दोप तजो, विणजारा रे ।
परिग्रह सख्या अणुव्रत, पूण पणे निर्मल भजो, विणजारा रे ॥३३
जिम जिम कीजे सवर तिम तिम सन्तोप ऊपज, विणजारा रे ।
सन्तोषे होय पुण्य, पुण्यें धन सुख सम्पजे, विणजारा रे ॥३४
सग-सख्या शुभ नियम, पचम अणुव्रत किणे पाल्यो विणजारा रे ।
हवे कहु ते सम्वन्ध, जेणें व्रत अजुआ लीयो, विणजारा रे ॥३५
कुरुजागल इह देश, हस्तिनागनयर भलो, विणजारा रे ।
सोमप्रभ तसराय, कुरुवशी भूप गुण-निलो, विणजारा रे ॥३६॥
तस पुत्र जमनामा, सुलोचना नारी तेह तणी, विणजारा रे ।
भरततणो सेनापती, महिमा जसकीर्त्ति घणी, विणजारा रे ॥३७
वन्दे सह गुरु पाय, एक पत्नी व्रत लियो, विणजारा रे ।
सुलोचना एक नारि, अवर नारी-नियम कियो, विणजारा रे ॥३८
एक दिन जयकुमार, ऊपर ली भूमि वैठो रही, विणजारा रे ।
पासे सुलोचना नारि, पूरव भवकथा कही, विणजारा रे ॥३९
हिरण्यवर्मा भूपाल, प्रभावती नारी धणी, विणजारा रे ।
जातिस्मरण-प्रभाव, पहिला भव सम्वन्ध सुणी, विणजारा रे ॥४०
तव आवी विद्याचग, आकाशगामिनी आदे करी, विणजारा रे ।
साधी थी जे पेहले भव, पुण्य प्रभावें ते वरी, विणजारा रे ॥४१
विमान रचि विशाल, विद्याधर जात्रा गयो, विणजारा रे ।
साथे सुलोचना नारि, जयकुमार सन्तोप भयो, विणजारा रे ॥४२
मेरु आदि करी जात्र, कैलाश पर्वते आवीयो, विणजारा रे ।
चौवीस जिन हिम गेह, भरत भूपें जे भावीया, विणजारा रे ॥४३
पूजी वन्दि जिन पाय, राय-राणी गिरि-शिर गया, विणजारा रे ।
वन क्रीडा करे सार, जुजुआ दोई जव ते थया, विणजारा रे ॥४४
तिणसमय सौधमनाथ, साथ सभा माहे इम कहे, विणजारा रे ।
पुण्यवन्त जयकुमार, एक पत्नी नाम वहे, विणजारा रे ॥४५
तव रविप्रभ एक देव, परीक्षा करवाते सचर्यो, विणजारा रे ।
कीयो नारी शुभरूप, तिहु विल्यासती परिवर्या, विणजारा रे ॥४६
जिहा छै जयकुमार, तिहा आगल आवी ऊभो रही, विणजारा रे ।
हाव भाव विलास, हास्य करी विनती कही, विणजारा रे ॥४७
नेमी विद्याधर ईश, तरु नारी हु रूवडी, विणजारा रे ॥४८
निज कत इच्छा भाव, ते तजी हु इहा आवी, विणजारा रे ।

तुझ ऊपर धर्यो मोह, मुझ वाछा पूरो हवे, विणजारा रे ॥४९
जब सुणी जय बात, पात वज्र जाणें हुओ, विणजारा रे।
जय कहे सुणो तम्हे वात, भाव काइ कीजे जुठो, विणजारा रे ॥५०
तुर्ने कहीइ परनार, सुलोचना विण नियम मुज्झ, विणजारा रे।
सहोदरा होइ परनार, खप नही माह रे तुज्झ, विणजारा रे ॥५१
इम कही धरियो मौन, कायोत्सर्ग लेइ ध्यानें रह्यो, विणजारा रे।
निश्चल जैसो मेरु, धीर वीर गम्भीर कह्यो, विणजारा रे ॥५२
तब नारी तिणी वार, दुर्धर, उपसग करे, विणजारा रे।
देखाडे वहु शृङ्गार, रागचेष्टा विकार धरे, विणजारा रे ॥५३
निष्कम्प जाणिय मन्न, तब देव ते प्रगट थयो, विणजारा रे।
धन्य धन्य जयकुमार, सुधन्य-धन्य शील भयो, विणजारा रे ॥५४
इन्द्र प्रशसा तव कीध, सत्य सहाय तुझ निर्मलो, विणजारा रे।
आयी वस्त्र-आभरण, सुर पूजी गयो ऊजलो, विणजारा रे ॥५५
जय पामी जयकुमार, निज नारी सुधर आवीयो, विणजारा रे।
भोगवी राज भडार, सार वैंराग ते भावीयो, विणजारा रे ॥५६
भव भोग क्षण-भग, रग जिम मेघ बीजली, विणजारा रे।
अथिर आयु जिम वायु, काय यौवन जल अजली, विणजारा रे ॥५७
राजा थापी निजपुत्र, समोसरण आदि जिन वदिया, विणजारा रे।
छोडा परिग्रह भार, सजम धरि आनदिया, विणजारा रे ॥५८
ध्यान अध्ययन अभ्यास, तप वल कर्म निर्जरी, विणजारा रे।
पामी केवलज्ञान, जय मुनि मुक्ते गयावी, विणजारा रे ॥५९
जुओ जुओ नियम प्रभाव, एक पत्नी व्रत पालियो, विणजारा रे।
जय पामी सुर पूज्य, ससार दु ख वली टालियो, विणजारा रे ॥६०
इणि परे करी सग सीम, पचम अणुव्रत जे धरे, विणजारा रे।
पामी सोलमे स्वग, अनुक्रमे शिवते अनुसरे, विणजारा रे ॥६१॥
पाले नही जे व्रत्त, परिग्रह-ममता जे करें, विणजारा रे।
नियम विना होइ पाप, पापे दुर्गति सचरे, विणजारा रे ॥६२
लुब्धदत्त इक श्रेष्ठि, परिग्रह ममता करी घणी, विणजारा रे।
सचिय कूच नवनीत, अग्नि जल्यो ते तृष्णा घणी, विणजारा रे ॥६३
पाम्यो वहु दुर्ध्यान, मरण पामी दुगति गयो, विणजारा रे।
ममता पाप विपाक, सदा सहु दुखी भयो, विणजारा रे ॥६४

दोहा

सुभूमि चक्रवर्ती आठमा, वहु आरभ पमाय। लाभ तृष्णाफल लपट, सातम नरकि जाय ॥६५
नव नारायण नारद, चक्री प्रति वासुदव। वहु आरभ पाप आचरी, नरके पाम्या दुख हेव ॥६६
जे जे नरके जीव उपना, उपजे ह वतमान। वली उपजमे जे नारकी, ते पापारभ निदान ॥६७
इम जाणी मन दृढ करी, छाडा आरभ पाप। सतापे मन सवग, जिम टले भव सताप ॥६८

ढाल चौपाइनी

पच अणुव्रत इणि परे कही, त्रण गुणव्रत हवे सुणो सही ।
अणुव्रतनें वधारे जेह, ए त्रण ही सार्थक गुण तेह ॥१
दिग्-सख्या पेहलो गुणव्रत, बीजो देश व्रत गुण सत्य ।
त्रीजो अनर्थ दड परिहार, ए त्रणे व्रत करिये सार ॥२
पूरव दक्षिण उत्तर दिसा, अग्नि नैऋत्य वाय ईशान ।
इन जुत अधो ऊर्ध्व दस भेद, एह दिस-सख्या करो तेह ॥३
नदी सागर पर्वत वन जाणि, देश नयर सख्या मनि जाणि ।
गाव योजन तणी करो मर्याद, दिग्-सख्या व्रत गुण अनादि ॥४
भूमि-सीमा कीजे जेतलो, उलघे नही किमे तेतलो ।
सीमा अभ्यन्तर अणुव्रत होइ, सीमा बाह्य ते महाव्रत जोइ ॥५
थावर त्रस जीव रक्षा कीध, अभय दान सदा तस दीध ।
दिग्-सख्या होइ व्रत गुण, महाव्रत पुण्य जाये निपुण ॥६
यत्न करि धरो गुणव्रत सदा, किणें विसारो निजव्रत कदा ।
व्रत तणा छोडो अतिचार, हवे कहूँ ते पच प्रकार ॥७
अधो ऊर्ध्व अतिक्रम दोय, तिरछ गमन त्रीजो ते जोय ।
क्षेत्र-अवधि-लघन चौथो होय, स्मृति अन्तर पचम ते सोय ॥८
गिरि-शिखर आकाशे जे चढे, ऊर्ध्व गमन अतिक्रम जडे ।
भू गर्भ वापो कूप गतखाणि, अधो गमन अतिक्रम ते जाणि ॥९
नगर-गमन उलघन जेह, तिरछ अतिक्रम दूपण तेह ।
क्षेत्र-अवधि-लोप न वली करे, सीमस्मृति अन्तर ध्यान धरे ॥१०
इम जाणीने थई सावधान, व्रततणा छोडो दोप वितान ।
निमल गुणव्रत सदा धरो, निजशक्ति दिग्-सख्या करो ॥११
देशविरत हवें तम्हे सुणो, दिग्-सख्या माहे ते भणो ।
निजनयर प्रतोली भणी, सख्या कीजे सीमा भणी ॥१२
प्रभात समय निरन्तर तणी, सीमा कीजे गाव योजन तणो ।
ग्राम सेरी पाटिक हाट गेह, अनुदिन सख्या कीजे तेह ॥१३
देश गुणव्रत इणि परिधरो, निजशक्ति सख्या अनुसरो ।
तेहतणा छोडो अतिचार, हवे कहु ते पच प्रकार ॥१४
आनयन नाम पेहलो अतिचार, पर-प्रेपण बीजो प्रकार ।
त्रीजो शब्द, रूप चौथो होय, पुद्गल क्षेप पचम ते जोय ॥१५
रहते निज सीमा मझार, पर पाहि वस्तु अणावे सार ।
उपदेश देय करावे काज, पर-प्रेषण ते दोप-समाज ॥१६
आपणपें सीमा-माहे रही, काज करावे शब्दे कही ।
रूप देखाडी पर आपणो, सेवक पेंरी कीजे घणो ॥१७

काज वश पुद्गल-क्षेप करी प्रेरे परनें सज्ञा धरी ।
इणि परे अतिचार पच, दोप टालि करो पुण्य सच ॥१८
देश अणुव्रत इणि परे धरो नियम-सख्या अणुव्रत सरे ।
थावर जीव त्रस-रक्षा काजि, जल-सहित पालो भव्य राजि ॥१९
त्रीजो गुणव्रत अनर्थ दड, मन वच काया त्यजो प्रचड ।
अर्थ विना जे कीजे काज, ते अनर्थ पाप जानो समाज ॥२०
अनर्थदड तम्हो दूर करो, पचविधि सदा परिहारो ।
तेह तणा सुणो हवे भेद, वृथा पाप कीजें नहि खेद ॥२१
पाप उपदेशो पेहलो नाम, हिंसा उपदेश दूजो उद्दाम ।
त्रीजो अपध्यान चौथो दु श्रुति होय, प्रमादचर्या पचम ते जोय ॥२२
पापोपदेश न वि दीजिए, हिंसा झूठ चोरी नवि कीजिए ।
मैथुन सेवा परिग्रह मोह, क्रोध मान माया मद लोए ॥२३
भूमि खनन वृथा राधन नीर, अग्नि जालण निक्षेप समीर ।
तरु-छेदन भेदन त्रसजीव, खडण पीसण पातक अतीव ॥२४
धम-विघ्न विहवा आदेश, वापी वेहला सरकूप निवेश ।
धर्म विना जेणे उपजे पाप तेह उपदेश छोडो सताप ॥२५
हिंसातणा उपकरण जे वहु, खडग आदि आयुध जे सहु ।
कोस कुदाला छुरिका दात्र, फरसी साखल बधन कु गात्र ॥२६
अग्नि ऊखल मूसल कुजत्र, क्षेत्र सारण वन वाडी तत्र ।
मजारि कुकट श्वान सिचाण, ते नवि पालो हिंसक अज्ञान ॥२७
दुर व्यापार तजो अपध्यान, पापकारी बहु कुवस्तु सथान ।
कन्दमूल मधु माखण व्यापार, जिणे उपजे सावद्य अपार ॥२८
हिंसा मृषा चोरी सभोग, रतिचिंतन टालो सयोग ।
इष्ट अनिष्ट पीडा निदान, आर्त्त पाप तजो अपध्यान ॥२९
भरत पिंगल सगीत कुनाद, कोकशास्त्र करे उन्माद ।
दु श्रुति अष्टादश पुराण, कलकारी परमत कुराण ॥३०
कामण मोहण वशि कारी जत्र, स्तम्भ डम्भ चमत्कारी मत्र ।
राज आदि विकथा पच वीस, करता सुणता होइ पाप-उपदेश ॥३१
प्रमाद पणें ते नवि चालीइ, फोके पाप पिंड नवि घालीइ ।
आलस कीधे सावद्य उपजे, यत्न विना पुण्य किम नीपजे ॥३२
इम जाणिय छोडो परमाद, राग द्वेप तजो विसवाद ।
अनर्थ दड तणा अतिचार, पच भेद करो परिहार ॥३३
कन्दर्प पहेलो व्यनिपात, बीजा कुकम त्रीजा मौखय वात ।
असमीक्ष्याधिकरण चौथा होय, भोगोपभोगानर्थ पचम जोय ॥३४
काम चेष्टाकारी बहुराग, बीभत्स वचन बोले अभाग ।
कुत्सित बोले बहुभड, गालि दुर्वाक्य बोले व्रत खड ॥३५

मौखर्य पणे जल्पन वहु करे, काज विना वचन जु उच्चरे।
हित-अनहित अविचारी कहे असमीक्ष्याधिकरण ते वहे ।।३६
भोग-उपभोगकारी जे वस्त, अर्थ विना चिंते समस्त।
ये पच टालो अतिचार, त्रीजो व्रत पालो गुणधार ।।३७

वस्तु छन्द

त्रिण गुणव्रत त्रिण गुणव्रत धरो भवियण भावे करी।
पच अणुव्रत गुणदायक, सार्थक नाम जेह तणा निर्भंग।
थावर त्रस रक्षा कारण वारण ससार-दु ख दुर्धर ।।
जे भवियण जत्ने करी पाले गुणव्रत सार। सुर नर सुख ते भोगवी, ते पामे भवपार ।।३८

ढाल रासनी

गुणव्रत इम मे वर्ण्यव्यो ए, हवे कहुँ शिक्षाव्रत चार तो।
शिक्षा जीव हित कारण ए, वारण सस्या ससार तो ।।१
भोग्य वस्तु शिक्षा पहिलो ए, उपभोग्य दूजो होय तो।
अतिथि सविभाग त्रीजो व्रत ए अत सर्लेखणा चौथो जोय तो ।।२
भोग्य वस्तु ते जाणिये ए, जे होइ भोग्य एक वार तो।
पुनरपि काज आवे नही ए अनुभव होइ नि सार तो ।।३
चन्दन कुकुम केशर ए, पुष्प फल रस-पान तो।
असन खादिम स्वादु वस्तु ए, लेय पेय पकवान तो ।।४
भोग्य वस्तु ते परिहरो ए, सावद्यकारी अहित तो।
कन्दमूल अथाणा आदि ए अनन्तकाय परित्याग तो ।।५
पत्र पुष्प शाक रु त्यजो ए, नवनीत दूध नहि लाग तो।
दोह्या पछी काचा दूधमा ए, वेहु घडी केडे जाणि तो ।।६
सम्मूर्च्छन असख्य होइ ए, इम कहे जिनवाणि तो।
पशु दोहि दूध गालिये ए, उष्ण करो ततकाल तो ।।७
जल करी ते आखरो ए, आलस छाडी तम्हो वाल तो।
पीलु प्रपोटा जावु वोर ए, वेल सेलर जाति तो ।।८
मीठा कडुवा तुवडा ए, पिंडोला कुसुमा भाड तो।
किरकाली गलकल काफल ए छिदल काचा दही छाछ तो ।।९
निज कठ श्वास योगिये ए, उपजे त्रसजीव राशि तो।
देश विरुद्धारी गणा ए, अवर विरुद्ध कवली जेह तो ।।१०
शास्त्र विरुद्धो जे होइ ए, भक्ष तजो वहुँ तेह तो।
।।११
ए आद अयोग्य जे जाणिये ए, जीव असख्य, अनन्त काय तो।
लव सुख, दु ख मेरु समु ए, भविजन ते किम खाय तो ।।१२
इम जाणि भोग्य वस्तु ए कीजे तस मर्याद तो।
त्रस थावर-रक्षा हेतु ए, होय नही हरप विषाद तो ।।१३

काज वश पुद्‌गल-क्षेप करी प्रेरे परनें सज्ञा धरी ।
इणि परे अतिचार पच, दोष टालि करो पुण्य सच ॥१८
देश अणुव्रत इणि परें धरो नियम-सख्या अणुव्रत सरे ।
थावर जीव त्रस-रक्षा काजि, जल-सहित पालो भव्य राजि ॥१९
त्रीजो गुणव्रत अनर्थ दड, मन वच काया त्यजो प्रचड ।
अर्थ विना जे कीजे काज, ते अनर्थ पाप जाना समाज ॥२०
अनर्थदड तम्हो दूर करो, पचविधि सदा परिहारो ।
तेह तणा सुणो हवे भेद, वृथा पाप कीजे नहि खेद ॥२१
पाप उपदेशो पेहलो नाम, हिंसा उपदेश दूजो उद्दाम ।
त्रीजो अपध्यान चौथो दु श्रुति होय, प्रमादचर्या पचम ते जोय ॥२२
पापोपदेश न वि दीजिए, हिंसा झूठ चोरी नवि कीजिए ।
मैथुन सेवा परिग्रह मोह, क्रोध मान माया मद लोए ॥२३
भूमि-खनन वृथा राधन नीर, अग्नि-जालण निक्षेप समीर ।
तरु-छेदन भेदन त्रसजीव, खडण पीसण पातक अतीव ॥२४
धर्म-विघ्न विहवा आदेश, वापी वेहला सरकूप निवेश ।
धम विना जेणें उपजे पाप, तेह उपदेश छोडो सताप ॥२५
हिंसातणा उपकरण जे बहु, खडग आदि आयुध जे सहु ।
कोस कुदाला छुरिका दात्र, फरसी साखल वधन कु गात्र ॥२६
अग्नि ऊखल मूसल कुजत्र, क्षेत्र सारण वन वाडी तत्र ।
मजारि कुकट श्वान सिचाण, ते नवि पालो हिंसक अज्ञान ॥२७
दुर व्यापार तजो अपध्यान, पापकारी बहु कुवस्तु सधान ।
कन्दमूल मधु माखण व्यापार, जिणे उपजे सावद्य अपार ॥२८
हिंसा मृषा चोरी सभोग, रतिचिंतन टालो सयोग ।
इष्ट अनिष्ट पीडा निदान, आर्त्त पाप तजो अपध्यान ॥२९
भरत पिंगल सगीत कुनाद, कोकशास्त्र करे उन्माद ।
दु श्रुति अष्टादश पुराण, कलकारी परमत कुराण ॥३०
कामण मोहण वशि कारी जत्र, स्तम्भ डम्भ चमत्कारी मत्र ।
राज आदि विकथा पच वीभ, करता सुणता होइ पाप-उपदेश ॥३१
प्रमाद पणें ते नवि चालीइ, फोके पाप पिंड नवि घालीइ ।
आलस कीधे सावद्य उपजे, यत्न विना पुण्य किम नीपजे ॥३२
इम जाणिय छोडो परमाद, राग द्वेष तजो विसवाद ।
अनर्थ दड तणा अतिचार, पच भेद करो परिहार ॥३३
कन्दर्प पहेलो व्यतिपात, वीजो कुकम त्रीजो मौखर्य वात ।
असमीक्ष्याधिकरण चौथो होय, भोगोपभोगानर्थ पचम जोय ॥३४
काम चेष्टाकारी बहुराग, वीभत्स वचन बोले अभाग ।
कुत्सित बोले बहुभड, गालि दुर्वाक्य बोले व्रत खड ॥३५

मौखर्य पणें जल्पन बहु करे, काज विना वचन जु उच्चरे।
हित-अनहित अविचारी कहे असमीक्ष्याधिकरण ते वहे ॥३६
भोग-उपभोगकारी जे वस्त, अथ विना चिंते समस्त।
ये पच टालो अतिचार, त्रीजो व्रत पालो गुणधार ॥३७

वस्तु छन्द

त्रिण गुणव्रत त्रिण गुणव्रत धरो भवियण भावे करी।
पच अणुव्रत गुणदायक, सार्थक नाम जेह तणा निर्भर।
थावर त्रस रक्षा कारण वारण ससार-दु ख दुर्धर ॥
जे भवियण जत्ने करी पाले गुणव्रत सार। सुर नर सुख ते भोगवी, ते पामे भवपार ॥३८

ढाल रासनो

गुणव्रत इम मे वर्णव्यो ए, हवे कहुँ शिक्षाव्रत चार तो।
शिक्षा जीव हित कारण ए, वारण सख्या ससार तो ॥१
भोग्य वस्तु शिक्षा पहिलो ए उपभोग्य दूजो होय तो।
अतिथि सविभाग त्रीजो व्रत ए अत सलेखणा चौथो जोय तो ॥२
भोग्य वस्तु ते जाणिये ए, जे होइ भोग्य एक वार तो।
पुनरपि काज आवे नही ए अनुभव होइ नि सार तो ॥३
चन्दन कुकुम केशर ए, पुष्प फल रस-पान तो।
असन खादिम स्वादु वस्तु ए, लेय पेय पकवान तो ॥४
भोग्य वस्तु ते परिहरो ए, सावद्यकारी अहित तो।
कन्दमूल अथाणा आदि ए अनन्तकाय परित्याग तो ॥५
पत्र पुष्प शाक रु त्यजो ए, नवनीत दूध नहि लाग तो।
दोह्या पछी काचा दूधमा ए, बेहु घडी केडे जाणि तो ॥६
सम्मूर्च्छन असख्य होइ ए, इम कहे जिनवाणि तो।
पशु दोहि दूध गालिये ए, उष्ण करो ततकाल तो ॥७
जल करी ते आखरो ए, आलस छाडी तम्हो वाल तो।
पीलु प्रपोटा जावु वोर ए, वेल सेलर जाति तो ॥८
मीठा कडुवा तुवडा ए, पिडोला कुसुमा भाड तो।
किरकाली गलकल काफल ए छिदल काचा दही छाछ तो ॥९
निज कठ श्वास योगिये ए, उपजे त्रसजीव राशि तो।
देश विरुद्धारी गणा ए, अवर विरुद्ध कवली जेह तो ॥१०
शास्त्र विरुद्धी जे होइ ए, भक्ष तजो वहुँ तेह तो।
॥११
ए आद अयोग्य जे जाणिये ए, जीव असख्य, अनन्त काय तो।
लव सुख, दु ख मेरु समु ए, भविजन ते किम खाय तो ॥१२
इम जाणि भोग्य वस्तु ए, कीजे तस मर्याद तो।
त्रस थावर-रक्षा हेतु ए, होय नही हरप विपाद तो ॥१३

प्रथम ते शिक्षाव्रत तणा ए, छोडो पच अतिचार तो ।
पच इन्द्री भोग सख्या ए उलघन करो परिहार तो ॥१४
बीजो शिक्षाव्रत सुणो ए उपभोग वस्तु जेह तो ।
वली वली जे अनुभवीये ए, उपभोग्य वस्तु जाणो तेह तो ॥१५
निज नारी आदें करी ए, वस्त्र आभूषण माल तो ।
कनक रजत माणिक मोती ए, हीरा छीक परवाल तो ॥१६
देश नयर घर हाट ए, द्विपद चतुष्पद आदि तो ।
चेतन अचेतन जे वस्तु ए तस कीजे मर्याद तो ॥१७
हस्ती तुरग पालकी रथ ए, भाजन वस्तु वाहन्न तो ।
गीत नृत्य वाजित्र आदि ए, गमन शयन आसन्न तो ॥१८
तिथि नामे अन्न फल रस ए, नित प्रति कीजे नेम तो ।
निजशक्ति मास वरस ए जावजीव अथवा सीम तो ॥१९
नेम विना एक घडी ए, वृथा गयो तेनो काल तो ।
इम जाणि सावधान थई ए, कीजे व्रत सभाल तो ॥२०
नेम विना नर जाणवु ए, कृत्रिम मनुष्य आकार तो ।
अथवा असज्ञी पशु-समो ए, जाणें नही विचार तो ॥२१
नेम-महित एक दिन ए, जीवितव्य तस प्रमाण तो ।
व्रत विना वरस कोटी ए, वृथा जीवितव्य जाण तो ॥२२

इम जाणि नियम धरो ए, नियमे उपजे पुण्य तो ।
पुण्ये ऋद्धि वृद्धि सपजे ए ऋद्धिपणें सुख धन्य तो ॥२३
मूढ मन चितवी ए, वाछा करे बहुभोग ए तो ।
उपभोग चिंते घणा ए, पुण्य विण नही सजोग तो ॥२४
उपभोग सख्या करो ए, सख्याथी होय सतोष तो ।
सतोषे सुख उपजिये ए, नवि होइ राग कुरोष तो ॥२५
उपभोग व्रततणा ए छोडो पच व्यतिपात तो ।
व्यतीपातें पाप उपजे ए, पापें होवे व्रतघात तो ॥२६
अनुप्रेक्षा पहिलो दोष ए, अनुस्मृति दूजो होय तो ।
अति लौल्य तृष्णा चौथो ए, अनुभव पचम जोय तो ॥२७
निरन्तर भोग सेवीइए, ते अनुप्रेक्षा नाम तो ।
भोग-सीम सभारे नही ए, ते अनुस्मरणदोष भान तो ॥२८
लपट पणें भोग सेवियें ए, अति रागे तुल्य होइ तो ।
भविष्यत भोगवाछा करि ए अतितृष्णा ते जोइ तो ॥२९
अतृप्तिपणे भोग सेवीये ए, अनुभव करे असतोप तो ।
पच इन्द्री उपभोग्य सीम ए, उलघन पच दोप तो ॥३०
उपभोग्य व्रततणा ए, टालो पच अतिचार तो ।
सावधान पणें सदा धरो ए, निर्मल शिक्षाव्रत सार तो ॥३१

अन्तमे परम पूज्य श्री १०८ मुनि श्री समन्तभद्रजी महाराजका मैं किन शब्दोमे आभार व्यक्त करूँ जिनसे पूरे वर्षभर पत्रोंके द्वारा स्वास्थ्य-लाभके लिए शुभाशीर्वाद और कार्य-प्रगतिके लिए सत्प्रेरणाएँ प्राप्त होती रही हैं जिससे प्रभावित होकर मैं उनके चरण-सान्निध्यमे बैठकर तीसरे भागके सम्पादकीय वक्तव्यमे उल्लिखित विशेषताओके साथ श्रावकाचारकी विस्तृत प्रस्तावना लिखनेके लिए उत्सुक हो रहा हूँ।

पूर्वानुपूर्वीके क्रमसे नवीन उपलब्ध कुन्दकुन्दश्रावकाचारको प्रस्तुत संग्रहके चौथे भागमे विस्तृत प्रस्तावना और श्लोकानुक्रमणिकादि परिशिष्टोंके साथ दिया गया है और तदनन्तर-रचित होनेके कारण इस संग्रहमे हिन्दीकी उक्त तीन रचनाओको दिया जा रहा है। तीनोके रचयिताओका संक्षिप्त परिचय, समय और उनकी विशेषताओकी समीक्षाको प्रस्तावनामे दिया गया है।

आशा है, पूर्व भागोंके समान इस भागका भी स्वाध्यायप्रेमी जन समादर करेंगे।

श्री पार्श्वनाथ दि० जैन मन्दिर
भेलपुर, वाराणसी (उ० प्र०)
२७।५।७८

हीरालाल सिद्धान्तशास्त्री
हीराश्रम, साढूमल
जिला—ललितपुर (उ० प्र०)

स्नान करी धौत वस्त्र पेहरी ए, पूजि जिन भवतार तो ।
मध्याह्न समये द्वारावलोकन ए, गणिये नव नमोकार तो ॥५०
पुण्य प्रेर्यो पात्र आवीयो ए, सावधान थई मनि धीर तो ।
तिष्ठ तिष्ठ करी पडिगाहिये ए, प्रासुक देखाडी नीर तो ॥५१
गुरु उच्चासन दीजिए ए, चरण कीजे प्रक्षाल तो ।
गुरु-पद-पूजन कीजिए ए, प्रणाम कीजे गुणमाल तो ॥५२
मन वचन काया शुद्ध कीजिए ए, पवित्र देहु आहार तो ।
दोष त्राणुथी वेगलो ए, एषणा शुद्धि थी वेगला तो ॥५३
मप्त गुण दातार तणा ए, नव ए पुण्य प्रकार तो ।
सोल गुण प्रगट करो ए, दान वेला सविचार तो ॥५४
तुष्टि पुष्टि तप-वृद्धिकरी ए, न्याये उपार्ज्यु जे धन्न तो ।
निज कुटुम्ब काजे नीपनुँ ए, ते सदा द्यो शुभ अन्न तो ॥५५
आहारदान इम दीजिए ए, विवेक लेइ ते पात्र तो ।
ममता मोह थी वेगलो ए, स्थित कीजे निज गात्र तो ॥५६
आहार थी औषध जाणिए ए, जेह थी समे क्षुधारोग तो ।
रोग शमे कृपा नीपने ए, नीपने ज्ञान नियोग तो ॥५७
इम जाणि आहार दीजिए ए, छाडी कृपण कुमाय तो ।
जस महिमा पूजा करी ए, भव-सागर जे नाव तो ॥५८
उत्तम औषध दान दीजिए ए, पात्रतणा टालो रोग तो ।
जिणें किणें उपाय करि ए, शरीर कीजे सुख भोग तो ॥५९
निरोगपणें दृढ अगि ए, धरे ते सजम-भार तो ।
ध्यान अध्ययन तप आचार ए, दु कर्म-क्षयकार तो ॥६०
च्यार नियोग चतुरपणें ए, विस्तारो जिन सूत्र तो ।
॥६१
लिखो लिखावो भक्ति करी ए, जिनवाणी अनुसार तो ।
शास्त्रदान सदा दीजिइ ए, निज-पर करे उपकार तो ॥६२
वेहरी मठ करावीइ ए, शून्य घर'गुफा स्थान तो ।
सजमी सहाय कारण ए, दीजे वसतिका दान तो ॥६३
अभयदान शुभ दीजिइ ए, थावर त्रस।जीव जेह तो ।
मन वचन काया करीइ ए, रक्षा कीजे सहु तेइ तो ॥६४
दीन दरिद्री दोहिला ए, अशरण कायर जे वृद्ध तो ।
जिनें दीये दया उपजे ए, कीजे ते कृपा समृद्ध तो ॥६५
अभयदान अभ्यन्तर ए, उत्तम दान ए चार तो ।
जिहाँ दया तिहाँ दान सहुँ ए, दया सर्व सुधीर तो ॥६६
केवल दर्शन ज्ञान सुख ए, केवल वीर्य वितान तो ।
जिहाँ आतमा तिहाँ गुण ए, तिम अभय माहे सव ही दान तो ॥६७

दया विना तप जप नही ए, दया विण नही धर्म ध्यान तो ।
दया विण शम सजम नही ए, दया सर्व प्रधान तो ॥६८
इम जाणिय दया दीजिए ए, कीजे पर उपकार तो ।
गुण सगला दयादान ए, घणु सु कहीए वारोन्वार तो ६९
सयल भूधर माँहि मेरु ए, देव माँहे जिन देव तो ।
रत्न माँहि चिन्तामणी ए, तिम दान माँही दया एव तो ॥७०
पात्र आहार दान फल ए भोग भूमितणा सुक्ख तो ।
सुर नर वर पदवी लही ए, अनुक्रमे धर्म मोक्ष तो ॥७१
योग्य औषध दानफल ए, निरोग होइ शरीर तो ।
कान्ति कला लावण्य गुण ए, सबल सरूपी वीर तो ॥७२
ज्ञान दान तणो फल ए, मति श्रु त अवधि बोध तो ।
मन पर्यय केवल गुण ए, कोविद कला कवि सुद्धि हो ॥७३
गढ गोपुर धवल गृह ए, त्रि-सप्त खणा आवास तो ।
देव विमान असुर रोह ए, मठ दानें पुण्य राशि तो ॥७४
कोडि पूरव पल्यतणा ए, सागर जे वर आयु तो ।
उत्तम काय सबल पणु ए, लहे ते दया पसाय तो ॥७५
गृहा धरमइ दानन बडी ए, व्रत सुवे न वि होइ तो ।
निज शक्तें प्रगट करि ए, दान देयो सहु कोइ तो ॥७६
दानें लक्ष्मी सपजे ए, दानें जस गुण होइ तो ।
ख्याति पूजा महिमा घणु ए, दान तोले नही कोई तो ॥७७
इहि लोके जस विस्तरे ए, पचाश्चर्य करे देव तो ।
दातृ-पात्र विधि लही ए, परलोक शिव सक्षेप तो ॥७८
दान गृहा वन सपजे ए, जेह वो पक्षी माल तो ।
आठ पोहर पावकरी ए, दुर्गति लहे ते बाल तो ॥७९
दान पुण्ये लक्ष्मी वधे ए, निष्कासित कूप नीर तो ।
द्रुपुटाती वाधे जिम ए, तिम दाने धन धीर तो ॥८०
व्यसन चोर हरे नही ए, दाने खुटे नहि वन्न तो ।
जिम सर उगन मूकीइ ए, नीर रहे अखूट तो॥८१
धने सहु सकट टले ए, विप भी अमृत सम थाइ तो ।
शत्रु मित्र समो थई ए, दाने राज्य पसाइ तो ॥८२
अल्प धन हू पात्र-दानें ए, पुण्य पामे विस्तार तो ।
अल्प वड बीज जिम ए, तरु पामे बहु विस्तार तो ॥८३
सम्यग्दृष्टी पात्र दान ए, सुर नर पामी सौख्य तो ।
चक्रवर्ती तीर्थंकर पद ए, पामे अविचल मोक्ष तो ॥८४
दान पात्र दान विधि ए, इण कही सक्षेप तो ।
अवर कुपात्र भेद कहुँ ए, जिम जाणों गुण हेव तो ॥८५

पात्र-कुपात्र भेद विहु ए, कुपात्र कहु हवे चिह्न तो ।
समकित विना जे व्रत धरे ए, क्रिया पाले चल मन्न तो ॥८६
यतीश्वरा वक वेष लेई ए, परीषह सहे त्रण काल तो ।
तीव्र तप सतपि घणो ए, कष्ट करे विशाल तो ॥८७
तप व्रत-सहित मुनि ए, पोषे जे मिथ्यात्व तो ।
अथवा श्रावक मिथ्यात्व-पोषि ए, ते कुपात्र साक्षात तो ॥८८
दृष्टि व्रत जैन गुण नही ए, आरभ करे षट्कर्म तो ।
मिथ्यात्वी मूढमती ए, सग-सहित गृहाश्रम तो ॥८९
देव-गुरु साधर्मी तणी ए, निन्दा करे गुण हीन तो ।
जिनशासन थी वेगला ए, ते अपात्र कही ए दीन तो ॥९०
कुपात्र-दान-तणें फले ए, कुभोगभूमि कुनर जन्म तो ।
छन्नु अन्तर द्वीप माहे ए, अल्प पामी कुशम तो ॥९१
म्लेच्छ गजा नीच नर ए, जे पामे बहु ऋद्धि तो ।
हस्ती घोडा बैल महिषी ए, ते कुपात्र पुन विधि तो ॥९२
अपात्र दान निष्फल गमी ए, जिम ऊसर भूमि बीज तो ।
पाथर-नाव-सम सही ए, ते बोले पर निज तो ॥९३
अपात्र दान दीघा वि ण ए डु डु नाख्यु कूप मध्य तो ।
अनेक जन्म दु ख देई ए, पापाचारि ते बुद्धि तो ॥९४
पात्र-कुपात्र सम लेखवि ए, ते भोला अजाण तो ।
अमृत विष, रत्न काच ए, तुम्ब नाव पाषाण तो ॥९५
एक कूप नर सिंचीए ए, सेल डीली बध तुर तो । धतूरे-विष ऊपजे ए, सेलरी मधुर तो ॥९६
स्वाति नक्षत्रें मेह वरसि ए, मोती पडे सीप विशाल तो ।
ते जल सर्प मुखे पडे ए, विष थाइ हलाहल तो ॥९७
त्रिधा सत्पात्र दान ए, त्रिधा होइ भोगभुमि तो ।
दशधा कल्प तरु सुख ए, देव शिव अनुक्रमे तो ॥९८
दान लही क्रिया जेहवी करे ए, दाता लहे तेहमा भाग तो ।
कुलबी जिम करषण करे ए, राजा ले जिम भाग तो ॥९९
सत्पात्र क्रिया शुभ करे ए, अपात्र कुत्सित आचार तो ।
दान वलें जेहवु कम करे ए, तेहवु उ फल दातार तो ॥१००
गौ हेम गज वाजि तिल ए, मही दासी नारी गेह तो ।
रथ आदें कुदान कह्या ए, ए दश भेदे पाप-हेत तो ॥१०१
क्रोध मान माया लोभ ए, राग-द्वेष मदकार तो ।
पापारम्भकारी कह्या ए, दु ख सहे दातार तो ॥१०२
मूढ साला मिथ्यामती ए, थाप्या दश कुदान तो ।
मेघ रथ भूपें दीधा ए, वार्या सुमति प्रधान तो ॥१०२

मेघरथ मूढसाला पण ए, सातमी नरके ते जाय तो ।
कुदान-पाप तणे फल ए, अवर नारकी इम थाय तो ॥१०४
इम जाणि विवेक धरी ए, परिहरु कुदान कुपात्र तो ।
जैन पात्र सहु पोषीए ए, सफल कीजे निज गात्र तो ॥१०५
पात्र-कुपात्र इमउ लखी ए, पात्र-दान धर्म वृद्धि तो ।
अवर कुपात्र-अपात्र कह्या ए, दान दीजे दया शुद्धि तो ॥१०६
लक्ष्मी तणा फल लीजिए ए, पुण्य साचो दातार तो ।
सप्त क्षेत्रें वित्त वावरो ए, जिनशासन मझार तो ॥१०७
जिन प्रासाद करावीइ ए, जीण तणो उद्धार तो ।
जिनवर विम्ब भरावीइ ए, जिनपुस्तक विस्तार तो ॥१०८
प्रासाद प्रतिमा जत्र आदि ए, कीजे प्रतिष्ठा चग तो ।
अष्टविध जिन पूजीइ ए, कीजे महोत्सव चग तो ॥१०९
जिन गेह-बिम्ब ज्या लगि नादीइए, पूजा करे भविजन्न तो ।
धर्म उपराजी वहु परि ए, त्या लगे दाता लहे पुण्य तो ॥११०
यव-सम प्रतिमा जिन-सम ए, विम्ब-दल प्रासाद तो ।
तेहना पुण्य नो पार नही ए, भव्य मन करे आह्लाद तो ॥१११
जेह घर जिन विम्ब नही ए, त्रिघा पात्र नही दान तो ।
जिहा साध्रमी आदर नही ए, ते घर जाणो समसान तो ॥११२
मुनीश्वर आर्या कहीइ ए, श्रावक-श्राविका सघ चार तो ।
भक्ति विनय घणो कीजीइ ए, कीजे पर उपकार तो ॥११३
सघ मिलि सघपति थइ ए, सिद्धक्षेत्र कीजे जात्र तो ।
साधर्मी वात्सल्य कीजीइ ए, सफल कीजे धन गात्र तो ॥११४
ए आदि वहु परि ए, कीजे पुण्य आचार तो ।
त्रीजा शिक्षाव्रत तणी ए, दोष कहुं पच प्रकार तो ॥११५
सचित्त-निक्षेप पेहली दोष ए, सचित्त पद्म पत्र आदि तो ।
ते उपर वधि आहार करे ए, ते तमे त्यजो अतिचार तो ॥११६
आदर विना आहार दीइ ए, अथवा द्ये उपदेश तो ।
व्यापार काजे वेगो जाइए, ते त्रीजो दान दोष तो ॥११७
दान देतो मत्सर करे ए, धरे ते लक्ष्मी-अहकार तो ।
दान काल उलघन करे ए, प्रमादपणे तिणि वार तो ॥११८
ये पच दूषण त्यजी ए, सदा देओ शुभ दान तो ।
अतिथि सविभाग व्रत धरो ए, हृदय थई सावधान तो ॥११९
चौथो शिक्षाव्रत सुणो ए, अन्त सलेखण नाम तो ।
शरीर-सलेखण कीजीइ ए, क्षीण कषाय परिणाम तो ॥१२०
क्रोध मान माया लोभ ए, क्षीण कीजे रोष कुराग तो ।
पच इन्द्री प्रमार मन ए, कीजे मद परित्याग तो ॥१२१

अभ्यन्तर ज्ञान बल ए, कीजे दूर कषाय तो ।
बाह्य वैराग्य तप बले ए, क्षीण कीजे इन्द्री काय तो ॥१२२
जिम जिम काया कस कीजिये ए, तिम तिम इन्द्री मद जाइ तो ।
रागद्वेष उपशम ह्वे ए, दुर्धर मन वश थाइ तो ॥१२३
मन गज गाढो बाधीइ ए, अकुश देई निज ज्ञान तो ।
सुमति साकल साकलो ए, वैराग्य स्तम्भ समान तो ॥१२४
अग इन्द्री कषाय कृषि ए, लीजे शुभ सन्यास तो ।
चतुर्विध आहार त्यजी ए, कीजे ध्यान अभ्यास तो ॥१२५
दर्शन ज्ञान चारित्र तप ए, आराधना आराधो चार तो ।
मरण समाधि साधीइ ए, अत सलेखणा भव-तार तो ॥१२६
पच विधि अतिचार होइ ए, जीवित मरण सशय होय तो ।
मित्र प्रीति सुख-अनुबन्ध ए, निदान पचम दोष होइ तो ॥१२७
दीर्घ जीवे वाछा करि ए, कष्ट देखी वाछे मरण तो ।
मित्रे घणु अनुराग धरे ए, सुख वाछा अनुसरण तो ॥१२८
दान पूजा तप जप करि ए, बाधे निदान कुकम तो ।
रागें अथवा द्वेष भावे ए, चिंते निज मन मर्म तो ॥१२९
इणि परे पच दूषण त्यजी ए, साधु सलेखणा सार जो ।
सुर नर वर सुख भोगवी ए, पामीइ भवोदधि-पार तो ॥१३०

वस्तु छन्द

व्रतह पालो व्रतह पालो भविजन जिन भावे करी ।
पचव्रत अणुव्रत निर्मला, त्रिणि गुणव्रतचार शिक्षाव्रत उज्ज्वल ।
गुण शिक्षा सम शील कहि, स्वर्ग षोडश दायक निर्मल ॥
अणु गुण शिक्षा एणी परे धरे जे एह व्रत बार । जिन-सेवक **पदमो** कहे, ते तरसे ससार ॥

ढाल सहेलडीनो

दान तणा फल वर्णवु रे, किणें दीयो दान आहार ।
तेह कथा तम्हे साभलो रे, श्रीषेण तणी भवतार ॥
साहेलडी, दीजे दान सुपात्र, सफल कीजे निजगात्र साहेलडी, दीजे दान सुपात्र ॥१
आर्य खड इह जाणीए रे, मलय देश मझार ।
रत्न सचय नयर भलो रे, श्रीषेण भूप गुण धार, साहेलडी० ॥२
तस दोय राणी रूअडी रे, सधन दिता पेहिली नाम ।
अनिन्दला दूजी निर्मली रे, रूपकला गुण दाम, साहेलडी० ॥३
वे बेहु कूखे पुत्र अवतर्या रे, इन्द्र नामे पेहिली होय ।
उपेन्द्र बीजो ऊजलो रे, चरम शरीरी ते दोय, साहेलडी० ॥४
सातकी विप्र तिहा वसेरे, जबुनामे तस नार ।
तेह कूखें पुत्री उपनी रे, सत्यभामा कुमारि, साहेलडी० ॥५

एह कथा इहा रहो रे, अवर सुणो एक वात।
पाडलीपुर नगर वसे रे रुद्र भट्ट विप्र जाति, साहेलडी० ॥६
तस बेटी भणो नन्दनु रे, कपिल नामे ते जाण
विप्र पासे शिष्य वहु भणे रे, वेद ने शास्त्र पुराण, साहेलडी० ॥७
कांन छटे तिणे सीखिया रे, भणे ते वहु कुशास्त्र।
निज वुद्धि वले आवार्या रे, कपिल थयो कुछात्र, साहेलडी० ॥८
शास्त्र भण्यो ते सामली रे, रुद्रभट्ट पाम्यो कोप।
निज नयरें थी निकासियो रे, शूद्र माटे कीयो लोप, साहेलडी० ॥९
कपिल तिहा थी सचर्यो रे, लीधो विप्र आकार।
कठे जनोई उत्तरासण रे, चीर थयो तिणि वार, साहेलडी० ॥१०
सन्नि सन्नि ते आवीयो रे, सातकी विप्रतणें गेह
विद्वास ते जाणीयो रे, सत्यभामा दीधी तेह, साहेलडी० ॥११
कपिल सुखें तिहा रहे रे, सत्यभामा एक वार।
रतिवन्ती हुई कामिनी रे, लिंग स्वभाव एहवो नार, साहेलडी० ॥१२
तव कपिल मूढमती रे, चेष्टा करे तस काम।
नीच जाति जाणि वरजिया रे, चिन्ते ते सत्यभाम, साहेलडी० ॥१३
पुष्पवन्ती नारी तणो रे, सुणो ते दोष विचार।
चिहु दिन विच जे भोगवी रे, ते नर नीच गवार, साहेलडी० ॥१४
पहिले दिन चंडाली समी रे, दूजे दिन रजकी समान।
अस्पृश्य शूद्र तीजे दिने रे, दिन दिन करे ते स्नान, साहेलडी० ॥१५
उपवास वने करि निर्मला रे, अथवा एकान्तर जाणि।
रस तजी भोजन करे रे, ईं भाति श्री जिनवाणि, साहेलडी ॥१६
चौवीस पहर दूरे रहे रे, घर-व्यापार ने जोग।
एकान्त रहे ते एकली रे, कवण काजे नही भोग्य, साहेलडी० ॥१७
देव शास्त्र गुरु वेगली रे, चाहे नही घरमी मुख।
माहो माहे स्पर्से नहीं रे, आप निन्दा लिंग दु ख, साहेलडी० ॥१८
रतिवन्ती नारी तणी रे, माने नही जे वहु छोति।
तेह प्राणी पाप-फल भोगवे रे, पामे दु ख दुर्गति जोनि, साहेलडी ॥१९
परतक्ष दोष ते सांभलो रे, वडी पापडी विनाश।
रस-भग ते नीपजे रे, सरस वस्तु निरास, साहेलडी० ॥२०
नेत्र रोगी अन्ध थाइ रे, मरण पामे घायवन्त।
एह आदें दूपण वणा रे, लोक-प्रसिद्ध, नही अन्त, साहेलडी ॥२१
इस जाणी दूरे परिहरो रे, पुष्पवन्ती नारी संग।
घणु घणु सु वर्णवु रे, लाज तणो प्रसग, साहेलडी० ॥२२
सत्यभामा मन चिन्तवे रे, कर्मे कीधो अयुक्त।
द्विज वश मुझ निर्मलो रे, नीच वर मुझ भक्त, साहेलडी० ॥२३

एक दिन ते रुद्रभट्ट रे, चाल्यो तीर्थ सु जात्र।
रत्न सचय पुर आवीयो रे, कपिल मिल्यो कुछात्र, साहेलडी० ॥२४
कपिल निज घरि आणीयो रे, लोक माहे कहे मुझ तात।
भक्ति विनय भोजन दियो रे, कुशल तणी पूछी बात, साहेलडी० ॥२५
सत्यभामा प्रच्छन्नपणें रे, सौवर्ण आपी पूछे जाति।
कन्त तणी ते निर्मली रे, सत्यपणें कहो बात, साहेलडी० ॥२६
रुद्रभट्ट कहे बधु सुणो रे, मुझ दासी तणो पुत्र।
शूद्र जाति भणी परिहर्यो रे, भण्यो ते वेद बहु सूत्र, साहेलडी० ॥२७
तब भामा भय उपनो रे, मुझ शील होसे भग।
सघनन्दिता राणी तणें रे, शरणि गई मन रग, साहेलडी० ॥२८
नाम प्रशसा पासें राखी रे, साधर्मी दीयो सनमान।
धरमी वाछल्य करे नही रे ते पापी अज्ञान, साहेलडी० ॥२९
श्रीषेण भूप घरे आवीया रे, चारण युगल गुणधार।
विधि-सहित आहार दीया रे, निरन्तराय हुओ आहार, साहेलडी० ॥३०
श्रीषेण भूपें दान दियो रे, निज नारी साथें दोय।
सत्यभामा भावें भावना रे, भावनाए पुण्य होय, साहेलडी० ॥३१
काल मरण पामीयो रे, श्रीषेण भूपते जाणि।
उत्कृष्ट भोगभूमि अवतर्यो रे, दशविध भोग सुख खाणि, साहेलडी० ॥३२
भूपतणी दोय कामिनी रे, सत्यभामा सहित।
दान तुण्यें तिहा उपनी रे, भोगभूमि निज हित, साहेलडी० ॥३३
पात्र दानें फल श्रीषेण रे, भोगभूमि पाम्यो सुख।
दश विध कल्पतरु तणा रे, आखे मेष नही दुक्ख, साहेलडी० ॥ ३४
त्रण गाउ नु देह उची रे, त्रण पल्य तस आय।
मरण पामी ते आवीया रे, स्वर्गे देवते थाय, साहेलडी० ॥३५
सुर नर सुख ते भोगवी रे, श्रीषेण भूपतिणी वार।
पात्र दान फल निर्मलो रे, लेइ जन्म ते बार, साहेलडी० ॥३६
सोलमो जिन ते उपमो रे, शान्तिनाथ जस नाम।
चक्रवर्त्ति जे पाचमो रे, बारमो देव ते काम, साहेलडी० ॥३७
पच कल्याणक भोगवी रे, गुण छेतालीस धार।
कर्म हणी केवल लही रे, पोहचा मोक्ष दुआर, साहेलडी० ॥३८
वज्रजघ दान फले रे, पामो भोग भूमि सुक्ख।
अनुक्रमे आदि जिन हुआ रे, कर्म हणी पाम्या मोक्ष, साहेलडी० ॥३९
श्रीमती राणी दान दीयो रे, अनुक्रमे श्रेयान्स भूप।
आदि जिन दीयो पारणु रे, व्यापो जस गुण रूप, साहेलडी० ॥४०
एह आदें बहु भवि जन्न रे, पात्रने देई दान।
सुर नर सुख ते पामीआ रे, किम कह्यो जाइ ते पार, साहेलडी० ॥४१

पात्र आहार पुण्य वर्णवी रे, अवर सुणो वृत्तान्त ।
औषध दान कथा कहुँ रे, वृषभसेना तणी सत, साहेलडी० ॥४२
आर्य खड माहे जाणीइ रे, जनपद देश विशाल ।
काबेरी नयरी भली रे, उग्रसेन भूपाल, साहेलडी० ॥४३
धनपति श्रेष्ठि तिहाँ वसै रे, धनश्री तेह तणी नारि ।
तस तणी कूखें उपनी रे वृषभसेना कुमारि, साहेलडी० ॥४४
रूपवती धाय तेह तणी रे, स्नान अजन करे भक्ति ।
पय पान देई पोपे घणु रे, अन्न पाणी करे युक्ति, साहेलटी० ॥४५
वृपभसेना स्नान-पाणी रे, रह्यो ते गरत मझार ।
रोगी कूकर आवीयो रे, लोटयो ते तिणी वार, साहेलडी० ॥४६
श्वान नीरोग थयो देखीने रे, विस्मय पामी धाय तेह ।
निज मातानेत्र रोगी रे, वरस वार पीडा जेह, साहेलडी० ॥४७
परीक्षा काजे नीर सिंचीयो रे, नेत्र हुआ ते निरोग ।
धाय-महिमा जस व्यापीयो रे, कन्या तणे सयोग, साहेलडी० ॥४८
उग्रसेन नामे भूप तीरे, तस मत्री पिंगल नाम ।
मेघ पिंगल भणीमो कल्पो रे, ते वैरी विपमे ठामि, साहेलडी० ॥४९
दलबल वहुते परवर्यो रे, वेगे चाल्यो परधान ।
वेरी तणें देस आवीयो रे, साथे लेई बहु सधान, साहेलडी० ॥५०
विष-मिश्र जल वावस्करे, ज्वर उपनो मत्री देह ।
वेगे वली पाछी आवीयो रे, नीरोग हुओ नर-देह, साहेलडी० ॥५१
उग्रसेन तव कोपीयो रे, चाल्यो ते वैरी पासि ।
तिणें जले ज्वर उपनो रे, पाछो आव्यो हुई निराशि, साहेलडी० ॥५२
वृषभसेना-कन्या तणो रे, जल जाचे वा काज ।
दूत प्रेषी अणावीयो रे, निरोग हुओ तव राज, साहेलडी० ॥५३
धनपति श्रेष्ठि ते डावीयो रे आव्यो ते सभा मझार ।
कन्या देउ मुझ निर्मली रे, भूप कहे तिणी वार, साहेलडी० ॥५४
श्रेष्ठी कहे भूप साभलो रे, जिन पूजो अष्ट प्रकार ।
पजर थी पक्षी मूको रे, वदी छोडो करो राग, साहेलडी० ॥५५
जिम जिम श्रेष्ठी इजे कह्यो रे, ते तिम कीधू भूपाल ।
वृषभसेना कन्या वरी रे, महोच्छव करी गुणमाल, साहेलडी० ॥५६
विवाह समय वदी मुक्या रे, एक न मुक्यो पृथ्वीचन्द्र ।
वाणारसी नयरी धणी रे, पाय पाके आव्यो तन्द्र, साहेलडी० ॥५७
तस राणी नारायणदत्ता रे, मत्री सु कीयो विचार ।
वृषभसेना तिणें नामे रे, माड्यो तिणें सत्तकार साहेलडी० ५८
सत्तकार भोजन करी रे, लोक आवे बिहु जाणि ।
वृषभसेना जस वोले रे, निज काते सुणी वाणि, साहेलडी० ॥५९

राणी धावे द्विज पूछीया रे, सत्तकारह तजेह ।
वाणारसी नयरी पती रे पृथ्वी चन्द्र-बदि-गेह, साहेलडी० ॥६०
वृषभसेना वेगे करी रे, मूकाव्यो तब भूप ।
पृथ्वीचन्द्र विनय वहे रे, पट्ट लिखी त्रण रूप, साहेलडी० ॥६१
राणी तणें पाय नमे रे आपणपै भूप जेह
चित्र रूप देखी रीझियो रे, उग्रसेन भूप तेह, साहेलडी० ॥६२
पृथ्वीचन्द्र सतोषीयो रे, उग्रसेन दीयो आदेश ।
मेघपिंगल वैरी जीपी रे, निजपुरि जाइ नरेश, साहेलडी० ॥६३
मेघपिगले भूप साभल्यो रे, मुझ भरवी पृथ्वी चन्द्र ।
वेगे आवी भूप भेदीयो रे, महत पाम्यो नरेन्द्र, साहेलडी० ॥६४
हेम रत्न मोती आदे रे, गज वाजी मूकी भेट
मेघपिंगल विनय करी रे, उग्रसेन मान्यो श्रेष्ठि, साहेलडी० ॥६५
जूझ विना आवी मिल्यो रे, हरख्यो उग्रसेन राय ।
मेघपिगल सेवक जाणी रे, भूपति कीयो पसाय, साहेलडी० ॥६६
बहुमूल्य भेंट जे आवी रे, रत्न कबल निज दोय ।
निज निज नामे अकीयो रे जुजूआ आपे ते सोय, साहेलडी० ॥६७
वृषभसेना एक आवीयो रे, मेघपिंगल एक दीघ ।
पलटाणो ते काज वसे रे, तो देवे विपरीत कीध, साहेलडी० ॥६८
कर्म उदय पाप वशे रे वस्तु थापे विपरीत ।
वृषभसेना पूर्व पापे रे, हित हुओ ते अहित, साहेलडी ॥६९
मेघपिंगल कवल ओढी रे, सभा आव्यो एक वार ।
निज नारी नाम ते देखी उ रे, कोप्यो ते भूप गँवार, साहेलडी० ॥७०
रक्त मुख भूप देखीने रे, मेघपिंगल बुद्धिवत ।
काज मिसे नासी गयो रे, उग्रसेन हुओ असत, साहेलडी० ७१
वृपभसेना सु कोपियो रे, जाण्यो शील-हीण नारि ।
निज भृत्य आदेश दीयो रे, नाख्यो स्त्री समुद्र मझारि, साहेलडी० ॥७२
शीलवती ते कामिनी रे, निश्चल कीधो निज मन्न ।
कलक टले तो पारणु रे, नही तो नियम भोजन्न, साहेलडी० ॥७३
समुद्र माहे ते क्षेपवी रे, सती शील गुण माल ।
जलदेव आसन कपियो रे, आवो ते ततकाल, साहेलडी० ॥७४
कमल सिंहासन तिहा कीयो रे, सती विचारी गुणवत ।
गीत नृत्य वाजित्र करी रे प्रातिहार्य होइ मत, साहेलडी० ॥७५
घन धन्य शील सती तणु रे, आसन कप्या देव ।
सती-महिमा भूपे साभली रे, उग्रसेन आव्यो णिक्षेव, साहेलडी० ॥७६
क्षमा करावो विनय करी रे, वेसारी पाव लखी माहि ।
सम्भ्रम करी आवी जिसे रे, तव सती मुनि वाहि, साहेलडी० ॥७७

प्रस्तावना

पदम कविका परिचय और समय

प्रस्तुत सग्रहमे सर्वप्रथम हिन्दी छन्दोबद्ध श्रावकाचार श्रीपदम-कविकृत सग्रहीत है। इन्होंने इसके अन्तमे जो प्रशस्ति दी है, उसके अनुसार इस श्रावकाचारकी रचना सम्वत् १६१५ के माघ सुदी पचमी शक्रवारको पूर्ण हुई हैं यथा—

सवत् सख्या जिनभावना[१६], आनन्दा, सवच्छर सख्या प्रमाद[१५]तो।
मास माहु सोहामणो आनन्द, भाइ वा सुत मर्याद तो ॥६०॥
तिथि सख्या चारित्र भेदे, आनन्दा, रस सख्या शुभवार तो।
शुभ नक्षत्रे शुभ योगे, आनन्दा, कीयो मैं श्रावकाचार तो ॥६१॥ (पृष्ठ ११०)

इन्होने अपनी जो गुरु-परम्परा दी है उसके अनुसार ईडर शाखाके भट्टारक श्री पद्मनन्दी तत्पट्टे भ० सकलकीर्ति हुए जिनका समय [सवत् १४५०-१५१० तक] का था उनके पट्ट पर भ० भुवनकीर्ति वैठे जिनका समय [सवत् १५०८-१५२७] तक है। उनके पट्ट पर भट्टारक ज्ञानभूषण वैठे जिनका समय (स० १५३४-१५६०) तकका है उनके पट्टपर भ० विजयकीर्ति वैठे जिनका समय (स०१५५७-१५६८) तकका है। उनके पट्टपर भ० शुभचन्द्र वैठे जिनका समय (स० १५७३-१६१३) तकका है इनके शिष्य भ० कुमुदचन्द्र हुए जिनको पदम कविने अपने गुरु रूपसे नमस्कार किया है।

पदम कविने अपनेको भ० शुभचन्द्रकी आम्नायका उल्लेख किया है, विनयचन्द्रको आगम गुरु और कमश्री ब्रह्मको अध्यात्म गुरु लिखा है। हीर ब्रह्मेन्द्रका शिक्षा गुरुके रूपमे उल्लेख किया है। भ० शुभचन्द्रका अन्तिम समय स० १६१३ तकका उल्लेख ऊपर किया गया है उनके शिष्य कुमुदचन्द्रका गुरु रूपसे उल्लेख कर प्रस्तुत श्रावकाचारकी रचना स० १६१५ मे हुई है यह उक्त भ० पट्टावलीसे भी सिद्ध होता है। (पृ० १०७)

पदम कविने जिन आचार्योके श्रावकाचारोंके आधारपर अपने श्रावकाचारको रचना की है उसमे स्वामी समन्तभद्रका रत्नकरण्ड, वसुनन्दिका श्रावकाचार, प० आशाधरका सागार-धर्मामृत, और सकलकीर्त्तिका श्रावकाचार प्रमुख हैं। फिर भी श्रावक की त्रेपन क्रियाओका वणन इन्होने विस्तारके साथ किया हैं, इन्होने श्रावकाचारको रत्नदीप और त्रेपन क्रियाओको चिन्ता-मणि रत्न कहा है। यथा—

श्रावकाचार ते रत्नदीप आनन्दा, त्रेपन क्रिया चिन्तारत्न तो।
सुगुरु रत्न मूल्य नही, आनन्दा, दया करो तस जल तो ॥४४॥ (पृ० १०९)

पदम कविने अपने श्रावकाचारका ग्रन्थ परिमाण २७५० श्लोक प्रमाण कहा है और इसे छत्तीस प्रकारके रासोमे रचा है। यथा—

छत्तीस भेद भासे भण्यो आनन्दा, श्लोक शत सत्तावीस तो।
पचास अधिक सही आनन्दा, ग्रन्थ-सख्या अशेष तो ॥५८॥ (पृ० ११०)

गणधर गुरु ते द दिया रे, पूछ पूर्वभव वृत्तान्त ।
केवली मुखते पामीयो रे, पापे कलक दूरन्त, साहेलडी० ॥७९
अवधि ज्ञान गुरु निमला रे, वोल्या ते भवतार ।
एकमना सती साभले रे, पेहलो भव विचार, साल्हडी० ॥८०
इणि नगरी द्विज तणी रे, पुत्रीनु नागश्री नाम ।
जिन चैत्यालय सदा करी रे, प्रभाजन सुभाम, साहेलडी० ॥८१
सन्ध्या-समय एक आवियो रे, मुनिदत्त नामे जतीराय ।
गढ पासे गरता माहे रे, रह्यो निश्चल करी काय, साहेलडी० ॥८२
रात्रि तणो योग लेइ रह्यो रे, रह्या धरी निज ध्यान ।
प्रभात समय आवी नागश्री रे, वोले ते अज्ञान, साहेलडी० ॥८३
सैन्य सहित भूप आवसे रे, इहा थी जाउ मुनि आज ।
अलीक वोले मद भमली रे, इक्ष किरे नि काज, साहेलडी० ॥८४
इम कही मही पूजावी रे, एक वुछकरी कतवार ।
मुनि ऊपर नें नाखीयो रे आछाद्या मुनि भवतार, साहेलडी० ॥८५
निन्दा करे मुनिवर तणी रे जोडे ते पाप अपार ।
रोष करे ते पापिणी रे, करम करे असार, साहेलडी० ॥८६
क्रीडा काजें भूप आवीयो रे, देखो शासन स्वास ।
तव कतवार दूरे कियो रे, दीठा मुनि गुण रासि, साहेलडी० ॥८७
मुनि प्रशसा भूप करे रे, स्वामी ते क्षमा भडार ।
मुनि-अग पीडा उपनी रे, पाम्यो योग तिणि वार, साहेलडी० ८८
तव लाजी ते कामिनी रे, करे औषध जोग्य काज ।
भक्ति सुश्रूषा करे घणी रे, निरोगा कीया मुनिराज, साहेलडी० ॥८९
योग्य औषध दान दीयो रे, कीयो जती वैयावृत्य ।
पुण्य घणु पोते करयो रे, सर्व औषधि ऋद्धि हेत, साहेलडी० ॥९०
निन्दा गर्हा घणी करी रे, मरण पामी ते नारि ।
निन्दा दोषे तु उपनी रे, वृषभ सेना कुवारि, साहेलडी० ॥९१
कन्या स्नान पवित्र जले रे, सर्व रोग विनाश ।
महिमा ख्याति जस पामीयो रे, राजा देई सुखवास, साहेलडी० ॥९२
मुनि वैयावृत्य तणें फले रे, योग्य औषधि दीयो दान ।
तिणि गुणे तुझ उपनी रे, औषधि ऋद्धि निधान, साहेलडी०॥९३
निन्दा करी मुनि टाकीया रे, नाखी ते कतवार ।
तिणें पापे तुझ आवीयो रे, कलक दुःख दातार, साहेलडी० ॥९४
देव शास्त्र गुरु धर्म तणी रे, निन्दा करे जे मूढ ।
तेहमा पाप तणो पार नही रे, जनमि जनमि दुःख सहे मूढ, साहेलडी० ॥९५
इम जाणी तम्हो केह तणी रे, निन्दा करे जे मूढ ।
ते भक्ति विनय करो पर तणी रे, नही तो मध्यस्थ होय, साहेलडी० ॥९६

वृषभ सेना निज भव सुणी रे, उपज्यो मन वैराग ।
स्वजन सहु खिमावीयो रे, छोड्यो मोह घर-राग, साहेलडी० ॥९७
आर्यिका थयी ते निर्मली रे, करे ते जप तप ध्यान ।
मरण समाधें साधीयो रे, स्वर्ग हुओ गीर्वाण, साहेलडी० ॥९८

दोहा

आहार दान पुण्य वर्णव्यो, श्रीषेण पाम्यो सौख्य ।
शान्तिनाथ श्रीजिन हुआ, पाम्या अविचल मोक्ष ॥१
नागश्री नारी निमली दीयो योग्य औषध दान ।
वृषभसेना कन्या ऊपजी, औषध रिद्धि निधान ॥२
जस महिमा गुण पामीने, सुख भोगवी ससार । जप तप सजम आचरी, पहुँची स्वर्ग-दुआर ॥३
इम जाणी तम्हो भविजनो, पात्रें देउ औषध दान । निरोग पणु पामीइ, पामीइ अविचल थान ॥४
दातार ऋद्धि सफल कही, जे दें दान सुपात्र । चन्द्रकान्त मणि चन्द्रयोगे, अवर पाथर आदि ॥५
सुब थकी कूकर भलो, जे बहु मिलि खाइ ग्रास । सुब सानि उडी ऋद्धि, महि मुकी जाइ निरास ॥६
कृपण धन मूकी मरे, साथ लेई दातार । दाता ते कृपण सही, मूके नही निज सार ॥७

अथ ढाल जसोधरनी

औषध दान कथा वणवी, हवे कहूँ कथा सार । ज्ञान दान तणी निर्मला, कुडेश तणी गुणधार ॥१
भरतक्षेत्र एह जाणीए, आय खड विशाल । कूर्म नामे ग्राम इक कही, वसे गोविन्द गोपाल ॥२
एक वार वन माहे गयो, चारे बहु गोधन्न । तरु तणा कोटर माहे, लाधो पुस्तक मन्य ॥३
ते पुस्तक तिणें लेई दीयो, पद्मनन्दी मुनीश । पुस्तक वाची निमलो, दीयो धर्मोपदेश ॥४
भट्टारक आदेश हु मिली लीयो पुस्तक दान । सध सहु समक्ष पणे, पूजे श्रुत शुभ ज्ञान ॥५
पुस्तक पूजी विनय धरी, थाप्यो कोटर माहि । वली वली पूजे ते गोविन्द, पुस्तक गुण चाहि ॥६
काल क्रमे मरण पामीउ, करी दोष निदान । तिण नगरें वसे ग्राम कूट, तस हुओ ते सन्तान ॥७
कुडेश नाम ते पुत्र तणु मोटो थयो ते कुमार । पद्मनन्दी मुनि देखीया, वन गयो एक वार ॥८
जाति स्मरण ज्ञान ऊपज्यो, जाण्यो पूर्व भव विचार ।
पद्मनन्दी गुरु भेटीया, पहिला जन्म-सस्कार ॥९
तब कुडेश तणे मनें उपज्यो वैराग । सयम लीयो निर्मलो करी सग परित्याग ॥१०
जप तप सजम आचरे, करे ते आतम काज । मरण समाधि साधीयो, पाम्यो ते देवराज्य ॥११
गोविन्द पहिले भव दीयो, दीयो पुस्तक दान । तेह फल तस ऊपनो, जाति स्मरण सुज्ञान ॥१२
इणि परि जे भविजन देइ दीये पुस्तक दान ।
लिखि लिखायी, उपदेश देइ, ते लहे केवल ज्ञान ॥१३
ज्ञान दान कथा कही ए, अवर कहूँ सुविचार । वसतिका दान कथा सुणो, सक्षेपे सावधान ॥१४
मालव देश माहे वसे, घट नामे सुग्राम । देविल नामे कुभकार, नावी धर्मिल नाम ॥१५
मित्राचार हुओ विहु, कीयो मनसु विचार । मठ एक कारावीयो, पथी जन साधार ॥१६
एक दिन तेणे देवलि, आव्या मुनि भवतार । ता मठमाहि ते राखीया, साहाय्य करे तिणि वार ॥१७
पछें धर्मिल नावी तिणें, आण्यो सन्यासी एक दुष्ट ।
विहू मिलि झगडो करी, नीकाल्या मुनि ज्येष्ठ ॥१८

मुनि कोटर माहे जाय रह्या स्वामी क्षमा भडार। वात शीत उष्ण तणा सहे परीषह-भार ॥१९
पछे ते देवलि जाणीयो, कीयो पश्चात्ताप। माहो माहे जुद्ध करी, पाम्या अति दुख पाप ॥२०
आर्त्त ध्यानें मरी ते हुओ, व्याघ्र नें भय कृष्ट। कुम्भकार मरी वापडु, हुओ सूकर अशुप्ट ॥२१

गुफा द्वारे रहे सूअर, मुनि रहे गुफा मझार।
समाधिगुप्ति पेहलु नाम, दूजो त्रिगुप्तिमे गुण धार ॥२२
मुनिवर जव देखीया, भणता सुणी जिनवाणि।
तव सूकर मन ऊपज्यो, जातिस्मरण गुण जाण ॥२३

धर्मोपदेश ते साभली, सुअर हुआ धमवत। निज शक्ति व्रत ग्रही, हूओ ते अनि सत ॥२४
मनुष्य गधे व्याघ्र आवीयो, साहामो सूकर थाय। परस्परें जुद्ध कीयो, वेगे मरण ते पाय ॥२५
व्याघ्र मरण ते पामीयो, पाम्यो नरक अवतार। छेदन भेदन मार-मार, सहे दु ख पच प्रकार ॥२६
कुम्भकार ते सुअर, देई वसतिका दान। महर्द्धिक देवपद पामीयो, कल्पवृक्ष विमान ॥२७

इम जाणी जति सहाय कीजे, देय मठ शुभ स्थान।
सुर नर वर गेह पामीइ, लहिये अविचल थान ॥२८

सक्षेपै मैं वर्णंवी, दान तणी कथा चार। जिन पूजा कथा साभल्यो, भेद तणी भवतार ॥२९
जम्बूद्वीप पर लिया मणो, भरत क्षेत्र विशाल। आर्य खण्ड माहे मगध देश राजगृह गुण माल ॥३०
श्रेणिक राजा राज करे, चेलना तस राणी। सभा पुरी वैठो भूपती, आव्यो माली एक वार ॥३१

अकाल पुष्प फल भेट लेई, विनय वहे वह वनपाल।
विपुलाचल जिन समोसर्या श्री वीर सकोमाल ॥३२

तव राजा आणदीयो, वीर वदण जाय। समोसरणमा जिन पूजी, श्री वद्या जिन पाय ॥३३
पूजि स्तवी जिन पय नमी, गौतम गुरु वद्या। नर सभा वैठो भूपती, धर्मवृद्धि आनद्या ॥३४
देव असुरो ए आवीयो, सुर गयो मडूक चिह्न। देव देखी आचभियो, भूप पूछे तव जिन्न ॥३५
गौतम गणधर (पूछियो) सुणो श्रेणिक राज। देव मोडो जे आवीयो, कारण कहो तस आज ॥३६
राजगृह पुर तुझ तणे, वसे श्रेष्ठी नागदत्त। भवदत्ता राणी तेहतणी, वहु ऋद्धिमो भासत्ति ॥३७
मूढमती साह भद्रक, वापी करावी निज वन्न। पद्म आच्छादी जल भगी, वि द्रव्यो वहु धन्न ॥३८
आर्त्तध्यानें श्रेष्ठी मरी, तिर्यञ्च गति ऊपन्नो। वापी माहि मेढक हुओ, जातिस्मरण ते सम्पन्नो ॥३९
भवदत्ता पाणी भरे तिणि वापी तस नार। तल पिडे डकरिवाले चडे, नाखे नीर मझार ॥४०
भवदत्ताइ गुरु पूछिया, मुनि अवधि ज्ञानवन्त। कहो स्वामी कृपा करी, मडूक तणो वृत्तान्त ॥४१
सुवृत्त गुरु कहे साभलो, तम्ह तणो जे कन्त। आर्तध्यान थी अवतर्या, मडूक भागदन्त ॥४२
जातिस्मरण ज्ञाने करी, तुझ ऊपर धरे स्नेह। तेह भणी खोले चढे, पेहली स्त्री मोही तेह ॥४३
तव नारी वापी आवीया, लीयो मढक जाणी। घरि आणी कूडी ढव्यो, भरियो निमल पाणी ॥४४
तिणें समें वीर समोसर्या, चालो वन्दण राय। भवदत्ता ते सचरी, तब भेक मन ध्याय ॥४५
कमल-पत्र मुखे धरी, हलुऐ हलुए हरि जाय। पुर द्वारें जव आवीयो, तव चाप्यो गज पाय ॥४६
मरण पामी भावें चड रो, जिनपूजा परिणाम। सौधम स्वर्ग तें अवतर्यो, देव महर्द्धिक ठाम ॥४७
वैक्रियिक देव ते नीपनो, अन्तमुंहूर्त्त मझार। अवधि ज्ञानें ते जाणीयो, पूरव भव ससार ॥४८
विमान वेसी सुर आवीयो, पूजवा श्री जिनदेव। गौतम कहे सुणो श्रेणिक, उपनो ए सुर हेव ॥४९
देव आवी जिनपूज-स्तवी, भावें करीय प्रणाम। पुण्य वणो पोते करी, वैठो सुर-सभा ठाम ॥५०

तब श्रेणिक आनन्दीयो, उपज्यो पूजा बहु भाव। धन्य धन्य पूजा तिण तणी भव-सायर जे नाव ५१
जिन-चरणें पद्म तणी, पूजा अष्ट प्रकार। जल आदे फल पर्यन्त, अर्घदान अवतार ॥५२
इम जाणिय जिन पूजो स्तवो, जाप देउ नवकार। उपराज्यो पुण्य बहु भव्य, सफल करो अवतार।५३
सुर नर वर सुख भोगवी, पूज्य वर स्थान। मन वाछित सुख अनुभवी, अनुक्रमे केवलज्ञान ॥५४

वस्तु छन्द

जिनपूजा करो जिनपूजा करो, भविजन भावे करी।
जिनपूजा कल्पतरु समी, चिन्तामणि कामधेनु पूजा निभर।
मन वाछित फलदाय इन्द्र जिनेन्द्र पद देई जे मनोहर॥
अनुदिन जे जिनपूजसे, निर्मल करि परिणाम। जिनसेवक पदमो कहे, ते लहे अविचल ठाम ॥५५

ढाल मालतडानी

व्रत द्वादश इम वर्णव्या ए सुण सुन्दरे, प्रतिमा सुणो हवे भेद। मालतडा०
मन वचन कायाइ पालीये, ए, सुण सुन्दरे, व्रत प्रतिमा कर्म छेद, मालतडा० ॥१
सामायिक प्रतिमा त्रीजी ए, सुण सुन्दरे, सक्षेपे कहु सविचार। मालतडा०
सामायिक समता पणु ए सुण सुन्दरे, राग-द्वेष परिहार, मालतडा० ॥२
नाम स्थापना द्रव्य क्षेत्र ए, सुण सुन्दरे काल भेद शुभ भाव। मालतडा०
षट् भेद सामायिक ए, सुण सुन्दरे भवसागर जे नाव, मालतडा० ॥३
शुभ अशुभ नाम जे भणी ए, सुण सुन्दरे, राग द्वेष करो वश्य। मालतडा०
नाम सामायिक लीजिए, सुण सुन्दरे, सम परिणाम समस्त, मालतडा० ॥४
स्थापना सामायिक साधिए, सुण सुन्दरे, सुख दु खकारी जे द्रव्य। मालतडा०
ते ऊपर समता भावन ए सुण सुन्दरे, स्थापना सामायिक दिव्य, मालतडा०॥५
जिनप्रासाद शून्य मठ ए, सुण सुन्दरे, गुफा भूधर उद्यान। मालतडा०
बाल पशू स्त्री वेगला ए, सुण सुन्दरे, निरंजन क्षेत्र स्थान, मालतडा० ॥६
पूर्व मध्य अपराह्‌ण ए सुण सुन्दरे, दो दो घडी त्रिण काल। मालतडा०
वरषा शीत उष्ण हो ए, सुण सुन्दरे, समय सामायिक विशाल, मालतडा० ॥७
राग द्वेष सहु परिहरा ए, सुण सुन्दरे, शत्रु मित्र समभाव। मालतडा०
निर्मल मन निज कीजिए ए, सुण सुन्दरे, ते सामायिक सुभाव, मालतडा० ॥८
प्रतिलेखी पृथिवी पीठ ए, सुण सुन्दरे, द्दढ धरी पदमासन्न। मालतडा०
अथवा काउसग्ग ऊभा रही ए सुण सुन्दरे, थीर करी निज मन्न, मालतडा० ॥९
पूरब उत्तर दिशा रही ए, सुण सुन्दरे, अथवा प्रतिमा सन्मुख। मालतडा०
हस्त पाद मुख नेत्रनी ए, सुण सुन्दरे, सज्ञा तजो पर दु ख, मालतडा० ॥१०
सव प्राणी समता पणु ए, सुण सुन्दरे, भावना वरो य सयम। मालतडा०
आर्त रौद्र ध्यान तजो ए, सुण सुन्दरे, करो सामायिक उत्तम, मालतडा० ॥११
आर्त्त ध्यान भेद चार ये, सुण सुन्दरे, इष्ट विरह अनिष्ट सयोग। मालतडा०
त्रीजो पीडा चिंतन ए, सुण सुन्दरे, चौथो निदान करे भोग, मालतडा० ॥१२

इष्ट वियोगे दु ख नही ए, सुण सुन्दरे, अनिष्ट सयोगे नही रोप । मालतडा०
रोग पीडा चितन त्यजो ए, सुण सुन्दरे, निदान त्यजो धरो सतोप, मालतडा० ॥१३
आर्त्त ध्यानें पाप उपजे ए, सुण सुन्दरे, पापें पशगति होय । मालतडा०
इम जाणिय आर्त्ति परिहरो ए, सुण सुन्दरे, धरो सामायिक सोय, मालतडा० ॥१४
रौद्र ध्यान चार सुणो ए, सुण सुन्दरे, हिंसा मृषा स्तेय आनन्द । मालतडा०
विषय सरक्षणा आनन्द ए, सुण सुन्दरे, रौद्र ध्यानें पाप वृन्द, मालतडा० ॥१५
जीव हिंसा झूठे वचन त्यजो ए, सुण सुन्दरे, चोरिये नही पर धन्न । मालतडा०
विषय भोग भावे त्यजो ए, सुण सुन्दरे, भजो सामायिक भविजन्न मालतडा० ॥१६
रौद्र ध्याने तीव्र पाप ए, सुण सुन्दरे, पापें नारक दु ख होय । मालतडा०
क्रूर परिणाम टालीइ ए, सुण सुन्दरें, पालीये समभाव सोय, मालतडा० ॥१७
दुर्ध्यान दूरे करो ए, सुण सुन्दरे, चारो धरो धर्म ध्यान । मालतडा०
आज्ञा उपाय विपाक विचय ए, सुण सुन्दरे, चौथो त्रिलोक सस्थान, मालतडा० ॥१८
आज्ञा मानो श्री जिन तणी ए, सुण सुन्दरे, चतु कर्म-विनाश उपाय । मालतडा०
कर्म-विपाक फल चितवो ए, सुण सुन्दरे, लोक-सस्थान ते ध्याय, मालतडा० ॥१९
धमध्याने पुण्य उपजे ए, सुण सुन्दरे, पुण्ये नर-सुर-सौख्य । मालतडा०
शुक्ल ध्यान धरो भावना ए, सुण सुन्दरे, भावनाए होइ मोक्ष, मालतडा० ॥२०
त्रिविध वैराग्य ते चिन्तवो ए सुण सुन्दरे, भवते भोग शरीर । मालतडा०
अनुप्रेक्षा बार चिन्तन ए, सुण सुन्दरे निश्चल करि मन धीर, मालतडा० ॥२१
कुड्मल कर-युग कीजीइ ए, सुण सुन्दरे, नासा अग्रि निज दृष्टि ।
हीन दीर्घ स्वर नही ए, सुण सुन्दरे, छ राग भास नही धिष्ट, मालतडा० ॥२२
निज करणे सुणीइ जिह ए, सुण सुन्दरे, तिम भणो सामायिक सूत्र । मालडा०
वचनें अक्षर उच्चरो ए, सुण सुन्दरे, निज मनि अर्थ पवित्र, मालतडा० ॥२३
भणता पाठ जो आवे नही ए सुण सुन्दरे, तो पच गुरु नमस्कार । मालतडा०
पच शत ध्याओ जपो ए, सुण सुन्दरे सामायिक पुण्य साधार, मालतडा० ॥२४
मन वचन काया पवित्र करी ए, सुण सुन्दरे, पहरी निमल एक चीर । मालतडा०
ईर्यापथ-शोधन करी ए, सुण सुन्दरे, कायोत्सर्ग धरि एक धीर, मालतडा० ॥२५
ॐ नम सिद्धेभ्य इम कही ए, सुण सुन्दरे, भणीए सामायिक शास्त्र । मालतडा०
नव वन्दन देव करो ए, सुण सुन्दरे, तेह भेद सुणो छात्र, मालतडा० ॥२६
पच परमेष्ठी जिन गेह ए, सुण सुन्दरे, जिनप्रतिमा जिनधम ।
जिन-वयण ए नय देव ए, सुण सुन्दरे, वदना करो अनुकर्म, मालतडा० ॥२७
चैत्य भक्ति पच गुरु भक्ति ए, सुण सुन्दरे शान्तिभक्ति जिनसार । मालतडा०
त्रण भक्ति दडक तणो ए, सुण सुन्दरे, विधि कहूँ सुणो सजन्न, मालतडा० ॥२८
चैत्य भक्ति आदि पचाग प्रणाम ए, सुण सुन्दरे, त्रण आवर्त शिर नुति । मालतडा०
एक दडक मध्य कायोत्सग आदि ए, सुण सुन्दरे, त्रण आवर्त शिर नति एक, माल०॥२९
कायोत्सर्ग नवकार नव ए, सुण सुन्दरे ए, नवकार-प्रति त्रणे उच्छ्वास । मालतडा०
सत्तावीस शुभ दीजीइ ए, सुण सुन्दरे, हीन अधिक न वि श्वास, मालतडा० ॥३०

कायोत्सर्ग अन्ते आवर्त्त त्रण ए, सुण सुन्दरे, एक शिर नमस्कार। मालतडा०
दडक अन्ते पचाग प्रणाम ए, सुण सुन्दरे, त्रण आवर्त शिर नति सार, मालतडा० ॥३१
एणी परे दडक प्रति ए, सुण सुन्दरे, दोइ पचाग नमस्कार। मालतडा०
वार आवर्त चार शिर नमी ए, सुण सुन्दरे, एक कायोत्सर्ग धार, मालतडा० ॥३२
पछे चैत्य भक्ति भणो ए, सुण सुन्दरे, वली पच गुरु तणी भक्ति। मालतडा०
शान्ति भक्ति शुभ भणो ए, सुण सुन्दरे, करी सामायिक सदा युक्ति, मालतडा० ॥३३
त्रण काल सदा कीजीइ ए, सुण सुन्दरे, पूर्व मध्य अपराह्‌ण। मालतडा०
चार घडी माहे सही ए, सुण सुन्दरे, रखेउ लघे तमे मान, मालतडा० ॥३४
सागारी सामायिकवन्त ए, सुण सुन्दरे, सर्व सावद्य-रहित। मालतडा०
वस्त्रे वेढ्यो जेहवु मुनिवरु ए, सुण सुन्दरे, तेर चारित्र सहित, मालतडा० ॥३५
सागारी सामायिक वली ए, सुण सुन्दरे, सोल स्वर्ग-पर्यन्त। मालतडा०।
सुर नर वर सुख भोगवी ए, सुण सुन्दरे, अनुक्रमे होइ मुक्तिकन्त, मालतडा० ॥३६
जिनमुद्रा तप श्रुतवन्त ए, सुण सुन्दरे, सदा सामायिक धरे जेह। मालतडा०
नव ग्रैवेयक लगें ऊपजे ए, सुण सुन्दरे, अभव्य प्राणी वली तेह, मालतडा० ॥३७
आसन्न भव्य जिनमुद्रा धरी ए, सुण सुन्दरे, लेइ सामायिक सार। मालतडा०
दुर्द्धर कम सहु निर्जरी ए, सुण सुन्दरे, होइ मुक्ति भवतार, मालतडा० ॥३८
सामायिक महिमा घणी ए, सुण सुन्दरे, क्रूर जीव वश थाइ। मालतडा०
व्याघ्र सिंह सर्प आदि ए, सुण सुन्दरे, विषम विष तस जाइ, मालतडा० ॥३९
सुर नर सहु सेवा करी ए, सुण सुन्दरे, शत्रु सर्वे मित्र होइ। मालतडा०
मन वाछित फल पामीइ ए, सुण सुन्दरे, सामायिक प्रभावे जोइ, मालतडा० ॥४०
इमि जाणि सदा कीजिइ ए, सुण सुन्दरे, सामायिक गुणधार।
निज शक्ति प्रगट करि ए, सुण सुन्दरे, घणु सु कहिये वारम्वार, मालतडा० ॥४१
प्रमादपणें जे करे नही ए, सुण सुन्दरे, तृष्णा करि व्यापार। मालतडा०
अष्ट पहर पाप करि ए, सुण सुन्दरे, भमे ते बहु ससार, मालतडा० ॥४२
विषयारम्भ जे जीवडा ए, सुण सुन्दरे, गमे वृथा बहु काल। मालतडा०
हा हा करता हीडे सदा ए, सुण सुन्दरे, धर्म थी भूला ते वाल, मालतडा० ॥४३
धर्म-सामग्री दोहिली ए, सुण सुन्दरे, जिम चिन्तामणि रत्न। मालतडा
विषय प्रमादें का गमो ए, सुण सुन्दरे, करो सामायिक यत्न, मालतडा० ॥४४
काल कला घडी मुहूर्त्त लगे ए, सुण सुन्दरे, निज शक्ति अनुसार। मालतडा०
धर्म ध्यान दिन जे गमि ए, सुण सुन्दरे, ते सार्थक अवतार, मालतडा० ॥४५
सामायिक विण नर जाण वा ए, सुण सुन्दरे, गेह रख्यावेल समान। मालतडा०
जाव जीव ते भार वही ए, सुण सुन्दरे, पामे नरक अवतार, मालतडा० ॥४६
सामायिक पाठ आवे नही ए, सुण सुन्दरे, तो सदा गिणो नमोकार। मालतडा०
पच परमेष्ठी पद निर्मला ए, सुण सुन्दरे, चौदह पूर्व माहे सार, मालतडा० ॥४७
वाल नवे सूत सुतता ए, सुण सुन्दरे, मत्र जपो नमोकार। मालतडा०
सर्व मत्र तणो नायक ए, सुण सुन्दरे, भवोदधितारण हार, मालतडा० ॥४८

विकट संकट वैगी टले ए, सुण सुन्दरे, विपम विघ्न विनाश, मालतडा०
नमोकार महिमापणें ए, सुण सुन्दरे, दुख दारिद्र मिटे अरु त्रास, मालतडा० ॥४९
डाकिमणी शाकिणी भुत प्रेत ए, सुण सुन्दरे, खवीस झोटिंग वेताल, मालतडा०
क्रूर ग्रह राक्षस टले ए, सुण सुन्दरे, वाघिन सिंह फणिटाल, मालतडा० ॥५०
विपम विप अमृत हुइ ए, सुण सुन्दरे, दुद्धर अग्नि जल थाइ, मालतडा०
नमोकार प्रभाव घणु ए, सुण सुन्दरे, जोभे कह्यो किम जाइ, मालतडा० ॥५१
वाघ वानर श्यान चोर ए, सुण सुन्दरे, मरता लहे नमोकार, मालतडा०
देवतणा पद पामिया ए, सुण सुन्दरे, अनुक्रमे मोक्ष दुआर मालतडा० ॥५२
जापतणो विधि साभलो ए, सुण सुन्दरे, अक्षसूत्र लेइ पवित्र, मालतडा०
मन वच काया निश्चल करी ए, सुण सुन्दरे, मंत्र नमोकार विचित्र, मालतडा० ॥५३
मोक्ष हेतु अगुष्ठ जपि ए, सुण सुन्दरे, तर्जनी अगुली धर्म-राज, मालतडा०
मध्य अगुली शान्ति-हेतु ए, सुण सुन्दरे, अनामिका अर्थ-समाज, मालतडा० ॥५४
कनिष्टका सर्व काय सिद्ध ए, सुण सुन्दरे, लक्षण(स्यु जपो मंत्र, मालतडा०
मंत्र प्रसादें पामीइ ए, सुण सुन्दरे, दुर्धर जे परतंत्र, मालतडा० ॥५५
अगुली अग्र जे जप्यो ए, सुण सुन्दरे, जे जप्यो लघी मेर, मालतडा०
ते सहु नि फल जाणवो ए, सुण सुन्दरे उपजे पुण्य नही भूर, मालतडा० ॥५६
इम जाणि जत्न करो ए, सुण सुन्दरे, मंत्र जपो थई सावधान, मालतडा०
पुण्य घणो वली उपजे ए, सुण सुन्दरे, नासे विघ्न वितान, मालतडा० ॥५७
सामायिक स्तव वंदन प्रतिक्रम ए, सुण सुन्दरे, कायोत्सर्ग प्रत्याख्यान, मालतडा०
अखड पर्ण सदा कीजिये ए, सुण सुन्दरे, आवश्यक अभिधान, मालतडा० ॥५८
समता सामायिक जाणीये ए, सुण सुन्दरे, जिन चोवीस स्तवन, मालतडा०
एक तणा जिण गुण ए, सुण सुन्दरे, ते वदन पावन्न, मालतडा ॥५९
दोपतणु आलोचन ए, सुण सुन्दरे, ते कहीइ प्रतिक्रम, मालतडा०
निन्दा गर्हा निज कीजिये ए, सुण सुन्दरे, टालिये पाप कुकर्म, मालतडा० ॥६०
निजशक्ति कायोत्सर्ग वरो ए, सुण सुन्दरे, ऊभा अथवा पद्मासन्न, मालतडा०
वस्त्र परित्याग जे कीजिए, सुण सुन्दरे, ते प्रत्याख्यान थाय जन्न, मालतडा० ॥६१
षट् आवश्यक नित पालीइ ए, सुण सुन्दरे, टालीये सकल प्रमाद, मालतडा०
पच इन्द्री मन वश करी ए, सुण सुन्दरे, हारी हरष विपाद, मालतडा० ॥६२
दत विना हस्ती जिम ए, सुण सुन्दरे, दष्ट्र्या विना जिम सिंघ, मालतडा०
आवश्यक विना जति तिम ए, सुण सुन्दरे, नवि सोहे व्रत्त प्रसग, मालतडा० ॥६३
सामायिकतणा दोष त्यजो ए, सुण सुन्दरे, त्यजीये पच अतिचार, मालतडा०
मनवचकाया दु प्रणिधान ए, सुण सुन्दरे, अनादर स्मृति अतर आधार, मालतडा० ॥६४
सामायिकपाठवचनें भणो ए, सुण सुन्दरे, सकल्प विकल्प सन्तान, मालतडा०
आर्त्त रौद्र जे चिन्तन ए, सुण सुन्दरे, ते मनि दु प्रणिधान, मालतडा० ॥६५
सुत विना पाठ भणि ए, सुण सुन्दरे, मुखे करे हुकार, मालतडा०
पूर्वान्य बोले वली ए, सुण सुन्दरे, ते वचन अतिचार, मालतडा० ॥६६

निजकाय चचल करि ए, सुण सुन्दरे, चलण हस्त सचार, मालतडा०
मुखे नेत्र सज्ञा करि ए, सुण सुन्दरे, ते अग दूषणकार, मालतडा० ॥६७
प्रमादपणें पाठ जे भणें ए सुण सुन्दरे, अनादर दूषण तेह, मालतडा०
स्मृति तणो अन्तर करि ए, सुण सुन्दरे, सभारे पाठ नही जेह, मालतडा० ॥६८
इणि परे पच विधि ए, सुण सुन्दरे, त्यजो सामायिक अतीचार, मालतडा०
मन बचन काया ए करी ए, सुण सुन्दरे, धरो समता भवतार, मालतडा० ॥६९
सामायिक सूत्रतणा ए, सुण सुन्दरे, सुणो दोष बत्रीस नाम, मालतडा०
सक्षेपे कहू जुजुआ ए, सुण सुन्दरे, जे कह्या जिन स्वामि, मालतडा० ॥७०
अनादर स्तब्ध प्रविष्ट ए, सुण सुन्दरे, प्रतिपीडित दोलायित नाम, मालतडा०
अकुश कच्छपरिंगित ए, सुण सुन्दरे, मच्छ उद्वत दोष भाम, मालतडा० ॥७१
मनोदुष्ट वेदिकावध ए, सुण सुन्दरे, भय दोष विभक्ति ऋद्धि होइ, मालतडा०
गारव स्तेनित प्रत्यनीक ए, सुण सुन्दरे, प्रदुष्ट तर्जित्त दोष जोइ, मालतडा० ॥७२
शब्द हेलित त्रैवलित ए, सुण सुन्दरे, सकुचित दृष्ट अदृष्ट, मालतडा०
सघ कर मोचन आलब्ध ए, सुण सुन्दरे, अनालब्ध दोषते दुष्ट, मालतडा० ॥७३
हीन उत्तर चूलिका नाम ए, सुण सुन्दरे, मूक दर्दुर दोष जाणि, मालतडा०
चुल्ललित चरम नाम ए, सुण सुन्दरे, दोष बत्रीस पाप खाणि, मालतडा० ॥७४
कृतकर्मज आलस करे ए, सुण सुन्दरे, अनादर नाम दोष, मालतडा०
विद्या अहकार जे करे ए, सुण सुन्दरे, स्तब्ध आकारि ते सेस, मालतडा० ॥७५
पच परमेष्ठी पासें,भणी ए, सुण सुन्दरे, ते कहिये दोष प्रविष्ट, मालतडा० ।
निज हस्ते जानु युग धरी ए, सुण सुन्दरे, ते पर पीडित निकृष्ट, मालतडा० ॥७६
निज तनु मन चचल करि ए, सुण सुन्दरे, दोष दोलायित तेह, मालतडा० ।
निज निलाडे अगुष्ठ धरी ए, सुण सुन्दरे, वदनांकुश दोष एह, मालतडा० ॥७७
कटि चचल कच्छप नीपरे चचल ए, सुण सुन्दरे, मच्छ उद्वर्तित ते भाम, मालतडा ।
, मालतडा ॥७८
सूरी आदि सक्लेश पन ए, सुण सुन्दरे, ते दुष्ट मन दोष, मालतडा०
कर युग्में जानु बिहि जोडी ए, सुण सुन्दरे, वेदिका नाम ते दोष, मालतडा० ॥७९
भय पामी मरण तणो ए, सुण सुन्दरे, ते सामायिक भय होइ, मालडता०
गुरु तणें भय जे भणि ए, सुण सुन्दरे, ते विभक्ति दोष नु जोइ, मालतडा० ॥८०
पूजा वाछ जे सघतणी ए, सुण सुन्दरे, गौरव पणें ऋद्धि दोष, मालतडा०
माहात्म्य प्रकाशे जे आप तणो ए, सुण सुन्दरे, भणे गारव ते शोष, मालतडा० ॥८१
गुरु थी प्रच्छन्न पणें भणें ए, सुण सुन्दरे, ते चोरी दोष वखाणि, मालतडा०
दैव शास्त्र थी परान्मुख भणें ए, सुण सुन्दरे, ते प्रत्यनीक दोष जाणि, मालतडा० ॥८२
पर साथें द्वेष क्लेश करी ए, सुण सुन्दरे, वदना ते दोष प्रदुष्ट, मालतडा०
परने भय करतो जे भणी ए, सुण सुन्दरे, तर्जित दोष निकृष्ट, मालतडा० ॥८३
मौन विना पाठ जे भणि ए, सुण सुन्दरे, ते कहिये वचन दूषण, मालतडा०
आचार्य आदें पराभव करि ए, सुण सुन्दरे, ते हेलित दोष लक्षण, मालतडा० ॥८४

त्रिवली भग अग जे करि ए, सुण सुन्दरे, भाले रेख त्रिवली तेह, मालतडा०
हस्ते स्पर्श सकोचे अग ए, सुण सुन्दरे, वदना दोप सकुचित, मालतडा० ॥८५
सघ सहु देखी भणि ए, सुण सुन्दरे, बाह्य पणें दोप दृष्ट, मालतडा०
सहि गुरु थो उलवी भणें ए, सुण सुन्दरे, पृष्ठतो वदना अदृष्ट, मालतडा० ॥८६
सघ रजि भक्ति वाछिए, सुण सुन्दरे, सघकार मोचन तेह, मालतडा०
पर थी द्रव्य पामी भणे ए, सुण सुन्दरे, आलब्ध नामे दोप एह, मालतडा० ॥८७
लोभें द्रव्य वाछे पर तणो ए, सुण सुन्दरे, ते अनालब्ध दोप नाम, मालतडा०
अर्थ व्यजन काल हीण भणें ए, सुण सुन्दरे, ते हीन दोप उद्दाम, मालतडा० ॥८८
घुर्घुर नादे मोटे शब्दें भणें ए, सुण सुन्दरे, दर्दुर दोप ते होइ, मालतडा०
पचम रागें पर क्षोभ करे ए, सुण सुन्दरे, धूललित दोप इम जोइ, मालतडा० ॥८९
इणि परें त्रत्रीस दोप ए, सुण सुन्दरे, सक्षेपें कह्यो विचार, मालतडा०
विस्तार आगमे जाण जो ए, सुण सुन्दरे, हूँ नर अल्पमति धार, मालतडा० ॥९०
दोष वत्रीस दूरे करी ए, सुण सुन्दरे, परिहरि सयल अतिचार, मालतडा०
मन वच काया दृढ करी ए, सुण सुन्दरे, धरिये सामायिक सा॰, मालतडा० ॥९१
सदोष वन्दना जु कीजिये ए सुण सुन्दरे, तो नो होइ पुण्य लगार, मालतडा०
केवल काय कष्टकारी ए, सुण सुन्दरे, श्रम तणो लाहे भा॰, मालतडा० ॥९२
इम जाणि दोष परिहरी ए, सुण सुन्दरे, धरो समता भवतार, मालतडा०
अखड आवश्यक पालिये ए, सुण सुन्दरे, टालिये दु ख ससार, मालतडा० ॥९३
कायोत्सर्गे वदना जे करे ए, सुण सुन्दरे, तेहना दोप वत्रीस, मालतडा०
जे जिन आगम जाणज्यो ए, सुण सुन्दरे, घोटक आदे निर्देश, मालतडा० ॥९४
चहु अगुल तणें अतरे ए, सुण सुन्दरे, भू पीठ धरी दोय पाय, मालतडा०
जानु लगें लब हस्त ए, सुण सुन्दरे, निश्चल करी निज काय, मालतडा० ॥९५
विहु पासें पूठि मस्तकि ए, सुण सुन्दरे, अडकीये किसे नही आणि, मालतडा०
स्वनेत्र सज्ञा किसी ए, सुण सुन्दरे, मौन धरी निज वाणि, मालतडा० ॥९६
इणि परे पाठ जे भणी ए, सुण सुन्दरे, लेइ कायोत्सग गुणधार, मालतडा०
इम दोप कोइ नही होइ ए, सुण सुन्दरे, जो रहे शास्त्र अनुसार, मालतडा० ॥९७
सदा सामायिक कीजिये ए, सुण सुन्दरे, निज शक्ति लेइ कायोत्सर्ग, मालतडा०
सुर नर वर सुख भोगवीइ ए, सुण सुन्दरे, इणि परे होइ अपवर्ग, मालतडा० ॥९८
जिम जिम समता कीजीइ ए, सुण सुन्दरे, तिम तिम दु कर्म हाणि, मालतडा०
पुण्य घणु वली ऊपजे ए, सुण सुन्दरे, पुण्ये स्वर्ग सुख खाणि, मालतडा० ॥९९
यती अथवा गृहस्थ पणे ए, सुण सुन्दरे, समता धरि घडी दोय, मालतडा०
मनवाछित सुख ते लहे ए, सुण सुन्दरे, समता तोले नही कोय, मालतडा० ॥१००

वस्तु छन्द

धरो सामायिक, धरो सामायिक भविजन भावे करी ।
मन वचन काया दृढ पणे, करे सामायिक सार निमल,
इन्द्र नरेन्द्र पद पामिनें, अनुक्रमे सुख देइ ते अविचल ।

अनुदिन जे जन पालसे, व्रत सामायिक सार, जिन सेवक पदमो कहे, ते जामे भव-पार ॥१०१

अथ ढाल सहेलीनी

कही सामायिकसार, भेद त्रीजी प्रतिमा तणो, साहेलडी०
कहूं प्रोषध उपवास प्रतिमा चतुर्थी सुणो, साहेलडी० ॥१
मास एक मझार, चार उपवास कीजिए, साहेलडी०
आठम चौदस पर्व, पोसासहित सदा लीजिए, साहेलडी० ॥२
सातमि तेरसें जाणि, अष्टविध जिन पूजा करी, साहेलडी०
पूजे जिनवर पाय, सुर पद पूजा अनुसरी, साहेलडी ॥३
त्रिविध मिले जो पात्र, प्रासुक आहार तस दीजिए, साहेलडी०
सफल करी निज गात्र, अतिथि सविभाग भाव कीजिए, साहेलडी० ॥४
निज स्वजन-सहित आपण पें, एक स्थान करीइए, साहेलडी०
तुष्टि तप एक भक्त, नीर-सहित नित पालीइए, साहेलडी ॥५
असन पान खादि स्वादि, चतुर्विध आहार करी, साहेलडी०
पछें करी मुखि शुद्धि, वृद्धि निज आहार सचरी, साहेलडी ॥६
पछें जई जिनगेह, पाय पवित्र करी, साहेलडी०
सोधी ईर्यापन्थ, निसही निसही त्रणि उच्चरी, साहेलडी ॥७
देइ प्रदक्षिणा त्रण, जिन पूजि स्तवन भणी, साहेलडी०
करी साष्टाग प्रणाम, तीसरवा कही आवसही त्रणी, साहेलडी० ॥८
पूजी सहि गुरु वाणि, पचाग प्रणाम विनय करी, साहेलडी०
गुरु उपदेशे उपवास, विधि सहित पोसह धरी, साहेलडी० ॥९
रही निरन्तर स्थान, जिन प्रासाद शून्य गेह, साहेलडी०
गिरि-गुफा उद्यान, समसान भूमि रही तेह, साहेलडी ॥१०
छाडी घर व्यापार, आरम्भ षट्कर्म परिहरो, साहेलडी०
त्रण दिन ब्रह्मचर्य, धरे वस्त्र एक ऊजलो, साहेलडी० ॥११
वाली दृढ पद्मासन्न, अथवा कायोत्सर्ग धरी, साहेलडी०
कीजे शुभ धर्मध्यान, आर्त्तरौद्र दूरें करी, साहेलडी० ॥१२
क्रोध मान माया लोभ, राग द्वेष मद वेगलो, साहेलडी०
त्रण दिन ब्रह्मचर्य, धरे वस्त्र एक ऊजलो, साहेलडी० ॥१३
भणिये जिनवर-वाणि, विनय व्याख्यान करो, साहेलडी०
छोडी विकथावाद, धर्म चर्चा ते अनुसरो, साहेलडी० ॥१४
कीजे दोय प्रतिक्रमण, कीजे सामायिक त्रण काल, साहेलडी०
लीजे स्वाध्याय चार योग भक्ति वे गुणमाल, साहेलडी० ॥१५
यतिलणो आचार, पोसह तणे दिन पालिये, साहेलडी०
जेहवो मुनिवर वीर, वीर विग्रग्रह सम्भालिये, साहेलडी० ॥१६
पञ्च परमेष्ठी गुण, षट्द्रव्य पचास्तिकाय, साहेलडी०
सप्त तत्त्व अष्टकर्म, नवपदार्थ विधि न्याय, साहेलडी० ॥१७

उन छब्बीस रासोमेसे कुछ प्रमुख रासोके नाम इस प्रकार हैं—१ चौपाई, २ दोहा, ३ भास रास, ४ मालतडानी ढाल, ५ जसोधरनी भास, ६ वस्तु छन्द, ७ अविकानी भास, ८ सहीनी ढाल, ९ वीनतीनी भास, १० भद्रबाहुनी ढाल, ११ हेलिनी ढाल, १२ ढाल, १३ हिंडोलानी ढाल, १४ नरेसुआनी ढाल, १५ गुणराजनी ढाल, १६ वैरागी भास, १७ विणजारानी भास, १८ सहेलडीनी ढाल, १९ सहेलीनी ढाल, २० रसना देवीनी ढाल, २१ आनन्दानी ढाल, २२ रासनी ढाल।

उक्त ढालोमे दोहा, चौपाई और वस्तु छन्दको छोडकर प्राय सभी ढाले गुजरात और राजस्थानके सीमावर्ती प्रदेशमे प्रचलित रही हैं अत प्रस्तुत श्रावकाचारकी भाषा गुजराती मिश्रित राजस्थानी है ढाल, रास और छन्द ये तीनो एकार्थवाचक हैं।

पदम कविने अपने माता-पिताके नामका कोई उल्लेख नही किया। केवल अपनेको वाग्वर (वागर) देशके सापुर (शाहपुर) नगर वर्ती श्री आदिनाथके मन्दिरका और नन्दी सघ वाले हुबड जाति-खदिर गोत्री और विरीत कुल का अवतस कहा है। (देखो पृ० ११० पद्य ४९-५२)

पदम कविका परिचय 'राजस्थानके जैन सन्त, व्यक्तित्व एव कृतित्व' नामक ग्रन्थमे नही दिया गया है। इससे ज्ञात होता है कि उक्त कविने प्रस्तुत श्रावकाचारके सिवाय अन्य किसी ग्रन्थकी रचना नही की है। इसकी एकमात्र प्रति ऐलक पन्नालाल दि० जैन सरस्वती भवन, ब्यावरसे प्राप्त हुई। अन्य शास्त्र भण्डारोकी ग्रन्थ सूचियोमे इसका नाम दृष्टिगोचर नही हुआ।

किशनसिंह जीका परिचय और समय

प्रस्तुत सग्रहमे दूसरा हिन्दी छन्दोबद्ध श्रावकाचार श्री किशनसिंह जी का है जिसे उन्होने स्वय क्रियाकोष नामसे उल्लेखित किया है। (देखें अन्तिम पुष्पिका, पृ० २३९) इन्होने अपने क्रियाकोषको स० १७८७ के भादो सुदी पूनमको ढूढाहर देश (वर्तमान राजस्थान) के सागानेर नगरमे पूर्ण किया है। (देखो पृ० २३८ पद्य ९१)

ये रामपुराके निवासी थे। रामपुरा उणियारा-टोकके समीप है तथा जो आजकल अलीगढ के नामसे प्रसिद्ध है। किशनसिंहजीके पिताका नाम सुखदेव जी था उन्होने रामपुरामे एक विशाल मन्दिर बनवाया, जिसकी नीव स० १७३१ मे पडी थी। ये दो भाई थे छोटे भाईका नाम आनन्द सिंह था। इनकी जाति खण्डेलवाल और गोत्र पाटनी था। किशनसिंह जी रामपुरासे आकर सागानेर रहने लगे थे। इनकी अन्य १० रचनाएँ और भी उपलब्ध हैं जिनके नाम इस प्रकार हैं—

१ णमोकार रास, २ चौबीस दण्डक, ३ पुण्यास्रव कथाकोष, ४ भद्रबाहु चरित, लब्धि विधान कथा, ६ निर्वाणकाण्ड भाषा, ७ चतुर्विंशति स्तुति, ८ चेतन गीत, ९ चेतन लोरी और १० पद सग्रह।

प्रस्तुत क्रियाकोषका ग्रन्थ परिमाण २९०० श्लोक प्रमाण है। (देखो पृ० २३८, पद्य ९४) इस क्रियाकोष की रचना १ हिन्दीके चौपाई, २ पद्धडी, ३ सोरठा, ४ अडिल्ल, ५ गीता, ६ कुण्डलिया, ७ मरहठा, ८ छप्पय, ९ तेईसा, १० इकतीसा सवैया और तथा त्रिभगीमे तथा सस्कृतके त्रोटक, द्रुत विलम्बित और भुजगप्रयात छन्दोमे की है। इन्होने अपनी अन्तिम प्रशस्ति मे इनकी छन्द सख्या भी दी है। (देखो पृ० २३८)

दशलक्षण जिनधर्म-चैत्य एकादश अग, साहेलडी०
अनुप्रेक्षा वार सुतप, तेर क्रिया व्रत रग, साहेलडी० ॥१८
चित्तो चौद गुणस्थान, प्रमाद पनर प्रजालिये, साहेलडी०
भावना भावो शुभ सोल, सत्तर सजम पालिये, साहेलडी० ॥१९
प्रमाद साढा सात्रीस, लक्ष चौरासी मुनिगुण, साहेलटी०
चरचा कीजे माहो माहि, समता भावे मतिनिपुण, साहेलडी० ॥२०
अष्टमी तणो उपवास, अष्टकर्म तणु हारक, साहेलडी०
आपे सिद्धगुण अष्ट, अष्टमी भूमि सुखकारक, साहेलडी० ॥२१
चतुर्दशी उपवास, केवलज्ञान प्रकाशक, साहेलडी०
चौदमु देइ गुणस्थान, चतुर्गतिना दुखनाशक, साहेलडी० ॥२२
आठमि चौदसि उपवास, नीर विना सदा जे करे, साहेलडी०
ते पुण्य होइ अपार, पाप दुष्कर्म निर्जरें, साहेलडी० ॥२३
उष्ण लेइ जो नीर, तो आठमो भाग जाइ, साहेलडी०
कसाल्या द्रव्य जल मिश्रा, तो उपवास हीण थाइ, साहेलडी० ॥२४
आठम चौदस उपवास, अखड पणें जे आचरें, साहेलडी०
सदा पोसा सहित, सदा पच इन्द्री मन वसि करे, साहेलडी० ॥२५
सावद्य-सहित उपवास, लीपणो जिम धूल ऊपर, साहेलडी०
अथवा जिम गजस्नान, नाखे धूलि सू ढ भर, साहेलडी० ॥२६
सावद्य-रहित उपवास, पुण्यकारी कर्म-निजरे, साहेलडी०
सहित सावद्य उपवास, कष्टकारी कर्म अनुसरे, साहेलडी० ॥२७
नि पातन कुदाल, जालकम तरु मूल खणें, साहेलडी०
सो तप वज्र समान, कठिण कर्म पर्वत हणें, साहेलडी० ॥२८
सोल प्रहर नु मान, उत्तम पोसह जिण भण्यो, साहेलडी०
धारणा दिन मध्यान, पारणें मध्यान लगे सुणो, साहेलडी० ॥२९
धारणें पारणें एक बार, भोजन पानी साथे सही, साहेलडी०
वार पहर ते मध्य, एक दिन वे रात्रि कही, साहेलडी० ॥३०
दिन एक रात्रि एक, जघन्य पोसो ते कह्यो, साहेलडी०
पोसो नियम सहित, निजशक्ति मन आणीये, साहेलडी० ॥३१
पारणें कीजे जिनपूज, पात्रदान वली दीजिये, साहेलडी०
निज साधर्मी जिन साथ, भोजन सू वात्सल्य कीजिये, साहेलडी० ॥३२
निज पर्व उपवास, मूलव्रत जे आचरे, साहेलडी०
जीवितव्य तेह प्रमाण, अखड नियम जे अनुसरे, साहेलडी० ॥३३
इम जाणिय तम्हो भव्य, मूलव्रत सदा धरो, साहेलडी०
निज शक्ति अनुसार, उत्तर तप वहु करो, साहेलडी० ॥३४
तप ए निमल नीर, पाप-कर्दम-प्रक्षालक, साहेलडी०
तप अग्नि जीव सुवर्ण, कम-कलक प्रजासक, साहेलडी० ॥३५

आठमि चौदसि जाण, जे मूढा मैथुन करे, साहेलडी०
ते नर पशु समान, पाप-फल नरकें अवतरें, साहेलडी० ॥३६
आठमि चौदसि तिथि पर्व, निर्मल शील जे ध्याय, साहेलडी०
ते उत्तम गुणवत्त, पुण्य फलें स्वर्गे जाय, साहेलडी० ॥३७
पोसा तणें दिन भव्य, शरीर-सिणगार न कीजिये, साहेलडी०
स्नान विलेपन आभरण, सुगध पुष्प न वि लीजिये, साहेलडी० ॥३८
उत्तम प्रतिमावत्त, पोसह धरो नियम-सहित, साहेलडी०
उत्तम मध्यम अतर नही ए, अवर विधें जलध रहित, साहेलडी० ॥३९
शक्ति होय जेहनें हीन, ते करें काजी रूक्ष आहार, साहेलडी०
एक स्थान एक भक्त, जघन्य व्रत विधि धार, साहेलडी० ॥४०
करें नही जे उपवास, पच इन्द्री अग जे पोसे, साहेलडी०
ते लपट करे पाप, भव-भव दुख ते सहे, साहेलडी० ॥४१
परवश पडियो जीव, लघन कष्ट करे घणु, साहेलडी०
स्वाधीन पणें धर्मकाज, करे नही ते मूढ पणु, साहेलडी० ॥४२
प्रगट करि निज शक्ति, तप व्रत शुभ आचरो, साहेलडी०
तप चिन्तामणि कल्पवृक्ष, सौख्य जिम मोक्ष वरो, साहेलडी० ॥४३
निर्दोष कीजे तप, पच अतीचार तजो, साहेलडी०
पोसह तणा अतिपात, पच पाप मन तजो, साहेलडी० ॥४४
जो या विणजे द्रव्य, झणी ववो भूमि ऊपर, साहेलडी०
नव लीजे उपकर्ण, विवण पूजी जोइ, साहेलडी० ॥४५
सथारा कीजे यत्न, आदर करो आवश्यक तणो, साहेलडी०
मन वच करि सावधान, व्रत सभारो आपणो, साहेलडी० ॥४६
इणि परे दोष रहित, पोसा तणी विधि पालीइए, साहेलडी०
चौथी प्रतिमा उत्तुग, मन वचन कायाइ सभालीए, साहेलडी० ॥४७
सक्षेपे कह्यो विचार, पोसह तणो मैं ऊजलो, साहेलडी०
पोसह तणें फल भव्य, सोलमे स्वर्गे जाइ निर्मलो, साहेलडी० ॥४८
इन्द्र नरेन्द्र पद होइ, मन वाछित सुख पामीये, साहेलडी०
लहे चक्री जिन पद, अनुक्रमे मोक्ष पामीये, साहेलडी० ॥४९
सचित्त वस्तुनो त्याग, पचम प्रतिमा साभलो, साहेलडी०
सक्षेपें कहूँ सार, कृपा कीजे भेद ऊजलो, साहेलडी ॥५०
हरित कद फल फूल, पत्र प्रवाल त्वक् सचित्त, साहेलडी०
अप्रासुक जल धान, तेह तणी कीजे निवृत्त, साहेलडी० ॥५१
आर्द्रक आदें कद, आम्र केल आदि फल, साहेलडी०
नागवल्ली आदि पत्र, अप्रासुक जल शीतल, साहेलडी० ॥५२
तरु तणी नीली छाल, नीलमा आदि जे कुसुम, साहेलडी०
गोधूम चणका ज्वार, विरहाली आदि बीज उत्तम, साहेलडी० ॥५३

जे जे सच्चित्त वस्तु, ते ते भक्षण न वि कीजिये, साहेलडी०
अप्रासुक मिश्र प्रासुक, द्रव्य सचित्त सहु तजीजिये, साहेलडी० ।।५४
सूकू पाकू अग्नि, तस कसाल्या द्रव्य माहे भले, साहेलडी०
अथवा कीजे चूर्ण, पूर्ण प्रासुक जन्त्र-दले, साहेलडी० ।।५५
शुद्ध प्रासुक जे द्रव्य, स्परस रस गध वरण, साहेलडी०
जेह मानें निज मन्न, ते प्रासुक वस्तु जोग्य करण, साहेलडी० ।।५६
पृथिवी अप तेज वायु, असख्य जीव न वि वधीये, साहेलडी०
वनस्पति अनतकाय, तेह जीव न विराधीये, साहेलडी० ।।५७
जो मिले प्रासुक द्रव्य, तो आपणें न विराधीये, साहेलडी०
कोमल करि परिणाम, जीव दया धर्म राखीये, साहेलडी० ।।५८
मन वच कायाइ जाणि, पचम प्रतिमा पालिये, साहेलडी०
जीव दया तेणें काज, जीव हिंसा हु टालिये, सालेहडी० ।।५९
दिवा मैथुन त्याग, रात्रें आहार चार त्यजो, साहेलडी०
छट्ठी प्रतिमा नेम, रात्रि भुक्ति विरति भजो, साहेलडी० ।।६०
अशन पान खादि स्वादिम, अन्न आदि अशन कही, साहेलडी०
जल आदि रस पान, दुग्ध घृत तेल सही, साहेलडी० ।।६१
खाजा मोदक पकवान, फल आदि खादु वस्त, साहेलडी०
लवग एलाची तलोल, स्वादकारी द्रव्य प्रशस्त, साहेलडी० ।।६२
ए चतुर्विध आहार, रात्रि समय न वि खाइए, साहेलडी०
थूल सूक्ष्म जीव घात, अन्धकारें न वि देखीए, साहेलडी० ।।६३
दिवस उदय सूयमान, घडी य दोय चार होइ जव, सालेहडी०
तव कीजे स भोजन्न, आहार चार भोकल्या तव, सालेहडी० ।।६४
मास एक पर्यन्त, निशा आहार जे नियम करे, सालेहडी०
लहे पुण्य विशाल, उपवास पन्नर फल लहे, सालेहडी० ।।६५
उपवासें होइ कष्ट, निशा आहारें सो हिल्यो त्यजो, सालेहडी०
इम जाणी भव्य लोक, उपवास पुण्य ते तेतलो, सालेहडी० ।।६६
मन वच काया ठाम, परिणामे पुण्य ऊपजे, सालेहडी०
निशाहार चार त्याग, मुख सन्तोष सपजे, सालेहडी० ।।६७
जाव जीव धरे जे नेम, रजनी चहु आहार तणो, सालेहडी०
ते फल वहु उपवास, काल गमे ऊर्ध्व आपणो, सालेहडी० ।।६८
निशाहार-नियमवन्त, जस पुण्य महिमा घणो, सालहडी०
ऋद्धि वृद्धि लहे सौभाग्य, सुख पामे देव पदतणो, सालेहडी ।।६९
दिवा करे जे मैथुन, ते नर पशु समान, सालेहडी०
दिन अयोग्य यह कर्म, सूर्य माखें कीजे किम, सालेहडी० ।।७०
दिवा ब्रह्मचर्यवन्त, ते नर देव समो कहीइ, सालेहडी०
दिवा कीजे धर्मकाज, लाज काज कीजे नही, सालेहडी० ।।७१

आठमि चौदसि जाण, जे मूढा मैथुन करे, साहेलडी०
ते नर पशु समान, पाप-फल नरकें अवतरें, साहेलडी० ॥३६
आठमि चौदसि तिथि पर्व, निर्मल शील जे ध्याय, साहेलडी०
ते उत्तम गुणवत, पुण्य फलें स्वर्गे जाय, साहेलडी० ॥३७
पोसा तणें दिन भव्य, शरीर-सिणगार न कीजिये, साहेलडी०
स्नान विलेपन आभरण, सुगध पुष्प न वि लीजिये, साहेलडी० ॥३८
उत्तम प्रतिमावत, पोसह धरो नियम-सहित, साहेलडी०
उत्तम मध्यम अतर नही ए, अवर विधें जलध रहित, साहेलडी० ॥३९
शक्ति होय जेहनें हीन, ते करें काजी रूक्ष आहार, साहेलडी०
एक स्थान एक भक्त, जघन्य व्रत विधि धार, साहेलडी० ॥४०
करें नही जे उपवास, पच इन्द्री अग जे पोसें, साहेलडी०
ते लपट करे पाप, भव-भव दुख ते सहे, साहेलडी० ॥४१
परवश पडियो जीव, लघन कष्ट करे घणु, साहेलडी०
स्वाधीन पणें धर्मकाज, करे नही ते मूढ पणु, साहेलडी० ॥४२
प्रगट करि निज शक्ति, तप व्रत शुभ आचरो, साहेलडी०
तप चिन्तामणि कल्पवृक्ष, सौख्य जिम मोक्ष वरो, साहेलडी० ॥४३
निर्दोष कीजे तप, पच अतीचार तजो, साहेलडी०
पोसह तणा अतिपात, पच पाप मन तजो, साहेलडी० ॥४४
जो या विणजे द्रव्य, झणी ववो भूमि ऊपर, साहेलडी०
नव लीजे उपकर्ण, विवण पूजी जोइ, साहेलडी० ॥४५
सथारा कीजे यत्न, आदर करो आवश्यक तणो, साहेलडी०
मन वच करि सावधान, व्रत सभारो आपणो, साहेलडी० ॥४६
इणि परे दोष रहित, पोसा तणी विधि पालीइए, साहेलडी०
चौथी प्रतिमा उत्तुग, मन वचन कायाइ सभालीए, साहेलडी० ॥४७
सक्षेपे कह्यो विचार, पोसह तणो मैं ऊजलो, साहेलडी०
पोसह तणें फल भव्य, सोलमे स्वर्गे जाइ निर्मलो, साहेलडी० ॥४८
इन्द्र नरेन्द्र पद होइ, मन वाछित सुख पामीये, साहेलडी०
लहे चक्री जिन पद, अनुक्रमे मोक्ष पामीये, साहेलडी० ॥४९
सचित्त वस्तुनो त्याग, पचम प्रतिमा साभलो, साहेलडी०
सक्षेपें कहुँ सार, कृपा कीजे भेद ऊजलो, साहेलडी ॥५०
हरित कद फल फूल, पत्र प्रवाल त्वक् सचित्त, साहेलडी०
अप्रासुक जल धान, तेह तणी कीजें निवृत्त, साहेलडी० ॥५१
आर्द्रक आर्दें कद, आम्र केल आदि फल, साहेलडी०
नागवल्ली आदि पत्र, अप्रासुक जल शीतल, साहेलडी० ॥५२
तरु तणी नीली छाल, नीलमा आदि जे कुसुम, साहेलडी०
गोधूम चणका ज्वार, बिरहाली आदि बीज उत्तम, साहेलडी० ॥५३

जे जे सचित्त वस्तु, ते ते भक्षण न वि कीजिये, साहेलडी०
अप्रासुक मिश्र प्रासुक, द्रव्य सचित्त सहु तजीजिये, साहेलडी० ॥५४
सूकू पाकू अग्नि, तस कसाल्या द्रव्य माहे भले, साहेलडी०
अथवा कीजे चूर्ण, पूर्ण प्रासुक जन्त्र-दले, साहेलडी० ॥५५
शुद्ध प्रासुक जे द्रव्य, स्परस रस गध वरण, साहेलडी०
जेह मानें निज मन्न, ते प्रासुक वस्तु जोग्य करण, साहेलडी० ॥५६
पृथिवी अप तेज वायु, असख्य जीव न वि वधीये, साहेलडी०
वनस्पति अनतकाय, तेह जीव न विराधीये, साहेलडी० ॥५७
जो मिले प्रासुक द्रव्य, तो आपणें न विराधीये, साहेलडी०
कोमल करि परिणाम, जीव दया धर्म राखीये, साहेलडी० ॥५८
मन वच कायाइ जाणि, पचम प्रतिमा पालिये, साहेलडी०
जीव दया तेणें काज, जीव हिंसा हु टालिये, सालेहडी० ॥५९
दिवा मैथुन त्याग, रात्रें आहार चार त्यजो, साहेलडी०
छट्ठी प्रतिमा नेम, रात्रि भुक्ति विरति भजो, साहेलडी० ॥६०
अशन पान खादि स्वादिम, अन्न आदि अशन कही, साहेलडी०
जल आदि रस पान, दुग्ध घृत तेल सही, साहेलडी० ॥६१
खाजा मोदक पकवान, फल आदि खादु वस्त, साहेलडी०
लवग एलाची तलोल, स्वादकारी द्रव्य प्रशस्त, साहेलडी० ॥६२
ए चतुर्विध आहार, रात्रि समय न वि खाइए, साहेलडी०
थूल सूक्ष्म जीव घात, अन्धकारें न वि देखीए, साहेलडी० ॥६३
दिवस उदय सूर्यमान, घडी य दोय चार होइ जव, सालेहडी०
तव कीजे स भोजन्न, आहार चार भोकल्या तव, सालेहडी० ॥६४
मास एक पर्यन्त, निशा आहार जे नियम करे, सालेहडी०
लहे पुण्य विशाल, उपवास पन्नर फल लहे, सालेहडी० ॥६५
उपवासें होइ कष्ट, निशा आहारें सो हिल्यो त्यजो, सालेहडी०
इम जाणी भव्य लोक, उपवास पुण्य ते तेतलो, सालेहडी० ॥६६
मन वच काया ठाम, परिणामे पुण्य ऊपजे, सालेहडी०
निशाहार चार त्याग, मुख सन्तोष सपजे, सालेहडी० ॥६७
जाव जीव धरे जे नेम, रजनी चहु आहार तणो, सालेहडी०
ते फल वहु उपवास, काल गमे ऊर्ध्व आपणो, सालेहडी० ॥६८
निशाहार-नियमवन्त, जस पुण्य महिमा घणो, सालहडी०
ऋद्धि वृद्धि लहे सौभाग्य, सुख पामे देव पदतणो, सालेहडी ॥६९
दिवा करे जे मैथुन, ते नर पशु समान, सालेहडी०
दिन अयोग्य यह कर्म, सूर्य साखें कीजे किम, सालेहडी० ॥७०
दिवा ब्रह्मचर्यवन्त, ते नर देव समो कहीइ, सालेहडी०
दिवा कीजे धर्मकाज, लाज काज कीजे नही, सालेहडी० ॥७१

इम जाणी भविजन्न, दिवस मैथुन ते परिहरो, सालेहडी०
रातें आहार-परित्याग, छट्ठी प्रतिमा अनुसरो, सालेहडी० ॥७२

दोहा

दिवा ब्रह्मव्रत जे धरें ते नर देव समान । अयोग्य काज किम कीजिए, दिवस खास वदिमान ॥१
लाजे कापड पेहरीए, लाजे दीजे दान । लाजे काज सहू सरे, लाज करो गुणधार ॥२
मन वच कायाइ वश करी, दिने शील पालो सार । रात्रें आहार जे परिहरें, धन धन ते अवतार ॥३
लपट जे नर कामिनी, अयोग्य करे जे काज । निन्दा अपजस ते लहे, सहे ते दुक्ख समाज ॥४
इम जाणी सतोष धरि, म करो कर्म जयोग्य । शुभ सदाचार सचरो, करो मन मन सतोष ॥५
दर्शन आदि छै स्थान, अनुदिन पाले जे सार । जघन्य श्रावकते जाणिये, धरे जे शुभ आचार ॥६

अथढाल अबिकानी

प्रतिमा छै विशाल, सक्षेपें भेद मैं भण्यू ए । हवे कहूँ शील भेद, प्रतिमा सातमी ते तणु ए ॥१
सर्व नारी परिहार, देव मनुष्य पशु तणी ए । अचेतन जे नार, चार भेद सेवो क्षणी ए ॥२
मन वयण निज अग, कृत कारित अनुमोदना ए । नव भेदे त्यजो सग, नारी नरकते नोदना ए ॥३
दृढ धरो ब्रह्मचर्य, निज पर स्त्री दूरें त्यजो ए । व्रत सहु माहे ब्रह्मचर्य, शीलरत्न सदा भजो ए ॥४
स्त्री कथा स्त्री गोष्ठ, स्त्री-सगति दूरे करो ए ।
स्त्री तणी सेवा निकृष्ट, स्त्री-सगति तम्हो परिहरो ए ॥५
वृद्ध यौवन स्त्री बाल, माता बहिन पुत्री सम ए । चिंतवो ते सकोमाल, मन मर्कट गुण दमीइ ए ॥६
सुणो नारी निक्षेद, स्थूल दोष ते साभलो ए । जिम उपजे निर्वेद, सहज भाव ते कसमलु ए ॥७
मूर्खपणो बहु होइ, माया मिथ्यात जु बोलीइ ए । सहज अशुचि तजोइ, पाप-साहस घणु वली ए ॥
सहजें निदय परिणाम, लोभ तृष्णा करे घणी ए ।
कलक तणु ते ठाम, रामा रग करो घरो घणी ए ॥९
कचपे जु आवास, मुख अस्थि चरम पचरो ए ।
दुर्गन्ध श्लेष्म कुसास, काम आस्वादे कूकरो ए ॥१०
स्तन ए मास को पिंड, रस रुधिर पश्रु परु वहे ए ।
उदर वृष्टि घडे प्रचड, कामी काक रागि रहे ए ॥११
कामिनी कलत्र कुस्थान, मूत्र रक्त सदा ए । नरक कुविलन समान, कामी कीट सेवा करे ए ॥१२
बाह्य देखि चाक चुव, जिम पतग दीवे पडे ए ।
मरे सेवे रागी सुव, मदन विरी जीविनें नडे ए ॥१३
अभ्यन्तर भाग अग, रोग वसे बाहिर जो थाइ ए ।
तो उपजे बहु सुग, काग माखी भक्षी जाइ ए ॥१४
एह वो अग अपवित्र, रोगी नर रच्चें सदा ए ।
सप्त धातु भरयो विचित्र, डाहो नही सेवे सदा ए ॥१५
पुरुष-अग सयोग, जीव अलब्ध बहु मरें ए । योनि स्थान-उत्पन्न, लिंग सघट्टि हिंसा घणी ए ॥१६
स्त्रीसेवता एक वार, नव लक्ष जीव मरि ए ।
जिम तिल मरी वसनाल, तातो जिम दड सचरि ए ॥१७

मैथुन करे जे मूढ, दिन प्रति बहुवार ए।
ते पामे पाव प्रौढ, सहे ते बहु दु:ख भार ए ॥१८
काम-अनल महादाह, स्त्री सेवे घणु वले ए।
तेले जिम थाइ उछाह, सतोष नीर वेगे टले ए ॥१९
इम जाणि भव्य जीव, काम सेवा दूरें त्यजो ए।
मनें धरो सतोष, दिव्य ब्रह्मव्रत सदा भजो ए ॥२०
दृष्टि विष नागिनि जिम्म, देखी वेगे मानव मरे ए।
देखी रागें नारि तिम्म, दूर थकी नर मन हरे ए ॥२१
नर तणो दृढ ब्रह्म व्रत, नारी सगे वेग जाइ ए।
अग्निताप-सयुक्त, पारो जिम दह दिस थाइ ए ॥२२
जिन भवनें एक वार, जिनदत्त श्रेष्ठि गयो ए।
देखी नारी चित्राकार, दृढ मन पण विह्वल थयो ए ॥२३
सच्यो सठे कालकूट, विष वेदना करे नही ए।
तिणें नारी जव दृष्ट, भ्रष्ट व्रत थयो सही ए ॥२४
सापणि समी विकराल, स्परशी दुख देइ घणु ए।
राग मूकी विष झाल, शील जीवी हरे नर तणु ए ॥२५
वाघ सिंघ तणें वासि, सर्प समीप वसो रूरू ए।
पापिणी नारी ताणें वास, साधु रहियो सदा दूरू ए ॥२६
तालगें नर मोटो होइ जालगें नारी थी वेगलो ए।
जद नारी नेडो सोइ, तष हीणो नार कसमलो ए ॥२७
जिम मागे रक अन्न, दीन पणें याचना करे ए।
कामे व्याप्यो जव मन्न, तव नारी शील धन हरे ए ॥२८
सर्वथा नारी करो त्याग, रागदृष्टि दूरें करो ए।
जिणें न होइ तुम सो भाग, वैरागभावे परि हरो ए ॥२९
नारी अग सिणगार, रूप-निरीक्षण नवि कीजिए ए।
देखि स्त्रीरूप अगार, पुरुष पतग प्राणी त्यजो ए ॥३०
स्त्री आभरण झकार, रागकारी शब्द त्यजो ए।
मदन पामे विकार, मद्दुअर नादें साप सज ए ॥३१
स्त्री-सयोगे हुइ राग, वीर्यहानि मल विस्तरि ए।
पाप तणो होइ भाग, पापें किम शिव संचरि ए ॥३२
स्त्री साथे हास्य विनोद, कौतुक क्रीडा जे करे ए।
पामे मदन प्रमोद, भाड वचन वली उचरे ए ॥३३
स्पर्शें छोडो नारी अग, नयणें रूप न देखीइ ए।
करणें त्यजो शब्द सग रग मन नवि पेखीइ ए ॥३४
जिम तिम करीय उपाय, नारी थकी दूरे रहो ए।
मन वच करी वश काम शील व्रत निर्मल लहो ए ॥३५

नारी तणा कटाक्ष-वाणें जे नवि भेदिया ए।
ते सुभट माहे दक्ष जिणें शील न छेदिया ए ॥३६
नारी तणा अगोपाग, तीक्ष्ण बाण जे नवि हण्या ए।
ते सुभट माहे उत्तुग, ते धन्य पुण्यवत भण्या ए ॥३७
दूरि गज वाघ सिंघ, निज हस्तें नर वश करे ए।
ते हवा भूपति बलवत, विरला जे शील नवि हरे ए ॥३८
दुर्धर काम कहे वाय, पायी त्रैलोक्य माहे फिरे ए।
इन्द्र फणीन्द्र नरराय, कामे सहु विह्वल कीया ए ॥३९
सबल शूर जे धीर, काम शत्रु जेणें जीतिया ए।
ते नर गुण गभीर, नारी रूपें नही छीपिया ए ॥४०
सुख शय्यासन चीर, ताम्बूल पुष्प माला गध ए।
दातुन स्नान शरीर, सगर्गे शीलदोष बधे ए ॥४१
निज अग मजण जेह, वहु राग जेणें ऊपजे ए।
चदण वूपावास देह, सवल काम जेणे सपजे ए ॥४२
एह आदे जे जे वस्तु, तीव्र काम कारी कही ए।
ते द्रव्य छोडो समस्त, शील यत्न करो सही ए ॥४३
कूबडी काली कुरूप, नेत्र नासिकाथी वेगली ए।
बीभत्स दीसे बहुरूप, हस्त पाद छिन्न दूबली ए ॥४४
एहवी देखि कुनारि, स्त्री रागे मूढ नयर नडथो ए।
पापी मदन विकार, कामी नर तिहा पडयो ए ॥४५
करे मास उपवास, पारणे केवल लेई नीर ए।
पामी नारी तणो पास, ततक्षण पडे ते धीर ए ॥४६
मणता जे अग इग्यार, ध्यानी मुनि वैरागिया ए।
सहि नारी सग असार, शील वेगें तिणे त्यागिया ए ॥४७
हुआ रुद्र जे इग्यार, माता-पिता वली तेह तजा ए।
थया भ्रष्ट चारित्र भार, विषम सग लही आपका ए ॥४८
एह आदें नर नार, काम रोगे जे घणु रुल्या ए।
जिन आगम मझार, ते तम्हो सहु साभल्या ए ॥४९
शील तणें प्रभाव, सुर तणा आसन कपिया ए।
इन्द्र आदि देवराय, शील धारौ गुण जपिया ए ॥५०
क्रूर वाघ थाइ छाग, सिंघ थाइ मृग समो ए।
पुष्पमाल थाइ नाग, दुर्धर गज मृगाल समो ए ॥५१
अग्नि फीटी जल होइ, विषम विष अमृत थाइ ए।
शत्रु सहु होइ मित्र, समुद्र ते गोष्पद थाइ ए ॥५२
कामधेनु कल्प वृक्ष, शील चिन्ता मणि सम कही ए।
मन वाछित ते लहे सौख्य, शील मोले अवर को नही ए ॥५३

शील महिमा जस गुण, एक जीभे किम वर्णव्य ए।
देइ सोलमो स्वर्ग, अनुक्रमे ते सिद्ध थाइ ए ॥५४
मन वच काया आणी ठामि, दृढ, ब्रह्मचर्य पालीइ ए।
प्रतिमा सातमी ते नाम, पच अतीचार गालीइ ए ॥५५
नारी अग निरीक्षण, नारी कथा न वि कीजिइ ए।
पूर्व भुक्त अनुस्मरण, कामकारी रस न लीजिइ ए ॥५६
निज सरीर सिणगार, शील तणा त्यजो दूपण ए।
अठार सहस्र प्रकार, पालो शील गुण भूषण ए ॥५७
प्रतिमा आठमी कहुँ भेद, एक मना मित्र साभलो ए।
सर्व आरभ निक्षेद, आरति निवृत्ति नाम निमलो ए ॥५८
पृथ्वी अप तेज वाय, चार थावर सत्त्व कही ए।
सर्व वनस्पति काय, भूत सत्ता जीव मही ए ॥५९
बे इन्द्री ते इन्द्री चौ इन्द्री, विकलत्रय प्राणि एह ए।
असज्ञी सज्ञी पचेन्द्री जीव, जाति सज्ञा तेह ए ॥६०
सत्त्व भूत प्राणी जीव, थावर त्रस काय देखोइ ए।
मन वच काय अतिचार, यत्न सहित दया पेखिये ए ॥६१
छाडि आरभ षट्कर्म, झूठ चोरी मैथुन त्यजो ए।
परिग्रह थी होइ कर्म, बहु तृष्णा पाप वृक्ष ए ॥६२
छोडो दुर्व्यापार, हिंसा काज पाप कारी ए।
क्रोध मान कपट असार, लोभ इन्द्री क्षोभ धारी ए ॥६३
कुविणज थी रुडु विष, एक भव दु ख ते देइ ए।
पाप देइ बहु दु ख, अनेक जन्म कष्ट वेइ ए ॥६४
कुव्यापारे धन्न उपाय, पाप फल एक लो लहि ए।
धन स्वजन सहु खाय, नरक कष्ट एक लो सहि ए ॥६५
तो किम कीजे ते पाप, दुर्व्यापार दूरे करी ए।
उगारीइ निज आप, के किहनें न वि उधरो ए ॥६६
जिम जिम छोडि पापारभ, तिम तिम दुष्कम निर्झरि ए।
आलिंगन देइ देव रभ, मुक्ति नारी वेगे वरि ए ॥६७
से नें खणो पृथिवी काय, नीर अग्नि न विराधिये ए ॥
से नें घालो बहु वाय, तरु थ्रस जीव न विराधिये ए ॥६८
वापी कूप तडाग, नदी वेहला न खणाविये ए।
घर हाट आरभ त्याग, गढ गोपुर न चिणाविये ए ॥६९
पर विवाह उपदेश, विषय आरभ न कराविये ए।
पच पातक गणि वेश, मन इन्द्री निवारिये ए ॥७०
आरभ थी जीव हिंस, हिंसा थी पाप विस्तरे ए।
पापे दुर्गति वास, विविध दु ख जीव अनुसरे ए ॥७१

इम जाणिय भव्य जीव, सर्व आरभ दूरे करो ए।
सतोष धरी मन दिव्य प्रतिमा आठमी अनुसरो ए ॥७२
नवमी कहुँ प्रतिमाय, परिग्रह सख्या कीजिये ए। जिम उपजे बहु पुण्य, सत्तोषे लीजिये ए ॥७३
सग सख्या दश विध, तेह भेद पेहला कह्या ए।
कीजे मर्याद प्रसिद्ध, थूल पर्णे तम्हो सर दहो ए ॥७४
वली वली सु कहुँ मित्र, सवथा परिग्रह परिहरो ए।
निज मन करिय पवित्र, सन्तोष सुख सदा धरो ए ॥७५
जिम जिम छाडे सग, तिम तिम वाप ते निस्तरे ए।
देव-रभा धरे रग, मुक्ति नारी वेगे वरि ए ॥७६
मन वयण निज अग, कृत कारित अनुमोदना ए।
नव भेदे छाडो सग, नवमी चैत्य गुण नोदन ए ॥७७

दोहा

परिग्रह सब जे परिहरो, सन्तोष धरि निज मन्न।
मन वच काया वश करो, जिम होइ निमल पुण्य ॥१
दर्शन चैत्य आदे करी, जे पालें नव शुभ स्थान।
मध्यम श्रावक ते जाणिये, सदाचारी गुण निधान ॥२
इणि परे नव प्रतिमा धरे, सवरि दुर्व्यापार। सोलमे स्वर्गे ते ऊपजें, सौख्य तणो आधार ॥३
अनुदिन जे जन पालसी, मध्य भेद श्रावकाचार। जिनसेवक **पदमो** कहे, ते तिरसी ससार ॥४

ढाल गुणराजनी

नवमीए प्रतिमा भेद, वेदपणें इम उच्चरी ए।
अनुमणा ए निवृत्त नाम, ठाम दशमी चैत्य वरी ए ॥१
घर हाट ए दुर्व्यापार, हिंसा पाप दूर करो ए।
गृहस्थ ए षट् कर्मधार, ते अनुमोदना परिहरो ए ॥२
निज पर ए सजन परिवार, विवाह काज न कीजिइ ए।
जेह थी ए पाप व्यापार, अणु मन चित्त न दीजिइ ए ॥३
अनुमोदना थी उपजे पाप, पापें दु ख घणु होइ ए।
शीयाल सावज ए मीन सताप, कष्ट सहे नरक तणों ए ॥४
सोपिये ए घर तणो भार, निज सहोदरे अथवा पुत्र ए।
आपण पै थइए निश्चिन्त, भालवण देई घर सूत्र ए ॥५
जोग्य जाणि ए निज पुत्र जेह, ते घर भार ज परिहरि ए।
मूढ जीव ए मोहे तेह, पापें अधोगति अवतरे ए ॥६
वहुभार ए जिम डूबे नाव, सव वस्तु विनाशक ए।
तिम जीव ए पाप प्रभाव, ससार-सागर वासक ए ॥७
इम जाणि ए छोडो घर भार, निज पुत्र पद आपीइ ए।
दूमेहि ए करे परिहार, वैराग्यें मन व्यापोइ ए ॥८

यह क्रियाकोष लगभग ५० वर्ष पूर्व सूरतसे प्रकाशित हुआ था जो अब अप्राप्य है।

श्री किशनसिंह जीने उक्त च करके १४ श्लोक और गाथाएँ उद्धृत की हैं। जिनमेसे २ श्लोक प्रश्नोत्तर श्रावकाचारके हैं, १ श्लोक उमास्वाति श्रावकाचारका है तथा एक गाथा त्रिलोकसार और एक गाथा द्रव्य सग्रहसे ली गयी है। इन्होने अपने गुरु आदिका कोई उल्लेख नही किया है। इससे ज्ञात होता है कि इनका श्रावकाचार सम्बन्धी ज्ञान स्वयके शास्त्र-स्वाध्याय-जनित था। अपने समयमे प्रचलित मिथ्यात्वी व्रतो और कुरीतियोका वर्णन कर उनके त्यागका प्रभावक वर्णन किया है।

दौलतरामजीका परिचय और समय

प्रस्तुत सग्रह मे तीसरा हिन्दी छन्दोबद्ध श्रावकाचार श्री दौलत राम जी का है जिसे उन्होने स्वय क्रियाकोष नाम दिया है। (देखो पृ० २४०)

इन्होने इस क्रियाकोष की रचना उदयपुर मे स० १७९५ के भादो सुदी बारस मगलवार को पूर्ण की है। यथा—

सवत सत्रासै पच्याणव, भादव सुदि बारस तिथि जाणव।
मगलवार उदै पुर माहैं, पूरन कीनी ससय नाहै॥ (देखो पृ० ३८९)

श्री दौलत राम जी ने श्री किसन सिंह जी के क्रियाकोष की रचना (स० १७८४) के ११ वर्ष पश्चात् (स० १७९५) अपने क्रियाकोप को रचा है। इन्होने अपनी रचना का परिमाण नही दिया है और न रचे गये छन्दो के नाम ही दिये हैं। फिर भी हिन्दी भाषा के प्रसिद्ध दोहा, चौपाई, वेसरी छन्द, जोगीरासा, इकतीसा सवैया, चाल छन्द, कवित्त, सवैया तेईसा और सोरठा छन्दों मे इस क्रिया कोष को रचना की है।

प० दौलतराम जीने अपने इस ग्रन्थमे उक्त च करके कुछ गाथाएँ और श्लोक दिये हैं जिनकी सख्या ६ है। जिनमे से मयमूढमणायदण यह गाथा रयणसार की है, ३ श्लोक ज्ञानार्णव के हैं और २ लोक प्रश्नोत्तर श्रावकाचार के हैं।

डॉ० कस्तूरचन्द्र जी काशलीवालने इनकी १८ रचनाओका उल्लेख किया है, और उन्हे तीन भागो मे विभाजित किया है—

१ मौलिक रचनाएँ, २ अनूदित रचनाएँ और टव्वा-टीकाएँ।

मौलिक रचनाएँ आठ उपलब्ध हैं। यथा—१ क्रियाकोप, २ जीवन्धर चरित, ३ अध्यातमा बारह खडी, ४ विवेक विलास, ५ श्रेणिक चरित, ६ श्रीपाल चरित, ७ चौवीस दण्डक, और सिद्धपूजाष्टक मे सभी रचनाएँ छन्दोवद्ध है।

अनूदित रचनाएँ सात उपलब्ध है। यथा—१ पुण्यास्रवकथाकोष, २ पद्मपुराण, ३ आदि-पुराण, ४ हरिवश पुराण, ५ पुरुपार्थ सिद्धयुपाय, ६ परमात्म प्रकाश, और ७ सारसमुच्चय। ये सभी ढूढारी भाषा मे गद्य अनुवाद हैं।

तीसरे प्रकार की रचनाओ मे—१ तत्त्वार्थसूत्र टव्वा-टीका, २ वसुनन्दि श्रावकाचार टव्वा-टीका और ३ स्वामिकार्तिकेयानुप्रेक्षा टव्वा-टीका ये तीन उपलब्ध हैं।

रहीये ए श्री जिनगेह, गुरु सेवा सदा कीजिये ए।
निज पुत्र ए बन्धव गेह, प्रासुक आहार ते लीजिये ए ॥९
सरस विरस ए मिले जो आहार, हरष विषाद ते परिहरो ए।
छाडिये ए ममता असार, अनुमोदना रखे करो ए ॥१०
इष्ट अनिष्ट ए मिष्ट कडुवु अन्न, राग द्वेष न वि आणीये ए।
शुद्ध वस्तु ए ल्यो मानि मित्र, शुभ-अशुभ न वखाणीये ए ॥११
निज मनि ए धारिय सन्तोष, आहार लेइ मुख शुद्धि करो ए।
उदर ए पूरी निर्दोष, जिह्वा स्वाद ते परिहरो ए ॥१२
मस्तक ए रोम शिखा मात्र, शिर विटणी अल्प धरो ए।
पे हरि ए उज्ज्वल वस्त्र अग आच्छादो वस्त्रें करी ए ॥१३
रहिये ए श्री जिनगेह, अग पाय पवित्र करी ए।
वदिये ए देव गुरु तेह, भक्ति वात्सल्य विनय धरो ए ॥१४
भणिये ए श्री जिनवाणि, कान सहित ते साभलो ए।
कीजिये ए धर्म सु ध्यान, मान मोह थी वेग लो ए ॥१५
इणि परि ए गमा निज काल, साधर्मी सु चरचा करो ए।
गुणवन्त ए गुण विशाल, निज मुखे ते उच्चरो ए ॥१६
दान पूजा ए तप गुणधार, पुण्य काज सदा कीजिये ए।
पालिये ए शुभ आचार, धर्म अनुमोदना कीजिये ए ॥१७
जिणि जिणि ए उपजे पाप, ते ते काज न कीजिये ए।
मूकीये ए ममता ताप, पाप-अनुमति न दीजिये ए ॥१८
चिन्तवीये ए मनह्भार, धर मोह पास थही ए।
छोडिये ए जिम बेडी ए चोर गमार, चिन्ते पास किम मोडिये ए ॥१९
करीये आवश्ये ए काल सुलब्ध, जिनदीक्षा कहीये लीजिसी ए।
साधु केरो ए भिक्षा शुद्धि, कही ए पर धर कीजिसे ए ॥२०
इणि परि ए दशमी चैत्य, सक्षेपे मै वर्णवी ए।
इग्यारसी ए चैत्य सुणो मित्र तेह भेद हवे कहू ए ॥२१
बदीइ ए देव गुरु पाय, सजन सहु खमावीइ ए।
निर्मल ए वैराग्य ध्याय, मैत्री भाव धरे बहु ए ॥२२
भव अग ए भोग वैराग, निज मनमें चिन्तन करो ए।
दश विध ए करि सग त्याग, लीजो सजम क्षुल्लक तणो ए ॥२३
इग्यारसी ए प्रतिमा स्थान, प्रथम भेद ते साभलो ए।
कौपीन ए तणो परिधान, अखण्ड वस्त्र एक निमलो ए ॥२४
निज शिर ए तणा जे रोम, कतर वा मुडण करे ए।
अथवा ए लोच उत्तम, वैराग्य दया हेतु धरे ए ॥२५
अल्प वित्त ए राखे जात्र, निन्दा शोक न उपजे ए।
निर्भय ए होइ निज गात्र, शील सन्तोष ते उपजे ए ॥२६

शौच तणो ए राखे पात्र, काष्ठ नालीयर लोह तणो ए।
परिग्रह ए पुस्तक मात्र, ज्ञान अभ्यास कीजे घणो ए ॥२७
पर दीधू ए कौपीन वस्त्र, अखड अग तिणें आचरि ए।
प्रतिलेखणि ए लेई पवित्र, कोमल भाव हिये धरी ए ॥२८
चौद घडी ए चडया पछी दीस, पात्र पखाली कर धरी ए।
कीजिये ए नगर प्रवेश, भिक्षा काजे ते सचरे ए ॥२९
सोधतो ए ईर्यापन्थ, चार हस्त निरीक्षण करे ए।
जेहवो ए चाले निर्ग्रन्थ, सन्नि सेरीए नीसरे ए ॥३०
कहि साथे ए करे नही बात, वाटे ऊभो रहे नही ए।
बोले नही ए निज पर क्षात, कपट माया ते नवि कहीइ ए ॥३१
धनवत ए देखी धनक्षीण, ऊचा घर देखी करी ए।
लोह हेम ए देखी रत्न, त्रण समता भावे करो ए ॥३२
श्रावक तणा ए देखी घर हार प्रथम घरे जइ रहीये ए।
ऊभो ए अगण द्वार, नमोकार नव गणो ए ॥३३
दातार ए देखे जब, प्रासुक जल जो लेइ करे ए।
कर्मवशे ए नवि देखे जेम, तब तु अवर घर जइ ए ॥३४
उदर ए पूरण काज, पाच सात घरे फिरी ए।
न वि कीजिए मान कुलाज, प्रासुक आहार ते लीजिये ए ॥३५
एक बे ए वासी अन्न, रात्रितणु राध्यु परिहरो ए।
स्वाद हीन ए माने नही मन्न, सदोष अन्न ते जाणिये ए ॥३६
तजिये ए सबल आहार, रागद्वेष जेणें होइ ए।
पामे ए मदन विकार, विरुद्ध वस्तु व्रत खोइ ए ॥३७
श्रावक ए, रही एक स्थान, हस्त पाप पखालिये ए।
लीजिये ए प्रासुक नीर, ध्यान निज नियम सभालिये ए ॥३८
कीजिये ए तव सुभोजन्न, ममता स्वाद ते परिहरो ए।
कीजिये ए एक आसन्न, पछे मुख शोधन करो ए ॥३९
पालिये ए सप्त मौन धीर, तेह नाम हवे साभलो ए।
छोडिये ए सज्ञा शरीर, हुकारादिक वेगलो ए ॥४०
भोजन ए वमन स्नान, मैथुन मल-मोचन तथा ए।
पूजता ए श्रीजिन भान, सामायिक मौन यथा ए ॥४१
मौन व्रते ए हुए बहुपुण्य, ज्ञान तणो विनय होइ ए।
अज्ञानें ए होइ अदीन, मान लाज ते गुण लही ए ॥४२
जे मूढ ए पाले नही मौन, ज्ञानावरणी कर्म वाधिए।
मौन मूकीये ए होइ गुण शून्य, दुख दुर्गति ते साधि ए ॥४३
अन्तराय ए पालिये सात, रुधिर चम अस्थि देखिये ए।
जीवतणो ए देखी घात, वस्तु नियम भग पेखिये ए ॥४४

मास तणो ए देखी दर्शन, मद्य गन्ध दूरे त्यजो ए।
सूकातणो ए लही स्पर्शन, आवतो देखी आहार त्यजो ए ॥४५
वहती ए रुधिरनी धार, चार अगुल अतर कही ए।
तजिये ए तब आहार, अवर वीभत्स देखी सही ए ॥४६
माजार ए गडक जाण, हिसक पशु जीव-घात ए।
सामली ए वयण चडाल, पुष्पवती नार-दशन ए ॥४७
एह आदि ए जे देश रूढ, शास्त्र दूपण ते टालिये ए।
मानें नही जे मन प्रौढ, तेह अन्तराय पालिये ए ॥४८
निरदोष ए आहार लेइ तेह, पात्र पखालि यत्नकरी ए।
आवीये ए की जिनगेह, देव गुरु विनय धरी ए ॥४९
आवीये ए सह गुरु पास, आहार-आलोचन कीजिये ए।
घरीये ए अग उल्लास, अशन प्रत्याख्यान लीजिये ए ॥५०
रुचि नही ए जो विधि एह, तो गुरु गोहन विधि करो ए।
गुरु साथे ए श्रावक गेह-प्रासुक आहार ते अनुसरो ए ॥५१
इणि परि ए पेहलो भेद, अते उद्दिष्ट पालीइ ए।
सावद्य ए कीजे निरवद्य, मन वच काया सभालीइ ए ॥५२
उत्तम ए बीजो प्रकार, तेह भेद हवे सुणो ए।
भामरि ए लेई आहार, उदड पणे गुण घणो ए ॥५३
परिग्रह ए कौपीन मात्र, कोमल पीछी करधरि ए।
भोजन ए करे करपात्र, एक वार ते पर घरि ए ॥५४
बे त्रण ए गये निज, मास, निज मस्तकें लोच करे ए।
वैराग्य ए ज्ञान अभ्यास, निजवीर्य प्रगट धरे ए ॥५५
सथारो ए भूमि पवित्र, अथवा पाटि पाषाण तणी ए।
वैरागी ए त्रिविध विचित्र, दया क्षमा काजे भणी ए ॥५६
कोमल ए तुलिका गादि, सुख सेज्या सुर नर परिहरो ए।
इन्द्री ए करे उन्माद, तजो मदन विकार कारी ए ॥५७
अखंड ए आवश्यक धार, अनुप्रेक्षा चिन्तन करो ए।
धर्मध्यान ए कीजे भवतार, आर्त रौद्र ने परिहरो ए ॥५८
मन वच काया जाणि, कृत कारित अनुमोदन ए।
उद्दिष्ट ए आहार दोप खाणि, नव भेदे ते तमे त्यजो ए ॥५९
छ काय ए जीव सघार, उद्दिष्ट पणें हिसा उपजे ए।
तो किम ए ते लीजे आहार, वहु पाप जेणें सपजे ए ॥६०
पट् मास ए करें उपवास, जो उद्दिष्ट आहार लीजिये ए।
तो तेह ए तप विनास, वृथा श्रम गुण दीइ ए ॥६१
आधा कर्मी ए लेइ आहार, तो जति ते होइ नही ए।
केवल ए वेप आधार, भोजन काजें ते सही ए ॥६२

शौच तणो ए राखे पात्र, काष्ठ नालीयर लोह तणो ए।
परिग्रह ए पुस्तक मात्र, ज्ञान अभ्यास कीजे घणो ए ॥२७
पर दीधू ए कौपीन वस्त्र, अखड अग तिणे आचरि ए।
प्रतिलेखणि ए लेई पवित्र, कोमल भाव हिये धरी ए ॥२८
चौद घडी ए चडया पछी दीस, पात्र पखाली कर धरी ए।
कीजिये ए नगर प्रवेश, भिक्षा काजे ते सचरे ए ॥२९
सोधतो ए ईर्यापन्थ, चार हस्त निरीक्षण करे ए।
जेहवो ए चाले निर्ग्रन्थ, सन्नि सेरीए नीसरे ए ॥३०
कहि साथे ए करे नही वात, वाटें ऊभो रहे नही ए।
बोले नही ए निज पर क्षात, कपट माया ते नवि कहीइ ए ॥३१
धनवत ए देखी धनक्षीण, ऊचा घर देखी करी ए।
लोह हेम ए देखी रत्न, त्रण समता भावे करो ए ॥३२
श्रावक तणा ए देखी घर हार प्रथम घरें जइ रहीये ए।
ऊभो ए अगण द्वार, नमोकार नव गणो ए ॥३३
दातार ए देखे जब, प्रासुक जल जो लेइ करे ए।
कर्मवशे ए नवि देखे जेम, तब तु अवर घर जइ ए ॥३४
उदर ए पूरण काज, पाच सात घरे फिरी ए।
न वि कीजिए मान कुलाज, प्रासुक आहार ते लीजिये ए ॥३५
एक बे ए वासी अन्न, रात्रितणु राध्यु परिहरो ए।
स्वाद हीन ए माने नही मन्न, सदोष अन्न ते जाणिये ए ॥३६
तजिये ए सबल आहार, रागद्वेप जेणें होइ ए।
पामे ए मदन विकार, विरुद्ध वस्तु ब्रत खोइ ए ॥३७
श्रावक ए, रही एक स्थान, हस्त पाप पखालिये ए।
लीजिये ए प्रासुक नीर, ध्यान निज नियम सभालिये ए ॥३८
कीजिये ए तव सुभोजन्न, ममता स्वाद ते परिहरो ए।
कीजिये ए एक आसन्न, पछे मुख शोधन करो ए ॥३९
पालिये ए सप्त मौन धीर, तेह नाम हवे साभलो ए।
छोडिये ए सज्ञा शरीर, हुकारादिक वेगलो ए ॥४०
भोजन ए वमन स्नान, मैथुन मल-मोचन तथा ए।
पूजता ए श्रीजिन भान, सामायिक मौन यथा ए ॥४१
मौन व्रते ए हुए बहुपुण्य, ज्ञान तणो विनय होइ ए।
अज्ञानें ए होइ अदीन, मान लाज ते गुण लही ए ॥४२
जे मूढ ए पाले नही मौन, ज्ञानावरणी कम बाधिए।
मौन मूकीये ए होइ गुण शून्य, दुख दुर्गति ते साधि ए ॥४३
अन्तराय ए पालिये सात, रुधिर चर्म अस्थि देखिये ए।
जीवतणो ए देखी घात, वस्तु नियम भग पेखिये ए ॥४४

मास तणो ए देखी दर्शन, मद्य गन्ध दूरे त्यजो ए।
सूकातणो ए लही स्पर्शन, आवत्तो देखी आहार त्यजो ए ॥४५
वहती ए रुधिरनी धार, चार अगुल अतर कही ए।
तजिये ए तव आहार, अवर वीभत्स देखी सही ए ॥४६
माजार ए गडक जाण, हिंसक पशु जीव-घात ए।
सामली ए वयण चडाल, पुष्पवती नार-दर्शन ए ॥४७
एह आदि ए जे देश रूढ, शास्त्र दूषण ते टालिये ए।
मानें नही जे मन प्रौढ, तेह अन्तराय पालिये ए ॥४८
निरदोष ए आहार लेइ तेह, पान पखालि यत्नकरी ए।
आवीये ए की जिनगेह, देव गुरु विनय वरी ए ॥४९
आवीये ए सह गुरु पास, आहार-आलोचन कीजिये ए।
धरीये ए अग उल्लास, अशन प्रत्याख्यान लीजिये ए ॥५०
रुचि नही ए जो विधि एह, तो गुरु गोहन विधि करो ए।
गुरु साथे ए श्रावक गेह-प्रासुक आहार ते अनुसरो ए ॥५१
इणि परि ए पेहलो भेद, अते उद्दिष्ट पालीइ ए।
सावद्य ए कीजे निरवद्य, मन वच काया सभालीइ ए ॥५२
उत्तम ए बीजो प्रकार, तेह भेद हवे सुणो ए।
भामरि ए लेई आहार, उदड पणे गुण घणो ए ॥५३
परिग्रह ए कौपीन मात्र, कोमल पीछी करधरि ए।
भोजन ए करे करपात्र, एक वार ते पर घरि ए ॥५४
वे त्रण ए गये निज, मास, निज मस्तकें लोच करे ए।
वैराग्य ए ज्ञान अभ्यास, निजवीर्य प्रगट धरे ए ॥५५
सथारो ए भूमि पवित्र, अथवा पाटि पाषाण तणी ए।
वैरागी ए त्रिविध विचित्र, दया क्षमा काजे भणी ए ॥५६
कोमल ए तुलिका गादि, सुख सेज्या सुर नर परिहरो ए।
इन्द्री ए करे उन्माद, तजो मदन विकार कारी ए ॥५७
अखड ए आवश्यक धार, अनुप्रेक्षा चिन्तन करो ए।
धमध्यान ए कीजे भवतार, आर्त रौद्र ने परिहरो ए ॥५८
मन वच काया जाणि, कृत कारित अनुमोदन ए।
उद्दिष्ट ए आहार दोष खाणि, नव भेदे ते तमे त्यजो ए ॥५९
छ काय ए जीव सघार, उद्दिष्ट पणें हिंसा उपजे ए।
तो किम ए ते लीजे आहार, बहु पाप जेणें सपजे ए ॥६०
षट् मास ए करें उपवास, जो उद्दिष्ट आहार लीजिये ए।
तो तेह ए तप विनास, वृथा श्रम गुण दीइ ए ॥६१
आधा कर्मी ए लेइ आहार, तो जति ते होइ नही ए।
केवल ए वेष आधार, भोजन काजे ते सही ए ॥६२

उद्दिष्ट ए अभक्ष ज जाणि, जिह्वा स्वादे जे ग्रही ए ।
तेह थी ए डसु विष, एक भव दुख ज लहे ए ॥६३
उद्दिष्ट थी ए बहुविध पाप, वहु जन्म ते दुख दीये ए ।
पशु गति ए पामे सताप, कष्ट बहु पर तें लहे ए ॥६४
आधा कर्मि ए लेइ जे आहार, ते मूढा आप वचिये ए ।
परनी ए वाए गमार, पाप तणो भार सचिये ए ॥६५
जप तप ए करे जे ध्यान, सम दम सयम आचरे ए ।
ते सहु ए थाइ अज्ञान, जो उद्दिष्ट अनुसरे ए ॥६६
उद्दिष्ट ए अनासमो पाप, हुओ, हुइ छे, होसे नही ए ।
ते यती ए सहेय सताप, व्रत भग दूषण लहे ए ॥६७
जे मूढ ए जिह्वा स्वाद, आधा करमी आहार लीये ए ।
ते प्राणी ए विषय प्रमाद, निज व्रत ने अजलि दीइ ए ॥६८
जिणें आहारें ए जाइ चारित्र, निन्दा अपजस वहु विस्तरे ए ।
ते अन्न ए छाडो मित्र, भव दुख किम निस्तरो ए ॥६९
गृही तणु ए लेइ आहार, चार विकथा जे करे ए ।
भोजन ए राजा चोर, नार, फोके पाप पिंड भरे ए ॥७०
छाडिये ए सहु परमाद, पच इन्द्री मन सवरी ए ।
तजिये ए हरष विषाद, समता भाव सदा धरो ए ॥७१
भणिये ए निर्मल ज्ञान, जप तप सजम आचरिये ए ।
कीजिये ए धर्म सु ध्यान, आर्त्त रौद्र सहु परिहरो ए ॥७२
अहो रात्रि ए गमीये काल, धर्म ध्यान सदा रहीये ए ।
आवश्यक ए विशाल, निज निज काले ते ग्रहीये ए ॥७३
कीजिये ए त्रण प्रतिक्रम, रात्रें गोचरि दिवस तणो ए ।
त्रिकाल ए सामायिक परम योगभक्ति बे हि भणो ए ॥७४
लीजिये ए स्वाध्याय चार, स्तवन वन्दना सदा करो ए ।
उत्तम ए कायोत्सर्ग धार, निज शक्ति ते अनुसरो ए ॥७५
अनुप्रेक्षा ए चिन्तविये बार, भावना सोल भावो भली ए ।
दश लक्षण ए धम विचार, अट्ठावीस गुण वली ए ॥७६
सथारो ए चार हस्त मात्र, जोइ पूजी जत्न करी ए ।
उपनो ए जे खेद गात्र, ते उपशान्ति निद्रा धरो ए ॥७७
मध्य रात्रि ए समये तु जाण, एक मुहूर्त निद्रा कही ए ।
बहु निद्रा ए करता हाणि, सावधान थई गुण ग्रही ए ॥७८
काल तणी ए कला निज एक, धर्म विना फोकट गमो ए ।
इम जाणी ए धरिय विवेक, धरम ध्यान सदा रमो ए ॥७९
दुर्लभ ए मानुष जन्म, श्रावकाचार अति दुर्लभ ए ।
जु लाधो ए तो साधो परम, नि प्रमादें करो सुलभ ए ॥८०

उत्तम ए पालो आचार, दिन पग ति वृद्ध व्रत ग ।
धरिये ए प्रतिमा इग्यार, उत्कृष्ट श्रावक होइ सत ए ।।८१

दोहा

इग्यार प्रतिमा इम कही, सक्षेपे सविचार । विस्तारें आगम जाण जो, जिनशासन अनुसार ।।१
पाक्षिक नैष्ठिक साधक, श्रावक त्रिहु भेद होय । जैन पक्ष सदा धरे, ते पाक्षिक नामे जोय ।।२
श्रावक आचार जे रहे, ते नैष्ठिक गुण नाम । आतम काज साधे सदा, ते साधक गुण ग्राम ।।३
षट् प्रतिमा जे सदा धरे, जघन्य श्रावक ते जोय । मध्यम पणे प्रतिमा नव, उत्तम एकादश होय ।।४
निज शक्ति को प्रकट करि, प्रतिमा पाले इग्यार ।
सोलमा स्वग लगें सुख लहि, पछें पामे मोक्ष दुआर ।।५
सफल जन्म छें तेहना, सफल जीवी जाणो तेह । जिनसेवक **पदमो** कहे, श्रावक आचार पालें जेह ।।६

अथ ढाल रसना देवीनी

प्रतिमा कही इग्यार तो, तप बारह हवे सुणो ए ।
बाह्य तप षट् भेद तो, अभ्यन्तर षट् भेद भण्या ए ।।१
अणसण पेहलो नाम तो, अवमोदर्य बीजो कह्यो ए ।
व्रत परिसख्या त्रीजो तो, चौथो रसत्याग सही ए ।।२
पचम विविक्त सिज्यासन्न तो, छट्ठी काया तणो क्लेश ए ।
जुजुआ कहुँ तरु भेद तो, जिय गुरु उपदेशे सुण्या ए ।।३
अणसण विधि तप नाम तो, तिथि नक्षत्र वारि ए ।
उपवास कीजें तेह तो, जिन शासन अनुसारि ए ।।४
नन्दीश्वर दिन अष्ट तो, आपाढ कातकी मास ए ।
फाल्गुण विधि सहित तो, कीजिए पाप-नाश ए ।।५
पचमी श्वेत कृष्ण तो, रोहिणी नक्षत्र माल ए ।
पाश्वनाथ रविवार तो, आठम चौदस सदा करो ए ।।६
श्रावण सानमी मुक्ति तो, मुकुट जिन आगलि धरी ए ।
श्वेत दशमी कुभ नाम तो, पूजा जिन आगल करी ए ।।७
श्रावण मास कृष्ण पक्ष तो, प्रतिपद दिन आदि ए ।
सोल कारण उपवास तो, एकान्तर कीजे सदा ए ।।८
मेघमाला श्रुत स्कन्ध तो, व्रत श्री जिन मुख ए ।
दीप धूप फल जे द्रव्य तो, मास लगें कीजे दक्ष ए ।।९
चन्दन षष्ठी लब्धि विधि तो, त्रैलोक्य त्रीज कही ए ।
आकाश पचमी सातमी निर्दोप तो, सुगधे दशमी सही ए ।।१०
सरस्वती दिन इग्यार तो, पुष्पाजलि दिन पच ए ।
दश लक्षणी दिव्य धर्म तो, कीजे विधि पुण्य सच ए ।।११
श्रावण द्वादशी व्रत तो, अनन्त चौदस चग ए । रत्नत्रय पवित्र तो, सदा कीजे मन रग ए ।।१२
मुक्तावली इन्द्र विधान तो, कनकावली रत्नावली ए ।
पल्य विधान पुण्यवन्त तो, कीजे एक द्विकावली ए ।।१३

त्रेपन क्रिया उपवास तो, जिन गुण सपत्ति धरो ए ।
कल्याणक अष्ट कर्म चूर तो, दु ख हर सुख सपत्ति ए ॥१४
नन्दीश्वर लक्षण पक्ति तो, मेरु विमान पक्ति ए ।
त्रैलोक्य सार मृजु मध्य तो, सिंह नि क्रीडित मुक्त ए ॥१५
एह आदे बहु तप तो, श्री जिनशासन माहि ए ।
शक्ति प्रगट करी निज तो, तप कीजे कर्म दाह ए ॥१६
एकेके तप प्रभाव तो, कर्म अनन्त हणि ए ।
समकित वलें भव्य जीव तो, हुआ मुक्ति नारी धणी ए ॥१७
अणसण कही उपवास तो, एक दोय त्रण आदि ए ।
अष्ट पक्ष दिन मास तो, कीजे निज शक्ति सारु ए ॥१८
बत्रीस कवल तणो आहार तो, कवल सहस्र तन्दुल तणो ए ।
अवमोदर्य बीजे तप तो, एक आदें एक जे ऊणो ए ॥१९
व्रत परिसख्या तप तो, पुर घर सेरी भणी ए ।
मन चिन्त्या वस्तु सख्य तो, कीजे ते दिन प्रति भणी ए ॥२०
षट रस तणो परित्याग तो, दिन प्रति एक को त्यजो ए ।
वैराग्य सन्तोष काज तो, रस त्याग सदा भजो ए ॥२१
जुजुआ सेज्यासन्न तो, जीव तणी बाधा टालो ए ।
एकाकी करो नित्य ध्यान तो, तप विविक्त पालो सदा ए ॥२२
परीषह सहो त्रण काल तो, वर्षा शीत उष्ण तणा ए ।
सुभट पणें थई धीर तो, काय क्लेश तप घणा ए ॥२३
इणि परे बाह्य छ तप तो, कीजे मन इन्द्री दड ए ।
इच्छा निरोधनी तप तो, ममतानें मोह खड ए ॥२४
अभ्यन्तर तणा तप तो, षट भेदे ते सासलो ए ।
मन परिणामे होय तो, शुद्ध भावे ते तप भलो ए ॥२५
प्रायश्चित्त तप पेहलो नाम तो, विनय तप बीजो कही ए ।
वैयावृत्त त्रीजो होइ तो, चौथो ते स्वाध्याय लही ए ॥२६
पचमो कायोत्सर्ग तो, छट्ठउ धर्म ध्यान तणो ए ।
अभ्यन्तर भावे एह तो, तप करम हणें घणा ए ॥२७
पालता सजम भार तो, पाप करम वसि ए ।
उपजे दूषण व्रत तो, प्रायश्चित्त लीजे तस ए ॥२८
जे देव गुरु सानिध्यतो, दोस आलोचन करि ए ।
प्रायश्चित्त लीजे व्रत योग तो, निज निन्दा गर्हा धरि ए ॥२९
आलोचन प्रतिक्रम तो, ते दोय विवेक पणु ए ।
व्युत्सर्ग तप छेद तो, परिहार उपस्थापना घणु ए ॥३०
नव भेदे प्रायश्चित्त तो, लीजे निज मन शुद्ध सु ए ।
निर्मल पणें व्रत होय तो, इम कहे गुरु वुद्धि तो ए ॥३१

विनय चहुविघ भेद तो, रत्नत्रय तप तणो ए। उपचार विनय तेह तो, ते तप गुणवन्त भण्यु ए ॥३२

नि शक आदि अष्ट गुण ए ए दर्शन गुण ऊजलो ए।
व्यजन अर्थ समग्र तो, ज्ञान अष्ट गुण निलो ए ॥३३
दर्शन ज्ञान चारित्र तो, ते विनय तप वणो ए।
उपचार विनय बिहु भेद तो, प्रत्यक्ष परोक्ष सुणो ए ॥३४

व्रत समिति गुप्ति तो, तेर भेदे चारित्र ए। द्वादश भेदे तप तो ए उपचार पवित्र ए ॥३५

प्रत्यक्ष गुरुतणी भक्ति तो, मन वच कायाइ कीजिये ए।
प्रशस्त विनय मन तीज तो, दुर्ध्यान दूरे त्यजिये ए ॥३६
हित मित मीठो बोल भास तो, कठिण करकस टालिये ए।
दुर्वाक्य दूरें छोड तो, वचन विनय ते पालिये ए ॥३७
गुरु देखि कीजे अभ्युत्थान तो, प्रणाम करि अजलि ए।
आसन उपकरण दान तो, सह गुरु वली वीचल ए ॥३८
एह आदे विनय कीजे तो, मन वच काया पणे ए।
गुरु आज्ञा वहे जेह तो, परोक्ष विनय ते भणी ए ॥३९
विनय कीधे वहु पुण्य तो, जस गुण अति विस्तरे ए।
॥४०

वैयावृत्त्य दश भेद तो, आचार्य उपाध्याय तपस्वि ए।
शैक्ष्य ग्लाण गण कुल तो, सघ साधु मनोज्ञ पद दश ए ॥४१
मनवचकायाइ भक्ति तो, कीजे श्रावक यत्ति तणो ए।
आहार औषध देइ दान तो, सुश्रूषा कीजे घणी ए ॥४२
जिम किम जाइ जती रोग तो, साम्हो उपाय करो घणो ए।
कीजे साधु समाधि तो, सदा वैयावृत्त धरो ए ॥४३
वैयावृत्य फल नन्दिषेण तो, इन्द्री वहुगुण ठव्यो ए।
दशमे जई देवलोक तो, पछे ते वसुदेव हुवो ए ॥४४
द्वारावतीइ श्री कृष्ण तो, मुनिनें औषध करीइ ए।
मतिवर टाल्यो रोग तो, तीर्थंकर पुण्य वरीइ ए ॥४५
इम जाणिय भव्य जीव तो, वैयावृत्त्य जे करी ए।
भोगवी सुरनर सुक्ख तो, शिवपुरी ते सचरी ए ॥४६
स्वाध्याय पच भेद तो, वाचना पृच्छना आम्नाय ए।
अनुप्रेक्षा धर्म उपदेश तो, सदा ते कीजे स्वाध्याय ए ॥४७
पुस्तक वाचो पूछो अर्थ तो, आम्नाय अनुक्रमे भणो ए।
अर्थ चितन अनुप्रेक्ष तो, उपदेश धर्म जिनतणो ए ॥४८
इणि परिकीजे स्वाध्याय तो, इन्द्री मन वच सवरो ए।
अध्ययन परम तप तो, सदा ज्ञान अभ्यास करो ए ॥४९
धरो वहुभेदें कायोत्सर्ग तो, ऊभाने आसन रही ए।
मूकी ममता सग मोह तो, व्युत्सर्ग ति एते कही ए ॥५०

त्यजी दुर्ध्यान आर्त्त रौद्र तो चहु भेदे आर्त्तध्यान ए।
इष्ट अनिष्ट विरह सयोग तो, पीडा चिन्ता निदान ए ॥५१
निज नारी पुत्र मित्र तो सुखकारी वस्तु इष्ट ए।
वियोग थाइ ज्यारे तेह तो, परिणाम होइ क्लिष्ट ए ॥५२
दुष्ट नारी दुष्ट पुत्र तो, दुर्जन दुखकारी ए।
अनिष्ट सजोगे जीव तो, होए वहुकष्ट धारी ए ॥५३
वेदनी उदय असाता तो, बहुरोग तें उपजे ए।
पीडा चिंता टालो तेह तो, सवेगें सुख सपजे ए ॥५४
दान पूजा जप तप तो, ध्यान अध्ययन आचरि ए।
निदान वाछे दुर्भोग तो, रागने द्वेषें करी ए ॥५५
ए हवो त्यजो आर्त्तध्यान तो, पशुगतिनें दुख देखि ए।
भूख तरस सहे वहुभार तो, मार ताड कष्ट सहे ए ॥५६
चहुभेदें रुद्रध्यान तो, हिंसा मृषा स्तेयानन्द ए। विषयसरक्षणानन्द तो, उपजे पाप वृन्द ए ॥५७
जीव-हिंस हिंसानन्द तो, झूठू वचन मृषानन्द ए।
पर-द्रव्य-चोरी स्तेयानन्द तो, इन्द्री भोग विषयानन्द ए ॥५८
क्रूर मन भावे बहु पाप तो, रौद्रध्याने नरक माहे ए।
छेदन भेदन मार मार तो, बहुविध दु ख सहे ए ॥५९
इम जाणि तजो आर्त रौद्रतो, आज्ञा उपाय विचय ए।
विपाक विचय त्रीजो ध्यान तो, चौथो सस्थान विचय ए ॥६०
निज गुरु मानो आण तो, उपाय कर्मनाश तणो ए।
कर्म उदय फल विपाक तो, त्रैलोक्य सस्थान भणो ए ॥६१
उत्तम चार धर्मध्यान तो, पदस्थ पिंडस्थ कह्यो ए। रूपस्थ रूप-अतीत तो, मन विकल्प ग्रह्यो ए ॥६२
जे जिनवयन विशाल तो, आगम पुराण घणा ए।
चिंतो पद अक्षर मत्र तो, तेह परस्थ ध्यान भण्या ए ॥६३
पार्थिवी आग्नेयी मारुती तो, वारुणी तत्त्व रूपवती ए।
पच धारणा पिंडस्थ तो, ध्यान ध्यावो जिनपती ए ॥६४
पच परमेष्ठी रूप तो, अरिहन्त सिद्ध सूरी तणो ए।
उपाध्याय साधु सुगुण तो, रूपस्थ रूप आपणो ए ॥६५
विकल्प सकल्प रहित तो, रूप कहि तणुं नही ए।
केवल ज्योति स्वरूप तो, रूपातीत ध्यावो सही ए ॥६६
चहुं भेदे शुक्लध्यान तो, पृथक्त्व वितर्क विचार ए।
एकत्व वितर्क विचार तो, सूक्ष्म क्रिया अप्रतिपाति सार ए ॥६७
व्युपरत क्रिया निवृत्ति नाम तो, शुक्लध्यान सदा ध्याइ ए।
ज्ञान वैराग्ये होइ तो, शुभ भावना भावजो ए ॥६८
ध्यानतणो प्रकार तो, इहाँ सक्षेपें आण्यो ए।
ध्यानामृतरास मझार तो, विस्तारे तिहा जाण जो ए ॥६९

उक्त रचनाओ पर दृष्टिपात करने से यह सहज ही ज्ञात होता है कि प० दौलतराम जी चारो ही अनुयोगोंके अच्छे ज्ञाता थे।

प० दौलतराम जीका जन्म वसवाँ (राजस्थान) मे स० १७४९ के आषाढ सुदी १४ को हुआ। इनके पितामहका नाम घासीराम और पिताका नाम आनन्दराम था। जाति खडेलवाल और गोत्र काशलीवाल था। इनका अध्ययन कहाँ और किससे हुआ, इसका कोई उल्लेख उन्होने अपनी रचनाओमे कही नही किया है। पर इनकी रचनाओको देखते हुए ये प्राकृत और सस्कृतके अच्छे ज्ञाता थे, यह सहजमे ही ज्ञात हो जाता है। तथा इनके पिता यत राज्यके उच्च पद पर आसीन रहे हैं, अत इनकी शिक्षा-दीक्षा भी उभय-भाषा विशेषज्ञ विद्वानोके द्वारा हुई होगी, ऐसा निश्चित है। चारो अनुयोगोका ज्ञान इनका स्वोपार्जित प्रतीत होता है।

समीक्षा

पद्म कवि कृत श्रावकाचार और दोनो क्रिया-कोषोमे क्या समता और क्या विशेषता है इसका कुछ यहा विचार किया जाता है—

जिस प्रकार पदम कविने अपने श्रावकाचारको भूमिकामे समवशरणमे ले जाकर श्रेणिकके द्वारा गौतम गणधरसे श्रावक धर्मके जाननेकी इच्छा प्रकट की, उसी प्रकार किशन-सिंह जीने भी कराई है, किन्तु दौलतराम जीने ऐसा न करके मगलाचरणके पश्चात् त्रेपन क्रियाओका वर्णन यह कहकर प्रारम्भ किया है कि गृहस्थकी अनेक क्रियाओमे त्रेपन क्रियाएँ प्रधान हैं।

दोनो ही क्रिया कोषोमे त्रेपन क्रियाओकी नाम वाली एक ही गाथा 'उक्त च' कहकर लिखी है। वे त्रेपन क्रियाएँ इस प्रकार हैं—मूलगुण ८, व्रत १२, तप १२, समभाव १, श्रावक प्रतिमा ११, दान ४, जलगालन १, अनस्तमित व्रत (रात्रि भोजन त्याग) १, दर्शन १, ज्ञान १, चारित्र १, = ५३।

प्रस्तुत सग्रहमे निबद्ध तीनो ही ग्रन्थकारोने त्रेपन क्रियाओकी मुख्यतासे ही श्रावकके आचारका वर्णन किया है इसके पूव श्री राजमल जीने अपनी लाटी सहितामे भी उक्तच करके त्रेपन क्रियाओंके नाम कली उसी गाथाका उल्लेख किया है जिसे कि उक्त दोनो क्रियाकोष कारो ने उद्धृत किया है।

पदम कविने आगे कहे जानेवाले विषयका निर्देश पूर्व कथनके उपसहारके साथ छन्द मे ही कर दिया है, किन्तु किशनसिंह जी ने उसके साथ वर्ण्य विषय का निर्देश पृथक् शीर्षक देकरके किया है, जिससे पाठक को आगे वर्णन किये जानेवाले विषय का बोध सरलता से हो जाता है। दौलतराम जीने शीषक नही दिये हैं।

भक्ष्य-अभक्ष्य वस्तुओकी काल-मर्यादाका निर्देश पदम कवि और किशनसिंह जीने पूर्वा-गत गाथाओको देकर सप्रमाण वर्णन किया है, किन्तु दौलतरामजीने उक्त वर्णन करते हुए भी प्रमाण उद्धृत नही किये हैं।

पदम कविने गृहीत मिथ्यात्वके पाचो भेदोका जितना स्पष्ट और विस्तृत वर्णन किय है, वैसा शेष दो क्रिया कोषकारोने नही किया है।

वाह्य अभ्यन्तर तप तो, द्वादश भेद कह्या ए।
सक्षेपे कह्यो सविचारत्तो, विस्तार आगमे लही ए ॥७०
तप ते बहुल प्रभाव तो, महिमा जस घणो ए।
पच्च इन्द्री चचल मन तो, वशकारी तप सुणो ए ॥७१
तप फले बहु रिद्धि तो, सिद्ध होइ मन तणी ए।
सप्त भेदे महाऋद्धि तो, लब्धि उपजे घणी ए ॥७२
बुद्धि नाम तप रिद्धि तो, विक्रिय ओषध ऋद्धि ए।
बल लब्धि रस रिद्धितो, अक्षीण मानस ऋद्धि ए ॥७३
एह आदे अडतालीस रिद्धि तो, पच भेद शुभ ज्ञान ए।
कान्ति कला कोवाद तो, होइ गुण निधान ए ॥७४
इम जाणि भव्यजीव तो, तप सदा आचरो ए।
कठिण हणी कुकर्म तो, मुक्तिनारी वेगे वेरो ए ॥७५
तप तीव्र अग्निवाले तो, जीव हेम निर्मल थाइ ए।
ध्यान रसायण दीधत्तो, कर्म दूरे जाइ ए ॥७६
रागद्वेष कीजे दूर तो, हृदय धरि समभाव ए। ते तप साफल्य होइ तो, भव-सागर नाव ए ॥७७
रागद्वेषे करी जे तप तो, ते कष्टकारी काय ए।
रेणु-पीलन, जल-मन्थ तो, जिम श्रम निष्फल थाय ए ॥७८
तप चिन्तामणि कामधेनु तो, तप ते कल्पवृक्ष सम ए।
सुरनर वर सुख होइ तो, अनुक्रमे लहे मोक्ष ए ॥७९

दोहा

जिन गेहमा कीजें नही, विकथा विनोद विलास।
खेल सिंहाणय मलमूत्र आदि व्यापार व्यसन उपहास ॥१
काम क्रीडा कोप कलि, त्यजो चतुर्विध आहार।
अवर आसादना सहु तजो, जिन प्रासाद मझार ॥२
रीति करी न वि भेटीइ देव, जिनवाणी गुरु धर्म।
विवेक गुण हृदय धरि, विवेकें होइ पुण्य परम ॥३
दिनकर उदयें अस्त हते, दिवस घडी छो विशाल।
धर्मव्रत काजि ग्रही, अवर नहीं हीन काल ॥४
तिथि पूरी जा लगि मिले, ता न वि कीजे काल।
हीन घडी छो माहि कीजे नही, इम कहे श्रीजिनभान ॥५
देव शास्त्र गुरु पूजा तणो, जे जन खाइ निर्माल्य।
वश छेद रोग पामी ने, नरके दु ख सहे वाल ॥६
निर्माल्य खाइ जे जीव घणु तेहथी रुडु विष भक्ष्य।
एक भवे विष दुख देसे, निर्माल्य बहु भव दु ख ॥७
भेदज्ञान भवि मन धरो, सदा धरो आचार। जिन सेवक पदमो कहे, सफल करो ससार ॥८

ढाल नरेसुआनी

तप द्वादश इम वर्णवीए, नरेसुआ, हवे कहुं त्रिरत्न।
दर्शन ज्ञान चारित्र मय ए, नरेसुआ सदा कीजे तस यत्न ॥१
त्रिहु भेदे ते साभलो ए, नरेसुआ, विधान भेद विवहार।
निश्चय रत्नत्रय निर्मलो ए, नरेसुआ, ते उतारे भवपार ॥२
भाद्रव माघ चैत्र मास ए, नरेसुआ, श्वेत द्वादशो त्रस दीस।
देव पूजो जात्रा दान देई ए, नरेसुआ, प्रासुक शुद्ध लीजे अन्न ॥३
एक भक्त धारण करी ए, नरेसुआ, लीजे त्रण उपवास।
गुरु साक्षें पोसा सहित ए, नरेसुआ, कीजो जागरण उल्हास ॥४
दर्शन ज्ञान चारित्रतणा ए, नरेसुआ, हेम आदि त्रण जत्र।
विधि अनुक्रमे मडाविए, नरेसुआ, लिखी ते निज निज मन्त ॥५
नि शक आदि अष्ट अग ए नरेसुआ, सवेग गुण पवित्र।
अष्ट मन्त्र तिहा लिखीइ ए, नरेसुआ, पूजो दर्शन जन्त्र ॥६
व्यजनोजित आदि अष्ट गुण ए, नरेसुआ, पूजो निर्मल ज्ञान।
तेर भेदे चारित्र गुण ए, नरेसुआ, पूजो यन्त्र अभिधान ॥७
देव आगम गुरु पूजी ने ए, नरेसुआ, स्नपन करी वर जत्र।
विधि सहित विवेक पणें ए, नरेसुआ, अष्ट द्रव्य पवित्र ॥८
जल गध अक्षत पुष्प वर ए, नरेसुआ, दीप धूप फल सार।
अर्घ उतारी जाप स्तवन भणी ए, नरेसुआ, जयमाल भक्ति नमस्कार ॥९
तेरसि चौदसि पूनम दिन ए, नरेसुआ, दिन प्रति त्रण काल।
बहु भव्य जन सु परिवर्या ए, नरेसुआ, जत्र पूजो गुण माल ॥१०
प्रभाते दर्शन पूजा करो ए, नरेसुआ, मध्याह्न समय पूजो ज्ञान।
अपराह्न वेला चारित्र पूजो ए, नरेसुआ, कीजे वाजित्र नृत्य गान ॥११
त्रण दिन इम पूजीइ ए, नरेसुआ, सुणो, कथा जिनवाणि।
पारणें स्नपन पूजा करी ए, नरेसुआ, खमावी देव गुरु जाणि ॥१२
साधर्मी साथे जिन घर आवी ए, नरेसुआ, पात्र दीजे शुभ दान।
पछें पारणु कीजिइ ए, नरेसुआ, रत्नत्रय कीजे विधान ॥१३
त्रणवार इस कीजिइ ए, नरेसुआ, वरस त्रण पर्यन्त।
अथवा निज शक्ति करो ए, नरेसुआ, सदा पाक्षिक जन सन्त ॥१४
नैष्ठिक श्रावक तम्हो सुणो ए, नरेसुआ, भावना भावो व्यवहार।
रत्नत्रय तणी निर्मली ए, नरेसुआ, भावना पुण्य भवतार ॥१५
वैश्रमण भूपें कीयो ए, नरेसुआ, रत्नत्रय विधान।
त्रीजे भवे तीर्थंकर हुओ ए, नरेसुआ, मल्लिनाथ जिन भान ॥१६
नि शकित नि कक्षित अग ए, नरेसुआ, निर्विचिकित्सा अमूढ।
उपगूहन स्थिति करण ए, नरेसुआ, वात्सल्य प्रभावना प्रौढ़ ॥१७

नि शक आदें अष्ट अग ए, नरेसुआ, सवेग आदे आठ गुण ।
उपशम वेदक क्षायिक ए, नरेसुआ, दर्शन पालो निपुण ॥१८
कुज्ञान त्रण दूरे करी ए, नरेसुआ, पालो पच शुभ ज्ञान ।
मतिश्रुत अवधि मन पर्यय ए, नरेसुआ, केवल बोध निधान ॥१९
त्रण सै छत्रीस भेद ए नरेसुआ, मतिज्ञान तणा होय ।
पचवीस भेदे श्रुत ज्ञान ए नरेसुआ, पटविध अवधि जोय ॥२०
ऋजु विपुल मति नाम ए, नरेसुआ, मनपर्यय भेद दोय ।
केवल ज्ञान एक निमलो ए, नरेसुआ, ज्ञान तो ले नही कोय ॥२१
पच महाव्रत समिति पच ए, नरेसुआ, तीन गुपति पवित्र ।
यतीवर ते सदा धरे ए, नरेसुआ, तेरे भेदे चारित्र ॥२२
सर्वथा जीव दया पालो ए, नरेसुआ, सर्वदा सत्य विशाल ।
सर्वदा अचौर्य व्रत भलो ए, नरेसुआ, ब्रह्मचर्य गुणमाल ॥२३
आकिचन नि स्पृहपणें ए, नरेसुआ, पच महाव्रत जेह ।
ईर्या भाषा एषणा समिति ए, नरेसुआ, आदान निक्षेप प्रतिष्ठापन तेह ॥२४
ईर्या समिति जुगमात्र जोइ ए, नरेसुआ, भाषा समिति बोले सत्य ।
दोप त्राणु थी वेगला ए, नरेसुआ, एषणा समिति जीव हित ॥२५
आदान निक्षेपण यत्ने करो ए, नरेसुआ, लेओ मूको यत्ने वस्तु ।
जीव जोइ मल नीत चव्यो ए, नरेसुआ, प्रतिष्ठापना ते प्रशस्त ॥२५
मन वचन काया तणी ए, नरेसुआ, परिहरो दुर्व्यापार ।
त्रण गुप्ति सदा धरि ए, नरेसुआ, चारित्र तेर प्रकार ॥२७
दर्शन ज्ञान चारित्र रत्न ए, नरेसुआ, पालो मुनि व्यवहार ।
भक्ति सुश्रूषा तेहनो करो ए, नरेसुआ, भावना भावे ब्रह्मचार ॥२८
निज योग्य जे दर्शन ए, नरेसुआ, आपण जोग्य जे ज्ञान ।
जेह निज योग्य होवे व्रत ए, नरेसुआ, जत्न करो सदा तेह ॥२९
शुद्ध बुद्धमय निमलो ए, नरेसुआ, आतम रुचि दर्शन ।
आपें आप सदा धरो रुचि ए, नरेसुआ, ते निश्चय दृष्टि गुण ॥३०
निर्विकल्प निज वेदन ए, नरेसुआ, निश्चय ज्ञान गुण होय ।
आपे आप वेदे सदा ए, नरेसुआ, अवर न वेदे कोय ॥३१
सर्व परिग्रह थी वेगलो ए, नरेसुआ, उज्ज्वल सहज स्वरूप ।
आपें आप स्थिति जे करि ए, नरेसुआ, ते निश्चय चारित्र रूप ॥३२
निश्चय रत्नत्रय कारण ए, नरेसुआ, पेहलो कह्यो विवहार ।
विवहार विना निश्चय नही ए, नरेसुआ, व्यवहार निश्चय साधार ॥३३
निश्चय रत्नत्रय होइ ए, नरेसुआ, जो होइ समता भाव ।
तेह भणी समता धरो ए, नरेसुआ, भव-सागर जे नाव ॥३४
राग द्वेष सहु परिहरि ए, नरेसुआ, शत्रु मित्र सम जोय ।
हेम लोह त्रण रत्न ए, नरेसुआ, सुख-दुख सम जोय ॥३५

क्रोध मान माया लोभ ए, नरेसुआ, छोडो कषाय ते चार।
कषाय त्यजे नही जा लगे ए, नरेसुआ, त्या नही समता भाव ॥३६
क्रोध मान माया टालीये ए, नरेसुआ, आपण परने करे रोष।
गुण तो अश न उपजे ए, नरेसुआ, अवगुण उपजे लाख ॥३७
मानें निधानें ए दुःख तो ए, नरेसुआ, मान लोपे जीव सान।
मानें केह नें मानें नही ए, नरेसुआ, जिम मतवालो अज्ञान ॥३८
माया पिशाची परिहरो ए, नरेसुआ, माया ते दुःख दातार।
कपटें कूडे घणु नडया ए, नरेसुआ, रडया ते भव मझार ॥३९
लोभ क्षोभ करे धर्म तणु ए, नरेसुआ, लोभी नही किही सुक्ख।
गुण दोष जाणे नही ए, नरेसुआ, लोभी देखे सदा दुक्ख ॥४०
कोपे द्वीपायन दुर्गति गयो ए, नरेसुआ, वशिष्ट मुनि तप भ्रष्ट।
मधुपिंगल देव दुर्गति गयो ए, नरेसुआ, बाहु दडक देश नष्ट ॥४१
मानें रावण दुर्गति गयो ए, नरेसुआ, केशव कौरव पीर।
माया करि मरीचि मुओ ए, नरेसुआ, दुर्गति पाम्यो, दुःख भीर ॥४२
लोभें लुब्भदत्त मुओ ए, नरेसुआ, कूप माहे मधु बिन्दु काज।
नवनीते श्मश्रु वली मूओ ए, नरेसुआ, लोभ करी बहु राज ॥४३
एकेक कषाय वशि बापडा ए, नरेसुआ, भमे ते बहु ससार।
चार कषाए जे करे ए, नरेसुआ, तेहना दुःख नो नही पार ॥४४
राग राक्षस रल्या घणु ए, नरेसुआ, गल्या ते रागी बहु जीव।
हित अहित ऊ लखे नही ए, नरेसुआ, भव-दुख सहे अतीव ॥४५
द्वेष धूतार धृते घणू ए, नरेसुआ, जीव ने द्ये बहु दुक्ख।
चहुँ गति माहे प्राणिआ ए नरेसुआ, द्वेषें नही किहा सुक्ख ॥४६
राग द्वेष अग्नि बले ए, नरेसुआ, देह पोला काष्ठ मझार।
समता जल विण जीव कीट ए, नरेसुआ, कष्ट सहे ते गमार ॥४७
इम जाणी राग द्वेष त्यजो ए, नरेसुआ, भजो समता परिणाम।
क्रूर भाव सहु परिहरी ए, नरेसुआ, प्रशस्त करो मन ठाम ॥४८
समता भाव कीजे सदा ए, नरेसुआ, भावना भावो वली चार।
मैत्री प्रमोद करुणापणा ए, नरेसुआ, मध्यस्थ भाव भवतार ॥४९
सर्व प्राणी मैत्री भाव ए, नरेसुआ, प्रमोद करो गुणवन्त।
क्लिष्ट जीव कृपापणु ए, नरेसुआ, विपरीत देखि मध्यस्थ सन्त ॥५०
सम परिणामनि कारण ए, नरेसुआ, चिंतो त्रिविध वैराग।
ससार भोग शरीर सपन ए, नरेसुआ, मोक्ष तणु जसु माग ॥५१
ससार सागर दुःखें भर्यो ए, नरेसुआ, दुःख ते पच प्रकार।
द्रव्य क्षेत्र काल भव भाव ए, नरेसुआ, परावत अनन्ती वार ॥५२
भोग रोग सम जाणिये ए, नरेसुआ, जिम चचल सन्ध्या-राग।
लव-सम सुख देय करी ए, नरेसुआ, दुख देइ मेरु-सम भाग ॥५३

शुक्र शोणित थी उपज्यो ए, नरेसुआ, सात धातु मय देह।
सर्व अशुचिनो पोटलु ए, नरेसुआ, डाहो किम करेय सनेह ॥५४
चपल मन गज वाधवा ए, नरेसुआ, वैराग स्तम्भ समान।
सुमति सकल स्यु साकल्यो ए, नरेसुआ, अकुश देय भेदज्ञान ॥५५
पचइन्द्री विषय सवरो ए, नरेसुआ, स्पर्शन रसननि घ्राण।
चक्षु करण इन्द्री तणा ए नरेसुआ, विषय रसना विप-समान ॥५६
शरीर-विषय गज बाधिया ए, नरेसुआ, जिह्वा-रसें मच्छ एह।
कमल स्कन्धे भ्रमर मुआ ए, नरेसुआ, वर्ण पतगज देह ॥५७
कर्णं-विषय मृग वाधियो ए नरेसुआ, एक एक सेवे इन्द्री जीव।
पच इन्द्री-भोग जे सेवसे ए, नरेसुआ, ते सहसी दु ख अनन्त ॥५८
पच इन्द्री मन तणा ए, नरेसुआ, विषय छोडो अट्ठावीस।
सन्तोष धरि समता भावे ए, नरेसुआ, परिहरि राग नें द्वेप ॥५९
जिम जिम मन भ्रान्ति समि ए, नरेसुआ, तिम तिम उपशम भाव।
शुद्ध परिणामे ऊपजे ए, नरेसुआ, नीपजे सहज स्वभाव ॥६०
सम परिणामे तप जप ए, नरेसुआ, समता भावें शुभ ज्ञान।
सुमति सजम सिद्ध करे ए, नरेसुआ, समता सव प्रधान ॥ ६१
साधक श्रावक साधे सही ए, नरेसुआ, अन्त सलेखण जेह।
वृद्ध पणें सन्यास ग्रहो ए, नरेसुआ, क्षीण इन्द्री आयु देह ॥६२
उपसर्ग दुर्भिक्ष आवा पडे ए, नरेसुआ, अति रोग जु असाध्य।
व्रत-भग हो तो जाणीने ए, नरेसुआ, अनशन विधि तव साध ॥६३
सर्व प्राणी क्षमा करी ए, नरेसुआ, आवी गुरु सान्निध्य।
दोष आलोचि बालक परि ए, नरेसुआ, नि शल्य थई निज वुद्धि ॥६४
हलु हलु आहार हीनु करो ए, नरेसुआ, निजशक्ति अनुसार।
आहार त्यजी पय वस्तु भजो ए, नरेसुआ, दुग्ध घोल तक्र सार ॥६५
क्रमि क्रमि तक्र छोडीये ए, नरेसुआ, केवल पछे लीजे नीर।
पछें नर समता मू कीये ए, नरेसुआ, सुभट थई मन धीर ॥६६
प्रासुक भूमि शिला पर ए, नरेसुआ, कीजे सथारो सार।
कठिण कोमल समता भावि ए, नरेसुआ, कीजे नही खेद विकार ॥६७
वरपा शीत उष्णतणा ए, नरेसुआ, सहो परीषह भार।
क्षुधा तृषा भय रोग नही, नरेसुआ, रहे गुफा गढमझार ॥६८
चार आराधना आराधिए ए, नरेसुआ, दर्शन ज्ञान चारित्र।
व्यवहार निश्चय भेद ज ए, नरेसुआ, तप तपो ते पवित्र ॥६९
मरण-समय मुनि होइ ए, नरेसुआ, भावलिंगी अवतार।
त्रिधा त्रिविध वैराग्य चित्त ए, नरेसुआ, अनुप्रेक्षा चितो बार ॥७०
शरीर नही जो आपणो ए, नरेसुआ, तो आपणो किम होय।
अति शुद्ध चिद्रूपक चितवो ए, नरेसुआ जासें भव-छेद होय ॥७१

जिनवाणी निज मुखे भणो ए, नरेसुआ, करे धर्मध्यान अभ्यास।
नमोकार मत्र जपि ए नरेसुआ, क्षपें ते पापनी रासि ॥७२
सन्याम तणा जे साधक ए, नरेसुआ, धर्म सखाई रहे पास।
सावधान होइ सुभट पणो ए, नरेसुआ, करे ते ध्यान उल्हास ॥७३
निज मुखें जाप जपि ए, नरेसुआ, जाप तणो नही शक्ति।
अन्तर जल्प तब चितवी ए, नरेसुआ, परमेष्ठो गुण-भक्ति ॥७४
शुद्ध बुद्ध हु चिद्रूप ए, नरेसुआ, कर्म-कलक रहित।
सिद्ध सरीखो निज मन हवि ए नरेसुआ, आपें आप गुण-सहित ॥७५
धर्म ध्यानने निज मन जडो ए, नरेसुआ, धर्म सखाई जेह।
जिन वाणी भणता सुणी ए, नरेसुआ, नवकार मत्र वली तेह ॥७६
जिम जिम धर्मध्यान करे ए, नरेसुआ, तिम तिम होइ पाप-हाणि।
क्रूर कर्म सहु निजरी ए, नरेसुआ, उपराजी पुण्य गुण-खाणि ॥७७
मरण समाधि साधीउ ए, नरेसुआ, परिहरि निज देश प्राण।
सन्यास तणें फल ऊपजे ए, नरेसुआ, सोलमे स्वर्ग गीर्वाण ॥७८
इन्द्र अथवा महर्धिक देव ए, नरेसुआ, सपुट सेज्या मझार।
अन्तर्मुहूर्त माहे सही ए, नरेसुआ, नव यौवन अवतार ॥७९
सलावकसी बैठो थई ए, नरेसुआ, देखे ते स्वर्ण विमान।
विस्मय पामी जब चित्तवे ए, नरेसुआ, तब आवे अवधि सुज्ञान ॥८०
पेहला भव वृत्तान्त सही ए, नरेसुआ, जाणे सयल विचार।
धर्म फले इहाँ उपनो ए, नरेसुआ, धन धन श्रावक धर्म सार ॥८१
देव मन्त्री आवे वीनवे ए, नरेसुआ, स्वग विमान ते एह।
देव देवी सहु तम तणो ए, नरेसुआ, पुण्य फले बहु तेह ॥८२
सहज वस्त्र आभरणें लकर्यो ए, नरेसुआ, निमल वैक्रिय देह।
सात धातुथी वेगलो ए, नरेसुआ, आँख मेप दुख नही तेह ॥८३
निज परिवार सु लकर्यो ए, नरेसुआ, जाइ श्री जिनगेह।
वापि अकृत्रिम स्नान करी ए, नरेसुआ, धौतवस्त्र पहरी देह ॥८४
अष्ट प्रकारी पूजा लेइ ए, नरेसुआ, पूजे श्री जिनदेव।
गीत नृत्य वाजित्र करी ए, नरेसुआ, विविध भक्ति स्तव सेव ॥८५
पुण्य घणो पोते करी ए, नरेसुआ, आवी ते निज ठामि।
धम तणा फल भोगवी ए, नरेसुआ, थाइ ते सयल ऋद्धि स्वामि ॥८६

दोहा

चरमागी जे मुनि होय, उत्कृष्ट फल सन्यास। कर्म हणी केवल लही, पामे अविचल वास ॥१
चरमाग विण जे गृही लहे, सलेखण फल तेह। ग्रैवेयक नव पचोत्तर, अहमिन्द्र पद लहे तेह ॥२
उत्तम साधक श्रावक, पाले सन्यास विधि जेह। सोलमा स्वर्ग लगें ते जाइ, पामे इन्द्र पद तेह ॥३
उत्कृष्ट पर्णे त्रण भव ग्रही, जघन्य पणे भव सात।
सुर नर वर पदवी लही, मन वाछित सुख व्रात ॥४

उत्तम नर पदवी लहि, ग्रही जिन दीक्षा सार । ध्यान बले कर्म निर्जरी, पामे मोक्ष दुआर ॥५
अष्ट कर्म थो वेगला, अष्ट गुण अनन्त । ज्ञानाकार ते निर्मला, मुक्ति वधूवर कन्त ॥६

इन्द्र आदे जे भोगिया, हुओ हुई छे छसे जेह तेह ।
सो सुख थी अनन्तगुण, एक समय लहे, सिद्ध तेह ॥७
बन्धन वन्ध्यो चोर जिम, वन्ध गये जिम सौख्य ।
कर्म-बन्ध गये तिम सौख्य लहे सिद्ध मोक्ष ॥८
श्रावकाचार-महिमा घणी जस गुण कह्यो किम जाय ।
जिन सेवक पदमो कहे मन वाछित सुख दाय ॥९

इति श्री पदम विरचित श्रावकाचार-रास सम्पूर्ण ।

ग्रन्थकार-प्रशस्ति । अथ ढाल आनन्दानो

त्रेपन क्रिया इम वर्णवी, आनन्दा, सक्षेपे सविचार तो ।
विस्तारें आगम जाण जो आनन्दा, जिनशासन अतिसार तो ॥१
चार ज्ञान सम रिद्धी घणी आनन्दा, गौतम गुण विशाल तो ।
श्रेणिक भूप जे पूछियो आनन्दा ते कह्यो गुण पाल तो ॥२
गौतम स्वामी जे अग कह्यो आनन्दा, सातमो उपासकाचार तो ।
प्रमाण पद भेदें करी आनन्दा, तेह तणो नही पार तो ॥३
ते अनुक्रमे सुधम सूरी आनन्दा, केवली जम्बुकुमार तो ।
पछें पच श्रुतकेवली हुआ आनन्दा, वली अग पूरव दशधार तो ॥४
काल दोषें पूर्व हीन थया, आनन्दा, हीन थया अग इग्यार तो ।
अग पूरव अश रहिया, आनन्दा, मुनिवर तणें आधार तो ॥५
ते अनुक्रमे परम्परा आनन्दा, श्रीजिन तणो उपदेश तो ।
शास्त्रतणी रचना रची, आनन्दा, सह गुरु कियो निवेश तो ॥६
श्रीमूल सघ सरस्वती गच्छ, आनन्दा, वलात्कार गण विशाल तो ।
कुन्दकुन्दाचाय हुआ आनन्दा, अनुक्रमे गुरु गुणमाल तो ॥७
श्रीजिनसेन गुणभद्र सूरी आनन्दा, अकलक अमृतचन्द्र तो ।
ज्ञानी ध्यानी दिगम्बर जती आनन्दा, परम्परा सूरी प्रभाचन्द्र तो ॥८
श्रीपद्मनन्दी पटि हुआ आनन्दा, सकलकीर्त्ति भवतार तो ।
भुवनकीर्त्ति तपमूर्ति, आनन्दा, ज्ञानभूषण गुण धार तो ॥९
श्रीविजय कीर्त्ति पाटे उपना, आनन्दा, भट्टारक श्रीशुभचन्द्र तो ।
भव्य कुमुदचन्द्र जसु हुआ आनन्दा, कुवादीगज मृगन्द्र तो ॥१०
तस चरण कमल नमी आनन्दा, प्रणमी निज गुरु पाय तो ।
जस पसाइ मति निमली आनन्दा, धम कवित वृद्धि थाय तो ॥११॥
आम्नाय गुरु श्रीशुभचन्द्र, आनन्दा, आगम गुरु विनयचन्द्र तो ।
अध्यातम गुरु कमश्रीब्रह्म, आनन्दा, शिक्षा गुरु हीर ब्रह्मेन्द्र तो ॥१२

अवर शास्त्र कवित्त गुरु, आनन्दा, ब्रह्मचारि श्रीजिनदास तो ।
॥१३
जेणें धर्म उपदेश दियो आनन्दा, शास्त्र भणो बली जेह तो ।
कोमल अल्पमति छै जेहनी आनन्दा, ते भणो रास भास एह तो ॥१४
ते सहु गुरु हवा मुझ तणा, आनन्दा, कर जोडो करूँअ प्रणाम तो ।
गुरु गुण न विलोपिये आनन्दा, लोपे गुरु लोपी पापी नाम तो ॥१५
मुझ हृदय कमल माहे आनन्दा, गुरु भानु वाणी किरण तो ।
मोह तिमिर दूरे हरे आनन्दा, ते गुरु तारण तरण तो ॥१६
समन्तभद्र सूरी कृत आनन्दा, वसुनन्दी श्रावकाचार तो ।
आशाधर पंडितकृत आनन्दा, सकलकीर्त्ति कृत सार तो ॥१७
ते काव्य गाथा श्लोकरूप आनन्दा, कवि न रचना जाणी तेह तो ।
ते शास्त्रमे सांभल्या आनन्दा, सद्गुरु उपदेशे एह तो ॥१८
मे रचना जाणी बहु आनन्दा, उपनो मन उल्हास तो ।
ते शास्त्र अनुक्रमे कियो आनन्दा, रासरूप देखी भार तो ॥१९
ते ग्रन्थ माहे जे कह्यो आनन्दा, ते कह्यो रास मझार तो ।
ओ कठिण ऊ कोमल आनन्दा, अवर अन्तर नही सार तो ॥२०
बहु बुद्धी ते बहु पढें, आनन्दा, शास्त्र माहे विस्तार तो ।
ते संक्षेपे ए वर्णव्यु आनन्दा, रासरूपें सारोद्धार तो ॥२१
बहु बुद्धि होइ जेहनी आनन्दा, शास्त्र भणो बली तेह तो ।
कोमल अल्पमति छै जेहनी, आनन्दा ते भणें रास भास एह तो ॥२२
श्रावकाचार समुद्र तणो, आनन्दा, गुणरत्न नही पार तो ।
ते भेद जाइ कह्यू किम आनन्दा, हुँ अल्पमति श्रुतसार तो ॥२३
पूरब सूरी जे नर कह्या, आनन्दा, ते किम लाभे पारतो ।
संक्षेपेंमे वर्णव्यो आनन्दा, श्रावक तणो आचार तो ॥२४
देव गुरुमे वंदिया आनन्दा, तेह थी उपनो पुण्य तो ।
पुण्य पसाइमे भेद रच्यो आनन्दा, त्रेपन क्रिया तणो धन्य तो ॥२५
बुद्धिवंत कवि जे हुआ, आनन्दा, तेणें कियो बहुअ प्रकाश तो ।
गुरु वाटें मुझ जाइती आनन्दा, उपजे नही आलस तो ॥२६
गुरु भाषे वाटें जाता आनन्दा, उपजे नही क्लेश तो ।
जिम विंधे हीरा मोती आनन्दा, सहजें सूत्र प्रवेश तो ॥२७
जिणी वाटे गजा संचरे आनन्दा, तिहा मृगति नही दुःख तो ।
गगनें जिहा गरुड गमे, आनन्दा, तिहा हंसनें होइ सुख तो ॥२८
वन माहे बहु जीव रहे, आनन्दा, आनन्दा, सबल सिंघ होइ तो ।
तिहा हरणा हरषी रहो आनन्दा, प्रगट शक्ति करी जोइ तो ॥२९
विन्ध्यावन माहे गज रहे आनन्दा, दीर्घ पणें करे नाद तो ।
देडक निजशक्ति करी, आनन्दा, किम न करे बहु साद तो ॥३०

जिन शासन माहे तिम आनन्दा, वहु भेदें कवि होइ तो ।
हीन अधिक वृद्धि पणें आनन्दा, बुद्धि कर्म सारु जोइ तो ॥३१
रास भास एह साभलो आनन्दा, मुझ स्यू म करस्यो रोष तो ।
जाण होइ ते गुण ग्रह ज्यो आनन्दा, अजाण सहे वहु दोष तो ॥३२
सज्जन गुण सदा ग्रहे आनन्दा, जिम नीर थी क्षीर हँस तो ।
दुर्जन पर-दूषण लाए, आनन्दा, जलो रक्त दंड दस तो ॥३३
श्रावकाचार सागर तणु आनन्दा, वहु भेदें विस्तार तो ।
वलहीन हस्ते विहु, आनन्दा, किम करी उतरे पार तो ॥३४
शारदा माय मुझ निर्मली आनन्दा, ज्ञान धन दातार तो ।
तुझ पसाये मे वर्णव्यू आनन्दा, रूअडो श्रावकाचार तो ॥३५
पद अक्षर अर्थ वहु, आनन्दा, शव्द गुण चूको छद तो ।
प्रमाद पणे जे वोलियो आनन्दा, हूँ मानवी मतिमन्द तो ॥३६
हीन अधिक जे में कर्युं आनन्दा, जिन आगम विरोध तो ।
ते मुझ खमियो शारदा, आनन्दा, हूँ तुझ वोलु मन्द वुद्धि तो ॥३७
विद्वान्स होइ तो सोधज्यो आनन्दा, मुझ सूँ करी कृपा भाव तो ।
जिम हेम अग्नि सोधिये आनन्दा, उपनो जे शुभ ग्राम तो ॥३८
पडित जे मोधें नही आनन्दा, मन वरि जे अहकार तो ।
ते वृथा तस जाण तो, आनन्दा, जस वाजे वस निसार तो ॥३५
सरोवरे जिम कमल ऊगें, आनन्दा, सुगन्ध विस्तारे पवन्न तो ।
तिम कविसु कवित्त रच्यो आनन्दा, विस्तार पमाडे सज्जन्न तो ॥४०
मूल नदी थोडी जिम, आनन्दा, वाधे सागर लगें जाण तो ।
सज्जन मेह-गुण नीर, आनन्दा, जिन शासन प्रमाण तो ॥४१
सज्जन विना ना पुस सदा, आनन्दा, उत्तम श्रावकाचार तो ।
ज्या लगे चन्द्र सूर्य तारा, आनन्दा, त्या लगें शासन उद्धार तो ॥४२
कोमल पणे सहूँ प्रीछवा आनन्दा, निज पर तणो उपकार तो ।
केवल धर्म वृद्धि कीजे आनन्दा, रच्यो मे श्रावकाचार तो ॥४३
श्रावकाचार ते रत्नदीप आनन्दा, त्रेपन क्रिया चिन्तारत्न तो ।
सुगुण रत्न मूल्य नही, आनन्दा, दया करो तस जत्न तो ॥४४
एक चिन्तामणि जे लहे, आनन्दा, जाव जीव सुख होय तो ।
एका क्रिया गुण जो पाले, आनन्दा, तो स्वग सुख लहे तेह तो ॥४५
इम जाणी भव्य सदा पालें आनन्दा, सर्व क्रिया रत्न जेह तो ।
सोलमा स्वर्ग लगे सुख लहे, आनन्दा, पक्षे मोक्षश्री वरे तेह तो ॥४६
जेणे पाल्यो, पाले छे, पालसे आनन्दा, निश्चल श्रावक धर्म तो ।
मन वच काया दृढ करी आनन्दा, ते पामे शिव शर्म तो ॥४७
नर नारी भावे करी, आनन्दा, इणि परे पाले आचार तो ।
दुष्कम सहु हरे करो आनन्दा, ते तरसी ससार तो ॥४८

वाग्वर देश सुहामणो, आनन्दा, सापुर नयर मझार तो।
हाट हारे मन्दिर साली, आनन्दा, प्रजा वसे वर्ण चार तो ॥४९
श्री आदिनाथे तीर्थ तणो आनन्दा, सोहे जिन प्रासाद तो।
शिखर मडप कलश दीपे आनन्दा, दड ध्वजा लहिके चग तो ॥५०
मुनिवर आर्यिका रहे आनन्दा, श्रावक श्राविका गुणधार तो।
दान पूजा जप तप करे आनन्दा, नन्दी सघ विचार तो ॥५१
हरखवत हुँबड न्याती, आनन्दा, निज वश सरोज हस तो।
खदिर गोत्रीत गुण निलो आनन्दा, विरीत कुल अवतस तो ॥५२
आगम अध्यात्मवेदी, आनन्दा, शास्त्रवेदी बहु शुद्ध तो।
निज शक्तें स व्रतधारी, आनन्दा, ते थया रास प्रशस्त तो ॥५३
जेहनी शक्ति जेहवी होइ, आनन्दा, कवित्त करे तेहवा तेह तो।
सुगमपणे म रास कीयो, आनन्दा, श्रावक धर्म तणो एह तो ॥५४
निज-पर-हित उपकार हित, आनन्दा, कीयो शासन प्रभाव तो।
ज्ञान उपयोग विस्तारियो आनन्दा, कृपा बुद्धि स्वभाव तो ॥५५
पर उपकार जे नहि करें, आनन्दा, वृथा जीव्यो नर सोइ तो।
अजाकण्ठे पयोधर, आनन्दा, क्षीर नीर नवि होइ तो ॥५६
इम जाणी पर हित कीजिए आनन्दा, निज शक्ति अनुसार तो।
छती शक्ति हित जे करे नही आनन्दा, ते नर कहिये गमार तो ॥५७
छव्वीस भेद भासे भण्यो आनन्दा, श्लोक शत सत्तावीस तो।
पचास अधिक सही आनन्दा, ग्रन्थ सख्या अशेष तो ॥५८
लिखो लिखावो भावे करी आनन्दा, श्रावकाचार शुभ रास तो।
जिनवाणी विस्तारिये आनन्दा, उपजे पुण्य प्रकाश तो ॥५९
सवत सख्या जिनभाव[१६]ना, आनन्दा, सवच्छर सख्या प्रमाद[१५] तो। (१६१५)
मास माहु सोहामणो आनन्दा, भाइ वा सुत मर्याद तो ॥६०
तिथि सख्या चारित्र भेदे, आनन्दा, रस सख्या शुभवार तो।
शुभ नक्षत्रे शुभयोगे, आनन्दा, कीयो मे श्रावकाचार तो ॥६१
आपणे पर हितकारी, आनन्दा, गुणकारी गुणवत तो।
आ रास कियो मे सत आनन्दा, हित मित सुगम पणे तो ॥६२
निर्गुण नर थी वृक्ष भला आनन्दा, जे करे पर उपकार तो।
आपणे गरमी दाहिये आनन्दा, छाँह देय फलसार तो ॥६३
पुरुष चिन्तामणि कामधेनु, आनन्दा, कल्प तरु मेघ धार तो।
गुरु आसे हे जे गुण करे, आनन्दा, निज पर करे उपकार तो ॥६४
गुण केडे सहु गुण करे, आनन्दा, एहवो लोक विवहार तो।
अवगुण केडे गुण करे, आनन्दा, एते उत्तम आचार तो ॥६५
निज शक्ति उद्यम करी, आनन्दा, पालो शुभ आचार तो।
जेतलु पले, तेतलु सही, आनन्दा, नही तो श्रद्धा भवतार तो ॥६६

मिथ्यात्वपूर्ण एव मन गढन्त लोक-प्रचलित मिथ्याव्रतो का वर्णन कर उनके त्याग का जैसा उपदेश किशनसिंह जीने दिया है वैसा शेष दोने नही किया है।

पदम कविने मिथ्यात्वके निरूपणके पश्चात् सम्यक्त्व-प्राप्तिकी योग्य भूमिका वर्णन कर सप्त तत्त्वोका और सम्यक्त्वके भेदोका स्वरूप विस्तारसे कहा है। किन्तु किशनसिंह जीने त्रेपन क्रियाओ को गिनाकर और मिथ्यात्व एव सम्यक्त्वका कुछ भी वर्णन न करके मूलगुणोका वर्णन करते हुए इस प्रकारके अभक्ष्योका विस्तारसे वर्णन किया है। दौलतराम जीने भी मगलाचरणके पश्चात् मिथ्यात्व-सम्यक्त्वका वर्णन न करके अभक्ष्य-पदार्थोका वर्णन किया है। साथ ही दोनोने भक्ष्य अभक्ष्य वस्तुओकी काल-मर्यादा का वर्णन प्राचीन गाथाओ के प्रमाण के साथ किया है।

पदमकविने रत्नकरण्डकके समान सवप्रथम सम्यक्त्व के अगोका विस्तृत स्वरूप और उनमे प्रसिद्ध पुरुषो की प्रश्नोत्तर श्रावकाचार के समान कथाओ का निरूपण किया है। किन्तु किशन सिंह जी ने सम्यक्त्व के अगो का और उनमे प्रसिद्ध पुरुषो की कथाओ का कुछ भी उल्लेख नही किया है। दौलतराम जी ने अति सक्षेप मे आठो अगो का स्वरूप कह कर उनमे प्रसिद्ध पुरुषो के केवल नामोका ही उल्लेख किया है।

पदम कवि ने उक्त प्रकार से सम्यग्दर्शन का सागोपाग विस्तृत वर्णन करके पश्चात् दर्शन प्रतिमा का वर्णन करते हुए सर्व प्रथम सप्त व्यसन-सेवियो मे प्रसिद्ध पुरुषो का उल्लेख कर उनके त्याग का उपदेश दिया। तत्पश्चात् अष्टमूलगुण, पालने जल-गालने और रात्रिभोजन के दोष बताकर उसके त्यागका उपदेश दिया। तदनन्तर व्रत प्रतिमाके अन्तर्गत श्रावकके बारह व्रतोका विस्तार से वर्णन किया है। किन्तु किशनसिंहजीने प्रतिमाओ के आधार पर उक्त वणन न करके आठ मूल गुणो का वर्णन कर अभक्ष्य पदार्थों का विस्तार से वर्णन कर उनके त्याग का और चौके के भीतर ही भोजन करने का विधान किया है।

पदम कविने सम्यक्त्वके अगोका और उनमे प्रसिद्ध पुरुषोको कथाओका वर्णन कर व्रत प्रतिमा आदिका विस्तारसे वर्णन कर अन्तमे छह आवश्यक, बारह तप, रत्नत्रय धर्म और मैत्री-प्रमादादि भावनाओका वर्णन कर अन्तमे समाधिमरणका वर्णन कर अपनी बृहत् प्रशस्ति दी है। किन्तु किशनसिंहजीने अभक्ष्य वर्णनके पश्चात् रजस्वला स्त्रीके कर्त्तव्योका विस्तारसे वणन कर श्रावकके बारह व्रतोका और समाधि मरणका वर्णन किया है। तद-नन्तर श्रावककी ग्यारह प्रतिमाओका सक्षेपसे वणन कर जल-गालन, रात्रि भोजन-त्यागरूप अणथम (अनस्तमित) व्रत और रत्नत्रय धर्मका वणन कर कैर-सागरी आदिकी घृणित उत्पत्ति, गोद, अफीम, हल्दी और कत्या आदिकी निन्द्य एव हिंसामयी उत्पत्तिका विस्तारसे वर्णन किया है। तत्पश्चात् मिथ्यामतोका निरूपण करते हुए लूँकामतकी आचार-हीनता का, और जिन-प्रतिमा का विस्तारसे वर्णन किया है।

पदम कवि ने लूँकामत का कोई उल्लेख नही किया है और दौलतराम जीने नामोल्लेख न करके उनके मतकी समालोचना कर जिन प्रतिमाकी महत्ताका शंका-समाधान पूवक वर्णन किया है। इससे ज्ञात होता है कि पदम कविके समयमे लूकामतका या तो प्रारम्भ ही नही हुआ था, और यदि हो भी गया होगा, तो उसका प्रचार उनके समयमे नगण्य-सा था।

जे समकित पाले सदा, आनन्दा, शक्ति नही तो करो भाव तो ।
श्रद्धा भावें पुण्य उपजे, आनन्दा, श्रद्धा भवोदधि नाव तो ॥६७

दोहा

अष्टमूल गुण जल गालण, निश भोजन परिहार । वार व्रत चैत्य एकादश, तप द्वादश दान चार ॥१
दर्शन ज्ञान चारित्र गुण, शुभ समता परिणाम । त्रेपन क्रिया मन निर्मली, पालो ते अभिराम ॥२
श्रावकाचार जे आदरे, हृदय थई सावधान । इन्द्र महर्धिक पद लही, अष्टऋद्धि त्रण ज्ञान ॥३
उत्तम नर पदवी लही, राजाधिराज महाराज । मडलीक महामडलीक, काम केशव बलराज ॥४
चक्रवर्त्ति षटखड धणी, तीर्थंकर पद सार । पच कल्याण नायक, भोगवी सुख ससार ॥५
दीक्षा लेय तप आचरी, करी कर्म विनाश । केवलज्ञान प्रकट करी पामे ते अविचल वास ॥६

वस्तु छन्द

श्रावकाचार तणो श्रावकाचार तणो, मे रास कियो मे इणि परें ।
भविजन मन रजन, भजन कर्म कठोर निभर ।
पच परमेष्ठी मन धरी, सुमरी शारदा गुरु निर्ग्रन्थ मनोहर ।
अनुदिन जे धर्म पालसी, टाली सर्व अतिचार ।
जिन सेवक **पदमो** कहे, ते पामसे भाव पार ॥१

इति श्रावकाचार रास सम्पूर्णम् ।

ग्रन्थाग्र २७५० श्लोक सख्या । सवत्सर १८५३ कार्तिक सुदि ९ दीतवार
भीलोडा चैत्यालयस्थाने श्री चन्द्रप्रभ पार्श्वनाथ प्रसादात् । श्रीरस्तु ।

वाग्वर देश सुहामणो, आनन्दा, सापुर नयर मझार तो।
हाट हारे मन्दिर साली, आनन्दा, प्रजा वसे वर्ण चार तो ॥४९
श्री आदिनाथे तीर्थ तणो आनन्दा, सोहे जिन प्रासाद तो।
शिखर मडप कलश दीपे आनन्दा, दड ध्वजा लहिके चग तो ॥५०
मुनिवर आर्यिका रहे आनन्दा, श्रावक श्राविका गुणधार तो।
दान पूजा जप तप करे आनन्दा, नन्दी सघ विचार तो ॥५१
हरषवत हुँबड न्याती, आनन्दा, निज वश सरोज हस तो।
खदिर गोत्रीत गुण निलो आनन्दा, विरीत कुल अवतस तो ॥५२
आगम अध्यात्मवेदी, आनन्दा, शास्त्रवेदी बहु शुद्ध तो।
निज शक्तें स व्रतधारी, आनन्दा, ते थया रास प्रशस्त तो ॥५३
जेहनी शक्ति जेहवी होइ, आनन्दा, कवित्त करे तेहवा तेह तो।
सुगमपणें मे रास कीयो, आनन्दा, श्रावक धर्म तणो एह तो ॥५४
निज-पर-हित उपकार हित, आनन्दा, कीयो शासन प्रभाव तो।
ज्ञान उपयोग विस्तारियो आनन्दा, कृपा बुद्धि स्वभाव तो ॥५५
पर उपकार जे नहि करें, आनन्दा, वृथा जीव्यो नर सोइ तो।
अजाकण्ठे पयोधर, आनन्दा, क्षीर नीर नवि होइ तो ॥५६
इम जाणी पर हित कीजिए आनन्दा, निज शक्ति अनुसार तो।
छती शक्ति हित जे करे नही आनन्दा, ते नर कहिये गमार तो ॥५७
छब्बीस भेद भासे भण्यो आनन्दा, श्लोक शत सत्तावीस तो।
पचास अधिक सही आनन्दा, ग्रन्थ सख्या अशेष तो ॥५८
लिखो लिखावो भावे करी आनन्दा, श्रावकाचार शुभ रास तो।
जिनवाणी विस्तारिये आनन्दा, उपजे पुण्य प्रकाश तो ॥५९
सवत सख्या जिनभाव[१६]ना, आनन्दा, सवच्छर सख्या प्रमाद[१५] तो। (१६१५)
मास माहु सोहामणो आनन्दा, भाइ वा सुत मर्याद तो ॥६०
तिथि सख्या चारित्र भेदे, आनन्दा, रस सख्या शुभवार तो।
शुभ नक्षत्रे शुभयोगे, आनन्दा, कीयो मे श्रावकाचार तो ॥६१
आपणे पर हितकारी, आनन्दा, गुणकारी गुणवत्त तो।
आ रास कियो मे सत आनन्दा, हित मित सुगम पणे तो ॥६२
निर्गुण नर थी वृक्ष भला आनन्दा, जे करे पर उपकार तो।
आपणे गरमी दाहिये आनन्दा, छाँह देय फलसार तो ॥६३
पुरुप चिन्तामणि कामधेनु, आनन्दा, कल्प तरु मेघ धार तो।
गुरु आसे हे जे गुण करे, आनन्दा, निज पर करे उपकार तो ॥६४
गुण केडे सहु गुण करे, आनन्दा, एहवो लोक विवहार तो।
अवगुण केडे गुण करे, आनन्दा, एते उत्तम आचार तो ॥६५
निज शक्ति उद्यम करी, आनन्दा, पालो शुभ आचार तो।
जेतलु पले, तेतलु सही, आनन्दा, नही तो श्रद्धा भवतार तो ॥६६

जे समकित पाले सदा, आनन्दा, शक्ति नही तो करे भाव तो।
श्रद्धा भावें पुण्य उपजे, आनन्दा, श्रद्धा भवोदधि नाव तो ॥६७

दोहा

अष्टमूल गुण जल गालण, निश भोजन परिहार। बार व्रत चैत्य एकादश, तप द्वादश दान चार ॥१
दर्शन ज्ञान चारित्र गुण, शुभ समता परिणाम। त्रेपन क्रिया मन निर्मली, पालो ते अभिराम ॥२
श्रावकाचार जे आदरे, हृदय थई सावधान। इन्द्र महर्धिक पद लही, अष्टऋद्धि त्रण ज्ञान ॥३
उत्तम नर पदवी लही, राजाधिराज महाराज। मडलीक महामडलीक, काम केशव बलराज ॥४
चक्रवर्त्ति षटखड धणी, तीर्थंकर पद सार। पच कल्याण नायक, भोगवी सुख समार ॥५
दीक्षा लेय तप आचरी, करी कर्म विनाश। केवलज्ञान प्रकट करी पामे ते अविचल वास ॥६

वस्तु छन्द

श्रावकाचार तणो श्रावकाचार तणो, मे रास कियो मे इणि परें।
भविजन मन रजन, भजन कम कठोर निभर।
पच परमेष्ठी मन धरी, सुमरी शारदा गुरु निर्ग्रन्थ मनोहर।
अनुदिन जे धर्म पालसी, टाली सर्व अतिचार।
जिन सेवक **पदमो** कहे, ते पामसे भाव पार ॥१

इति श्रावकाचार रास सम्पूर्णम्।

ग्रन्थाग्र २७५० श्लोक सख्या। सवत्सर १८५३ कार्तिक सुदि ९ दीतवार
भीलोडा चैत्यालयस्थाने श्री चन्द्रप्रभ पार्श्वनाथ प्रसादात्। श्रीरस्तु।

श्री किशन सिंह कृत क्रियाकोष

मंगलाचरण

दोहा

समवशरण लक्ष्मी सहित, वर्धमान जिनराय । नमो विबुध वन्दित चरण, भविजन को सुखदाय ॥१
जाके ज्ञान प्रकाश मे, लोक अनन्त समाव । जिम समुद्र ढिग गाय-खुर, यथा नीर दरसाब ॥२
वृषभनाथ जिन आदि दे, पारसलो तेईस । मन, वच, काया, भाव धर, बन्दो कर धर सीस ॥३
नमो सकल परमातमा, रहित अठारा दोष, छियालीस गुण आदि दे, हैं अनन्त गुण कोष ॥४
वसु गुण समकित आदि जुत, प्रणमो सिद्ध महन्त । काल अनतानत तिथि, लोक शिखर निवसत ॥५
आचारज, उवझाय, गुरु, साधु त्रिविध निग्रंथ । भवि बनवासी जननिको, दरसावैं शिवपन्थ ॥६
जिनवाणी दिव्यध्वनि खिरी, द्वादशाग मय सोय । ता सरस्वतिको नमतहूँ,मन,वच, क्रम जिन सोय ॥७
देव, सुगुरु, श्रुत को नमू, त्रेपन किरया सार । श्रावक की बरणन करूँ, सक्षेपहि निरधार ॥८

चौपाई

जम्बूद्वीप द्वीपसिर जान, मेरु सुदरशन मध्य बखान ।
ताको दक्षिण दिस शुभ लसै, भरतक्षेत्र अति सु बसही वसै ॥९
तामैं मगध देश परधान, नगर मटब द्रोणपुर थान ।
वन उपवन जुत शोभा लहै, ताको वरणन कवि को कहै ॥१०
राजगृही नगरी अति बनी, इन्द्रपुरी मानो दिव तनी ।
जिनवर भवन शोभ अति लहै, तस उपमा बरणन को कहै ॥११
श्रावक उत्सव सहित अनेक, जिन पूजें अति धर सुविवेक ।
मन्दिर पकति शोभैं भली, गीतादिक पूरवैं मन रली ॥१२
धरमी जन तामे बहु बसैं, दान चार दे चितऊ लसैं ।
चहूँ फेर तासके कोट, गोपुर जुत अति बनो निघोट ॥१३
बाडी बाग विराजें हरे, सघन दाख दाम्यु द्रम फुरे ।
और विविध के पादप जिते, फल फुल्लित दीसत है तिते ॥१४
तिह नगरी को भूप महन्त, श्रेणिक नाम महागुणवन्त ।
क्षायिक समकित धारी सोय, तासम भूप अवर नहिं कोय ॥१५
मण्डलीक भूपति सिरदार, बहुत तासु सेवैं दरबार ।
परजा पालन को अति दक्ष, नीतवान धरमी परतक्ष ॥१६
तास चेलना है पटनार, रूपवन्त रम्भा उनहार ।
समकित दृष्टि सुअति गुणवती, पतिवरती सीता सम सती ॥१७

देव, शास्त्र, गुरुभक्ति धरेय, वसुविध नित सो पूज करेय।
विधिसो देय सुपात्रे दान, जिम चहुँ विध भाषो भगवान ॥१८
दीन दीन जन करुणा करी, पोखैं नित प्रति ता सुन्दरी।
भूपति चित मनुहारी सोय, तासम त्रिया अवर नहि कोय ॥१९
दम्पति सुख नानाविध जिते, पुण्य उदै भोगत है तिते।
जिम सुरपति इन्द्रानी जान, तिम श्रेणिक चेलना बखान ॥२०
महामडलेश्वर को राज, आसन चामर छतर समानु।
भूप चिह्न धरि सभा जु राय, बठो अब सुनिये जो थाय ॥२१

ढाल चाल

एक दिवस मध्य वन माही, भ्रमतो वनपालक आही।
निज सम्बन्धी पर जाय, जिय वैर विरुद्ध जु थाय ॥२२
ते एक क्षेत्र के माही, ढिगे वैठे केलि कराही।
घोटक महिष इक जागा, वैठे धरि चित्त अनुरागा ॥२३
मूषा को हरष बिलावै, हिय मे गहि प्रीत खिलावैं।
अहि नकुल दुहु इकठा ही, मैत्रीपन अधिक कराही ॥२४
इत्यादिक जीव अनेरा, निज वैर छाडि ह्वै मेरा।
वैठे लखि कै वनपाला, अचरज चिन्ता धरि हाला ॥२५
मन माहि विचारै एमे, एह अ शुभ कीधो खेमे।
इम चिन्तत भ्रमण कराही, वनपालक वन के माही ॥२६
विपुलाचल गिरि के ऊपर, धरणेश सुरेश मही पर।
वहुविध जुतदेव अपारा, जय जय वच करत उचारा ॥२७
दसहूँ दिश पूरित धाई, अपने चित अति हरषाई।
अन्तिम तीर्थंकर एवा, श्री वर्द्धमान जिनदेवा ॥२८
समवादि शरण लखि हर्षित, वारो विचार इम चिन्तित।
इह परस्परे जु चिरकाला, परजाय वैर दरहाला ॥२९
सव मिल वैठे इकठाना, देखे मे ऐ अभिरामा।
इस महापुरुष को जानी, माहातम मन में आनी ॥३०

सवैया इकतीसा

मृगी सुत बुद्धिते खिलावै सिंह वाल को, वघेरा को सुपुत्र गाय सुत्त जान परसै।
हस सूनक विलाव हित भारकै खिलाव, मोरनी सरप परसत मन हरषै॥
इन सव जन्तुन को जन्मजात वैर सदा, भए मद गलित उखारो दोष जरसै।
सम भाव रूप भए कलुप प्रशमि गए, क्षीण मोह वधमान स्वामी सभा दरसै ॥३१

दोहा

जय जय रव को कान सुन, वनपालक तत्काल। षट्रितु के फल फूल ले, कर धर भेट रसाल ॥३२
चल्यौ नृपति दरबार को, मन मे धरत उछाव। जा पहुचे तिसही धरा, जहँ वैठो नरराव ॥३३
सिंहासन नग जडित पर, तिष्ठे श्री भूपाल। महामडलेश्वर करहि, फलदीने वनपाल ॥३४

चौपाई

वनपति भाषै सुनिहो देव, तुम शुभ पुन्य उदयते एव।
विपुलाचल पर सनमति जान, समोशरन आयो भगवान ॥३५
ऐसैं सुन आसनतें राय, उठ तिहि दिशि सनमुख सो जाय।
सात पेंड अष्टाग नवाय, नमस्कार कीनो हरषाय॥ ६
परम प्रीति पूर्वक मन आन, जिन आगम को उत्सव ठान।
भूषन वसन भूप तिहि जिते, वनपालक को दीने तिते॥३७
ह्वै खुशाल वनपालक जबै, मनमाही इम चिन्तवै तबै।
इतने सौं कर रीते जान, कबहु न मिलिवे साची मान॥३८
देवथान अरु राज दुवार, विद्या गुरु निजमित्र विचार।
निमित वैद्य ज्योतिषी जान, फल दीये फल प्रापत्ति मान॥३९
आनन्द भेरि नगर में थाय, सुन पुरवासी जन हरषाय।
नगर लोक परिजन जन सबै, नृप श्रेणिक ले चाल्यो तबै॥४०
विपुलाचल ऊपर शुभ ध्यान, समोशरण तिष्ठे भगवान।
पहुँचो भूपति हरष लहाय, जिनपद नमि थुति करहि बिनाय॥४१
नयन जुगुल मुझ सफल जु थयो, चरण कमल तुम देखत भयो।
भो तिहु लोक तिलक मम आन, प्रतिभास्यो ऐसो महाराज॥४२
इह ससार जलधि यो जान, आय रह्यो इक चुलुक प्रमान।
जै जै स्वामी त्रिभुवननाथ, कृपा करो मोहि जान अनाथ॥४३
मै अनादि भटको ससार, भ्रमते कबहु न पायो पार।
चहुं गति माहि लहे दुख जिते, ज्ञान माहि दरशत हैं तिते॥४४
तातैं चरण आइयो सेव, मुझ दुख दूर करो जगदेव।
जै जै रहित अठारा दोष, जै जै भविजन दायक मोष॥४५
जै जै छियालीस गुणपूर, जै मिथ्यातम नासक सूर।
जै जै केवल ज्ञान प्रकाश, लोकालोक करन प्रतिभास॥४६
जै भविकुमुद विकासन चद, जै जै सेवितमुनिवर वृद।
जै जै निराबाध भगवान, भगतिवत दायक शिवथान॥४७
जै जै निराभरण जगदीश, जै जै वदित त्रिभुवन ईश।
ज्ञानगम्य गुण लियो अपार, जै जै रत्नत्रय भडार॥४८
जै जै सुखसमुद्र गमीर, करम शत्रु नाशन वर वीर।
आजहि सीस सफल मो भयो, जव जिन तुम चरणनको नयो॥४९
नेत्र युगल आनदे जबै, पादकमल तुम देखे तबै।
श्रवण सफल भये सुन धुनी, रसना सफल अवे थुति भनी॥५०
ध्यान धरत हिरदे धन भयो, करयुग सफल पूजते थयो।
कर पयान तुमलो आइयो, पदयुग सफलपनो पाइयो॥५१

उत्तम वार आज जानियो, वासर धन्य इहै मानियो।
जनम धन्य अवही मो भयो, पाप कलंक सबै भाग गयो ॥५२
भो करुणाकर जिनवर देव, भव भव मे पाऊं तुम सेव।
जब लो शिव पाऊँ जगनाथ, तब लो पकरो मेरे हाथ ॥५३
इत्यादिक थुति विविध प्रकार, गद्य पद्य सत सहस अपार।
मुनि गौतम गणधर नमि पाय, अवर सकल मुनिको सिर नाय ॥५४
जिके अजिका सभा मझार, श्रावक जनहि जु वुद्धि विचार।
यथा योग्य सबको नृप कहो, मुनि नर-कोठै बैठो सही ॥५५
जाके देव भगति उत्कृष्ट, तासो ताके गुरु को इष्ट।
जिन भाषी वाणी सरधान, महा विवेकी अति परवान ॥५६
तास महातम को अधिकार, अरु ताके गुण को निरधार।
वरणन को कवि समरथ नाहि, वुध जन जानहु निज चितमाहि ॥५७
ता पीछे अवसर को पाय, गौतम प्रति नृप प्रश्न कराय।
देश व्रती श्रावक की जान, त्रेपन क्रिया कहहु वखान ॥५८

दोहा

होनहार तीर्थेश सुन, इम भाषै भगवंत। त्रेपन किरया तुझ प्रतें, कहू विशेष विरतंत ॥५९
इह त्रेपन किरया थकी, सुरग मुक्ति सुख थाय।
भविजन मन वच काय शुध, पाग्रहु चित हरपाय ॥६०

त्रेपन क्रिया नाम। उक्तं च गाथा—

गुण वय तव सम पडिमा दान जलगालण च अणत्थमिय।
दसणणाणचरित्त किरिया तेवण्ण सावया भणिया ॥

सवैया इकतीसा

मूल गुण आठ अणुव्रत पंच परकार, शिक्षाव्रत चार तीन गुण व्रत जानिए।
तप विधि वारह और एक सम्यग्भाव ग्यारा प्रतिमा विशेष चार भेद दान मानिए ॥
एक जल गालण अणथमिय एक विधि, दृग ज्ञान चरण त्रिभेद मन आनिए।
सफल क्रिया को जोर त्रेपन जिनेश कहे, अव याको कथन प्रत्येकतें वखानिए ॥६२

आठ मूल गुण। चौपाई

इस त्रेपन किरया मे जान, प्रथम मूल गुण आठ वखान।
पीपर, वर, ऊंबर फल तीन, पाकर फल रु कटुंवर हीन ॥६३
मद्य मांस मधु तीन मकार, इन आठो को कर परिहार।
अतीचार जुत तज अणचार, आठ मूल गुण धारी सार ॥६४
त्रस अनेक उपजैं इन मांहि, जिन भाष्यो कछु संशय नाहि।
अरु जे हैं वाईस अभक्ष, इनको दोष लगै परतक्ष ॥६५

अथ बाईस अभक्ष दोष वर्णन । चौपाई

ओरा नाम गडालख जान, अनछाना जलको बघान ।
घोर वरा कौं बिदल कहत, खाता पचेंद्री उपजत ॥६६
निशि भोजन खाये जो रात, अरु वासी भखिए परभात ।
बहु बीजा जामे कण घणा कहिए प्रगट बिजारा तणा ॥६७
जिहि फल बीजनके घर नाहि सो फल बहु बीजो कहवाहि ।
बेंगण महापाप को मूर, जे खावें ते पापी क्रूर ॥६८
सधाणे की विधि सुन एह, जिम जिनमारग भाषी जेह ।
राई लूण आदि बहु दव, फल फूलादिक मे धर सव ॥६९
नाखे तेल माहि जे सही, नाम अथाणौ तासौं कही ।
तामैं उपजे जीव अपार, जिह्वा लपट खाय गवार ॥७०
पाप धर्म नहि जाने भेद, ता वसि नरक लहै बहु खेद ।
नीबू लूण माहि साधिये, वाडिरा बडी अरु राधिए ॥७१
लूण बाछि जल मे फलमार, कैराबिक जो खाय सवार ।
उपजे जीव तासमे घणे, कवि तस पाप कहा लो भणे ॥७२
मरजादा बीतै पकवान, सो लखि सधाणे मतिमान ।
त्याग करत नहि ढील करेहु, मन वच क्रम जिन वचहि फलेहु ॥७३
जो मरजादा की विधि वार, भाष्यो जिन आगम अनुसार ।
जिह मे जल सरदी नहि रहै, तिस मरजादा लखि भवि इहै ॥७४
सीतकाल माहे दिन तीस, पन्द्रह ग्रीषम विस्वावीस ।
वरषारितु भाषे दिन सात, यो सुनियो जिनवाणी भ्रात ॥७५

उक्त च गाथा—हीमते तीस दिणा, गिम्हे पणरस दिणाणि पक्कवण ।
वासासु य सत्त दिणा, इय भणिय सूय जगेहि ॥७६

चौपाई—तल्यो तेल घृत मे पकवान, मीठे मिलियो ह्वै जो धान ।
अथवा अन्नतणो ही होय, जल सरदी तामे कछु जोय ॥७७
आठ पहर मरज्याद बखान, पाछें सधाणा सम जान ।
भुजिया बडा कचौरी पुवा, मालपुवा घृततल जु हुवा ॥७८
जुमक बडी लूचई जान, सीरो लापसी पुरी बखान ।
कीए पीछें साझलो खाहि, रात बसै तिन राखे नाहि ॥७९
इनमे उपजै जीव अनेक, तिनही तजो सु धार विवेक ।
तरकारी पाटो खीचडी, इन मरजाद सुसोला घडी ॥८०
रोटी प्रात थकीलो साज, खइये भवि मरजादा माज ।
पीठें सीला वासी दोप, तजो भव्य जे शुभ वृष पोष ॥८१

छन्द चाल

केते नर ऐसे भाषैं, हम नही अथाणो चापैं ।
कैरी नीबू के माही, नानाविध वस्तु मिलाही ॥८२

सरसो को तेल मगावैं, सब लेकर अगनि चढावैं ।
ल्योजी तस नाम कहाई, जोभ्या लपट अधिकाई ॥८३
ताको निरदूषण भाषै, निरबुद्धी वहु दिन राखै ।
ताके अघको नही पारा, सुनिये कछु इक निरधारा ॥८४
सब विधि छोडी नही जाही, खइये तत्काल कराही ।
अथवा सवेर लो माजे, भखिये चहु पहर हि माजे ॥८५
पाछे अथाणा के दोषा, जानो त्रस जीवनि कोषा ।
अथाणा को जो त्यागी, याको छोडै वडभागी ॥८६

दोहा

किसनसिह विनती करै, सुनो महा मति मान । याहि तजै सुख परम लहि, भुजै दुख परधान ॥८७

चौपाई

पच उदवर को फल त्याग, करइ पुरुष सोई वडभाग ।
अरु अजाण फल दोष अपार, मास दोष खाये अधिकार ॥८८
कन्दमूल में जीव अनन्त, ईखू अग्रभाग लखि सत ।
माटा माहि असखित जीव, भविजन तनिए ताहि सदीव ॥८९
मुहरो आफू आदिक और, खाए प्राण तजै तिहि ठौर ।
जिहि आहार कर जो मर जाय, सोऊ विष दूषण को थाय ॥९०
आमिष महापाप को मूर, जीव घात तें उपजो क्रूर ।
मन वच काय तजे इह सदा, सुर शिव सुख पावै जिन वदा ॥९१
मधुमाखो उच्छिष्ट अपार, जीव अनन्त तास निरधार ।
ताको खावै धीवर भील, सोई हीन नर पाप कुशील ॥९१
सत पुरुष नहि मेटें वाहि, एक कणातें वरम नसाहि ।
लूण्यो दोष महा अधिकार, ताहि भखे नहि भवि सुखकार ॥९३
मदिरा पान किए बेहाल, मात भगनि तियसम तिहिकाल ।
मादिक वस्तु भागि दे आदि, खात जमारो ताको वादि ॥२४
फल अतितुच्छ दन्त तलि देय, ताको दूषण अधिक कहेय ।
पालो राति जमावे कोय, अरु ताको खावे वुधि खोय ॥९५
तामे पडै अधिक त्रस जीव, भविजन छाडो ताहि सदीव ।
केला आव पालमे देह, नीबू आदिक फल गनि लेह ॥९६
जाके खाये दोप अपार, वुध जन तजैं न लावैं बार ।
ए बावीस अभक्ष जिनदेव, भाषै सो भविजन सुनि येव ॥९७
इनहि त्याग कर मन वच काय, ज्यो सुर शिवसुख निहचै थाय ।
फूलो थान अवर सब फूल, त्रस जीवन को जानो मूल ॥९८
शाक पत्र सब निंद्य वखान, कुथादिक करि भरिया जान ।
मास त्यजन व्रत राखो चहैं, तो इन सबको कवहु न गहैं ॥९९

बेदल वर्णन

भोजन विदल तणी विधि सुनो, जिनवर भाषो निहचै मुनो।
दोय प्रकार विदल की रीति, सो भविजन आनो प्रीति ॥१००
प्रथम आ धान तणी विधि एह, श्रावक होय तजै धरनेह।
सुनहु आ काष्ट तणी विधि जान, मूग मटर अरहर अरु धान ॥१
मोठ मसूर उडद अरु चणा, चौला कुलथ आदि गिन घणा।
इतने नाज तणी ह्वै दाल, उपजै बेलि थकीसा नाल ॥२
खरबूजा काकडी तोरई, टींडसी पेठो पलवल लई।
सेम करेला खीरा तणा, बीजा विधि फल कीजे घणा ॥३
तिनको दालथकी मिलवाय, दही, छाछि सो विदल कहाय।
मुखमें देत लाला मिलि जाय, उतरत गलै पचेन्द्री थाय ॥४
नाज वेलि तो ऊपजै जोय, सो आ काष्ट गनियो भवि लोय।
छाछ तणो फल बीजह जान, तिनकी दाल होय सो मान ॥५
छाछ दही मिल विदल ह्वन्त, यो निहचै भाष्यो भगवन्त।
चारोली पिसता बादाम, बोल्यो बीज सागरी नाम ॥६
इत्यादिक तरु फल के माहिं, बीज दुफारा मीजी थाहिं।
छाछ दही सो मेलि रु खाय, विदल दोष तामें उपजाय ॥७
गलै उतरता मिलि है लाल, पंचेन्द्री उपजै ततकाल।
ऐसो दोष जान भविजीव, तजिए भोजन विदल सदीव ॥८
सागर पिठोर तोरई तणा, मूरख करै राइता घणा।
तिहका अघ को पार न कोय, जो खाहै सो पापी होय ॥९
तजिहैं विदल दोय परकार, सो निहचै श्रावक निरधार।
ककडी पेठो अरु खेलरा, इनको छाछ दही मैं धरा ॥१०
राई लूण मेल जिहि माहि, करे रायता मूरख खाहिं।
राई लूण परै निरधार, उपजै जीव सिताब अपार ॥११
राई लूण मिलो जो द्रव्य, ताहि सरवथा तजिहै भव्य।
कपडै वाध दही को धरै, मीठो मेल शिखरणी करै ॥१२
खारिख दाख घोल दधिमाहिं, मीठो मेल रायता खाहिं।
मीठो जब दधिमाहि मिलाहि, अन्तर्मुहूर्तमें त्रस उपजाहि ॥१३
यामें मीठा जुत जो दही, अन्तर मुहूर्त माहे सही।
खावे भविजन को हित दाय, पोछै सम्मूर्छन उपजाय ॥१४

उक्त च गाथा—इक्खुदहीसजुत्त, भवति सम्मुच्छिमा जीवा।
अन्तोमुहूत्त मज्झे, तम्हा भणति जिणणाहा ॥१५

दोहा—काजो कर जे खात हैं, जिह्वा लपट मूढ। पाप भेद जाने नही, रहित विवेक अगूढ ॥१६
अब ताको विधि कहत हौं, सुणी जिनागम जेह। ताहि सुणत भविजन तजो, मनका सकल सदेह ॥१७

' किशन सिंह जीने जन्म-मरणकी मिथ्या क्रियाओका, सूतक-पातकका ग्रह-शान्ति, ज्योतिषचक्र और सूर्य-चन्द्रके ग्रहणका जैन मान्यताके अनुसार विस्तारसे वर्णन किया है। किन्तु पदम कविने और दौलतराम जीने यह कुछ भी वर्णन नही किया है।

पदम कविने मन्त्र-जापके समय विभिन्न अगुलियो परसे उसके विभिन्न फलोका वणन किया है, किन्तु किशन सिंह जीने जाप्य मन्त्रोका वर्णन करते हुए भी विभिन्न अगुलियो परसे जाप करने के विभिन्न फलो को का कोई वर्णन नही किया है। दौलतराम जी ने सामायिका विस्तृत वणन करते हुए भी उक्त विवेचन नही किया है।

पूजन का वर्णन यद्यपि तीनो की ग्रन्थकारोने किया है, परन्तु पूजन-प्रक्षाल करते समय मुखपर कपडा बांधनेका विधान केवल किशन सिहजी ने ही किया है। मुखपर कपडा बाधकर पूजन-प्रक्षाल करनेका रिवाज मूर्तिपूजक श्वेताम्बर जैनोमे आज भी प्रचलित है और कुछ समय पूर्व तक बुन्देल खण्डके दि० जैनियोमे भी था।

पदम कवि ने निर्माल्य भक्षण के महादोप का वर्णन किया है, परन्तु दोनो क्रिया कोष-कारो ने इस विषय पर कुछ नही कहा है।

किशन सिंह जीने लोक-प्रचलित मन-गढन्त मिथ्या व्रतोका निषेध कर आष्टाह्निक, सोलह कारण आदि अनेक जैन व्रत-विधानोका जैसा विधि-पूर्वक विस्तृत विवेचन किया है, वैसा शेष दोनोने नही किया है।

दौलतरामजीने बारह प्रकारके तपोका जैसा विस्तृत वणन किया है, वैसा शेष दोनो ने नही किया है।

किशनसिंहजोने जिन-मन्दिरमे नही करने के योग्य चौरासी आसादनाओ का तथा मिथ्या-त्वमयी नवग्रह-शान्ति का निषेध कर जैनविधि से नवग्रह-शान्ति और ज्योतिष चक्र का वर्णन किया है, पर शेष दोनो ने इस पर कुछ नही लिखा है।

विवाह के समय एव जन्म-मरण के समय की जाने वाली मिथ्यात्वपूर्ण क्रियाओ का जैसा निषेध पदम कविने किया है, वैसा शेष दोने नही किया है।

किशनसिंहजीने प्रात कालीन पूजनको अप्ट द्रव्योंसे, मध्याह्न पूजन सुन्दर पुष्पोंसे और सायकालकी पूजन को दीप-धूप से करनेका वणन किया है, वैसा शेष दोने नही किया है।

पूजकको नौ स्थानोपर तिलक लगाने और आभूषण धारण करनेका वणन भी किशन-सिंहजीके सिवाय शेष दोने नही किया है। वस्तुत यह विधि पचकल्याणकादि विशिष्ट पूजा-विधानोंके लिए है, फिर भी भक्तजन अपने नवो अगोमे चन्दन लगाकर उक्त कत्तव्य की पूर्ति कर ही लेते हैं।

जाप करते समय णमोकारमन्त्रको तीन श्वासोच्छ्वासोंके द्वारा उच्चारण करनेका विधान इन्होने किया है। यथा प्रथम पदको श्वास खीचते हुए, दूसरे पदको श्वास छोडते हुए, तीसरे पदको श्वास खीचते हुए और चौथे पदको श्वास छोडते हुए तथा पचम पदके 'णमो लोए' पदको श्वास लेते हुए और 'सव्वसाहूण' पदको श्वास छोडते हुए उच्चारण करना चाहिए। इस प्रकार से तीन श्वासोच्छ्वासोमे उच्चारण करनेसे मन इधर-उधर न भागकर स्थिर रहता है।

चौपाई—तातो जल अरु छाछ मिलाय, तामे सौले लूण उराय।
भुजिया बडा नाख तिहि माँहि, खावै वुद्धिहीन सो ताहि ॥१८
प्रथम छाछ काजी के जाहि, तात्तो जल तामाहि पराय।
अवर नाज को कारन थाय, उपजै जीव न पार लहाय ॥१९
याकी मरयादा अतिहीण, तातें तुरत तजो परवीण।
ठडी छाछ तास में जाण, तातें विदलहु दोप वखाण ॥२०
प्रथम ही छाछ उष्ण अति करै, अरु वैसे ही जल कर धरै।
जव दोऊ अति सीतल थाय, तव दुहुअन को देय मिलाय ॥२१
अगिन चढाय गरम फिरि करै, जव वह सीतलता को धरै।
भुजियादिक तामे दे डार, नमु सर्यादा को इम पार ॥२२

उक्त च गाथा—चउएइदी विणिछह-अठ्ठह तिण्णिणि भणति दह।
चौरिंदी जीवडा वार वारह पच भणत्ति ॥२३

छन्द चाल की ढाल

जव चार महूरत माही, एकेंद्री जीव उपजाही। बारा घटिका जव जाये, वे इन्द्री तामे थाये ॥२४
वीते तव ही दुय जामा, तव होवै ते इन्द्री धामा।
दुय अर्धपहर गति जानी, उपजे चउ इन्द्री प्राणी ॥२५
गमिया दश दोय मुहूरत, पचेन्द्री जिय करि पूरत।
है है नहिं ससै आणी, या भाषे जिनवर वाणी ॥२६
वुध जन ऐंसो लखि दोषा, जिय ततक्षण अघ को कोषा।
कोई ऐसे कहिवे चाही, खाये विन जन्म गवाही ॥२७
मर्याद न सधि हैं मूला, तजिये व्रत अनुकूला।
खाय को पाप अपारा, छोडो शुभ गति है मारा ॥२८

सवैया—मूढ सुहै कुजिय, भेद गहै मनि खेद धरो विकलाई।
खात सवाद लहै अहलाद महा उनमाद रु लपट ताई।
पातक जार महा दुख घोर सहै लखि ऐसिय भव्य तजाई
जे मतिवन्त विवेकी सन्त महा गुणवन्त जिनन्द दुहाई ॥२९

इति काजी निषेध वर्णनम् ॥

•

अथ गोरस मर्यादा कथन

अव गोरस विधि सुन एवा, भाषो श्री जिनवर देवा।
दोहत महिषी जव गाये, तवते मर्याद गहाये ॥३०
इक अन्तर मुहूरत ताईं, जीव न तामे उपजाई। राखे जाको जो खीरा, वैसे ही जीव गहीरा ॥३१
उपजै सम्मूर्च्छन जासे, कर जतन दया धर तासे।
दोहे पीछे ततकाला, धर अगनि उपरि ततकाला ॥३२

फिर तामे जावण दीजे, तब तै बसु पहर गणीजे ।
जब लो दधि खायो सारा, पीछै तजिये निरधारा ॥३३
दधिको धरिकै जे मथाणी, मथि है जो वणिता खाणी ।
मथितैं ही जल जामाही, डारै फिरि ताहि मथाही ॥३४
वह तक्र पहर चहुताई, खाने को जोग कहाई ।
मथिय पीछें जल नाखे, बहु बार लगे तिहि राखे ॥३५
बिन छाणो जल जिम जाणो, तैसी ही ताहि बखाणो ।
तातें जे करुणाधारी, खावें दधि तक्र विचारी ॥३६
मरयादा उलघ जु खाही, मदिरा दूषण शक नाही ।
निज उदर-भरण को जेहा, बेचै दधि तक्र जु तेहा ॥३७
वे पाप महा उपजाही, या मैं सशय कुछ नाही ।
तिनको जु तक्र दधि लेई, खावें मतिमद धरेई ॥३८
अर करहि रसोई जातें, भाजन मध्यम ह्वै तातें ।
मरयादाहीण जो खावे, दूषण को पार न लावे ॥३९
इह दही तक्र विधि सारी, सुनिये जो भवि व्रत धारी ।
किरया अरु जो व्रत राखे, दधि तक्र न पर को चाखे ॥४०
अब जावण की विधि सारी, सुनिये भवि चित्त अवधारी ।
जब दूध दुहाय घर लावे, तब ही तिहि अगनि चढावे ॥४१
अबटाये उतार जु लीजे, रुपया तब गरम करीजे ।
डारै पयमाहे जेहा, जमिहैं दधि नहिं सन्देहा ॥४२
बाधे कपडा के माही, जब नीरन बुन्द रहाही । तिहकी दे बडी सुकाई, राखे सो जतन कराई ॥४३
जल माही घोल सो लीजे, पयमाहे जावण दीजे ।
मरयादा भाषी जेहा, इह जावण मु लखि लेहा ॥४४

इति गौरस मर्यादा सम्पूर्णम् ।

■

अथ चर्माश्रि वस्तु दोष-वर्णनम्

दोहा—चरम मध्य की वस्तु को, खात दोष जो होय ।
ताको सक्षेपहि कथन, कहुँ सुनो भविलोय ॥४५

चौपाई—मूये पशु को चरम जु होय, भीटै नर चडाल जु कोय ।
ता चडालहि परसत जबै, छोति गिने सगरे नर तबै ॥४६
घर आये जल स्नान करेय, एती सख्या चितहि धरेय ।
पशू खाल के कूपा माहि, घिरत तेल भडसाल कराहि ॥४७
अथवा सिर पर धर कर ल्याय, वेचै सो बाजारहि जाय ।
ताहि खरीद लेय घर माहि, खावै सवै शकु कछु नाहिं ॥४८

तामें उपजें जीव अपार, जिनवाणी भाख्यो निरधार।
जैसें पशू चाम के माहि, घृत जल तेल डार है ताहि ॥४९
ताही कुल के जीव उपजन्त, सख्यातीत कहै भगवन्त।
ऐसो दोष जाणिकै संत, चरम वस्तु तुम तजहु तुरन्त ॥५०
कोई मिथ्याती कहै एम, जिय उतपत्ती भाषो केम।
जीव तेल घृत मे कहुं नाहि चरम धरें कर उपजें काहि ॥५१
ताके समझावण को कथा, कही जिनेश्वर भापू यथा।
दे दृष्टान्त सुदृढता धरी, मिथ्यादृष्टी सशय हरी ॥५२
घृत जल तेल जोगतें जीव, चरम वस्तु मे धरत अतीव।
उपजै जैसें जाको चाम, सो दृष्टान्त कहूँ अभिराम ॥५३
सूरज सन्मुख दरपण धरैं, रूई ताके आगे करे।
रवि दरपण को तेज मिलाय, अगनि उपजै रूई बलि जाय ॥५४
नही अगनि इकली रूमाहि दरपन मध्य कहूँहै नाहि।
दुहुयनि को सयोग मिलाय, उपजै अगनि न सशै थाय ॥५५
तेई चाम के वासन माहि, घृत जल तेल धरैं सक नाहि।
उपजैं जीव मिलैं दुहुं थकी, इह कथनी जिनमारग बकी ॥५६
ऐसैं लख कै भील चमार, धीवर रैगर आदि चडार।
तिनके घर के भाजन तणो, भोजन भखे दोष तिम तणो ॥५७
तैसो चरम वस्तु में दोष, दुरगति दायक दुख को कोष।
चरम वस्तु भक्षण करि जेह, मास भखी सादृश है तेह ॥५८
तुरत पशू मूए की चाम, करिकै तास भायडी ताम।
भरै हीग तामें मिल जाय, खातो मास दोष अधिकाय ॥५९
जाके मास त्याग व्रत होय, हीग भख्य नहि खावें कोय।
हीग परे जहि भाजन माहि, सो चमार वासण सम जाहि ॥६०

सवैया

चामडे के मध्य वस्तु ताको जो आहार होय, अति ही अशुद्ध ताहि मिथ्यादृष्टी खाय है।
दातार के दीए विन जिन इच्छा होय एसो, असन लहाय नाम जती को कहाय है॥
तिन बहिराल मासो कहा कहै और सुनो, वणियो सो भोजन क्रियातैं हीण थाय है।
हरित अनेक जुत मारग श्रमवन्त, शुद्धता कहाय भखैं धरैं या गहाय है ॥६१

दोहा

जीमत भोजन के विषे, मूवो जनावर देख। तजै नही वह असन को, पुरजन दुष्ट विशेष ॥६२
ए चाख्यो इक से कहे, यामे फेर न सार। अति लम्पट जिह्वा तणो, लोलुप चित्त अपार ॥६३

चौपाई – हटवा तणो चून अरु दाल, व्रतधर इनको खावो टाल।
बीधो अन्न पीस दल ताहि, दया रहित बेचत हैं जाहि ॥६४
जीव कलेवर थानक सोय, चलतेहु तामाहे होय।
परम विवेकी है जो सही, मास दोष लख त्यागे सही ॥६५

नीच लोक घर को घृत दुग्ध, तजहु विवेक जाणि अशुद्ध ।
साढि दूध दोहत तैं लेय, तातो होय तहा सो देय ॥६६
निन्द्य वस्तु उपमा इसी, कहिये मास बरावर जिसी ।
आमिषकी उपमा इह वीर, जैसी साढि तणी है खीर ॥६७
याते साढि दूध को तजो, मास तजन व्रत निहचै भजो ।
सख तणो चूनो गौमूत्र, महानिन्द भाषो जिन सूत्र ॥६८
कालिगडा घिया तोरई, कद्दू वीलरु जामानिई ।
इत्यादिक फलकाय अनन्त, तिनको तजिये तुरत महन्त ॥६९
फलीय कवारि कली कचनार, फूल सुहजणा आदि अपार ।
महानिन्द जीवनि का धाम, तजिये तुरत विवेकीराम ॥७०

दोहा

त्रेपन किरिया के विषै प्रथम मूलगुण आठ । तिन वर्णन सक्षेपते, कह्यो पूर्व ही पाठ ॥७१
जिनवानी जैसी कही, कथा सस्कृत तेह । भाषा तिह अनुसारते, बन्ध चोपाई एह ॥७२
पच उवम्बर फल त्यजन, मकारादि पुनि तीन । महादोषकर जानके, तुरत तजहु परवीन ॥७३

सवैया

पीपर और बडफल उबर कटुम्बरहु पाक परिपाच उदुबर फल जानिये,
मद्य मास मधु तीन मकरादि अतिहीन सुनहु परवीन सबै आठए बखानियें ।
इनही के दोष जेते तामे पाप दोष तेते लहैं न सन्तोष तेते नर खात मानियें,
इनिके तजे जो मन वच क्रम भव्य जीव आठ मूलगुण के सधैया मन आनियें ॥७४

चौपाई

जा घरमाहिं रसोई दोय, तहाँ तानिये चन्दवो लोय ।
अबर परहिंडा ऊपर जान, उखल चाकी है जिहि थान ॥७५
फटकै नाज रु वीणै जहाँ, चून छानिबो थानक तहाँ ।
जिस जागह जीमन नित होय, सयन करण जागा अवलोय ॥७६
सामायिक कीजे जिहि धीर, ए नव थानक लख वर बीर ।
ऊपर वसन जहाँ ताणिये, श्रावक चलण तहाँ जाणिये ॥७७
चाकी ऊखल कै परिणाम, ढकणा कीजै परम सुजान ।
श्वान विलाई चाटै नाय, कीजै जतन इसी विधि भाय ॥७८
खोट लिये मूसलतें नाज, धोय इकान्त धरो बिन काज ।
छाज चालणा चालणी तीन, चामतणा तजिये परवीण ॥७९
चरम वस्तु को त्यागी होय, इनको कबहुँ न भेटे सोय ।
दिन मे कूटे पीसे नाज, सो खाना किरिया सिरताज ॥८०
नाज नजर ते सोध्यो परै, तातें करुणा अति विस्तरै ।
निसिको जो पीसै अरु दलै, जातें करुणा कवहु न पलै ॥८१

चाकी गालै चून रहाय, चीटी अधिक लगै तसु आय।
निसिको पीस्यो नजर न परै, ताके दोष केम ऊचरै ॥८२
नाजमाहि ऊपरि तें कोय, प्राणी आय रहे जो होय।
सोई नजर न आवे जीव, यातें दूषण लगै अतीव ॥८३
एते निशि पीसण के दोष, जान लेहु भवि अध के कोष।
ताके निशि पीस्यो नहि भलो, त्यागो ते किरिया जुत चलो ॥८४
चूनतणी मरयादा कहू, जिनमारग म जंमे लहू।
शीतकाल दिन सात बखान, पाच दिवस ग्रीषम ऋतु जान ॥८५
वरसाकाल माहि तिन तीन, ए मर्यादा गहौ प्रवीन।
इन उपरान्त जानिये इसो, दोष चलितरस भाष्यौ तिसो ॥८६
निसिको नाज मेय जो खाय, अकूरा तिन मे निकसाय।
जोव निगोद तणो भण्डार, कन्दमूल सब दोष अपार ॥८७
ताते जिते विवेकी जीव, दोष जाणके तजहु सदीव।
श्रावक की है घर जो त्रिया, किरियामाहि निपुण तसु हिया ॥८८
ईंधन सोध रसोई माहि, लावे तासो असन कराहि।
ताते पुण्य लहै उत्कृष्ट, भव भव मे सुख सहै गरिष्ट ॥८९

चौपाई

कोई मान वडाई काजै, अरु जिह्वा लोलुपता साजे।
खाड तणी चासणी कराय, दाख छुहारा माहि डराय ॥९०
नाना भाँति अवर भी जान, करइ मुरब्बा नाम बखान।
कैरी अगनि ऊपरि चढ़वाय, खाण्ड पातमाहे नखवाय ॥९१
कहै नाम तसु कैरी पाक, करवावै तस अशुभ विपाक।
तिनकी मरजादा वसु जाम, व्रत धरकै पीछे नहि काम ॥९२
जेती ऊष्ण नीरकी वार, तेती इन सख्या निरधार।
रहित विवेक मूढता जान, राखे घर मे वहु दिन आन ॥९३
मास दुमास छमास न ठीक, वरस अधिक दिन लो तहकीक।
काहू मे तो पेस करेय, मागै तिनको मागा देय ॥९४
जातें लखै वडाई आप, तिस समान कछु अवर न पाप।
मदिरा दोष लगै सक नाहि, ताते भवि तजिये हित जाहि ॥९५
जो मन मे खाने को चाव, खावे जीमत वार कराव।
अथवा कीए पाछे ताम, लैनो जोग आठहो जाम ॥९६
साठोका रसको अवटाहि, राखे नरम चासणी ताहि।
घागर मटकी भरके राख, ताको वहुदिन पीछे चाख ॥९७
ताहँ मे मदिरा को दोष, महानन्त जीवनिको कोष।
भविको कहा करौ आलाप, अहो रात्रि खाये वहुपाप ॥९८

याको षटरस नाम जु कहैं, पुन्यवान कबहु न गहैं ।
मन वच तन इनको जो तजै, मदिरा त्याग वरत सो भजै ॥९९

दोहा

जे विशुद्ध मदिरा त्यजन, पालै वरत महन्त । मरजादा ऊपर गये, तुरत त्यागिये सन्त ॥२००

चौपाई

होत रसोई थानक जहाँ, खिचडो रोटी भोजन तहाँ ।
चावल और विविध परकार, निपजै श्रावक के घर सार ॥१
जीमण थानक जो परमाण, तहाँ जीमिये परम सुजाण ।
राधण के भाजन हैं जेह, चौका बाहिर काढि न तेह ॥२
जो काढै तो माहि न लेह, किरियावन्त सो नाहि सनेह ।
असन रसोई बाहिर जाय, सो बटबोयी नाम कहाय ॥३
अन्य जाति जो भीटै कोय, जिय भोजन को जीमे सोय ।
शूद्रनि मेले जीमे जिसो, दोष बखान्यो है वह तिसो ॥४
अन्य जातिके मेले कोई, असन करै निरबुद्धि होई ।
यातें दूषण लगैं अपार, जिमि परजूठि भखै मतिछार ॥५
निजसुत पिता व भ्राता जान, साचो मित्रादिक जो मान ।
मेलै तितकै जीमण जदा, किरियामती वरणो नहि कदा ॥६
तो पर जात तणी कहा बात, क्रिया काण्ड ग्रन्थनि विख्यात ।
भाजन निज जीमन को जेह, माग्यो परको कबहूँ न देह ॥७
अरु परको वासण मे आप, जीमेते अति वाढै पाप ।
ग्रामान्तर जो गमन कराय, वसिहै ग्राम सराया जाय ॥८
मागे वासन खावे वाहि, जो सीधो घरहूँ को आहि ।
खाये दोष लगै अधिकार, मास बरावर फेर न सार ॥९
गूजर मीणा जाट अहीर, भील, चमार तुरक बहु कीर ।
इत्यादिक जे हीण कहात, तिन बासन मे भोजन खात ॥१०
ताके घर को बासण होय, ताते तजौ विवेकी लोय ।
श्रावक कुल अति लह्यो गरिष्ठ, क्रिया विना जो जानहु भ्रष्ट ॥११
जे बुध क्रिया विषै परवीन, अन्य तणो वासण गहि हीण ।
तामे भोजन कबहु न करै, अधिको कष्ट आय जो परै ॥१२
जैन धरम जाके नहिं होय, अन्यमती कहिये नर सोय ।
निपज्यो असन तास घरमाहि, जीम्रण योग वसाणो नाहि ॥१३
अरु तिनके घरहु को कीयो, खानो जिनमत मे वरजीयो ।
पाणी छाणि न जाणे सोय, साधण नाज विवेक न होय ॥१४
ईंधण देख न वालो जिके, दया रहित नर जाणो तिके ।
जीव दया पटमत मे सार, दया विना करणी सव छार ॥१५

याते जे करुणा प्रतिपाल, असन आन धरि कर तजि चाल ।
निजव्रत रक्षक है नर जेह, यो जिनवर भाष्यौ सन्देह ॥१६

छन्द चाल

जे आठ मूल गुण पाले, इतने दोषनि को टाले ।
दीजे जिम मन्दिर नीव, गहिरी चौंढी अति सीव ॥१७
तापर जो काम चढावै, वहु दिन लो डिगणे न पावै ।
तिम श्रावक व्रत ग्रह केरी, इनि विनि ही नीव अनेरी ॥१८
दरशन जुत ए पलि आवै, व्रत मन्दिर अडिग रहावै ।
याते जे भविजन प्राणी, निहचै एह मन मैं आणी ॥१९
पतिमा ग्यारा जो भेद, आगे कहि हो तजि खेद ॥२०

अडिल्ल छन्द

किसनसिंह यह अरज करे भविजन सुनो, पालो वसु गुण मूल निजातम को गुणो ।
दरशन जुत व्रत त्रिविध शुद्ध मनलाई हो, सुरग सम्पदा भुजि मोक्ष सुख पाय हो ॥२१

अथ रजस्वला स्त्री की क्रिया लिख्यते

चौपाई

अवर कथन इक कहनो जोग, सो सुन लीज्यो जे भविलोग ।
अबै क्रिया प्रगटी वहु हीण, याते भापू लखहु प्रवीन ॥२२
ग्रथ त्रिवर्णाचार जु माहि, वरणन कीयो है अधिकाहि ।
मतलव सो तामे इक जान, मैं सक्षेप कहूँ सुखदान ॥२३
रितुवती वनिता जब थाय, चलण महा विपरीत चलाय ।
प्रथम दिवस ते ही ग्रह काम, देय बुहारी सिगरे धाम ॥२४
अवर हाथ माही ले छाज, फटके सोधै वीणै नाज ।
बालक कपडा पहिरा होय, वाहि खिलावै सगरे लोय ॥२५
आपस मे तिय छूजे सवै, न करे शका भीटत जवै ।
माजे सब हँडवाई सही, जीमण की थाली हू गही ॥२६
जिह थाली मे सिगरे खाहि, ताही में वा असन कराहि ।
जल पीवे को कलस्यो एक, सब ही पीवै रहित विवेक ॥२७
क्रिया कोष ग्रन्थन मे कही, रितुवती जो भाजन लही ।
ग्रह चडार तणा को जिसो, वोहू भाजन जाणो तिसो ॥२८
और कहा कहिए अधिकाय, वह वासण माहे जो खाय ।
ताके दोष तणो नहि पार, क्रिया हीण बहु जाणि निवार ॥२९
निसिको पति सोवत है जहा, वाहू सयन करत है तहा ।
दुहु आपस मे परसत देह, यामें मति जाणो सदेह ॥३०
कोऊ विकल महा कुमतिया, दुय तीजे दिन सेवै तिया ।
महापाप उपजावै जोर, यासम अवर न क्रिया अघोर ॥३१

महाग्लानि उपजै तिहि वार, चमारणिहूँ ते अधिकार।
जाको फल वे तुरत लहाय, जी कहु उस दिन गरभ रहाय ॥३२
भाग्य हीण सुत बेटी होय, पर तिय नर सेवे बुधि खोय।
क्रोधित ह्वै कहु अति बच ठीक, जद्वा तद्वा कहै अलीक ॥३३
रितुवती तिय किरिया जिसी, भाषो भवि सुणि करिए तिसी।
वनिता धर्म होत जब बाल, सकल काम तजिके तत्काल ॥३४
ठाम एकात बैठि है, जाय, भूमि तृणा सथारो कराय।
निसि दिन तिह पर थिरता धरै, निद्रा आये सयन जु करै ॥३५
इह विधि निवसे वासर तीन तव लो एती क्रिया प्रवीन।
प्रथम ही असन गरिष्ठ न करै, पातल अथवा कर में धरै ॥३६
माटी बासण जल का साज, फिरि वे हैं आवें नहि काज।
इह भोजन जल पीवन रीत्ति, अवर क्रिया सुनिये घर प्रीत्ति ॥३७

छदचाल

दिन में नहिं सयन कराही, हासि न कोतूहल थाही।
तनि तेल फुलेल न लावे, काजल नयना न अजावे ॥३८
नख को नही दूर करावे, गीतादिक कबहु न गावे॥
तिलक न वे रोली केशर, कर पय नख दे न महावर ॥३९
एक दिवस तीन ली भोग, रितुवत्ती न करीवो जोग।
पुरुषनि को नजर न धारे, निज पतिहु को न निहारे ॥४०
वनिता ह्वै धरम जु निसिको, दिन गिण लीजे नहिं तिसको।
सूरज नजरो जो आवे, वह दिन गिणती में लावे ॥४१
दूजे दिन स्थान कराही, धोबी कपडा ले जाही।
सकोच थकी नखवाई, औरन की नजर न आई ॥४२
तीजे दिन जलसें न्हावे, तनु वसन ऊजले लावे।
चउथे दिन स्नान करती, मन में आनद धरती ॥४३
तन बसन ऊजले, धारे, प्रथमहि पति नयन निहारे।
निसि धरै गरभ जो वाम, पति सूग्न सो अभिराम ॥४४
निपजावै उत्तम बालक, बडभाग जनहिं प्रतिपालक।
तातें इह निहचै जानी, चौथे दिन स्नान जु ठानी ॥४५
पतिवरत त्रिया जो पारे, निज पति को नयन निहारे।
नर अवर नजर जो आवे, तस सूरत सम सुत पावे ॥४६
शीलहि कलक को लावे, अपजस लग पटह वजावे।
यातें सुभ वनिता जें हैं, किरिया जुत चाले ते हैं ॥४७
निजपति विन अवर न देखे, सासू ने नाहिं मुख पेखे।
ताके घर माही जाणो, लछमी को वाल वखाणो ॥४८

अति सुजस होय जगमाही, तासम वनिता कहुँ नाही ।
इह कथन लखो बुध ठीका, भाषो नहिं कछू अलीका ॥४९

दोहा

क्षत्री ब्राह्मण वैश्य की, क्रिया विशेष वखान । ग्रन्थ त्रिवर्णाचार मे, देख लेहु मति मान ॥५०

इति रजस्वला स्त्री क्रिया वर्णनम् ।

o

अथ द्वादश व्रत कथन लिख्यते

दोहा

कियो मूल गुण आठ को, वर्णन बुधि अनुसार ।
अब द्वादश व्रत को कथन, सुनहु भविक व्रतधार ॥५१
वारा व्रत माही प्रथम, पाच अणुव्रत सार । तीन गुणव्रत चार पुनि, शिक्षाव्रत सुखकार ॥५२

छन्द चाल ।

इह व्रत पाले फल ताको, भाषो प्रत्येक सु जाको ।
जे अव्रत दोष अपारा कहि हो तिन को निरधारा ॥५३
समकित जुत व्रत फल दाई, तिहकी उपमा न कराई ।
बिनु दरशन जे व्रत धारी, तुप खडन सम फलकारी ॥५४

अडिल्ल

जो नर व्रत को धरैं सहित समकित सही, सुर नर और फणिंद्र सपदा को लही ।
केवल विभव प्रकाश समवसृत लहि सदा, सिद्ध-वधू कुचकुभ पाय क्रीडत सदा ॥५५

दोहा

भाग्य हीन ज्यो चहत गुण, धन धान्यादिक नाहिं ।
भीत मूर्ति नित ही दुखी, वरत-रहित नर थाहि ॥५६

गीता छन्द

जो शुद्ध समकित धार अति ही नरभव सुखकर कौन है ।
ससार मे जे सार सारहि भोग सो मुनि व्रत गहैं ॥
सो मुक्ति वनिता के पयोधर हार सम जे रति करै ।
तहँ जनम मरण न लहै कवही सुख अनता अनुसरैं ॥५७

दोहा

कुबुद्धि भव ससार में, भ्रमत चतुर गति थान । जिन आगम तत्त्वार्थ को, विकल होय सरधान ॥५८

अथ अहिंसा अणुव्रत लिख्यते । चौपाई

त्रस की घात कवहुँ नहिं जाण, जो कदाचि छूटै निज प्राण ।
थावर दोष लगै तिह थकी, प्रथम अणुव्रत जिनवर वकी ॥५९

थावर हिंसा इतनी तजै, त्रस के घात दोष कौ भजै।
सो धरमी भो परम सुजान, जीवदया पालक प्रतिजान ॥६०

छन्द नाराच

करोति जीव की दया नरोत्तमो मही सही, सुबैर वर्ग वर्जितो निरामयो तनु लही।
तिलोक हर्म्य मध्यरत्न दीप सो वखानिए, बरै विमोक्ष लक्ष्मी प्रसिद्ध शिव को जानिए ॥६१

दोहा

खाद्य अखाद्य न भेद कछु, हिंसा करत न ढील। महा पाप की मूल नर, ज्यो चडाल अरु भील ॥६२

अडिल्ल छन्द

जीवबध कर पाप उपार्जित पाक तें, घोर भवोदधि माहि परै निज आपते।
नरक तणा दुख सबै बहुत विधितें सहै, फिर-फिर दुर्गत्ति माहि सदा फिरते रहै ॥६३

दोहा

करुणा अरु हिंसा तणो, प्रगट कह्यो फल भेद। वह उपजावे सुख महा, अदया ते ह्वै खेद ॥६४
ऐसे लखि भविजन सदा, धरो दया चित राग। सुपने हूँ अदया करत, भाव तजहु बडभाग ॥६५

सवैया

पूरव ही मुनिराय दया पालो षट्काय महा सुखदाय शिव थानज लहायो है,
प्रतिमा धरैया के उपसमकादि केतेहूँ करुणा सहाय जाय देवलोक पायो है।
अजहूँ जीवनि की रक्षा के करैया भवि सुर शिव लहै जिनराज यो बतायो है,
या तें हिंसा टार क्रिया पार चित्त धार जिन आगम प्रमाण कृष्णसिंह ऐसे गायो है ॥६६

अथ हिंसा अतिचार। चाल छन्द

बाधे नर पशुयन केई रज्जू बधन दृढ देई।
लकुटादिक तें अति मारै, पाहन मूठी अधिकारै।
नासा करणादिक छेदै, परवेदन को नहिं वेदै।
पशुवन को भाडो करिहै, इतनो हम बोझ जो धरिहै ॥६७
पीछे लादे बहु भार, जाके अघ को नहिं पार।
खर बैल ऊँट अरु गाडो, मरयाद जितो करि भाडो ॥६८
हासिल को भय कर जानी, बोझि भरन अधिक धरानी।
घोटक रथ ह्वै असवारे, चालै निस साज सवारे ॥६९
तसु भूख त्रिषा नहिं छूजे, ताको पर दुख नहिं सूजे।
काहू नर के सिर दाम, जाको रोकै निजधाम ॥७०
तिहि खान पान नहिं देई, क्रोधादिक अधिक करेई।
ए अतीचार भनि पाच, अदया को कारण साच ॥७१
करुणा व्रत पालक जेह, टालैं मन मे धर नेह।
विन अतिचार फल सारा, सुखदायक हो अविकारा ॥७२
वे धन्य पुरुष जगमाही, ते करुणा भाव धराही।
करुणा सब विधि सुखदायक, पदवी पावै सुरनायक ॥७३

सभीने पूव या उत्तर की ओर मुख करके पूजन और जाप करने का विघान किया है।

प० दौलतरामजीने अष्ट मूलगुणोके वर्णनसे साथ ही अभक्ष्य वस्तुओंने त्यागका, चौका, चक्की, परडा आदिको शुद्धिका, रजस्वला-प्रसूतादि स्त्रीके हाथसे स्पर्शी वस्तुओकी अग्राह्यता का, और सप्त व्यसनो का जैसा भावपूर्ण वर्णन किया है, वह पढते ही बनता है। शेष दोनो के वर्णनमे वैसी भावपूर्ण सरसता नही है।

इसी प्रकार व्रती श्रावकके नही करने-योग्य व्यापारोका, सम्यक्त्वके भेदोका विशद और सरस वर्णन तथा अहिंसाणुव्रतके वर्णनमे दया का अपूव विस्तृत वर्णन भी बार-बार पढने के लिए मन उत्सुक रहता है।

पदम कविने सामायिकके ३२ दोषो का वर्णन तीसरी प्रतिमामे किया है। किन्तु किशन सिहजोने दूसरी ही प्रतिमामे किया है। पर दौलतरामजोने उनका कही कोई वर्णन नही किया है। इन बत्तीस दोषोका वर्णन अनेक श्रावकाचार-कर्त्ताओने भी किया है। पर वस्तुत ये दोष साधुओके लिए ही मूलाचार आदिमें बतलाये गये हैं। श्रावकको जितना सभव हो, उतने दोषोंसे बचने का प्रयत्न करना चाहिए।

पदम कविने चार शिक्षा व्रतोका वर्णन कुन्दकुन्दके अनुसार किया है, किन्तु किशनसिंह जी और दौलतरामजीने तत्त्वार्थसूत्रके अनुसार किया है।

श्रावकके १७ नियमोका वर्णन तीनोने ही किया है।

अन्तमे एक ही प्रश्न विचारणीय रह जाता है कि किशन सिंहजीके द्वारा सागानेर (राजस्थान) मे रहते हुए स० १७८४ मे क्रिया कोषकी रचना करनेके केवल ११ वर्षके बाद ही दौलत रामजीने उदयपुरसे अपने क्रिया कोषकी रचना क्यो की ? दोनो क्रियाकोषोको गभीर और सूक्ष्म दृष्टिसे देखनेपर हम दो निष्कर्षोंपर पहुचे हैं। प्रथम तो यह कि सभव है कि दौलतरामजीको किशनसिंहजीके क्रियाकोषके दर्शन ही नही हुए हो। और सस्कृत क्रियाकोषके मिलनेपर उन्हे उसकी उपयोगिता प्रतीत होनेसे भाषा छन्दोमे सर्वसाधारण पाठकोके लिए उसकी रचना करना आवश्यक प्रतीत हुआ हो।

दूसरा कारण यह भी सभव है कि किशनसिंहजी-रचित क्रिया कोषमे उन्हे भट्टारकीय या वीसपन्थ-आम्नायकी गन्ध आई हो और इसलिए उन्होने विशुद्ध तेरापन्थ-आम्नायके अनुसार क्रियाकोषकी स्वतत्र छन्दोबद्ध रचना करना अभीष्ट रहा हो।

किशनसिंहजीके क्रियाकोषमे वीसपन्थकी गन्ध आनेके कुछ स्थल इस प्रकार हैं—

(१) मध्याह्न पूज-समए सु एह, मनुहरण कुसुम बहु देखि देह।
अपराह्न भविक जन करिह एव, दीपहि चढाय बहु धूप खेइ ॥३८॥

(प्रस्तुत सग्रह पृ० २०४)

(२) जो भविजन जिन-पूजा रचै, प्रतिमा परमि पखालहि सचै।
मौन सहित मुख कपड़ो करै, विनय विवेक हरष चित धरै ॥४८॥

(प्रस्तुत सग्रह पृ० २०५)

अथवा चक्री धरणेश, देव नृपहुँ हो श्रेणिक वेश ।
इन पदवी कर कहा वडाई, ससार तणा सुखदाई ॥७४
यातें तीर्थंकर होई, सदेह न आणो कोई ।
तातें मुनिये भवि जीव, करुणा चित धार सदीव ॥७५

अथ सत्य अणुव्रत कथन । चौपाई

झूठ थूल वच ना मुख कहै, सकट पडै मौन को गहै ।
त्यागें असत्य सर्वथा नही, यातें लघु खिर है मुखि कही ॥७६
जीवदया पलिहै नहिं तदा, झूठ वचन वोले है जदा ।
वह असत्य साच ही जाण, जहां जीव के बचि हैं प्राण ॥७७

छन्द नाराच ।

सदीव सत्य भावते अलध्यते न तास को, पएवि वाच-सिद्धि चार नाद होय जासको ।
समृद्धि रिद्धि वृद्धि तीन लोक की लहै इको, त्रिया जु मोक्ष गेह माहि तिष्ठ है सुजायको ॥७८

दोहा

वचन न जाको ठीक कछु, अति लवार मति क्रूर ।
तातें फल अति कटुक सुन, महापाप को भूर ॥७९

अडिल्ल छन्द

नष्ट जीभ वच परतें निंदित मानिए, गर्दभ ऊंट विलाव काक सुर जानिए ।
जड विवेक ते रहित मूकता को धरैं झूठ वचन ते मनुज इते दुख अनुसरैं ॥८०

दोहा

साच झूठ फल है जिसो, तिसो कह्यो भगवान । सत्य कहो झूठहि तजो, इहै सीख मन आन ॥८१

अथ सत्य वचन अतीचार । छन्द चाल

नित झूठ वचन वहु भाषे, अवरनि उपदेश जु आपै ।
परगुप्त वात जो थाही, ताको ते प्रगट कराही ॥८२
पत्री झूठी नित माडे, केलवणी हिय नही छाडे ।
लेखी पुनि माडै झूठो, खतहू लिख है जु अपूठो ॥८३
तासो कर्म जु रूठो, अघ अधिक महा करि तूठो ।
को धरि हैं धरो कढि आई, जासो जो मुकरि सुजाई ॥८४
साक्षी दस पाँच वुलावै, वस झूठो करि ठहरावै ।
इस पाप तणो नहि पारा, कहिए कहुँलो निरधारा ॥८५
दुहुँ पुरुष जुदे वतलावै, तिन मिलती हिए अणावै ।
दुहुँ सुख आकार लखाई, परसो सो प्रगट कराई ॥८६
दूखै उनके परिणाम, अघ-दायक है इक काम ।
लख अतिचार दुई तीन व्रत सत्य तणा परवीन ॥८७

इनको त्यागै जे जीव, शुभ गति लहै अतीव।
ए अतिचार गण भाखे, व्रत सत्य जमे जिन आखे ॥८८
शिवभूति भयो द्विज एक, पापी धर मन अविवेक।
नग पाच सेठ सुत धरिके, पाछे सो गयो मुकर के ॥८९
सत्य घोष प्रगट तसु नाम, नृपतिय झूठा लखि ताम।
जूआ रमि करे चतुराई, तसु तिय तें रत्न मगाई ॥९०
तिह सेठ परीक्षा कारी जिह लिये निज नग टारी।
द्विज मरिकै पन्नग थायो, तत्क्षण असत्य फल पायो ॥९१

अदत्त त्याग अणुव्रत कथन। चौपाई

धरो परायो अरु वीसरो, लेखा में भोलो जो करो।
मही परो नहिं लेहैं सोय, जो अदत्त त्यागी नर होय ॥९२
चोरी प्रगट अदत्ता सर्व, अणुव्रत धारी तजि है भव्य।
लगै व्यापारादिक में दोष, एक देश पलि है शुभ कोष ॥९३

छन्द नाराच

तजेहि द्रव्य पारको सुसनिधि निरंतर, भवन्ति भूमि-नाथ भोगभूमि पाय हैं पर।
लहेवि सर्व बोध सिद्ध कातया सुनैन को, अतीव मूर्ति तासकी सहाय चैन देन को ॥९४

दोहा

जाकी कीरति जगत में, फैले अति विस्तार।
उज्ज्वल शशि किरणा जिसी, जो अदत्त व्रतधार ॥९५
सदा हरें पर द्रव्य को, महापाप मति जोर।
पड्यो रह्यो भोले धर्यो, गहैं मुनिहचै चोर ॥९६

उड़िल्ल छन्द

सदा दरिद्री शोक रोग भयजुत रहै, पाप मूर्ति अति क्षुधा त्रिषा वेदन सहै।
पुत्र कलत्र रु मित्र नही कोउ जा सके, चोरी अर्जित पाप उदै भो तासके ॥९७

दोहा

त्यजन अदत्त सुवरत को, अरु चोरी फल ताहि।
मुनवि गह्यौ व्रत को सुधी, चोरी भाव लजाहि ॥९८

अदत्तादान का अतीचार वर्णन। छन्द चाल

चोरी करने की वात, सिखवावै औरनि घात।
जावो परधन के काज, लावो इस बुधि वलि साज ॥९९
कोऊ चोरी कर ल्यावे, वहु मोली वस्तु दिखावे।
ताको तुच्छ मोल जु देई, वहु धन की वस्तु सु लेई ॥१००

कपडो मीठो अरुवान, लावे बेचें ले आन । तिनको हासिल नहिं देई, नृप आज्ञा एम हनेई ॥१
जो कहु नरपति सुन पावे, तिहि बाध वेग मगवाव ।
घर लूट लेई सब ताको, फल इह आज्ञा हणिवाको ॥२
गज हाथ पसेरी बाट, जाणो इह मान निराट । चौपाई पाई देवाणी, सोई माणी परमाणी ॥३
इनको लखिये उन मान, तुलिहै मपि है बहु वान ।
ओछो दे अधिको लेई, अपनो शुभ ताको देई ॥४
उपजावै बहुते पाप, दुग्गति में लहै सताप । केसर कस्तूरी कपूर, नानाविधि जवर जकूर ॥५
घृत हीग लूण बहुगाज, तदुल गुड खाड समाज ।
इन माही मेल कराही, हियरे अति लोभ धराही ॥६
कपडो बहु मोलो लावे, कोऊ कहै आण गहावें । ताके बदले धरि वैसो, अगिला रग होवें जेसो ॥७
व्रत दान अदत्ता कीजें, पण अतिचार ए लीज ।
तातें सुनिये भवि प्राणी, दुरगति दुखदायक जाणी ॥८
तजिए इनको अब वेग, भवि जीवनि को इह नेग ।
त्यागे सुधरे इहलोक, परभव सुख पावे थोक ॥९

अथ ब्रह्मचर्य अणुव्रत कथन । चौपाई

नारि पराई को सर्वथा, त्याग करें मन वच क्रम यथा ।
निज वयतें लघु देखे ताहि, पुत्री सम सो गिनिए जाहि ॥१०
आप बराबर जोवन धरै, निज भगिनी सम लख परिहरे ।
आप थकी वय अधिकी होय, ताहि मात सम जाण हि जोय ॥११
इम परतिय को गनिहै भव्य, सो सुख सुरनर के लहि सर्व ।
निज वनिता माहिं सतोष, करिये इस विध सुणि शुभ कोष ॥१२
आप व्रती तियको व्रत जवै, दोऊ दिन सील गहै बुध तवे ।
आठें चौदस परवी पाँच, शील व्रत पाले मन साँच ॥१३
भादो मास अठाई पर्व, महा पूज्य दिन लखिये सर्व ।
ब्रह्मचर्य पाले इन माहि, सुर सुख लहियत सशय नाहि ॥१४

अथ शीलकी नव वाडि प्रारम्भ । चौपाई

पुनि व्रत धर इतनी विधि धरे, ताहि शीलव्रत त्रिविध सु परे ।
जेहि वनिता को जूथ महन्त, तहा वास नहिं करिये सत ॥१५
रुचि धर प्रेम न निरखे त्रिया, ताको सफल जनम अरु जिया ।
पडदा के अन्दर तिय ताहि, मधुर वचन भाषे नहिं जाहि ॥१६
पूरब भोग केलि की जीत, तिनहिं न याद करे शुभ मीत ।
लेइ नही आहार गरिष्ठ, तुरत शील को करे जु भ्रष्ट ॥१७
कर शुचितन श्रृंगार बनाय, किये शीलको दोष लगाय ।
जिह पलग मे सोवे नार, सो सेज्या तज बुध व्रतधार ॥१८
मनमथ कथा होय जिहि थान, तह क्षण रहै नहीं मतिमान ।
निज मुखते कवहूँ नहिं कहै, ब्रह्मचर्य व्रत को जो गहै ॥१९

उदर भरो भोजन नहि करे, ताते इन्द्री बहु बल धरे।
ए नव वाडि पालिये जबै, शील शुद्ध व्रत पलिहै तबै ॥२०
इति नववाडि सपूर्णम्

शील चरित्र कथन। सवैया

ब्राह्मी सुन्दरनि आदि देके सोला सती भई शील परभाव लिंगछेद सोतेई भई।
तिन माहे केऊ नृप सोई शिवध्यान लह्यो केऊ मोक्ष जैहैं भूप होय तहाँ ते चई॥
अनन्तमती तु कारीने आदि कैती कहूँ महा कष्ट पाय शील दिठता भई ठई।
शीलते अनन्त सुख लहै कछु संशय नाहि भग भ्रमैं नरक महा पई ॥२१

दोहा

सेठ सुदर्शन आदि दे, शीलतणे परभाव। लहै अनन्ते मोक्ष सुख, कहालो करो बढाव ॥२२

नाराच छन्द

सुनो वि सन्त ब्रह्मचय पाल बांधका इसौ, अतीव रूपवान धाय काम को जिसी।
मनोज्ञ खोजता लहाय पुत्र पौत्र सोभितो, अनेक भूषणादि द्रव्य और पै नही इतो ॥२३
गहै वि दीक्षया लहै विज्ञान को प्रकार ही, अनन्त सुख बोध दर्शनादि बीर्य भासही।
सुमोक्ष सिद्ध थाय काल बीच है अपार सो, सुसिद्ध खोजता मुखावलोक ने नगारसो ॥२४

दोहा

लपट विषयी पुरुषके, निजपर ठीक न होय। दुरगति दुख फल सो लहै, भ्रमिहै भव दधि सोय ॥२५

अडिल्ल छन्द

ह्वै कुरूप दुर्गन्ध निंदि निरधन महा, वेद नपुसक दुर्ग व्याधि कुष्टहि गहा।
अङ्ग विकल अति होय ग्रथिल जिमि भासही, परतिय सग-विपाक लही ह्वै इम सही ॥२६

दोहा

व्रत परवनिता त्यजनको, कथन कह्यो सुखकार।
अरु लम्पट विपयी तणो, भाष्यो सह्व निरधार ॥२७
शील थकी सुर नर विमल, सुख लहि शिवपुर जाहि।
दुरगति दुख भव-भ्रमणको, विषयी लम्पट पाहि। ॥२८

अथ ब्रह्मचर्य अणुव्रत अतीचार। छन्द चाल

परकी जो करै सगाई, बतलावे जोग मिलाई।
अरु व्याह उपाय बतावै, निज व्रतको दोष लगावै ॥२९
विभिचारिणी जँहँ नारी, परिगृहीत नाम उचारी।
जिनको वेश्यादिक कहिये, तिन को सगम नही गहिये ॥३०
हास्यादि कौतूहल कीजै, शीले तव मलिन करीजै।
अपरिगृहीत सुनि नाम, पति परणी है जो वाम ॥३१
तसु महा कुशीला जाणी, जसु सगति करै जु प्राणी।
हास्यादिक वचन सुभाखै, सो शील मलिन अति राखै ॥३२

जे लम्पट विपयी क्रूर, ते पावै भव दुख पूर। अतीचार तीसरो एह, सुनिये अब चौथो जेह ॥३३
क्रीडा अनंग विधि एह, हस्त सुपरसत तिय देह।
विकल्प मन मे ही आने, परतक्ष ते शीलहि भाने ॥३४
इह अतीचार चौथो ही, बुध करें न कबहू यो ही।
पंचम भनिये अतीचार, सुपने मे मदन विकार ॥३५
उपजै तिय सेवन काम, विकलपता अति दुख धाम।
औपध के पाक बनावे, बहु विध रस धातु मिलावै ॥३६
अति विकल होय निज तियको, सेवे हरपावे जियको।
बुध जन इह रीति न जोग, पण अतीचार इस भोग ॥३७

दोहा

इनही टाल व्रत शीलको, पालो मन वच काय।
इह भवतै सुर पद लहै, फिरि नृप ह्वै शिव जाय ॥३८

अथ परिग्रह प्रमाण अणुव्रत कथन। चौपाई

क्षेत्र वास्तु आदिक दस जाण, परिग्रह तणो करें परिमाण।
इनको दोप लगावे नही, वहै देश व्रत पंचम कही ॥३९

छन्द नाराच

करोति मूढना प्रमाण कर्ण सेवना विपै, त्रिलोक वेदज्ञान पाय श्री जिनेश यौं अपै।
भवन्ति सौख्य सागरो अनन्त शक्ति कौ गहै, त्रिलोक वल्लभो सदा भवन्तरे सिव तहे ॥४०

दोहा

मन विकल्प सरै अधिक, विभव परिग्रह माहि। लहै नही अधके उदै, फल नरकादि लहाहि ॥४१

अडिल्ल

जन्म जरा पुनि मरण सदा दुखकौं सहै, बहु दूपणको थान रोग अतिही लहै।
भ्रमै जगतके माहि कुगति दुखमे परै, विषयनि मूर्च्छा माहि न संवर जे करै ॥४२

दोहा

व्रत परिग्रह प्रमाण नर, कीये लहै फल सार। मनु मुकलावै ठीक तजि, दुख भुगतै नहिं पार ॥४३
याते व्रत धरि भव्य जे, मन विकल्प विस्तार। ताहि तजै सुख भोगवे, यामे फेर न सार ॥४४
जे सन्तोप न आदरै, ते भव भ्रमै सदीव। दुख-कर याको जानिकै, त्यागै उत्तम जीव ॥४५
दोष लगै या समझ कै, अतीचार पणि जाणि। तिनकौ वरणन भेद कछु, आगै कहो बखाणि ॥४६

अथ परिग्रह प्रमाणका अतीचार वर्णन। चौपाई

क्षेत्र कहावे धरती माहि, हल खैडन की जो विधि आहि।
वास्तु कहावे रहवातणा, मन्दिर हाट नोहोरा तणा ॥४७
हिरण्य रूपाको परमाण, करै जितो राखै बुधिमाण।
सुवरण सोनो ही जाणिये, ताकी मरज्यादा ठाणिये ॥४८
धन महिषी घोटक अरु गाय, हस्ती वैल ऊँट न थाय।
इत्यादिक चौपद जे सही, तिन सिगरे की सख्या कही ॥४९

सालि मूंग गोधूम अर चिणा, नाज विविध के जे है घणा।
इन सबकी मरज्यादा गही, बहुत जतन तें राखै सही ॥५०
खरच जितो घर माही होय, तितनो जान खरीदे सोय।
विणज निमित्त जेतो परमाण, जीव पडै नही वैसे जाण ॥५१
बहु उपाय करिकै राखि है, ऐसे जिनवाणी भाषि है।
बरस एकमे बीकै नही, दूनो बरस आइ है सही ॥५२
मरयादा माफिक थी जितो, अधिक लेय नहिं राखै तितो।
दुपद परिग्रहमे एक है, वनिता दासी दासहू लहै ॥५३
कुप्य परिग्रहमे ये जाण, चावा चन्दन अत्तर बखाण।
रेसम सूत ऊनका जिता, कपडा होय कहा है तिता ॥५४
तिनहूं की मरज्यादा गहै, यो नायक श्री जिनवर कहै।
रुपया भूषण रतन भडार, बहुरि सोनइया अरु दीनार ॥५५
इनकी मरयादा करि लेहु, हडवाई वासण पुनि एहु।
बहु विधि तणा किराणा भणी, अवर खाड गुड मिश्री तणी ॥५६
मरयादा ले सो निरवहै, भग कीये दूषण को लहै।
मन बच काया पाले जेह, भव भव सुख पावे नर तेह ॥५७

सवैया ३१

वरत करैया ग्यारा प्रतिमा धरैया जे जे दोष के टरैया मनमाही ऐसे आनिकै,
जैसो है जिह थान जोग तैसो भोग उपभोग चरम तिजोग माहि कह्यो है बखानिकै।
आदरेति तोही बाकी सहै छाडितेह ग्रथसख्या व्रत एह श्रावक को जानिकै,
तद्भव सुरथाय राज ऋद्धि को लहाय पावै शिवथान दुपदानि भव भानिकै ॥५८

मरहटा छन्द

जो परिग्रह राखै दोष न भाखै चित अभिलाषै हीन,
विकल्प मुकुलावे विषय वढावे आठ न पावै तीन।
बहु पाप उपावै जो मन भावै आवै वात कहीन,
मूर्च्छा को धारी हीणाचारी नरक लहै सुख छीन ॥५९

छन्दभुजग प्रयात

कह्यो मूर्च्छना दोप भारी अवपारी, लहै श्वभ्र ससे न जानें लगारा।
तजे सर्वथा मोक्ष सौख्य लहती, यहै जान भव्या न याको गहन्ती ॥६०

इति परिग्रह परिमाण पचम अणुव्रत सम्पूण।

अथ प्रथम दिग्गुणव्रत कथन लिख्यते। चौपाई

चार दिशा विदिशा पुनि चार, ऊर्ध्व अधो दुहूं मिलि दस धार।
दिग व्रत पालन नर परवीन, मरयादा लघं न कदी न ॥६१
जिते कोसलो फिरियो चहै, दिसा विदिसा की सख्या गहै।
अधिक लोभ को कारिज वणै, व्रत घर मरयादा नहि हणै ॥६२

जिम मरयादा की आखदी, तहँ लो जाय काम वसि पडी ।
घरि वैठा निति धारै ठीक, पाले कवहु न चले अलीक ॥६३

दोहा

दिग्व्रत को पाले थकी, उपजे पुण्य अपार । सुरगादिक फल भोगवै, यामे फेर न सार ॥६४
मरयादा लीये बिना फल उत्कृष्ट न होय । हमे पले नहिं इम कहै, वहै विकल मति जोय ॥६५

अब दिग्व्रत के अतिचार पाच लिख्यते । छन्द चाल

मन्दिर निज पर की आड, चडियो पुनि कोई पहाड ।
ऊरध सख्या सो कहिये, टालै ते दोपहि महिये ॥६५
तहखाना कूप रु वाय, गिरि गुफा माहिं जो जाय ।
इह अधो भूमि मरयाद, टाले दूपण परमाद ॥६६
दिसि विदिसि सोह जे लीनी, तिरछो चलवै मति दीनि ।
सो तिरयग गमन कहाई, अतीचार तृतीय इह थाई ॥६७
निज खेत भूमि जो थाय, सीमातें अधिक वधाय ।
सो खेत वृद्धि तुम जाणो, चौथो अतीचार बखाणो ॥६८
जिह वस्तु तणो परमाण प्रथम ही कीयो जो जाण ।
तिहिको वीसरि सो जाई, विस्मृति जु अतीचार कहाई ॥६९

इति दिग्गुणव्रत सम्पूण ।

अथ देशव्रत लिख्यते । चौपाई

दिशि विदिशा के जे जे देश, जिह पुरलौं जो करिय प्रवेश ।
हरै नही मरयादा कोई, तिनको पलै देशव्रत सोई ॥७०
मन सैन्य वारण के हेत, मन वच कर मरयादा लेत ।
आप जहा दिसि कबहु न जाय, तहातणो वडती नही खाय ॥७१

दोहा

सो लहिये बिन वरत को, नेम न मूल कहाय ।
यातें गहिये आखडी, ज्यो फल विस्तर थाय ॥७२

अथ देशव्रत अतीचार पांच लिख्यते । छन्दचाल

कीयो जे देश प्रमाण, तिह पार थकी सास जाण ।
कोई नही वस्तु मगावै, कबहूँ न लोभ वढावै ॥७३
जहलों मरयादा ठानी, भाजै नही उत्तम प्राणी ।
भाजै मरयादा जास, अतीचार कहावै तास ॥७४
मरयादा वारे कोई, नरको न बुलावै जोई ।
अरु आप नही वतलावै, वतलाए दोष लगावै ॥७५
निजरूपहि सो हँसिवाई, काहू जो देइ दिखाई ।
इह अतीचार चोथो ही, जिनदेव बखानो यो ही ॥७६

मरयाद जिकी जिहिं धारी, तिह वारे करतें डारी।
ककरी कपडो कछु और, पाहृण लकडी तिहिं ठौर ॥७७
इत्यादिक वस्तु बहु नाम, वरनन कहाँ लो ताम।
ऐसी मति समझो कोई, देसांतर ठीक दुहोई ॥७८
चैत्यालय वा घर माही, अथवा देसांतर ताही।
धरिहै जिम जो मरयाद, पालै तिम तजि परमाद ॥७९
इह देश वरत तुम जाणो, दूजो गुणव्रत परमाणो।
अब अनरथ दडज तीजो, बहु विधि तसु कथन सुणीजो ॥८०

इति द्वितीय गुणव्रत।

अथ अनर्थ दंड तृतीय गुणव्रत कथन। चौपाई

अनरथ दड पच परकार, प्रथम पाप-उपदेश असार।
हिंसादान दूसरो जाण, तीजो खोटो पाप बखाण ॥८१
तुरिय कुशास्त्र कहै मन लाय, पचम प्रमाद चर्या थाय।
निज घर कारज विनु ते और, तिनके पाप तणी जे ठौर ॥८२
पसू विणज करवावै जाय, अरु तिह बीच दलाली खाय।
हिंसा को आरभ जु होय, ताको उपदेसै जु कोय ॥८३
मीठो लूण तेल घृत नाज, मादिक वस्तु मोम विनु काज।
धोलि धाहम्या हरडे लाख, आलकमूभा को अभिलाख ॥८४
नील हींग आफू मोहरो, भाग तमाखू सावण खरो।
तिल दाणासिण लोह असार, इन उपदेश देहिं अविचार ॥८५
कूवा तलाब हवेली बाय, वाडी बाग कराय उपाय।
कपडा वेगि धवावेहु मीत, निज ग्रह कारज राखहु चीत ॥८६
परधन हरण वणी जे बात, सिखवावै बहुतेरी घात।
इतने पाप तणें उपदेश, कीये होय दुरगति परवेश ॥८७
चाकी ऊखल मूसल जिते, कुसी कुदाल फाहुडो तिते।
तवो कडाही अरु दातलो, ए मागा देवो नही भलो ॥८८
धनुप कृपाण तीर तरवार, जम घर छुरी कुहाड्या टार।
सिल लोढो दातण धोवणो, वाण जेवडा वेडी गणो ॥८९
रथ गाडी वाहण अधिकार, अगनि ऊपलादिक निरधार।
इत्यादिक कारण जे पाप, मागें दिये वढै सताप ॥९०
याते व्रत धारी जे जीव, माग्या कवहु न देय सदीव।
द्वेष भाव करि वैर लखाय, वव वँधण मारण चित थाय ॥९१
परतिय देखि रूप अधिकार, ऐसो चितवन अति दुखकार।
खोटे शास्त्र वखाणे जदा, सुणत दोप रागी ह्वै तदा ॥९२

हिंसा अरु आरभ वढाय, मिथ्याभाव उपरि चित थाग।
जामे एते कहै वखाण, सो कुशास्त्र अघकारण जाण ॥९३
विनही कारण गमन कराय, जल-क्रीडा औरनि ले जाय।
वाले अगनि काम विनु सोय, छेदै तरु अति उद्धत होय ॥९४
मेला देखण चलिये यार, असवारी यह खडी तयार।
गोठि करै निज खरचै दाम, ए सव जाणि पाप के काम ॥९५
वहुजन तणो मन लावै भलो, होला डेहगी खावै चलो।
सिरा वाजरा अर जुवारि, फलही भाजी सवनि पचारि ॥९६
चलै सीधी लैजे हैं खेत, वस्त खवावन को मन हेत।
अनरथ दड न जाणैं भेद, पाप उपाय लहै वहु खेद ॥९७
सुवो कवूतर मैना जाण, तूती वुलवुल अघ की खाण।
पखिया और जनावर पालि, राखै वन्दि पीजरै घालि ॥९८
इनि पाले को पाप महत, अनरथ दड जाणिये सत।
कूकर वादर हिरण विलाव, मीढादिक रखिये घरि चाव ॥९९
पालि खिलावे हरखि धरेय, अनरथ दड पाप फल खेय।
मन हुलसे चित्राम कराय, त्रस जीवन सूरत मडवाय ॥१००
हस्ती घोटक मीडुक मोर, हिरण चौपद पखी और।
कपडा लकडी माटी तणा, पाखाणादिक करिहै घणा ॥१
जीव मिठाई करि आकार, करै विविध केहीण गवार।
तिणिको मोल लेई जण घणा, वांटै घर घर मे लाहणा ॥२
इह प्रमाद चर्या विधि कही, अनरथ दंड पाप की मही।
जो न लगावै इनको दोष, सो धरमी अघ करिहै सोप ॥३

दोहा

जो इस व्रत को पालि है, मन वच काय सुजाण। सो निहचै सुर पद लहै, यामे फेर न जाण ॥४
विनु कारज ही सवनि को, दोष लगावै कोय। जाके अघ के कथन को, कवि समरथ नहिं होय ॥५
अघतें नरकादिक लहै, इह जानो तहकीक। अतीचार या वरत को, सुनो पाँच यह ठीक ॥६

छन्द चाल। अथ अतीचार अनरथ दड का लिख्यते

अती हास कोतूहल कार, मन माही सोच विचार।
इह अतीचार एक जानी, जिन आगम कह्यो वखानी ॥७
क्रीडा उपजावन काम, वहु कला करै दुख धाम।
नृत्यादिक देखण चाव, वादीगर लखि येह दाव ॥८
मुखतें वहु गाली देई, वच ज्यो त्यो ही भाखेई।
इह अतीचार भणि तीजो, वुधि त्यागहु ढील न कीजो ॥९
मनमे चिंतै को काम, इतनो करस्यो अभिराम।
तातें अधिको जु कराई, दूपण इह चौथो थाई ॥१०

जेती सामग्री भोग, अथवा उपभोग नियोग।
पर वरजो मोल यहाँ ही, निज अधिको मोल चढाही ॥११
लोलुपता अति ही ठानैं, हठ करिस्यो अपनो आने।
इह पचम दोष सुठीक, यामे कछु नाहिं अलीक ॥१२
भणिया ए पण अतीचार, वुधजन मन धरि सुविचार।
निति ही इनको जो टाले, मन वच क्रम व्रत सो पाले ॥१३
इह कथन सबै ही भाख्यो जिन वाणी माफिक आख्यो।
जो परम विवेकी जीव, इनको करि जतन सदीव ॥१४
जे अनरथ दण्ड लगावे, ते अघको पार न पावै।
अघ महा जगतको दाई, भव भावर अन्त न थाई ॥१५
वच भापें लागो पाप, ऐसे हु न करेहु अलाप।
मन बच तन व्रत जे पाले, ते सुरगादिक सुख भाले ॥१६
अनुक्रमि शिवथानक पावै, कबहूँ नहिं भवमे आवै।
सुख सिद्ध तणा जु अनन्त, भुगतै जो परम महन्त ॥१७

दोहा

गुणव्रत लखि इह तीसरो, अनरथ दण्ड सुजाणि।
कथन कह्यो सक्षेपतैं, किशनसिंह मनि आणि ॥१८

इति गुणव्रत कथन सम्पूर्ण।

अथ प्रथम सामायिक शिक्षाव्रत लिख्यते। चौपाई

सब जीवनिमे समता भाव, सयममे शुभ भावन चाव।
आरत्ति रुद्र ध्यान विहूँ त्याग, सामायिक व्रत जुत अनुराग ॥१९
प्राणी सकल थकी मुझ क्षाति, वेऊ क्षम मुझ परि करि साति।
मेरो बैर नही उन परी, वे मुझ तैं कुछ दोप न करी ॥२०
इत्यादिक बच करि वि उचार, जो नर सामायिकको धार।
परजिकासन गाढो तथा, शक्ति प्रमाण थापि है यथा ॥२१
पूर्वाह्निक मध्याह्निक चाल, अपराह्निक ए तीनो काल।
मरयादा जेती उच्चरै, तेती वार पाठ सो करै ॥२२
दुहुँ आसनके दोषज जिते, सामायक जुत तजि है तिते।
जो विशेप सुणि वाको चाव, ग्रन्थ श्रावकाचार लखाव ॥२३
हूँ एकाकी अवर न कोई, जुद्ध वुद्ध अविचल मय जोय।
करमाते वेढ्यो न उ जाणि, मैं न्यारो तिहुँकाल वपाणि ॥२४
इस ससारै मुझको नाहिं मैं न किसीको इह जगमाहिं।
वन्ध्यो अनादि करमते सही, निहवै वन्धन मेरे नही ॥२५
राग दोप करि मेलो जदा, तिन दुहुइनतें मिलन न कदा।
देह वसें तो रहत सरीर, चेतन शक्ति सदा मुझ तीर ॥२६

(३) पं० किशनसिंहजीने श्रावकके बारह व्रतों और ग्यारह प्रतिमाओंके वर्णनके बाद जल गालन, प्रासुक जल-विधि और रात्रिभोजन-त्याग आदिका वर्णन किया है। पं० दौलतरामजीको यह वर्णन कुछ व्युत्क्रम-सा प्रतीत हुआ हो और इसीलिए उन्होंने श्रावकके बारह व्रतोंका वर्णन करनेके पूर्व ही उक्त वर्णन सर्वप्रथम करना उचित समझा हो।

जो कुछ भी हो, फिर भी दौलतरामजीकी वर्णन शैली बहुत ही भावपूर्ण, सरल और रोचक है। उन्होंने अहिंसादि प्रत्येक अणुव्रतका वर्णन विधि और निषेध-मुखसे किया है। जैसे अहिंसाणु-व्रतका वर्णन करते हुए पहिले अहिंसा या दया करुणाकी महत्ता ६७ छन्दोंमें बताकर पुन हिंसा पापके दोषोंका वर्णन २४ छन्दोंमें किया है। (देखो पृ० ५६३-२६८)

इसी प्रकार सत्य-असत्य, चौर्य-अचौर्य, ब्रह्म-अब्रह्म और परिग्रह-अपरिग्रहके गुण-दोषोंका वर्णन भी खूब विस्तारसे किया है।

उपसंहार

यद्यपि तीनों ही संग्रहोंमें ५३ क्रियाओंका वर्णन है, तथापि पदम कविने पूर्व परम्पराके अनुसार उत्थानिकामें श्रेणिकके प्रश्न करनेपर गौतम-गणधरके द्वारा श्रावकके व्रतोंका वर्णन कराया है और संस्कृतमें रचित श्रावकाचारोंकी दुरूहताके कारण सर्वसाधारणके लाभार्थ उसे अपनी मातृ-भाषामें उन्हें रचनेकी प्रेरणा हुई है। यही कारण है कि उन्होंने अपनी रचनाको 'श्रावकाचार'के नामसे ही उल्लिखित किया है। पं० किशनसिंहजी और पं० दौलतरामजीने यत संस्कृत किया-कोषके आधारपर अपनी रचनाएँ की हैं अत उन्होंने अपनी रचनाओंका नाम 'क्रियाकोष' देना ही उचित समझा है। तीनों रचनाओं की अपनी अपनी स्वतन्त्र विशेषता है, अत तीनों ही पढने, मनन करने और तदनुकूल आचरण करनेके योग्य हैं।

●

चिंता आठों मद आरम्भ, चितवन मदन कषाय रु दंभ ।
इनिकौं जिस विरिया परिहार, कर यो सुबुध सामायिक धार ॥२७
सीत वसन वरखा पुनि वात, दसादिक उपजत उतपात ।
जिनवर वचन विषै अतिधीर, सहिहै जिके महा वरवीर ॥२८
पूर्वाचार्यनि के अनुसार, जैसु विचक्षन करई विचार ।
तीन मुहूरत दो इक जाण, उत्तम मध्यम जघन्य वखाण ॥२९
जैसी शक्ति होय जिहि पास, करिए ह्वै भव-भ्रमण विनास ।
भव्य जीव इहि विधि जै करै, तिनकी महिमा कविको कर ॥३०

दोहा

इह व्रतपाले जे सुनर, मन वच क्रम धरि ठीक । सुरनर के सुख भुजकर, शिव पावै तहलोक ॥३१
जे कुमती जिन नाम को, लैन करै परमाद । सो दुरगति जैहै सही, लहि है दुख विपवाद ॥३२

अथ सामायिक के अतीचार लिख्यते । छंद चाल

मन वचन क्रम के ए जोग, परमादी होय प्रयोग ।
परिणाम दुष्टता भारी, राखे नही ठीक लगारी ॥३३
सामायिक पाठ करत, वतलावै परसौं मत । बोलै फुनि वारवार, जानो य दूजो अतीचार ॥३४
सामायिक करत अनादर, मनमें न उच्छाह धरै पर ।
विनु लगन भावहू पोट, किनि सिर पर दीजिय मोट ॥३५
आसण को करै चलाचल, तनकु जु हलावै पल पल ।
फेरै मुख चहु दिसि भारी, तिजहु अतीचार विचारी ॥३६
सामायिक पाठ करतो, चितमाहे एम धरतो ।
मैं इह पाठ पढ्यो अक नाही, पुनि-पुनि छण वीसरि जाही ॥३७
ए अतीचार पण भाखे, जिन वाणी में जिम आखे ।
जे भवि सामायिक धारी, प्रथम ही है दोष निवारी ॥३८
तिहु काल करे सामयिक, सव जीवनि कौ सुखदायक ।
सामायिक करता प्रानी, उपचार मुनी-सम जानी ॥३९
सामायिक दृगजुत करि है, उत्कृष्ट देव पद धरि है ।
अनुक्रम पावै निरवाण, यामैं कछु फेर न जाण ॥४०
मुनि द्रव्यलिंग को धारी, सामायिक वल अनुसारी ।
कहा लौ करिये जु वडाई, नवग्रीवा लग सो जाई ॥४१
यातैं भविजन तिहु काल, धरिये सामायिक चाल ।
जातैं फल पावै मोटो, जसि जाय करम अति खोटो ॥४२

अथ द्वितीय शिक्षाव्रत प्रोषधोपवास लिख्यते । चौपाई

सामायिक व्रत कर्यो वखानि, अव प्रोषध व्रत की सुनि वानि ।
एक मास में परव जु चार, दुइ आठैं दुइ चौदस धार ॥४३
इन मे प्रोषध विधि विस्तरै, ते वसु कर्म निर्जरा करै ।
वे जिनधर्म विषै अतिलीन, वे श्रावक आचार प्रवीन ॥४४

जेती सामग्री भोग, अथवा उपभोग नियोग ।
पर वरजो मोल यहाँ ही, निज अधिको मोल चढाही ॥११
लोलुपता अति ही ठानै, हठ करिस्यो अपनो आने ।
इह पचम दोष सुठीक, यामे कछु नाहिं अलीक ॥१२
भणिया ए पण अतीचार, वुधजन मन धरि सुविचार ।
निति ही इनको जो टाले, मन वच क्रम व्रत सो पाले ॥१३
इह कथन सबै ही भाख्यो जिन वाणी माफिक आख्यो ।
जो परम विवेकी जीव, इनको करि जतन सदीव ॥१४
जे अनरथ दण्ड लगावे, ते अघको पार न पावै ।
अघ महा जगतको दाई, भव भावर अन्त न थाई ॥१५
बच भाषै लागो पाप, ऐसे हु न करेहु अलाप ।
मन वच तन व्रत जे पालै, ते सुरगादिक सुख भालै ॥१६
अनुक्रमि शिवथानक पावै, कबहूँ नहिं भवमे आवै ।
सुख सिद्ध तणा जु अनन्त, भुगतै जो परम महन्त ॥१७

दोहा

गुणव्रत लखि इह तीसरो, अनरथ दण्ड सुजाणि ।
कथन कह्यो सक्षेपतैं, किशनसिंह मनि आणि ॥१८

इति गुणव्रत कथन सम्पूर्ण ।

अथ प्रथम सामायिक शिक्षाव्रत लिख्यते । चौपाई

सव जीवनिमे समता भाव, सयममे शुभ भावन चाव ।
आरति रुद्र ध्यान विहूँ त्याग, सामायिक व्रत जुत अनुराग ॥१९
प्राणी सकल थकी मुझ क्षाति, वेऊ क्षम मुझ परि करि साति ।
मेरो वैर नही उन परी, वै मुझ तैं कुछ दोष न करी ॥२०
इत्यादिक बच करि वि उचार, जो नर सामायिकको धार ।
पर्जिकासन गाढो तथा, शक्ति प्रमाण थापि है यथा ॥२१
पूर्वाह्निक मध्याह्निक चाल, अपराह्निक ए तीनो काल ।
मरयादा जेती उच्चरै, तेती वार पाठ सो करै ॥२२
दुहुँ आसनके दोषज जिते, सामायक जुत तजि है तिते ।
जो विशेष सुणि वाको चाव, ग्रन्थ श्रावकाचार लखाव ॥२३
हूँ एकाकी अवर न कोई, जुद्ध वुद्ध अविचल मय जोय ।
करमातें वेढयो न उ जाणि, मैं न्यारो तिहूँकाल वषाणि ॥२४
इस ससारै मुझको नाहिं, मैं न किसीको इह जगमाहिं ।
वन्ध्यो अनादि करमते सही, निहवै वन्धन मेरे नही ॥२५
राग दोष करि मेलो जदा, तिन दुहुइनतें मिलन न कदा ।
देह वसें तो रहत सरीर, चेतन शक्ति सदा मुझ तीर ॥२६

चिंता आठों मद आरम्भ, चितवन मदन कपाय रु दभ।
इनिकों जिस विरिया परिहार, कर यो सुवुध सामायिक धार ॥२७
सीत वसन वरषा पुनि वात, दसादिक उपजत उतपात।
जिनवर वचन विषै अतिधीर, महिहै जिके महा वरवीर ॥२८
पूर्वाचायनि के अनुसार, जैसु विचक्षन करई विचार।
तीन मुहूरत दो इक जाण, उत्तम मध्यम जघन्य वखाण ॥२९
जैसी शक्ति होय जिहिं पास, करिए ह्वै भव-भ्रमण विनास।
भव्य जीव इहि विधि जै करै, तिनकी महिमा कविको करै ॥३०

दोहा

इह व्रतपालै जे सुनर, मन वच क्रम धरि ठोक। सुरनर के सुख भुजकर शिव पावै तहतीक ॥३१
जे कुमती जिन नाम को लैन करै परमाद। सो दुरगति जैहै सही, लहि है दुख विषवाद ॥३२

अथ सामायिक के अतीचार लिख्यते। छद चाल

मन वचन क्रम के ए जोग, परमादी ह्रोय पयोग।
परिणाम दुष्टता भारी, राखे नही ठीक लगारी ॥३३
सामायिक पाठ करत, वतलावै परसौ मत्त। वोलै फुनि वारवार, जानो य दूजो अतीचार ॥३४
सामायिक करत अनादर, मनमैं न उच्छाह धरै पर।
विनु लगन भावहू पोट, किनि सिर पर दीजिय मोट ॥३५
आसण को करै चलाचल, तनकु जु हलावै पल पल।
फैरै मुख चहु दिसि भारी, तिजहु अतीचार विचारी ॥३६
सामायिक पाठ करतो, चितमाहे एम धरतो।
मैं इह पाठ पढ्यो अक नाही, पुनि-पुनि छण वीसरि जाही ॥३७
ए अतीचार पण भाखे, जिन वाणी मै जिम आखे।
जे भवि सामायिक धारी, प्रथम ही है दोष निवारी ॥३८
तिहु काल करै सामयिक, सब जीवनि कौ सुखदायक।
सामायिक करता प्रानी, उपचार मुनी-सम जानी ॥३९
सामायिक दृगजुत करि है, उत्कृष्ट देव पद धरि है।
अनुक्रम पावै निरवाण, यामैं कछु फेर न जाण ॥४०
मुनि द्रव्यलिंग को धारी, सामायिक वल अनुसारी।
कहा लौ करियै जु वडाई, नवग्रीवा लग सो जाई ॥४१
यातैं भविजन तिहु काल, धरिये सामायिक चाल।
जातैं फल पावै मोटो, जसि जाय करम अति खोटो ॥४२

अथ द्वितीय शिक्षाव्रत प्रोषधोपवास लिख्यते। चौपाई

सामायिक व्रत कर्यो वखानि, अव प्रोषध व्रत की सुनि वानि।
एक मास मे परव जु चार, दुइ आठे दुइ चौदस धार ॥४३
इन मे प्रोषध विधि विस्तरै, ते वसु कर्म निजरा करैं।
वै जिनधर्म विषैं अतिलीन, वे श्रावक आचार प्रवीन ॥४४

अब प्रोपध की विधि सुनि लेह्, भाख्यो जिन आगम मे जेह् ।
सातें तेरसि के दिन जानि, जिनश्रुत गुरु पूजा को ठानि ।।४५
पूजा विधि करि श्रावक सोई, भोजन वेला मुनि अवलोई ।
जिन मन्दिर ते तब निज गेह, एक ठाम अण पानी लेह ।।४६
मध्याह्नक समये को वार, करे प्रतिज्ञा सुविधि विचार ।
षोडस पहर लेह् मरयाद, चौविहार छोड मरयाद ।।४७
खादि स्वाद लेह् अरु पेह्, अतीचार ते सबहि तजेय ।
टट्टपट्टी धोवति विधिवत लेह, और वस्त्र तन सो तज देह ।।४८
स्नानादि भूषण परिहरै, अजन तिलक व्रती नहि करै ।
जिन मदिर उपवन बन ठाहि, अथवा भूमि मसानहि जाहि ।।४९
षोडस जाम ध्यान जो धरै, धरम कथाजुत तह् अनुसरै ।
पच पाप मन वच क्रम तजै, श्री जिन आज्ञा हिरदे भजै ।।५०
धरम-कथा गुरु मुखतें सुनै, आप कहै निज आतम मुनै ।
निद्रा अल्प पाछिली रात, ह्वै नौमी पून्यौ परभात ।।५१
मरयादा पूर्वक गुणधार, जिनमन्दिर आवै निज द्वार ।
द्वारापेषण परि चित धार, खडो रहै निज घरके बार ।।५२
पात्रदान दे अति हरषाई, एकाभुक्त करै सुखदाई ।
पारणदिन पिछली छै-जाम, च्यारु अहार तजे अभिराम ।।५३
इह उत्कृष्ट कह्यो उपवास, करे कर्मगण को अतिनाश ।
सुर-सुख लहि अनुक्रम शिव लहै, सत्यवाइक इह जिनवर कहै ।।५४
कहूँ मध्यम उपवास विचार, षट्कर्मोपदेश अनुसार ।
प्रथम दिवस एकान्त करेय, घरी दोय दिनतें जल लेय ।।५५
जिनमन्दिर अथवा निज गेह, पोषह् द्वादश पहर धरेय ।
धर्मध्यान मे बारा जाम, गमि है घर के तजि सब काम ।।५६
जाविधि दिवस धारणै जानि, सोही दिन पारणै बखान ।
तीन दिवस लो पालै शील, सो सुर के सुख पावे लील ।।५७
जघन्य वास भवि विधि सो करौ, प्रथम दिवस इह सख्या धरौ ।
पछिली दिवस घडी दो रहै, ता पीछे पाणी नहिं गहै ।।५८
निशि को शील व्रत पालिये, प्रात समय पोषो ही धारिये ।
आठ पहर ताकी मरयाद, धरम ध्यान जुत तजि परमाद ।।५९
दिवस पारणे निशि जल तजै वासर तीन शील व्रत भजै ।
प्रोषध तो उत्कृष्टहि जानि, मध्यम जघन उपवास वखानि ।।६०
त्रिविधि वासको जो निरवहै, सो प्राणी सुर के सुख लहै ।
अव याको जो है अतीचार, कहूँ जिनागम जे निरधार ।।६१

अथ प्रोषधोपवास अतीचार । छन्द चाल

पोसो धरिहै जिहि भूपरि, देखे नहिं ताहि नजर भरि ।
इह अतीचार इक जानी, दूजे को सुनो वखानी ॥६२
जेती पोषह की ठाम, प्रतिलेखै नाहि ताम ।
दूषण लागे है जाको, मुनि अतिचारती जाको ॥६३
पोषो धरणे की वार, मोचै न मल-मूत्र विकार ।
मरजादा विन सीं डारे, सथारो जो विसतारे ॥६४
वैठ उठै तजि ठामे, तीजे दूषण को पामे । पोसो धरता मन माही, उच्छवको धारें नाही ॥६५
विनु आदरही सो ठानैं, मरज्यादा मन मे आनैं ।
चौथो इह है अतीचार, अव पचम सुनि निरधार ॥६६
पढि है जो पाठ प्रमाण, ठीक न ताको कछु जाण ।
इह पाठ पढ्यो इक नाही, अव पढिहो एम कहा ही ॥६७
ए अतीचार भणि पच, भाषे जिन आगम मच ।
पोसो जो भविजन धरिहै, इनको टालो सो करिहै ॥६८
फल लहैं यथारथ सोई, यामे कछु फेर न जाई ।
प्रोषध व्रत की यह लीक, माफिक जिन आगम ठीक ॥६९
अरु सकलकीर्ति कृत सार, ग्रन्थहु श्रावक आचार ।
तामाहै भाख्यो ऐसे, सुनिये ज्ञाता विधि जैसे ॥७०
उपवास दिवस तजि वीर, छान्यो सचित्त जो नीर ।
लेते दूषण वहु थाई, उपवास वृथा सो जाई ॥७१
पीवे सो प्रासुक करिकै, दुतियो जु द्रव्य मघि धरिकै ।
वैहू विरथा उपवास, लेनो नहिं भविजन नास ॥७२
अरु सकति हीन जो थाई, जलते तन हू थिरताई ।
तौ अधिक उसन इम वीर, विन हु कम किये जो नीर ॥७३
अन्नादिक भाजन केरो, दूषण नहिं लागै अनेरो ।
ऐसो आवै जे पाणी, ताकी विधि एम वखाणी ॥७४
उपवास आठमो वाँटो, वहि है इम जाणि निराटो ।
इनमे आछी विधि जाणी, करिये सो भविजन प्राणी ॥७५
सशय मन इहै न कीजे, प्रोषध मे कवहुँ न लीजै ।
पोषह विन जो उपवासे, तामे ऐसी विधि भासे ॥७६
उत्तम फलको जे चाहै, ते इह विधि नेम निवाहै ।
उपवास दिवस मे नीर, सकटहू मे तजि वीर ॥७७
अव सुनहु कथन इक नीको, अति सुख करि व्रत धरि जीको ।
एकान्त दिवस की साझ, धरिहु तिय दरव जल भाझ ॥७८
प्रासुक करि पीवै नीर, तामै, अति दोष गहीर ।
एकासण जव सु कराहि, जल असन लेई एक ठाहि ॥७९

जिन आगम की इह रीत, उपरान्त चलण विपरीत।
जल लेन साक्ष ठहरायो, सबही मनि यो ही भायो ॥८०
तो दूजो दरब मिलाई, लैनो नहिं योग्य कहाही।
ताको दूषण इह जानो, भोजन दूजा जिम छानो ॥८१
भोजन जिहि बिरियां कीजे, पानी तब उसन धरीजे।
वै प्रासुक पानी लीजे, नही शक्ति जानि तजि दीजे ॥८२
कुमति ढुंढयादिक पापी, जिन मत ते उलटी थापी।
हाडी को धोवण लेई, चावल धोवै जल लेई ॥८३
तिनको प्रासुक जल भाखै, ले जाय साझ को राखै।
एक तो जल काचौ जानी, अन्नादिक मिलि तसु आनी ॥८४
तामै घटिका दोय माही, प्राणी निगोदिया थाही।
ताके अघको नहिं पार, मिथ्यामत भाव विकार ॥८५

उक्त च गाथा—अन्न जल किंचि ठिई, पच्चक्खाण न भुजए भिक्खू।
घडी दोय अतरीया, णिगोइया हुंति बहु जीवा ॥८६

दोहा

जो पोसह विधि आदरै, ते सुख पावै धीर। प्रमाद सेवै ते मुगध, किम लहिहै भवतीर ॥८७

इति प्रोषधोपवास त्रिविध वा सामान्य वर्णन सम्पूर्ण ॥

०

अथ तृतीय भोगोपभोग शिक्षाव्रत कथन लिख्यते।

चौपाई

व्रत भोगोपभोग जे धरैं, दोय प्रकार आखडी करे।
जिम मरयाद मरण परयन्त, नियम सकति माफिक धरि सन्त ॥८८
अन्न पान आदिक तबोल, अजन तिलक कुकुमा रोल।
अतर अरगका तेल फुलेल, ते सहु वस्तु भोग के खेल ॥८९
एक बार ही आवे काम, बहुरि न दीसै ताको नाम।
ते सब भोग वस्तु जानिये, ग्रन्थ कथन लखि इम मानिये ॥९०
वस्त्र सकल पहिरन के जिते, निज घरमैं आभूषण तिते।
रथ वाहन डोली सुख पाल, वृषभकूभ हय गय सुविसाल ॥९१
वनिता अरु सेज्या को साज, भाजन आदिक वस्तु समाज।
बार बार उपभोगवि जेह, सो उपभोग नही सदेह ॥९२
तिन दोन्यूं मे शकति प्रमाण, जम वा नियम करै जो जान।
जनम पर्यन्त त्याग यम जानि, वरस मास पखि नियम वखानि ॥९३
दिन की पाँच घडी मरयाद, करै सदैव तजै परमाद।
किये प्रमाण महाफल सार, बिन सख्या फल नही लगार ॥९४

दोहा

सुनहु भोग उपभोग के, अतीचार प्रणतेह । इनहि टालि व्रत पालि है, वरतो श्रावक जेह ॥९५

छन्द चाल

मीलै जु सचित जो माही, भोगनि की वस्तु जु माही ।
उपभोग वसन भूषण मे, कमलादि गहै दूषण मे ॥९६
एह अतीचार भणि एक, दूजो सुनि धरि सुविवेक ।
भोजन पातरि परि आवे, अरु सचित थकी ढकि ल्यावै ॥९७
अथवा वस्त्रादिक जानी, धरि ढकि अर आणै प्राणी ।
वह दूजो दोष गणीजे, तीजो अव भवि सुणि लीजे ॥९८
जे सचित अचित वहु वस्त, भेलैं मिलि जाल समस्त ।
जाको लेके भोगीजे, इह अतीचार गणि लीजे ॥९९
मरयाद भोग उपभोग, कीनो जो वस्तु नियोग ।
तिहते जो लेय सिवाय, चौथो यह दूषण थाय ॥१००
कछु कोरो कछुयक सीजे, अथवा आस्या गह लीजे ।
लघु भख लेई अधिकाई, अति दुपकारी असन पचाई ॥१०१
दुहु पक्व अहार सु जानी, पचम अतोचार वखानी ।
भोगोपभोग व्रत पारी, टालो इनको हितधारी ॥१०२

दोहा

कथन भोग उपभोग कौ, कीयो यथावत सार ।
आगें अतिथि विभाग कौ, सुनियो भवि निरधार ॥१

इति भोगोपभोग शिक्षव्रत ।

❁

अथ चतुर्थ शिक्षाव्रत अतिथि सविभाग कथन । चौपाई

प्रथम आहार दान जानिये, दुतीय दान औषध मानिये ।
तीजो शास्त्र दान हैं सही, अभय दान फुनि चौथो कही ॥२
लहै अहार थकी बहु भोग, औषध तैं तनु होय निरोग ।
अभय थकी निरभय पद पाय, शास्त्र दान तैं ज्ञानी थाय ॥३
अब पातर कौ सुनहु विचार, जैसो जिन आगम विस्तार ।
पात्र कुपात्र अपात्र हु जाण, दीजे जिम तिम करहु वखाण ॥४
पात्र प्रकार तीन जानिए, उत्तम मध्यम जघन्य मानिये ।
मुनिवर श्रावक दरशन धार, कहै सुपात्र तीन विधि सार ॥५
तीन तीन तिहुं भेद प्रमान, सुनहु विवेकी तास वखान ।
उत्तम मे उत्तम तीर्थेश, उत्तम मे मध्यम है गणेश ॥६

मुनि सामान्य अवर हैं जिते, उत्तम मध्यम जघन्य है तिते।
मध्यम पात्र तीन परकार, तिह माहे उत्तम मुनि सार ॥७
छुल्लक अहिलक दुहु ब्रह्मचार, अरु दसमी प्रतिमा व्रतधार।
मध्यम माहि उत्तम जानि, मध्यम माहि मध्यम कहूँ बखानि ॥८
सात आठ नव प्रतिमाधार, मध्यम मे मध्यम पातर सार।
पहिली से षष्ठी पर्यन्त, मध्यम मे पात्र जघन्य भणि सन्त ॥९
दरसनधारी जघन्य मझार, उत्तम क्षायिक समकित धार।
क्षयोपशमी मध्यम गनि लेहु, जघन्य उपशमी जानौ एहु ॥१०

दोहा

उत्तम पात्र सु तीन विधि, तिनही भेद नव जान।
पुनि कुपात्र तिहुँ भेद को, वरणन कहो बखान ॥११

छन्द चाल

गुन मूल अठाइस धार, चारित तेरह प्रकार।
मुनिवर पद को प्रतिपाल, तप करे कठिन दरहाल ॥१२
समकित शिव बीज न जाकौ, मिथ्यात उदै है ताको।
ऐसो कुपात्र त्रिक माही, उत्कृष्ट कुपात्र कहाही ॥१३
व्रत धर श्रावक है जेह, मध्यम कुपात्र भनि तेह।
गुरु देव शास्त्र मनि आनै, आपापर कबहु न जानै ॥१४
बाहिज कहै मेरे ठीक, अन्तर गति सदा अलीक।
ते जघन्य कुपात्र सु जानो, सरधानी मन मे आनो ॥१५

दोहा

कह्यो कुपात्र विशेष इह, जिन वायक परमान।
अब अपात्र के भेद लिहु, सो सुनि लेहु सुजान ॥१६

छन्द चाल

अन्तर समकित नहिं जाके, बाहिर मुनि क्रिया नहिं ताके।
विपरीत रूप नहिं धारी, जिह्वादिक लपट भारी ॥१७
उतकृष्ट अपात्र के लच्छन, परखै अति परम विचच्छन।
ऐसे ही मध्यम जानो, समकित बिनु व्रत मनि आनो ॥१८
तनु स्वेत बसन के धारी, मानै हम हैं ब्रह्मचारी।
दुजो अपात्र लखि योही, सुनि जघन्य अपातर जो ही ॥१९
गृहपति सम बसन धराही, मिथ्या मारग चलवाही।
नर नारिन को निज पाय, पाडै अति नवन कराय ॥२०
वचन आप चिरजी भाखै, मन मे निज गुरु पद राखै।
मिथ्यात महाघट व्यापी, ए जघन्य अपात्र जे पापी ॥२१

वाहिज अभ्यन्तर खोटे, नित पाप उपावै मोटे।
श्रुत देव विनय नहिं जानै, नव रसयुत ग्रन्थ वखानै ॥२२
रुलि है भवसागर माही, यामे कछु सशय नाही।
इनके वन्दक के जीव, दुरगति महि भ्रमहि सदीव ॥२३

दोहा

पात्र कुपात्र अपात्र के, भेद भने सव पांत्र। तिनकी साखा पच दस, विहुन कहे सव साच ॥२४
अव इनको आहार जू श्रावक जिहि विधि देय। सो वर्णन सक्षेप ते, भवि चित धरि सुनि लेय ॥२५
दोप छियालिस टालिकै, श्रावक के घर माहि। वरती जनि पै जो असन, सुखकारी सक नाहि ॥२६

छन्द चाल

दिनपति की घटिका सात, चढिया श्रावक हरपात।
द्वाराप्रेक्षण की वार, फासू जल निज कर धार ॥२७
मुनिवर आयो पडिगाहै, अति भक्तिवन्त उरमाहै। दातार तने गुण सात, ता माहे है विख्यात ॥२८
पुनि नवधा भक्ति करेई, अति पुण्य महा सचेई।
निज जनम सफल करि जानै, वहुविधि मुनि स्तुति वखानै ॥२९
मुनिवर वन गमन कराई, पीछे अति ही सुखदायी।
भोजन शाला मे जाई, जीमे श्रावक सुचि पाई ॥३०
जो द्वारापेक्षण माही, मुनिवर नहि जोग मिलाई।
तो निज अलाभ करि जानै, चिन्ता मन मे अति आने ॥३१
हिय में ऐसी ठहराय, हम अशुभ उदै अधिकाय।
करिहै श्रावक उपवास, अथवा रसत्याग प्रकास ॥३२

सोरठा।

दान थकी फल होय, जो उत्कृष्ट सुपात्र को। सो सुनिया भवि लोय, अति सुखकारी है सदा ॥३३

सवैया।

तीर्थङ्कर देवन को प्रथम आहार देय, वह दानपति तद्‌भव मोक्ष जाय है,
पीछे दान देनहार दृग को धरैया सार, श्रावक सुव्रतधार ऐसो नर थाय है ॥
जो पै मोक्ष जाय तो तीमनै न कहाय, पहुँ निश्चय हूँ नाहि देव लोक को सिवाय है।
पाय के अनेक रिद्धि नर सुर की, समृद्ध निकट सुभव्य निर्वाण पद पाय है ॥३४
उत्कृष्ट पात्रनिमे उत्कृष्ट तीर्थङ्कर, तिनि दान को सो फल प्रथम वखानियो।
अव उत्कृष्ट त्रिकमांहि रहै मध्य पुनि, जयनि मुनीस दानफल ऐसो जानियो॥
दानी दृगव्रतधारी तिनही असन दिये, कलप वसे या सुर ह्वै है सही मानियो।
अवर विशेप कछु कहनो जरूर इह, तेऊ सुनो भव्य सुखदाई मनि आनियो ॥३५
प्रथम मिथ्यात भावमध्य वन्ध मानव के, परयो पीछै दृगपाय व्रत धारी लयो है।
पुनि मुनिराजनिको त्रिविधि सुविधिजत, दोष अन्तराय टालि असन सुदीयो है॥
ताहि वव सेती उत्कृष्ट भोग भूमि जाय, जुगल्या मनुज थाय पुण्य उदै कीयो है।
तहा आयु पूरी कर देवपद पाय अहो, मुनिन को दान देति ताको वनि जोयो है ॥३६

सुख उत्कृष्ट भोग भूमि के कछुक ओजो, कहूँ तीन पल्ल तहाँ आयु परमानिये।
कोमल सरल चित्त पाइये कलप निति, दस परकार नानाविधि भोग विधि दानिये॥
जुगल जनम थाय, मातापिता खिर जाय, छीक औ जमाही पाय ऐसी विधि मानिये।
निज अगूठा को सुधारस पान करि, दिन इकीस माझ तनु पूरनता ठानिये॥३७

दोहा

तीन दिवस बीते पेछै, लघु बदरी परिमाण। लेय अहार सुखी महा, अरु निहार नहिं जाण॥३७
उत्तम पात्र आहार को, दाता फल अति सार। पावै अचरज कछु नही, अब सुनियो निरधार॥३८
कृत कारित अनुमोदन, तीनहु सम सुखदैन। कही भली ताकी कथा, कहो यथा जिन बैन॥३९

छप्पय छन्द

वज्रजघ श्रीमती सर्प, सरवर के ऊपरि। चारण जुगल सुमुनिहि, भक्त जुत दियो असनि परि,
तहाँ सिंह अरु शूर, नकुल बानर चहुँ जीवहि। करि अनुमोदन बध लियो, सुख युगल अतीवहि॥
सुरहोई भुगति नर सुर सुखह पत्र वृषभ तीर्थेश के।
हुई धरि उग्र तप कौं भए सिवतिय पति नव वेस के॥४०
वज्रजघ नृप आप अवर, श्रीमती त्रिया भनि,
भोग भूमि ह्वै जुगल, भुगति सुर सुखहि विविध नी।
पुनि दिववासी देव नरपत्ति रिधि भुगति सुखदायक,
दशमै भव नृप जीव तीर्थंकर बृषभ सुखदायक॥
श्रीमतीय जीव श्रेयासहु, ऋषभनाथ को दान दिय।
दुहु पात्र दान पतित पवि मल करि, होय सिद्ध सुख अमित लिय॥४१

दोहा

कृत कारित अनुमोदि की, कही सुनी हित धारि।
अति विशेष इच्छा सुनन, महापुराण मझारि॥४२
इहाँ प्रसन कोऊ करै, मिथ्या दृष्टी लोय। वाहिज श्रावक पद क्रिया, कही यथावत होय॥४३
भाव लिंग मुनि तास घरि, जुगत आहारक नाहि।
सो मुझकू समझाय कहु, जिम सशय मिटि जाहि॥४४
अथवा श्रावक दृग सहित, किरिया पात्रै सार। द्रव्य लिंग मुनिराज कौं, देय कै नही आहार॥४५

छन्द चाल

ताके मेटन सन्देह, अब सुनिये कथन सु एह। जैसे सुनियो जिन बानी, तैसे मै कहूँ बखानी॥४६
श्रावक की किरिया सार, मिथ्यात न छाडी लार।
चरिया दिरिया मुनि राई, आई जो लेइ घटाई॥४७
मुनि ज्ञानवान जो थोय, निरदोष आहार गहोय।
द्रव्य श्रावक को जानि, ताको नहि दूषन मानि॥४८
मुनि असन नियम नहि एह, दृग व्रत धारिहि कै लेह।
किरिया सुध जाकौं होई, तहाँ लेई आहार मक खोई॥४९
दरसन जुत श्रावक होई, द्रव्य मुनि आवै कोई।
जानै विनु देय अहार, ताकौं नही दोप लगार॥५०

जीवराज जैन ग्रन्थमाला, हिन्दी विभाग पुष्प-३४

श्रावकाचार संग्रह

हिन्दी छन्दोबद्ध श्रावकाचारों और दो क्रियाकोषों का संग्रह

भाग ५

पूर्व ग्रंथमाला सम्पादक
स्व० डॉ० हीरालाल जैन
स्व० डॉ० ए० एन० उपाध्ये

विद्यमान ग्रंथमाला संपादक
सिद्धान्ताचार्य पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री
वाराणसी

सम्पादक एवं अनुवादक
सिद्धान्ताचार्य पं० हीरालाल शास्त्री, न्यायतीर्थ
हीराश्रम, पो० साढूमल, जिला ललितपुर (उ० प्र०)

प्रकाशक
सेठ लालचन्द हीराचन्द
अध्यक्ष, जैन-संस्कृति-संरक्षक-संघ, शोलापुर (महाराष्ट्र)

मूल्य २० रु०

वी० नि० सं० २५०४] वि० सं० २०३५ [ई० सन् १९७८

श्रावकाचार-सग्रह पचम भागकी

विषय-सूची

श्रावक जाने जो तेह, मिथ्यादृष्टी मुनि एह।
जाको मूल न पडिगाहो, समकित गुण तामैं नाही ॥५१
निज दरशन को भवि प्राणी, दूषण न लगावै जाणी।
जिनके नित इह व्यापार, चालै निज बुद्धि विचार ॥५२
कोऊ बूझै फिर ऐसें, बिनु ज्ञान सरावग कैसें।
मुनि केम परीक्षा जानी, यम हिरदै यात समानी ॥५३
ऊतर सुनि अव अति ठीक, यामैं कछु नाहि अलीक।
प्रथमहि श्रावक गुण पालै, पातर लखि लै ततकालै ॥५४
अथवा ज्ञानी मुनि पास, सुनि है तिनको परकास।
श्रावक श्रावक निज माही, लखि पात्र कुपात्र बताही ॥५५

छप्पय

अणागार उत्कृष्ट पात्र को जो विधि सारी। कही यथारथ ताहि धार चित्त मैं अति प्यारी ॥
सुन भवि अवधारि करहु अनुमोदन जाको। निश्चय तसु श्रद्धान किये सुरपद है ताको ॥
अब मध्य जघन्य दुहु पात्र को, कहो दान अरु फल यथा।
जिन आगम मध्य कह्यो, तिसो सुनो भवि इह कथा ॥५६

चौपाई

मध्यम पात्र सरावग जान, ब्योरो पूरब कह्यो बखान।
इनमे भेद कहे हैं तीन, उत्तम मध्यम जघन्य प्रवीन ॥५७
श्रावक मध्यम पात्र मझार, भेद एकादश सुनहु विचार।
जाहि यथा विधि जोग अहार, त्यो श्रावक देहैं सुखकार ॥५८
इनको दान तणो फल जान, मध्यम भोग भूमि सुख खान।
जनमत मात पिता मरि जाँय, जुगल्या छीक जभाही पाय ॥५९
तनु निज अमृत अगुठा थकी, तीस पाँच दिन पूरण वकी।
उचित कोस दु दुदिन जाय, करै आहार निहार न थाय ॥६०
कल्पवृक्ष दशविधि के जास, नाना विधि दे भोग विलास।
दुयगल आयु भुजि सुर होय, मध्य पात्र फल जानो लोय ॥६१
अरु इह कथन महा सुख कार, ग्यारा प्रतिमा मे निरधार।
आगे कहिये प्रथम सुजान, पुनरुक्त को दोष बखान ॥६२

दोहा

मध्य पात्र आहार फल, कह्यो यथावत् सार।
अब जघन्य की पात्र विधि सुनहु दान फल कार ॥६३
क्षायिक क्षय-उपशम तृतिय, उपशम तीन प्रकार।
इनही गृही आहार दे, यथा योग्य सुखकार ॥६४

चौपाई

जघन्य पात्र के दाता जान, जघन्य युगलिया होत प्रमाण।
छींक जभाई ते पितु माय, मरै आप पूरण तनु पाय ॥६५

दिन गुण चासे कोस प्रमाण, आयु पल्य इक भुगते जाण।
एक दिवस बीतैं आहार, लेई बहेडा सम न निहार ॥६६
कल्पवृक्ष दश विधि सुखकार, नाना विधि दे भोग अपार।
पूरण आयु करिवि सुर थाय, नाना सुख भुगतैं अधिकाय ॥६७

दोहा

जघन्य सुपात्र आहार फल, कह्यो जेम जिन वानि।
अबैं कुपात्र आहार फल, सुन लो भवि निज कान ॥६८

चौपाई

द्रव्य मुनि श्रावक हू एह, विनु समकित किरिया हैं तजेह।
बाहर समकित कीसी रीत, दरशन बिनु सरधा विपरीत ॥६९
इन तीनहु कुपात्र को दान, देहि तास फल सुनहु सुजान।
जाय कुभोग भूमि के माहिं, उपजैं मनुष्य हीन अधिकाहिं ॥७०
अवर सकल मानव की देह, मुख तिरयच समान है जेह।
हाथी घोड़ा, बैल वराह, कपि गर्दभ कूकर मृग आह ॥७१
लब करण अरु इक टगीया, उपजैं युगल बराबर भिया।
एक पल्य आयुबल पूर, माटी मीठा तृण अकूर ॥७२
तिनहि खाहि निज उदर भरेय, अहै नगन ही मन्दिर केह।
मंर विन्तर भावन जोतिसी, हो भुगतैं सुख सुरावधि जिसी ॥७३

दोहा

अब अपात्र के दान ते, जैसो फल लह्वाय। तैसो कछु बरनन करूँ, सुनहु चतुर मन लाय ॥७४
जो अपात्र को चिह्न हैं, पूरब कह्यो वनाय। दोष लगैं पुनरुक्त को, यातें अब न कहाय ॥७५

सोरठा

जो अपात्र को दान, मूढ भक्ति कर देय हैं। सो अतीव अघ थान, भव भ्रमि हैं ममार मे ॥७६

छन्द चाल

जैसे ऊखर मे नाज, बाहै विन उपज न काज।
मिहनत सव जावै यो ही, कण नाज न उपजैं क्योंही ॥७७
तिम भूमि अपातर खोटी, पावे विपदादिक मोटी।
दुरगति दुख कारण जाणी, तिन दान न कवहु ठानी ॥७८
धेनु ने तृण चरवावै, तामें तो दूधहि पावै।
अति मिष्ठ पुष्ठ कर भारी, वहुते जिय को सुखकारी ॥७९
तिम पात्रहि दान जो दीजे, ताको फल मोटो लीजे।
सुरगति मे संशय नाही, अनुक्रम शिवथान तहाही ॥८०
सरपहि जो दूध पियादे, तापे तो विष को खावै।
सो हरे प्राण तत्काल, परगट जानो इह चाल ॥८१

जिम दान अपात्रहिं देई, वह भवते नरक लहेहि।
फिरि भव में पच प्रकार, प्रावर्त्तन करे अपार ॥८२
लखि एक जाति गुण न्यारे, तावो दुय भाति करारे।
इकतो गोलो बनवाणै, दूजे पातर घडवाणै ॥८३
गोलो डालै जल माही, ततकाल रसातल जाही।
पातर जलतर है पारे, औरन को पार उतारे ॥८४
तिम भोजन तो इकसाही, निपजै गृहस्थ घर माही।
दीजे अपात्र को जेह, ताते नरकादि पडेह ॥८५
वह उत्तम पात्रहिं दीजे, मरघा रुचि भक्ति करीजे।
इह भवते ह्वै दिववासी अनुक्रम तें शिवगति पासी ॥८६
इक वाय नीर चलवाई, नीम रु साठा सिंचवाई।
सो नीम कटुकता थाई, साठा रस मधुर गहाई ॥८७
तिम दान अपात्र जो केरो, दुखदाई नरक वसेगे।
भोजन उत्तम पातरको, दीपक सुर शिवगति घर को ॥८८
इह पात्र अपात्रहिं दान भाण्यो दृहवान्ति को मान।
सुखदायक ताहि गहीजे, बुध जन अब ढील न कीजे ॥८९
दुख दायक जाण अपार, तत खिण तजिये निरधार।
फल पात्र अपात्तर ठीक, इनमे कछु नाहिं अलीक ॥९०
जो धन घर में बहु तेरो, खरचन को मन है तेरो।
तो अध कूप के माही, नाखै नहि दोष लहाही ॥९१
दीयो अपात्र को सोई, भव भव दुखदायक होई।
सरपहिं पकडै नर कोई, काटे ताको अहि वोई ॥९२
इक बार तजै वहि प्राण, वाको दुख फेर न जाण।
अरु भक्ति अपातर केरी, तातें फिर है भव फेरी ॥९३
यातें अहि गहिवो नीको, खोटे गुरुतें दुख जोको।
तातें खोटे परहरिये, नित सुगुरु भक्ति उर धरिये ॥९४

अडिल्ल छन्द

जो पात्तर के ताई दान दे मानते, अरु अपात्र को कबहु न दे निज जानते।
पात्र दान फल सुरग क्रमाहिं शिवपद लहै, भोजन दिये अपात्र नरक दुख अति सहै ॥९५
दया जान मन आन दुखित जन देखिकै, रोग ग्रसित तन जानि सकति न विशेषकै।
मन मे करुणा भाव विशेष अनाइकै, यथा योग जिह चाहे सुदेह बनाकै ॥९६

फल वर्णन । चौपाई

लहै सम्पदा भूपति तणी। नाना भोग कहा लो भणी।
उत्तम जाति लहै कुल सार, इह फल पातर दान अहार ॥९७
अति नीरोग होय तन जास, हरे और को व्याधि प्रकास।
अति सरूपता औषध जान, दियो पात्रको तस फल जान ॥९८

दीरघ आयु लहै सो सदा, जगत मान तिहकी शुभ मदा।
सुर नर सुख की कितियक बात, अभय थकी तद्भव शिव पात ।।९९
शास्त्रदान देवातें सही, भवि अनक्रमते केवल लही।
समवशरण विभवो अविकार, पावै तीर्थंकर पद सार ।।६००
दया दान ते कीरत्ति लहैं, सगरे भले भले यो कहैं।
निज भावा माफिक गति थाय, दान दियो अहलो नहिं जाय ।।१

दोहा

पात्र कुपात्र अपात्र को, पूरो भयो विशेष। अबै अन्य मत दान दस, कहो कथन अवशेष ।।२

सवैया

गऊ हेम गज गेह वाजि भूमि तिल जेह, क्रिया दासी रथ इह दस दान थाय है।
इनको कथन करै याहि सठ जानि लेह, दान को दिवाय नरकादिक लहाय है।
हिंसादिक कारण अनेक पापरूप जाणि, अवर लिवैया दुरगति को सिधाय है।
अति ही कलक निंद्यधाम पुण्य को न लेस, मतिमान लेन देन दुह को तजाय है ।।३

दोहा

दसौ दान अनमति तणा, जैनी जन जो देह। अघ हिंसादि बढायकै, कुगति तणा फल लेह ।।४

इति चतुर्थ शिक्षाव्रत अतिथि सविभाग कथन सम्पूर्ण।

अथ आहार दान के दोष का ब्योरा। छन्द चाल

निपज्यो गृहमध्य आहार, तिह लेय सचित परिहार।
अथवा सचित मिल जाई, इह अतीचार कहवाई ।।५
प्राशुक धरियो जो दर्व, ढाकै सचित्तसो सर्व।
दूजो गनिये अतीचार, याह कू बुधजन टार ।।६
आपण नहिं देय अहार, औरन को कहै एम विचार।
ये हैं आहार दो भाई, तीजो दूषण इह थाई ।।७
मुनिको कोई देई आहार, चित्त मे ईर्षा इह धार।
हम ऊपर ह्वै क्यो देई, चौथो इह दोष गनेई ।।८
द्वारापेषण के कालै, गृह काज करत तहा हालै।
लघि गए गेह मे आवे, पचम अतीचार कहावे ।।९

दोहा

इह अतिथि-सविभाग के, अतीचार भनि पाच। इनहि टाल भविजन सदा, जिनवच भाषे साच ।।१०
व्रत द्वादश पूरण भये, पाच अणुव्रत सार। तीन गुणव्रत सार पुनि, शिक्षाव्रत निराधार ।।११
जैसी मति अवकाश मुक्ष, कियो ग्रन्थ अनुसार।
किसनसिंह कहि अब सुनो कथन विधि परकार ।।१२

इति अतिथि सविभाग सम्पूर्ण।

अथ सतरा नेमोका ब्योरा। दोहा

जे श्रावक आचार जुत, नित प्रतिपालै नेम। मरयादा दस सात तसु, मन वच क्रम धर प्रेम ।।१३

श्लोक

भोजने षट्रसे पाने कुंकुमादि विलेपने, पुष्पताम्बूलगीतेषु नृत्यादौ ब्रह्मचर्यके ॥१४
स्नानभूषणवस्त्रादौ वाहने शयनासने, सचित्तवस्तुसंख्यादौ प्रमाण भज प्रत्यहम् ॥१५

चौपाई

भोजन की मरयादा गहै, राखै जेती वारहिं लहै।
पर के घर को जीमण जोई, प्रात समय मे राख्यो होई ॥१६
अन्न अवर मीठादिक वस्तु भोजन माहे जान समस्त।
असन चवीनी अर पकवान, गिनती माफिक खाय सुजान ॥१७
षट्रस मे जो राखै तजै, तिहि अनुसार सुनिति प्रति सजै।
पानी सर वत दूध रु मही, दरव जिते पीने के सही ॥१८
ता मधि वुध राखे जे दर्व, ता विनु सकल त्यागिये भव्य।
चोवा चन्दन कुंकुम तेल, मुख धोवो रु अरगजा मेल ॥१९
औषध आदि लेप है जेह, सख्या राख भोगिए तेह।
पुष्प गंध सूंघियैं तेह, जाप समै जे राखे जेह ॥२०
कर मुकती जो फल हेतनी, सचित्त मध्य तेऊ राखनी।
सचित्त माहिं राखी नहिं जाय, जिह दिन मूल न करहिं गहाय ॥२१
पान सुपारी डोडा गही, लौंगादिक मुख सोध जु कही।
दाल चीनी जावत्री जान, जाती फल तबोल वखान ॥२२
पान आदि सचित्त जु थाय, सचित्त माँहि राखे तो खाय।
सचित्त माहि राखत वीसरै, तो वह दिन खानी नहि परै ॥२३
गीत नाद कोतूहल जहा, जैवो राख्यौ जैहै तहा।
मरयादा न उलघै कदा, जो उपसग आय ह्वै जदा ॥२४
एक भेद यामे है और, आप आपनी बैठे ठोर।
गावत गीत तिया नीकलीं, सुनकर हरख्यौ चित्त धर रली ॥२५
तामे दोष लगै अधिकाय, मध्यस्थ भाव रहै तिहि ठाय।
पातर नृत्य अखारे माहि, नटवा नट जिहि नृत्य कराहिं ॥२६
वादीगर विद्या जे वीर, मुकति राखै जावे धीर।
परवनिता को तो परिहार, निज नियमे जिम कर निरधार ॥२७
पाँचो परवी मे तो सोह, अवर दिवस जैसी चित गोह।
तजै सरवथा तो परहरै, राखै अगीकार सु करै ॥२८
सेवत विषय जीव की घात, उपजै पाप महा उतपात।
जिह जागै राखै मरयाद, सो निर वाहै तजि परमाद ॥२९
स्नान करण राखै तो करै, सोह थकी कबहूँ नहि टरै।
आभूषण पहिरे है जिते, घर मे और धरे हौं तिते ॥३०
पहरन की इच्छा जो होई, सो पहरै सिवाय नहिं कोई।
भूषण अन्य तने की रीत, राखै माग पहर कर प्रीति ॥३१

कपडे अगले पहरे होई, वे ही मुखते राखे सोई।
अथवा नये ऊजरे होई, गखे सो पहरे मन दोई ॥३२
सुसुरादिक मित्रन के दिये, नृप आदिक जे वकसीस किये।
मुकते राखे ह्वै सो गहै, निज मरयादा को निर वहै ॥३३
पहरण पावतणी पाहणो तेलमस्तुनि माहे गणी।
नई पुराणी निज परतणी, राखै सो पहरै इम भणी ॥३४
इत्यादिक वाहन जे होई, जो असवारी मुकती जोई।
काम परै चढि है तिह परी, और न काम नेम जो धरी ॥३५
सोवे को पलग जो जान सोड तुलाई तकियो मान।
जेतो सयन करन को साज, व्रत धर सख्या धर सिरताज ॥३६
खाट पराई इक दुय चार, काम पडे बैठे सुविचार।
विनु राखै बैठे सो मही, यह जिन आगम साची कही ॥३७
गादी गाऊ तकियो जाण, चौको चौकी माटी आण।
सिंहासन आदिक हैं निते, आसन माहि कहावें तिते ॥३८
गिलम दुलीचा सतरजणी, जाजम सादी रुई तणी।
इनहि आदि विछोणा होय, आसन मे गिन लीजे सोय ॥३९
निज घर के अघवारे ठाम, मुकते राखे जे जे घाम।
तिनपर बैठे बाकी त्याग, जाको व्रत ऊपर अनुराग ॥४०
सचित्त वस्तु की सख्या जान, धान बीज फल फूल बखान।
पाणी पात्र आदि लख जेह मिरच सोपारी डोढा एह ॥४१
सारे फल सगरे हैं जिते, सचित्त माहि भाखे हैं तिते।
मरजादा मुकती जे माहि बाको सबको भेंटै नाहि ॥४२
सख्या वस्तु तणी जे धरे, सकल दरब की गिणती करै।
खिचडी लाडू खाठो खीर, औषध रस चूरण गिन धीर ॥४३
बहुत दरब मिल जो निपजेह, गिणती माहि एक गणि लेह।
राखे दरब जिते उनमान, साझ लग गिणि ले बुधिमान ॥४४
साझ करै सामायिक जबै, सतरह नेम सभारै तबै।
अतीचार लागै जो कोय, शक्ति प्रमाण दड ले सोय ॥४५
वहुरि आखडी जे निशि जोग, धार निवाह करै भवि लोग।
इह विधि नित्य नियम मरयाद, पालै धरि भवि चित्त अहलाद ॥४६
महा पुण्यको कारण सही, इह भवते शुभ सुरगति लही।
अनुक्रम तें ह्वै है निरवाण, वुध जन-मन सशय नहि आण ॥४७

दोहा

नित्य नेम सत्रह तणो, कथन कियो सुखदाय।
अन्तराय श्रावक तणा, अब भवि सुनि मन लाय ॥४८

इति सत्रह नेम सम्पूर्ण।

अथ सात अन्तरायका कथन । चौपाई

जिनमत अन्तराय जे सात, श्रावकका भाषा विख्यात ।
रुधिर देखिवो नाम सुनेइ, तव बुध जन आहार तजेइ ॥४९
मास नजर देख सुन नाम, भोजन तजै विवेकी राम ।
नैनन देखे आलो चर्म असन तजे उपजै वहु धर्म ॥५०
हाड राध अरु मूवो जीव, नजर निहार श्रवण सुन लीव ।
ततक्षिण अन्न छाडि सो देइ अन्तराय पालक जन जेइ ॥५१

दोहा

सोह करे जिह वस्तुको, प्रथमांहि सो फिर कोइ । सो ले थालीमे धरे अन्तराय जो होय ॥५२
श्लोक एकमे सात ए, कह्यो सवनको भेव । तिह सिवाय भामे अवर, सो व्योरो मुनि लेव ॥५३
चडालादिक नर जिते, हीन करम करतार ।
तिनहि लखित वचनहि सुनत, अन्तराय निरधार ॥५४
मल देखत पुनि नाम सुनि, असन तुरत तजि देह ।
सो व्रतधारी श्रावक सही, अन्य दुष्टता गेह ॥५५
जिन प्रतिमा अरु गुरुनको, कष्ट उपद्रव थाय ।
सुनि श्रावक जन असन तज, उपवासादि कराय ॥५६
पुस्तकादि जल अगनिको, उपसग हूवो जान ।
भोजन तज पुनि करयि भवि, उपवासादि वखान ॥५७
नित प्रति श्रावक को कहै, अन्तराय तहकीक ।
पालें वे शुभ गति लहैं, यह जिन मारग ठीक ॥५८
इति अन्तराय समाप्त ।

अथ सात प्रकार मौन । दोहा

मौन जिनागम मे कह्यो, सात प्रकार बखान ।
तिनको वरनन भविक जन, सुन मन वच क्रम ठान ॥५९

चौपाई

प्रथम मौन जल स्नान करन्त, दूजी पूजा श्री अरहन्त ।
भोजन करता बोले नही, चौथी सतवन पढते कही ॥६०
सेवत काम मौन को गहै, यही वचन जिन आगम कहैं ।
मल मूत्रहि क्षेपै जिहि वार, ए लखि सात्त मौन निरधार ॥६१

अडिल्ल छन्द

द्वादशाग मय अक सकल जानो सदा, असन स्थान मल मूत्र अवर तिय सग सदा ।
वरण उचार करण न भाख्यो जैन मैं, यातें गहियै मौन सप्त विरिया समैं ॥६२

चौपाई

मौन वरतक धारक जीव, चेष्टा इतनी न करि सदीव ।
भौंह चढाइ नेत्र टिमकारि, करै जु सैन्या काम विचारि ॥६३

सीस हिलाय करै हुंकार, खासै खखारे अधिकार।
कर अंगुलते सैंन बताय, अथवा अंकोमे लिखवाय ॥६४
इतनी किरिया करि है सोय, मौन वरतु तसु मेलो होय।
अर जो सैन समस्या करी, मतलब सम जैनहिं तिहिं धरी ॥६५
मन मैं अकुलाय रहै क्रोध, क्रोध थकी नासै शुभ बोध।
यातें जे भवि जन मतिमान, मौन धरौ आगम परवान ॥६६
अरु तिह समय करै सुभाव, ताते कहै पुण्य बढाव।
पुण्य थकी लहि है सुरथान, यामैं कछु संसै नही आन ॥६७

अन्तराय सम्पूर्ण।

अथ सन्यास मरण की विधि। सवैया

दृगधारी श्रावक व्रत पालै पीछे ही, सन्यास सहित अन्तकाल तजै निज प्राण ही।
सन्यास प्रकार दोइ ए कहै कषाय नाम, दुतिय आहार त्याग प्रगट बखान ही॥
आराधना च्यारि, भावै दरसन प्रथम दूजी, ज्ञान तीजी चरण विशेष तप जान ही।
जैसी विधि कषाय सन्यासको विचार जैसे, कहूँ भव्य सुनि मनमाहि ठीक आनही ॥६८

दोहा

सकल स्वजन पर जननितें, मन वच काय विशुद्ध।
शल्य त्यागि किय है क्षमा, करि परिणाम विशुद्ध ॥६९
अंत नजीक निज मरन लखि, अनुक्रम तजिय अहार।
पाछैं अनसन लेय कै, नियम असन बहुकार ॥७०
चार आराधन कौं तबै, आराधै भवि सार। दर्शन ज्ञान चारित्र पुनि, तप द्वादश विधि सार ॥७१
देव शास्त्र गुरु ठीकता, तत्त्वारथ सरधान।
निःसंकादि गुण जो सहित, लखि दर्शन मति मान ॥७२

सवैया। ३१

धरम मे संका नाहि निसंक्ति नाम ताहि वाछातैं रहित निकांक्षित गुण जानियै।
ग्लान त्याग निरविचिकित्स देव गुरु श्रुत मूढता तजै यासौ अमोढ्यवान मानिये॥
परदोष ढाकै उपगूहन धरैया सोई भ्रष्टको स्थापै स्थिति करण बखानियै।
मुनि गृही धम को जु कष्ट टारै वात्सल्य है मारग प्रभावना प्रभावत प्रमानियै ॥७३

सन्यास मरण सपूर्ण।

अथ अष्ट प्रकार ज्ञान को आराधना। दोहा

आठ प्रकार सुज्ञान को, आराधै मति मान। तस वरणन संक्षेपते, कहै ग्रन्थ परमान ॥७४
प्रगट वरण लघु दीर्घ जुत, करि विशुद्ध उपचार। पाठ करे सिद्धान्त को, व्यंजन ऊर्जित सार ॥७५
आगम अरथ सुजाणि कैं, सुद्ध उचार करेहि। अरथ समस्त संदेह विनु, जो सिद्धान्त पढेहि ॥७६
अर्थ समग्र सुनाम तसु, जानि लेहु निरधार। शब्दार्थभय पूरण को, आगे सुनहु विचार ॥७७
व्याकरणादि अरथको लखिवि नाम अभिधान। अंग पूर्व श्रुत सकल को, करे पाठ जे जान ॥७८

पूर्वाह्लिक मध्याह्न पुनि, अपराह्लिक तिहु काल।
विनु आगम पढिये नही, कालाध्ययन विसाल ॥७९

सरस गरिष्ठ अहार को, तज करि आगम पाठ। गुण उपधान समृद्धि इह महा पुण्य को पाठ ॥८०

प्रथम पूज्य श्रुत भक्ति युत, पढि है आगम सार।
सुखकर जानो नाम तसु, प्रगट विनय आचार ॥८१

गुरु पाठक श्रुत भक्ति युत, पठन विना सदेह। गुर्वाद्यित पह्लव प्रगट सत्यनाम सुसदेह ॥८२

पूजा आसन मान बहु, चित धरि भक्ति प्रसिद्ध।
श्रुत अभ्यास सुकीजिये, सो बहु मान समृद्ध ॥८३

इति अष्ट प्रकार ज्ञान को आराधन सपूर्ण।

अथ पच महाव्रत तीन गुप्त पाँच सुमिति ये तेरह विध चारित्र का वर्णन। अडिल्ल

वरत अहिसा अनृत अचौर्य तीसरो, ब्रह्मचर्य व्रत पचम आकिचन खरो।
मन वच तन तिहु गुपति पच सुमिति जु सही, ए साधन आराधन तेरा विधि कही ॥८४

अनसन आमोदर्य वस्तु सख्या गनी, रस परित्यागी रु विविक्त शय्यासन भनी।
काय क्लेश मिलि छह तप वाहिज के भये, षट् प्रकार अभ्यन्तर आगम वरणये ॥८५

प्रायश्चित्त अरु विनय वैयावृत जानिये, स्वाध्याय रु व्युत्सर्ग ध्यान परमाणिये।
मिलि वाहिज अभ्यन्तर बारा विधि लिखी, तप आराधन एह जिनागम मे अखी ॥८६

दोहा

दरसन ज्ञान चारित्र तप, आराधन व्यवहार। अति समय भावे व्रती, सुर-सुख शिव-दातार ॥८७

इति तप १२ चारित्र १३ सपूर्ण ॥ व्यवहार आराधना सपूर्ण ॥

निश्चय आराधना लिख्यते। दोहा

अब निश्चय आराधना, वरणो चार प्रकार। आराधक शिव पद लहै, यामें फेर न सार ॥८८

सवैया ॥ ३१

आतम के ज्ञान करि अष्ट महागुण धर, दरशन ज्ञान सुख वीरज अनन्त है।
निश्चय नयेन आठ करमनि सो विमुक्त ऐसो आतमा को जानि कहिये महत है ॥
ताहि सुधी चेन उपरि श्रद्धा रुचि परतीत चित अचल करत जे वे सन्त हैं।
निश्चय आराधना कही है दरशन याहि भावें अन्त समय सुकेवल लहत है ॥८९

निज भेद ज्ञान कारि शुद्धातम तत्त्वनिको चेतन अचेतन स्वकीय परमाणी है।
सप्त तत्त्व नव पदारथ षट् द्रव्य पचासति काय उतर प्रकृति मूल जानी है ॥
इनको विचार बारबार चित अवधार ज्ञानवान सुध चेतना को उरि आनि है।
सन्यास समये अन्तकाल ऐसे भाई एतो निश्चय आराधना सुबोध यो बखान है ॥९०

पुन प्रथमहि अठाईस मूलगुण धार पच प्रकार निरग्रन्थ गुण हिय धारिये।
सताईस पच इन्द्रिन के विषयोको त्याग वाहिज अभ्यन्तर परिग्रहको टारिये ॥
सकल्प विकल्प मनते सकल तजि आतमीक ध्यानते शुद्धात्मा यों धारिये।
पर करमादि सेती जुदो यासो कम जुदो निश्चय चारित्र यो आराधना विचारिये ९१

अडिल्ल

जो कोऊ नर मन मे इच्छा धरतु है, फिरि परिणाम सकोच निरोधहि करतु है।
सो आराधन निश्चय नय परमानिये, तप इच्छादि निरोध यही मन आनियो ॥९२

दोहा

निश्चय चहु आराधना, ग्रन्थ प्रमाण बखान। किसनसिंह धरिहैं सुधी, सो शिव लहै निदान ॥९३
ए चहु विधि आराधना, धरै कौन प्रस्ताव।
सो भविजन सुन लीजिए, मन वच बुध करि भाव ॥९४

अहिल्ल छन्द

जो कोऊ उपसर्ग मरण सम आया है, कै दुरभिक्ष पडे कछु कारण पाय हैं।
जरा अधिक बल जर-जर सक्ति न सहै तबै, कै तनु रोष अपार मृत्यु सम दुख जबै ॥९५
इतने जोग मिलाय उपाय न कछु वहै, मरण निकट निज जानि विचारै मन तहै।
व्याय आराधन धर्म निमित तिनको तजै सो नर परम सुजान स्वग शिव सुख भजै ॥९६

आराधना के अतीचार। छद चाल

सलेषण की जो धारे, जीवन की आसा धारे।
लोगनि कै मुख अधिकाई, निज महिमा लखि हरषाई ॥९७
निजको लखि दुख अर लोक, करिहै न प्रतिष्ठा थोक।
महिमा कछु सुनय न कानि, मरसी जब ही मन आनि ॥९८
मित्रनि सो करि अति नेह, पूरव क्रीडा की जेह।
करि यादि मित्र जुत रागै अतिचार तृतीय सु लागै ॥९९
भुगत्या सुख इह भवमाही, निज मन ही याद कराही।
चौथो अतीचार सुजानी, पचम सुनिये भवि प्रानी ॥७००
सलेषण धारि जान, मन मे इम करिय निदान।
हू इद्र तणो पद पाऊँ, मस्तक किनही न नवाऊँ ॥१
चक्रवर्ती सपदा जेती, त्रिय सुत्त जुत ह्वै मुझ तेती।
ऐसो जो करिय निदान, तप सुरतर देहौ दान ॥२
सलेषण पण अतिचार, भाष्या इनको निरधार।
ए टालि सलेषण कीजै, ताको फल सुर शिव लीजै ॥३

सवैया। ३१

अनसन तप नाम उपवास काजे जाको आमोदर्य तप लघु भोजन लहीजिए।
वस्तु परिसख्या जे ते द्रव्यनि की सख्या कीजे रस परित्याग तेरस छाडि दीजिए ॥
विविक्त शय्यासन व्रत धारि भवि मुनि काय क्लेश उग्रतप मन को गहीजिए।
एई षट्तप कहे बाहिज के आगम मे सुर शिव सुख दाई भवि वेग कीजिए ॥४
प्रायश्चित्त वहै दोष गुरु पग्वभाय तव विनय तप गुण वृद्धि को जावनो कीजिए।
वैयावृत्त तप गुण धारी वय्यावृत्त कीजे स्वाध्याय जिनागम त्रिकाल मे पढीजिये।

व्युत्सर्ग खडा होय ध्यान धरिवे को नाम ध्यान निज आतमीक गुण निरखीजिये ।
वाहिज अभ्यन्तर के तप भेद जानि पालि अनुक्रमनि यातैं गुणथानक चढीजिये ॥५

दोहा

द्वादश तप वरनन कियो, जिनवर भाष्यो जेम । कछु विशेप सम भावको, कहू यथा मति तेम ॥६

इति द्वादश तप ।

•

अथ सम भाव कथन । सवैया

अनतानुवधी क्रोध पापाण की रेखा सम, मान थभ पाहन समान दुख दाय है ।
वस विडावत माया, लोभ-लाख रग जानि, इनके उदैतै जीव नरक लहाय है ।
जव लग अनतानुवधी चौकडीको धरै जनम पर्यंत जाको सग न तजाय है ।
याके जोर सेती जीव दशन सुधताकौ लहै नाही ऐसें जिनराज जी वताय है ॥७
क्रोव जो अप्रत्याख्यान हल रेखावत जानि मान अस्थिथभ मानि दुष्टता गहाय है,
माया अजा शृग जानि लोभ है मजीठ रग इनके उदैतें जीव तिरयच थाय है ।
जव ही अप्रत्याख्यान चौकडी को उदै होय जाकै एक वरस लो थिरता रहाय है,
तो लो याको वल जोलो श्रावक के व्रतनिको धर सकै नाहि जिनराज जी वताय है ॥८
प्रत्याख्यान क्रोध धूलि रेखा परमान कह्यो, मान काठ थभ माया गोमूत्र समान है,
लोभ कसुम्भको रग ए ई चार यौ प्रत्याख्यान, इनके उदैतें पावै मनुज पद थान है ।
प्रत्याख्यान कषाय प्रगट उदै होत सतै च्यारि मास परजत रहै जानो जान है,
याही को विपाक सो न सकति प्रकट होत मुनि राज व्रत धरि सकै न प्रमान है ॥९
सज्वलन क्रोध जल रेखावत कह्यौ जिन, मान वेतलता किसी नवनि प्रधान है,
माया है चमर जैसी लोभ हरदी को रग इनके उदैते पावै सुरग विमान है ।
चौथोहु कषाय चौकरी को उदै पाय ताकै च्यार पक्ष तांऊ जाकै प्रवल महान है,
यथाख्यात चारित्र को धरि सकै नाहि मुनि तीर्थंकर गोत्रहू जो बाधै यौं वखान है ॥१०

चौपाई

सोलह कपाय चोकरी च्यार, नौ कषाय नव नाम विचार ।
हासि अरति रति सोक वखान, भय जुगुप्सा ए षट् जान ॥११
वनिता पुरुप नपुसक वेद, ए नव मिले पचीस जु भेद ।
इनको उपसम करिहै जबै, समकित हियै सुभ किरिया तवै ॥१२

इति समभाव सपूर्ण ।

•

अथ एकादश प्रतिमा वणन लिख्यते । चौपाई

अव एकादश प्रतिमा सार, जुदो जुदो तिनको निरधार ।
सो भाष्यौ आगम परवान, सुनि चित धारो मरम सुजान ॥१३

दर्शन व्रत सामयिक कही, पोसह सचित्त त्याग विध गही।
रयनि-असन त्यागी ब्रह्मचार, अष्टम आरभ को परिहार ॥१४
नवमी परिग्रह को परिमान, दशमी आद्य उपदेश न दान।
एकादशमी दोय परकार, क्षुल्लक दुतिय ऐलक व्रत धार ॥१५
श्रेणिक पूछै गौतम तणी, दरसन प्रतिमा की विधि भणी।
गौतम भाष्यो श्रेणिक भूप, दरशन प्रतिमा आदि सरूप ॥१६
एकादश की जो विध सार, जुदी जुदी कहिहो निरधार।
याहै सुनि करि धरि है जोय, श्रावक व्रत धारी है सोय ॥१७
प्रथमहि दरशन प्रतिमा सुनो, त्गो निज आतम सहजै मुनो।
दरशन मोक्ष बीज है सही, इह विधि जिन आगम मे कही ॥१८
दरशन सहित मूल गुण धरे, सात विसन मन वचन परिहरे।
दरशन प्रतिमा को सुविचार, कछु इक कहो सुनो सुखकार ॥१९
देव न मानै बिनु अरहन्त, दस विधि धर्म दयाजुत सन्त।
तपधर मानै गुरु निग्रन्थ, प्रथम सुद्ध यह दरशन पथ ॥२०
सवेगादिक गुण जुत साय, ताकी महिमा कहि है कोय।
धरम धरम के फल को लखै, सो सवेग जिनागम अखै ॥२१
जो वैराग भाव निरवेद, गरहा निन्दा के दुइ भेद।
निज चित निंदै निंदा सोय, गरहा गुरुठिग जा आलोय ॥२२
उपसम जे समता परिणाम, भक्ति पच गुरु करिए नाम।
धरम रु धरमी सो अतिनेह, सो वाछल्ल महा गुण गेह ॥२३
अनुकपा नित ही चित रहै, ए वसु गुण जो समकित गहै।
दरशन दोप लगै पणवीस, सुनिये जो कहिया गणईश ॥२४
तीन मूढता मद वसु जान, अर अनायतन षट्विधि ठान।
आठ दोष शकादिक कही, दोष इते तजि दरशन गही ॥२५
भो श्रेणिक सुन इस ससार, जीव अनत अनती वार।
सीस मुडाय कुतप बहु कीयो, केस लोच अरु मुनि पद लीयो ॥२६
कीये अनन्तकाल बहु खेद, आतम तत्त्व न जानेउ भेद।
जब लो दरशन प्रतिमा तणी, प्रापति भई न जिनवर भणी ॥२७
तातै फिरियो चतुर्गति माहि, पुनि भवदधि भ्रमिहै सक नाहि।
प्रावत्तन कीये बहु बार, फिर करिहै जिसके नहि पार ॥२८
आठ मूल गुण प्रथम ही सार, वरनन कीयो विविध प्रकार।
तातें कथन कियो अब नाहि, कहै दोष पुनरुक्त लगाहि ॥२९
कुविसन सात कह्यो विस्तार, जूआ मास भखिवो अविचार।
सुरापान चोरी आखेट, अरु वेश्या सो करियो भेंट ॥३०
इनमे मगन होइ करि पाप, फल भुगते लहि अति सन्ताप।
तिनके नाम सुनो मतिमान, कहिहो यथा ग्रन्थ परिमाण ॥३१

पाण्डु-पुत्र जे खेले जुआ, पाँचो राज्य-भ्रष्ट ते हुआ।
बारह वरष फिरे वनमाहिं, असन-वसन दुख भुगते ताहि ॥३२
मास लुब्ध राजा बक भयो, राजभ्रष्ट ह्वै नरकहि गयो।
तहाँ लहे दुख पच प्रकार, कवि ते न कहि सकै विसतार ॥३३
प्रगट दोष मदिरा ते जान, नाश भयो यदुवश बखान।
तपधर अरु हरि-बलि नीकले, बाकी अग्नि द्वारिका जले ॥३४
वेश्या लगन केरि हित लाय, चारुदत्त श्रेष्ठी अधिकाय।
कोडि बत्तीस खोई दीनार, द्रव्य-हीन दुख सहे अपार ॥३५
षट्खडी सुभूमि मतिहीन, विसन अहेडा मे अतिलीन।
पाप उपाय नरक सो गयो, दुख नानाविधि सहतो भयो ॥३६
पर-वनिता की चोरी करी, रावण मति हरि निज मति हरी।
राम रु हरि सो करि सग्राम, मरि करि लह्यो नरक दुख धाम ॥३७
पर-युवती को दोप महन्त, द्रुपदसुता सो हास्य करत।
कीचक फल पायो तत्काल, रावणनेहु गनिये इह चाल ॥३८
आठ मूल गुण पालै तेह, विसन सात को त्यागी जेह।
अरु सम्यक्त जु दृढता धरै, पहिली प्रतिमा तासो परै ॥३९

दोहा

प्रथम प्रतिज्ञा इह कही, श्रावक के मुख जान।
अब दूजी प्रतिमा कथन, कछु इक कहो बखानि ॥४०

छद चाल

तह पाँच अणुव्रत जानो, गुणव्रत पुनि तीन बखानो।
शिक्षाव्रत मिलि कै च्यारो, दूजो प्रतिमा को धारी ॥४१
बारा व्रत वरनन आगे, कोनो चित धरि अनुरागे।
पुनरुक्त दोष तैं जानी, दूजा नहि कथन कथानी ॥४२
तीजी प्रतिमा सामायिक, भविजन को सुर शिवदायक।
आगे बारा व्रत माही, वरनन कीनो सक नाही ॥४३
चौथी प्रतिमा तिहि जानो, प्रोपध तसु नाम बखानो।
वरनन सुनिवे को चाव, द्वादश व्रत मधि दरसाव ॥४४
पचम प्रतिमा वडभाग, सुनि सचित्त करो परित्याग।
काचो जल कोरो नाज फल हरित सकल नही काज ॥४५
सब पत्र शाक तरु पान, नागर बेलि अघ थान। सहु कद मूल है जेते, सूके फल सारे तेते ॥४६
अरु वीज जानिये सारे, माटी अरु लूण विचारे।
करि त्याग सचित्त व्रत धारी पचम प्रतिमा तिहि पारी ॥४७
दिन चढे घडी दोय सार, पछिलो दिन बाकी धार।
इतने मधि भोजन करिहै, छट्ठी प्रतिमा सो धरि है ॥४८

मरयादा धरवि आहार, चारो को करि परिहार।
तियको सेवे दिन नाही, छट्ठी प्रतिमा सो धराँही ॥४९
प्रतिमा छह तो जो जीव, समकित जुत धरै सदीव।
तिह श्रावक जघन्य सुजाणि, भाषै इम जिनवर वाणि ॥५०
श्रेणिक नृप प्रसन कराही, श्री गौतम गणधर पाही।
ब्रह्मचर्य नाम प्रतिमा की, कहिये प्रभु कथन सु ताको ॥५१
सुनिये अब श्रेणिक भूप, सप्तम प्रतिमा को सरूप।
मन वच क्रम धारि त्रिशुद्ध, नव विधि जो शील विशुद्ध ॥५२
निज पर वनिता सब जानी, आजनम पर्यन्त तजानी।
अब नव विधि शील सुनीजे नित ही तसु हृदय गणीजे ॥५३
मानवणी सुर-तिय जाणी, तिरयचणी त्रितय बखाणी।
ये तीनो चेतन वाम, मन वच क्रम तजि दुख धाम ॥५४
पाषाण काठ चित्राम, तजिये मन वच परिणाम।
नव विधि ब्रह्मचर्य धरीजे, सप्तम प्रतिमा आचरीजे ॥५५
निज घर आरम्भ तजेई, परको उपदेश न देई।
भोजन निज पर घर माही, उपदेश्यो कबहु न खाही ॥५६
व्यापार सकल तजि देई, सो स्वर्गादिक सुख लेई।
प्रतिमा इह अष्टम नाम, आरम्भ-त्याग अभिराम ॥५७
नवमी प्रतिमा सुनि जान, नाम जु परिगह परिमान।
निज तनपै वसन धराही, पठने को पुस्तक ठाही ॥५८
इन बिन सब परिग्रह त्याग, मध्यम श्रावक बड भाग।
दिव लातव अर कापिष्ठ, तह लो सुख लहै गरिष्ठ ॥५९
प्रतिमा अनुमति तस नाम, दशमी दायक सुख धाम।
उपदेश न निज घरि परि-गेह, ले जाय असन को जेह ॥६०
तिनके सो भोजन लेहैं, उपदेश्यो कबहु न खै है।
निज जन अरु परजन सारे, उपदेश न पाप उचारे ॥६१
जाको परिग्रह मुनि लेई, पीछी कमडल सु धरेई।
कोपीन कणगती जाके, छह हाथ वसन पुनि ताके ॥६२
एती परिगह मरजाद, गहि है न अवर परमाद।
एकादश प्रतिमा धारै, भाखै जिन दुय परकारै ॥६३
प्रथमहि क्षुल्लक ब्रह्मचार, उत्कृष्ट ऐलक निरधार।
क्षुल्लक सख्या परमाण, कपडो पट हाथ सुजाण ॥६४
इकपटो न सीयो जाकै, कोपीन कणगती ताकै।
कोमल पीछी कर धारै, प्रति लेखि रु भूमि निहारै ॥६५
शौचादि निमित्त के कार्ज, कमडल ताके ढिग राजै।
आहार निमित्त तसु जानी, मुकते घर पच वखानी ॥६६

उत्कृष्ट ऐलक व्रत धारी, जिनकी विधि भाष्यो सारी।
मठ मडप वन के माही, निश दिन थिरता ठहराही ॥६७
कोपीन कणगती जाके, पीछे कमडल है ताके।
परिगह एतो ही राखै, इम कथन जिनागम भाखै ॥६८
भोजन सो करिय उदड, घर पच तणी थित्ती मड।
चित परम ध्यान मे राखै, आतम चितवन रस चाखे ॥६९
सुनिये श्रेणिक भूपाल, दर्शन प्रतिमान विसाल।
तिह विनु दस प्रतिमा जानी, निरफल भाषी जिन वाणी ॥७०
वासन की वोलि करीजे, उपरा उपरीज धरीजे।
नीचे हुई जर जर वासन, ऊपर ले भाजन की आसन ॥७१
सव फूट जाय छिन माही, समरथ विनु कवन रखाही।
प्रथमहि दर्शन दिढ कीजे, पीछे व्रत और धरी जे ॥७२
एकादश प्रतिमा सारी, ताकी गति सुन सुखकारी।
जावें षोडशमे स्वर्ग, भव दुइ तिहुँ लहि अपवर्ग ॥७३
दशमो प्रतिमा को धारी, क्षुल्लक अरु ऐलक विचार।
उत्कृष्ट सरावक एह, भाषे जिनमारग तेह ॥७४

दोहा

प्रतिमा ग्यारा को कथन, जिन आगम परमाण।
परि पूरण कीनो सवै, किसन सिंघ हित जाण ॥७५

इति प्रतिमा ग्यारा को कथन।

o

अथ दानादिकार। दोहा

आहार औषध अभय पुनि, शास्त्रदान ये चार। श्रावक जन नित दीजिये, पात्र-कुपात्र विचार ॥७६
आगें अतिथि विभाग मे, वरनन कीनो सार। इहाँ विशेष कीनो नही, दूषण लगैं दुवार ॥७७
जो इच्छा चित सुननिकी, पूरव कह्यो वत्तन्त। देखि लेहि अनुराग धरि, तातें मन हरषन्त ॥७८

अथ जल-गालन-कथन। दोहा

अव जल-गालण विधि प्रगट, कही जिनागम जेम।
भाषो भविजन साभलो, धारो चित धरि पेम ॥७९
दोय घडी के आतरै, जो जल पीवै छान। परम विवेकी जुत दया, उत्तम श्रावक जान ॥८०

छन्द चाल

नौतन वस्तर के माही, छानो जल जतन कराही।
गालन जल जिहि वारे, इक वूंद मही नहिं डारै ॥८१
कोइ मतिहीन पुराने, वस्तर माही जल छानें।
अरु वूद भूमि पर नाखैं, उपजे अघ जिनवर भाखै ॥८२

तिन माही जीव अपार, मरि हैं ससै नहिं धार ।
जाके करुणा न विचार, श्रावक नहि जानि गवार ॥८३
धीवर सम गिनिये ताहि, जल को न जतन जिहि पाहि ।
द्वय द्वय घटिका मे नीर, छाणै मतिवत गहीर ॥८४
अथवा प्रासुक जल करि के, राखै भाजन मे धरि के ।
गृह-काज रसोई माहै, प्रासुक जल ही वरता है ॥८५
अनछाण्यौ वरतै नीर, ताकौ सुनि पाप गहीर ।
इक वरषि लगे जो पाप, धीवर कहि है सो आप ॥८६
अरु भील महा अविवेक, दौं अगनि देय दस एक ।
दौंवनि को अघ इक वार, कीये ह्वै जो विस्तार ॥८७
अनछाण्यौ वरतै पानी, इस सम जो पाप बखानी ।
ऐसो डर धरि मन धीर, विनु गालें वरते न नीर ॥८८

उक्त च—

सवत्सरेण मेकत्व चैवर्तकस्य हिंसक । एकादश दवादाहे अपूत-जल सग्रही ॥८९
लूतास्यतन्तुगलिते ये विन्दौ सन्ति जन्तव । सूक्ष्मा भ्रमरमानापि, नैव मान्ति त्रिविष्टपे ॥९०

अडिल्ल

मकडी का मुख थकी तत निकसै जिमौ, तिहि समान जलबिन्दु तणौ सुनि एक सौ ।
तामे जीव असख्य उडै ह्वै भ्रमर ही, जम्बूद्वीप न माय, जिनेश्वर इम कही ॥९१

तथा चोक्तम्

षट्त्रिंशदङ्गुल वस्त्र चतुर्विंशतिविस्तृतम् । तद्वस्त्र द्विगुणीकृत्य तोय तेन तु गालयेत् ॥९२
तस्मिन्मध्यस्थिताञ्जीवान् जलमध्ये तु स्थाप्यते । एव कृत्वा पिबेत्तोय, स याति परमा गतिम् ॥९३

अडिल्ल

वस्तर अगुल छत्तीस सुलीजिये, चौडाई चौईस प्रमाण गहीजिये ।
गुढी विना अतिगाढौ दोवड कीजिये । इसे नातणै छाणि सदा जल पीजिये ॥९४
तामे हैं जे जीव जतनि करिकै सही, छाणा जलतें अधर नीर मे खेपही ।
करुणा धरि चित नीर एम पीवे जिके, सुर पद सशय नाहि, लहै शिवगति तिके ॥९५

चौपाई

ऐसी विधि जल छाण्या तणी, मरयादा घटिका दुइ भणी ।
प्रासुक कियो पहर दुय जाणि, अधिक उसण वसु जाम वखाणि ॥९६
मिरच इलायची लोंग कपूर, दरव कषाय कसे लौ चूर ।
इन तें प्रासुक जल कर वाय ताका भाजन जुदो रहाय ॥९७
इतनौ प्रासुक कीजे नीत, जाम दोय मध्य होइ व्यतीत ।
मरयादा ऊपर जो रहाय, तामे सम्मूछन उपजाय ॥९८

अरु वे फिरि छान्यो नहि परे, वाके जीव कहा लौ धरे ।
प्रासुक जलके भाजन माहि, जो कहु नीर अगालत आहि ॥९९
ताके जीव मरे सब सही, उनको पाप कोई न इच्छही ।
तातें बहुत जतन मन आनि, प्रासुक करि वरतौ सुख दानि ॥८००
छाण्यौ जल घटिका द्वय माहि, सम्मूर्च्छन उपजै सक नाहि ।
आज उसन को विधि सबठौर, व्यापि रहो अति अधकी दौर ॥१
व्यालू निमित असन करि धरे, ता पीछे खोरा ऊबरे ।
तिनमे जल तातौ करवाय, निसि सवार लौं सो निरवाहि ॥२
मरयादा माफिक नहि सोय, ताको वरतो मति भवि लोय ।
कीजे उसन इसी विधि नीर, जो जिन-आज्ञा-पालन वीर ॥३
भात वोरिये जिह जल माहि, वैसो जल जो उसन कराहि ।
आठ पहर मरयादा तास, सम्मूर्च्छन पीछे ह्वं जास ॥४
जो श्रावक-व्रत को प्रतिपाल, तिहको निसि जलकी इह चाल ।
छाण्यौ प्रासुक तातौ नीर, म यादा मे वरता नीर ॥५

छन्द चाल

वीछे कपडे जो नीर, छानें श्रावक नही कीर ।
मरयाद जिती कपडा की, तासो विधि जल छणवाकी ॥६
यातें सुनिये भवि प्राणी, जलकी विधि मनमें आनी ।
वहु धरि विवेक जल गाले, मन वच तन करुणा पाले ॥७
पचनिमे सो अति लाजे, अर जिन-आज्ञा सो त्याजे ।
सो पाप उपावै भारी, जाणौ तसु हीणाचारी ॥८
यातें ल्यो वसन सुफेद, छानो जल किरिया वेद ।
औरनि उपदेश जु दीजे, बिनु छाणे कवहूँ नहि पीजे ॥९
श्रावक-वनिता घर माही, किरिया जुत सदा रहाही ।
वह जतन थकी जल छाने, ताको जस सकल वखाने ॥१०
लघु त्रिया प्रमाद प्रवीन, जलकी किरियामे हीन ।
तापै न छणावै पानी, वनिता सो जाण्यो स्यानी ॥११
तजि आलस अरु परमाद, गाले जल धरि अह्लाद ।
औरनिसो न हि वतरावै, जल-कण नहि पडिवा पावै ॥१२
जल वूद जु तनुमे परि है, अपनी निन्दा वहु करि है ।
ले दड सकति-परमाण, पाले हिरदै जिन-आण ॥१३

दोहा

जिह निवाण को नीर भरि, घरमे आवे ताहि ।
छानि जिवाणी भेजियो, वाहि निवाणजि माहि ॥१४

इह जल-छालण विधि कही, जिन-आगम-अनुसार।
कहि हो कथा अणथमी, सुनियो भवि चितधार ॥१५

इति जल-गालण-विधि।

o

अथ अणथमी-कथन। दोहा

घडी दोय जब दिन चढै, पछिलो घटिका दोय।
इतने मध्य भोजन करै, निश्चय श्रावक सोय ॥१६

सोरठा

सुनिये श्रेणिक भूप, निशि-भोजन त्यागी पुरुष।
सुर सुख भुगति अनूप, अनुक्रमि शिव पाव सही ॥१७
दिवस अस्त जब होय, ता पीछे भोजन करै।
वे नर ऐसे होय, कहूँ सुनो श्रेणिक नृपति ॥१८

नाराच छन्द

उलूक काक औ विलाव, गृद्ध पक्षि जानिये,
वघेरु डोडु सर्प सर सावरौ बखानिये,
हवति गोहरो अतीव पाप रूप थाइये,
निशी आहार दोष तें कुजोनिको लहाइये ॥१९

दोहा

निशि वासरको भेद बिन, खात नृपति नहिं होय। सीग पूछतें रहित ही, पशु जानिये सोय ॥२०
दिन तजि निशि भोजन करै, महापापि मति मूढ।
बहु मोल्यो माणिक तजै, काच गहे धरि रूढ ॥२१

छन्द चाल

निशि माहे असन कराही, सो इतने दोष लहाही।
भोजनमे कीडी खाय, तसु बुद्धि-नाश हो जाय ॥२२
जूँ उदर-माहि जो जाय, तिह रोग जलोदर थाय।
माखी भोजनमे खैहै, तत्छिण सो वमन करै है ॥२३
मकडी आवे भोजनमे, तो कुष्ट रोग ह्वै तन मे।
कटक रु काठ को खड, फसि है सो गले प्रचण्ड ॥२४
तसु कठ विथा विसतारै, ह्वै है नहिं ढील लगारै।
भोजनमे खैहैं वाल, सुर-भग होय ततकाल ॥२५
अरु अशन करत निशि माही, वज्जादिकमे उपजाही।
इनि आदि अशन निशि दोष, सबही हो है अघकोष ॥२६

सोरठा

निशि भोजनमे जीव, अति विरूप मूरति सही ।
तिनमे विकल अतीव, अलप आयु अर रोग-युत ॥२७

दोहा

भाग्य-हीन आदर-रहित, नीच-कुलहि उपजाहि ।
दुख अनेक लहै हैं सही, जो निशि भोजन खाहि ॥२८

चाल छन्द

एक हस्तिनागपुर ठाम, तस जसोभद्र नृप नाम ।
रानी जसभद्रा जानो, श्रेष्ठी श्रीचन्द वखानो ॥२९
तिय लिखमी मति तसु एह नृप-प्रोहित नाम सुनेह ।
द्विज रुद्रदत्त तसु तीया, रुद्रदत्ता नाम जु दीया ॥३०
हरदत्त पुत्र द्विज नाम, तिन चरित सुनो दुख-धाम ।
वीतो भादोको मास, आसोज प्रथम तिथि जास ॥३१
निज पितृ-श्राद्ध दिन पाय, द्विज पुरका सकल वुलाय ।
वाह्मण जीमणको आये, बहु अशन थकी जुम थाये ॥३२
द्विज पिता नृपतिके ताई, पोपै वहु विनो धराई ।
पोछें नृप-मन्दिर आयो, राजा वहु काम करायो ॥३३
तसु राज-काजके माही, भोजन की सुधि न रहाही ।
बहु क्षुधा थकी दुख पायो, निशि अर्ध गया घरि आयो ॥३४
निशि पहर गई जव एक, तसु वनिता धरि अविवेक ।
रोटी जीमन कूँ कीनी, वेंगण करणें मन दीनी ॥३५
हाडी चूल्हे जु चढाई, पाडोसी होगको जाई ।
इतनेमे हाडी माही, मीढक पडियो उछलाही ॥३६
तिम वेंगणा छौंकै आय, मीढक मूवो दुख पाय ।
तव हाडी लई उतारी, रोटी ढकणो परि धारी ॥३७
कीडी रोटीमे आई, घृत सनमधितें अधिकाई ।
निशि वीत गई दो जाम, जीमण वैठो द्विज ताम ॥३८

दोहा

निशि अँधियारी दीप विनु, पीडित भूख अपार ।
जो निशि भोजी पुरुष हैं तिनके नही विचार ॥३९
रोटी मुखमे देत ही, चीटी लगी अनेक ।
विप्र होठ चटकौ लियो, वडो दोष अविवेक ॥४०
वैंगण को लखि मीढकौ, विस्मय आण्यो जोर ।
तातें अघ उपज्यो अधिक, महा मिथ्यात अघोर ॥४१

अडिल्ल

कालान्तर तजि प्राण भयौ घूघू जबै, तहाँ मरण लहि सोई नरक गयो तबै।
पच प्रकार अपार लहै दुख ते सही, निकलि काक मर जाय ठई दुख की गही ॥४२
तिह वायस चउपद अनेक जु सताइया, विष्टादिक जे जीव चित्त ते पाइया।
प्रचुर आयुतें पाप उपाय मूवो जदा, नरकि जाय बहु आयु समुद भुगतै तदा ॥४३
तिहतैं निकसि बिलाव भयौ पापी घनौ, मूसा मीढक आदि भखै कहलो गनौ।
नरक जाय दुख भुजि ग्रद्ध पक्षी भयौ, प्राणो भखे अनेक नरक फिर सो गयौ ॥४४
निकसि नरकनें पाप उदै सवर भयौ तिहँ भखो जोव अपार नरक पचम गयौ।
निकलि सूर है जीव भखै तिनको गिनै, अघ उपाय मरि नरक जाय सहि दुख घनै ॥४५
अजगर लहि परजाय मनुष तिरयग ग्रसे, नरक जाय दुख लहै कहे वाणी इसे।
निकलि वघेरो थाय जीव बहु-खाइया, पाप उपाय लहाय नरक दुख पाइया ॥४६
गोधा तिरयग जमति निकसि तहँते भयो, बहुत जतुको भखि नरक पुनि सो गयो।
मच्छ तणो परजाय लई दुख की मही, लघु मच्छादिक खाय उपाये अघ सही ॥४७
सो पापी मरि नरक गयो अतिघोर मे, स्वासति निमिष न लहै कहू निशि भोर मे।
तह भुगते दुख जीव याद जो आवही, निशि न नीद दिन नीर अशन नहि भावही ॥४८

चौपाई

निशि-भोजन-लपट द्विज भयो, महापाप को भाजन थयो।
दस भव तिरयग गति दुख लह्यो, तिम दस भव दुख नरक निसर्यो ॥४९
नरक थकी नीकलिकै सोई, देस नाम करहाट सुजोई।
कौसल्या नगरो नरपाल, है सग्रामसूर गुणमाल ॥५०
तसु पटतिया वल्लभा नाम, राजा-सेठ श्रीधर हे ताम।
श्रीदत्ता भार्या तिह तणी, राजपुरोहित लोमस भणी ॥५१
प्रोहित-वनिता लाभा नाम, महीदत्त सुत उपज्यो ताम।
सात विसन लपट अधिकानी, रुद्रदत्त द्विज कोवर मानी ॥५२
महीदत्त कुविसनतैं जास, पिता लक्ष्मी सब कियौ विनास।
जूवा वेश्या रमि अधिकाय, राजदड दे निरधन थाय ॥५३
घर मे इतो रह्यो नहि कोय, भोजन मिलिये हू नहि जोय।
तब द्विज काढि दियो घर थकी, गयो सोपि मामा घर तकी ॥५४
मामैं तसु आदर नहि दियो, बहु अपमान तास कौ कियो।
भाग्य हीन नर जहँ जह जाय, तहँ तहँ मान हीनता थाय ॥५५

सवैया

जा नरके सिर टाट सदा रवि-ताप थकी दुख जोरी लहै है,
पादप चील तणी तकि छाइ गये सिर चीलकी चोट सहै है।
ता फलतें तसु फाटि है सीस वेदनि पाप उदै जु गहै है,
भाग्य विना नर जाय जहाँ, तहँ आपद थानक भरिही रहै है ॥५६

मातुल तास महीदत्त सीस नवाय दियो अब ही ।
पूरव पाप किये मैं कौन सुभाषिये नाथ वहै सब ही ।।५७

दोहा

कौन पापतें दुख लह्यो, सो कहिये मुनि नाह । सुख पाऊ कैसे अवं, उहै बतावो राह ।।५८

सवैया तेईसा

सो मुनिराज कह्यो भो वत्स सुपूर वे पाप कहा तज याही,
प्रोहित नाम यो रुद्रदत्त महीपति के हथनापुर माही ।
सो निशि-भोजन लपट जोर पिपीलक कीट भखे अधिकाही,
सो जन रात-समय इक मोढक वेंगण साथ दियो मुख माही ।।५९

अडिल्ल

तास पाप के उदय मरिवि घूघू भयो, नरक जाय पुनि काग होय नरकहि गयो ।
ह्वै बिलाप लहि नरक जाय सवर भयो, नरक जाय ह्वै ग्रद्धपक्षि नरकहि लह्यो ।।६०
निकलि सूकरो होय नरक पद पाइयो, ह्वै अजगर लहि नरक वघेरो थाइयो ।
स्वभ्र जाय फिर गोधा तिरयग गति पाई, नरक जाय हो मच्छ नरक पृथिवी लई ।।६१
नरक महीतें निकल महीदत्त थाइयो, उलूकादि दस तिरयग भव दुख पाइयो ।
नरक वार दस जाय महा दुख तें सह्यो, निसि भोजन के भखैं स्वभ्र दुख अति लह्यो ।

दोहा

महीदत्त फिर पूछवे, निसि भोजनतें देव । न'भवमे दुख किम लहे, सो कहिये मुझ भेव ।
मुनि भाषैं द्विज-पुत्र सुण, निसि मे भोजन खात । जीव उदरि जैहै तवे, बहुविधि है ७८

सवैया इकतीसा

माखीतें वमन होय, चींटी बुद्धि नाश करे, जूकातें जलोदर होय, कोडी लूत करि है,
काठ फास कटकर्ते गल्मेव थावै विथा, बाल सुर-भग करै कठ हीन परि है ।
भ्रमरीतें सूना होय, कसारीतें कम्पवाय, विन्तर अनेक भाति छल उर धरि हैं,
इन आदिक कथन कहाँ लौं कीजे वत्स, सुन नरक तिर्यंच थाम कहे जो ऊपरि हैं ।।

दोहा

जो कदाचि मर मनुष ह्वै विकल अग बिनु रूप ।
अलप आयु दुर्भग अकुल, विविध रोग दुख कूप ।।६६
इत्यादिक निशि-अशन तें, लहि है दोष अपार ।
सुनवि महीदत्त मुनि प्रतें, कहै देहु व्रत सार ।।६७
मुनि भाषैं मिथ्यात्व तजि, भजि सम्यक्त्व रसाल ।
पूरव श्रावक व्रत कहे, द्वादश धरि गुणमाल ।।६८
दर्शन व्रत विधि भाषिये, करुणा करि मुनिराज ।
मुझ अनन्त भव-उदधितें, तारणहार जहाज ।।६९

अडिल्ल

कालान्तर तजि प्राण भयौ घूघू जबै, तहाँ मरण लहि सोई नरक गयो तबै।
पच प्रकार अपार लहै दुख ते सही, निकलि काक मर जाय ठई दुख की गही ॥४२
तिह वायस चउपद अनेक जु सताइया, विष्टादिक जे जीव चित्त ते पाइया।
प्रचुर आयुतें पाप उपाय मूवो जदा, नरकि जाय बहु आयु समुद भुगतै तदा ॥४३
तिहतैं निकसि बिलाव भयौ पापी घनौ, मूसा मीढक आदि भखै कहलो गनौ।
नरक जाय दुख भुजि ग्रद्ध पक्षी भयौ, प्राणी भखे अनेक नरक फिर सो गयौ ॥४४
निकसि नरकतें पाप उदै सबर भयौ, तिहँ भखो जीव अपार नरक पचम गयौ।
निकलि सूर है जीव भखै तिनको गिनै, अघ उपाय मरि नरक जाय सहि दुख घनै ॥४५
अजगर लहि परजाय मनुष तिरयग ग्रसे, नरक जाय दुख लहै कहे वाणी इसे।
निकलि वघेरो थाय जीव बहु-खाइया, पाप उपाय लहाय नरक दुख पाइया ॥४६
गोधा तिरयग जमति निकसि तहँते भयो, बहुत जतुको भखि नरक पुनि सो गयो।
मच्छ तणी परजाय लई दुख की मही, लघु मच्छादिक खाय उपाये अघ सही ॥४७
सो पापी मरि नरक गयो अतिघोर मे, स्वासति निमिष न लहै कहू निशि भोर मे।
तह भुगते दुख जीव याद जो आवही, निशि न नीद दिन नीर अशन नहि भावही ॥४८

चौपाई

निशि-भोजन-लपट द्विज भयो, महापाप को भाजन थयो।
दस भव तिरयग गति दुख लह्यो, तिम दस भव दुख नरक निसर्यो ॥४९
नरक थकी नीकलिकैं सोई, देस नाम करहाट सुजोई।
कौसल्या नगरो नरपाल, है सग्रामसूर गुणमाल ॥५०
तसु पटतिया वल्लभा नाम, राजा-सेठ श्रीधर है ताम।
श्रीदत्ता भार्या तिह तणी, राजपुरोहित लोमस भणी ॥५१
प्रोहित-वनिता लाभा नाम, महोदत्त सुत उपज्यो ताम।
सात विसन लपट अधिकानी, रुद्रदत्त द्विज कोवर मानी ॥५२
महोदत्त कुविसनतैं जास, पिता लक्ष्मी सब कियौ विनाम।
जूवा वेश्या रमि अधिकाय, राजदड दे निरधन थाय ॥५३
घर मे इतो रह्यो नहि कोय, भोजन मिलिये हू नहि जोय।
तब द्विज काढि दियो घर थकी, गयो सोपि मामा घर तकी ॥५४
मामैं तसु आदर नहिं दियो, बहु अपमान तास कौ कियो।
भाग्य हीन नर जहँ जह जाय, तहँ तहँ मान हीनता थाय ॥५५

सवैया

जा नरके सिर टाट सदा रवि-ताय थकी दुख जोरी लहै है,
पादप चील तणी तकि छाइ गये सिर चीलकी चोट सहै है।
ता फलतें तसु फाटि है सीस वेदनि पाप उदै जु गहै है,
भाग्य विना नर जाय जहाँ, तहँ आपद थानक भरिही रहै है ॥५६

मातुल तास महीदत्त सीस नवाय दियो अब ही।
पूरव पाप किये मैं कौन सुभाषिये नाथ वहै सब ही ।।५७

दोहा

कौन पापत्ते दुख लह्यो, सो कहिये मुनि नाह। सुख पाऊ कैसे अवं, उहै बतावो राह ।।५८

सवैया तेईसा

सो मुनिराज कह्यो भो वत्स सुपूर वे पाप कहा तज याही,
प्रोहित नाम यो रुद्रदत्त महीपति के हथनापुर माही।
सो निशि-भोजन लपट जोर पिपीलक कीट भखे अधिकाही,
सो जन रात-समय इक मीढक वैंगण साथ दियो मुख माही ।।५९

अडिल्ल

तास पाप के उदय मरिवि घूघू भयो, नरक जाय पुनि काग होय नरकहिं गयो।
ह्वै विलाप लहि नरक जाय मवर भयो, नरक जाय ह्वै ग्रद्धपक्षि नरकहिं लह्यो ।।६०
निकलि सूकरो होय नरक पद पाइयो, ह्वै अजगर लहि नरक बघेरो थाइयो।
श्वभ्र जाय फिर गोधा तिरयग गति पाई, नरक जाय हो मच्छ नरक पृथिवी लई ।।६१
नरक महीतें निकल महीदत्त थाइयो, उलूकादि दस तिरयग भव दुख पाइयो।
नरक वार दस जाय महा दुख तें सह्यो, निसि भोजन के भखें श्वभ्र दुख अति लह्यो ।।६२

दोहा

महीदत्त फिर पूछवे, निसि भोजनतें देव। नरभवमे दुख किम लहे, सो कहिये मुझ भेव ।।६३
मुनि भाषै द्विज-पुत्र सुण, निसि मे भोजन खात। जीव उदरि जैहै तवै, बहुविधि है उत्पात ।।६४

सवैया इकतीसा

माखीते वमन होय, चीटी बुद्धि नाश करे, जूकातें जलोदर होय, कोडी लूत करि है,
काठ फास कटकतें गलेमेव थावै विथा, बाल सुर-भग करै कठ हीन परि है।
भ्रमरीतें सूना होय, कसारीतें कम्पवाय, विन्तर अनेक भाति छल उर धरि हैं,
इन आदिक कथन कहाँ लौं कीजे वत्स, सुन नरक तिर्यंच थाम कहे जो ऊपरि हैं ।।६५

दोहा

जो कदाचि मर मनुष ह्वै विकल अग बिनु रूप।
अलप आयु दुर्भंग अकुल, विविध रोग दुख कूप ।।६६
इत्यादिक निशि-अशन तें, लहि है दोष अपार।
सुनवि महीदत्त मुनि प्रतें, कहै देहु व्रत सार ।।६७
मुनि भाषै मिथ्यात्व तजि, भजि सम्यक्त्व रसाल।
पूरव श्रावक व्रत कहे, द्वादश धरि गुणमाल ।।६८
दर्शन व्रत विधि भाषिये, करुणा करि मुनिराज।
मुझ अनन्त भव-उदधितें, तारणहार जहाज ।।६९

सोरठा

दोष पच्चीस न जास, सवेगादिक गुण-सहित । सप्त तत्त्व अभ्यास, कहै मुनीश्वर विप्र सुन ॥७०

दोहा

इस दरशन सरधान करि, निश्चै अरु व्यवहार । पूरब कथन विशेषतें, कह्यौ ग्रन्थ अनुसार ॥७१
सात व्यसन निशि अशन तजि, पालो वसु गुण मूल ।
चरम वस्तु जल विनु छण्यो, त्यागै व्रत अनुकूल ॥७२

चौपाई

इत्यादिक मुनि-वचन सुनेइ, उपदेश्यो व्रत विधिवत लेइ ।
हरषित आयो निजघर माहि, तासु क्रिया लखि सब विसमाहि ॥७३
अहो सात विसनी इह जोर, अरु मिथ्याती महा अघोर ।
ताको चलन देखिये इसो, श्रीजिन आगम भाष्यो तिसो ॥७४
मात-पिता तसु नेह करेइ, भूपति ताको आदर देइ ।
नगरमाहि मानैं सब लोग, विविध तणें बहु भुजै भोग ॥७५
पुण्य थकी सब ही सुख लहै, पाप उदै नाना दुख सहै ।
ऐसो जान पुण्य भवि करो, अघतें डरपि सबै परिहरो ॥७६
महीदत्त बहुधन पाइयो, ततछिन पुण्य उदै आइयो ।
पूजा करै जपै अरहत, मुनि श्रावक को दान करत ॥७७
जिनमन्दिर जिनबिम्ब कराय, करी प्रतिष्ठा पुण्य उपाय ।
सिद्ध क्षेत्र वदे बहु भाय, जिन आगम सिद्धान्त लिखाय ॥७८
आप पढै औरनिको देय, सप्त क्षेत्र धन खरच करेय ।
निशि दिन चालै व्रत अनुसार, पुण्य उपायो अति सुखकार ॥७९
कितेक काल गया इह भाति, अन्त समय धारी उपशाति ।
दरशन ज्ञान चरण तप चार, आराधन मनमाहि विचार ॥८०
भाई निश्चै अरु व्यवहार, धारि सन्यास अन्तकी वार ।
शुभ भावनितें छाडे प्रान, पायो षोडश स्वग विमान ॥८१
सिद्धि आठ अणिमादिक लही, आयु वीस द्वय सागर भई ।
पाचो इन्द्री के सुख जिते, उदैं प्रमाण भोगिये तिते ॥८२
समकित धरम ध्यान जुत होय, पूरण आयु करइ सुर लोय ।
देश अवन्ती मालव जाण उज्जैनी नगरी सुवखाण ॥८३
पृथ्वी तल तसु राज करेह, प्रेमकारिणी तिय गुण गेह ।
समकित दृष्टी दपति सही, जिन-आज्ञा हिरदै तिन गही ॥८४
स्वग सोलमे ते सुर चयो, प्रेमकारिणी के सुत भयो ।
नाम सुधारस ताको दियो, मात-पिता अति आनन्द कियो ॥८५
दियो दान जाचक जन जितौ, मापै कथन होय नहि तितौ ।
विधिसो पूजे जिनवर देव, श्रुत-गुरु वदन करि बहु सेव ॥८६

अधिक महोत्सव कीनो सार, जैसो श्रावक को आचार।
वस्त्रादिक आभरण अपार, सब परिजन संतोषे सार ॥८७
अनुक्रम वरस सातको भयो, पंडित पास पठन को दयो।
शास्त्र कलामें भयो प्रवीन, श्रावक व्रत जुत समकित लीन ॥८८
जोवनवंत भयो सुकुमार, व्याहन कीनो धरम विचार।
एक दिवस वन क्रीडा गयो, वड तरु विजरीने क्षय भयो ॥८९
देख कुमर उपजो वैराग, अनुप्रेक्षा भाई बड भाग।
चन्द्रकीर्ति मुनि के ढिग जाय, दीक्षा लीनी तब सुखदाय ॥९०
बाहिर आभ्यन्तर चौवीस, तजे ग्रन्थ मुनि नाये सीस।
पंच महाव्रत गुप्ति जु तीन, पंच समिति धारी परवीन ॥९१
इम तेरा विध चारित सजे, निश्चय रत्नत्रय सु भजे।
सुकल ध्यान-बल मोह विनास, केवल ज्ञान ऊपज्यो तास ॥९२
भवि उपदेशे बहुविधि जहां, आयु करम पूरण भयो तहां।
शेष अघातिय को करि नास, पायो मोक्षपुरी सुख वास ॥९३

सवैया

मोह कर्म नास भये प्रसमत्त गुण थये, ज्ञानावर्ण नास भये ज्ञान गुण लयो है,
दसण आवरण नास भयो दसण, सु अन्तराय नासतें अनन्तवीर्य थयो है।
नाम कर्म नास भये प्रगटयो सुहुमत्त गुण, आयु नास भये अवगाहण जु पायो है,
गोत्रकर्म नास किये भयो है अगुरुलघु, वेदनीके नासें अव्याबाध परिणयो है ॥९४

दोहा

विवहारे वसु गुण कहे, निश्चे सुगुण अनन्त। काल अनन्तानन्त तिते, निवसैं सिद्ध महन्त ॥९५

चौपाई

इह विधि भवि दर्शन जुत सार, पालैं श्रावक व्रत-आचार।
अर मुनिवरके व्रत जो धरै, सुर नर सुख लहि शिव-तिय वरै ॥९६
निशि-भोजनतें जे दुख लये, अरु त्यागे सुख ते अनुभये।
तिनके फलको वरनन भरी, कथा अणथमी पूरण करी ॥९७

छप्पय

दिवस उदय द्वय घडी चढत पीछें ते लेकर,
अस्त होत द्वय घडी रहै पिछली एते पर।
भोजन जे भवि कर तजैं निशि चार अहार ही,
खादिम स्वादिम लेप पान मन वच कर वारही ॥
सो निशि भोजन तजन वरत नित प्रति जो जिनराज वखानियो।
इह विधि नित प्रति चित्त धरि श्रावक मन जिहि मानियो ॥९८
चित्रकूत्र गिरि निकट ग्राम मातंग वसै तहैं,
नाम जागरी जान कुरंग चंडार तिया तहैं।

सोरठा

दोष पच्चीस न जास, सवेगादिक गुण-सहित । सप्त तत्त्व अम्यास कहै मुनीश्वर विप्र सुन ॥७०

दोहा

इस दरशन सरधान करि, निश्चै अरु व्यवहार । पूरब कथन विशेषतें, कह्यौ ग्रन्थ अनुसार ॥७१
सात व्यसन निशि-अशन तजि, पालो वसु गुण मूल ।
चरम वस्तु जल विनु छण्यो, त्यागै व्रत अनुकूल ॥७२

चौपाई

इत्यादिक मुनि-वचन सुनेइ, उपदेश्यो व्रत विधिवत्त लेइ ।
हरषित आयो निजघर माहि, तासु क्रिया लखि सब विसमाहि ॥७३
अहो सात विसनी इह जोर, अरु मिथ्याती महा अघोर ।
ताको चलन देखिये इसो, श्रीजिन आगम भाष्यो तिसो ॥७४
मात-पिता तसु नेह करेइ, भूपति ताको आदर देइ ।
नगरमाहि मानै सब लोग, विविध तर्णे बहु भुंजै भोग ॥७५
पुण्य थकी सब ही सुख लहै, पाप उदै नाना दुख सहै ।
ऐसो जान पुण्य भवि करो, अघतें डरपि सबै परिहरो ॥७६
महीदत्त बहुधन पाइयो, ततछिन पुण्य उदै आइयो ।
पूजा करै जपै अरहत, मुनि श्रावक को दान करत ॥७७
जिनमन्दिर जिनबिम्ब कराय, करी प्रतिष्ठा पुण्य उपाय ।
सिद्ध क्षेत्र वदे बहु भाय, जिन आगम सिद्धान्त लिखाय ॥७८
आप पढै औरनिको देय, सप्त क्षेत्र धन खरच्च करेय ।
निशि दिन चालै व्रत अनुसार, पुण्य उपायो अनि सुखकार ॥७९
कितेक काल गया इह भाति, अन्त समय धारी उपशाति ।
दरशन ज्ञान चरण तप चार, आराधन मनमाहि विचार ॥८०
भाइं निश्चै अरु व्यवहार, धारि सन्यास अन्तकी वार ।
शुभ भावनितें छाडे प्रान, पायो षोडश स्वग विमान ॥८१
सिद्धि आठ अणिमादिक लही, आयु वीस द्वय सागर भई ।
पाचो इन्द्री के सुख जिते, उदै प्रमाण भोगिये तिते ॥८२
समकित घरम ध्यान जुत होय, पूरण आयु करइ सुर लोय ।
देश अवन्ती मालव जाण उज्जैनी नगरी सुवखाण ॥८३
पृथ्वी तल तसु राज करेह, प्रेमकारिणी तिय गुण गेह ।
समकित दृष्टी दपति सही, जिन-आज्ञा हिरदै तिन गही ॥८४
स्वग सोलमे ते सुर चयो, प्रेमकारिणी के सुत भयो ।
नाम सुधारस ताको दियो, मात-पिता अति आनन्द कियो ॥८५
दियो दान जाचक जन जितौ, मापै कथन होय नहिं तितौ ।
विधिसो पूजै जिनवर देव, श्रुत-गुरु वदन करि बहु सेव ॥८६

अधिक महोत्सव कीनो सार, जैसो श्रावक को आचार।
वस्त्रादिक आभरण अपार, सब परिजन सतोषे सार ॥८७
अनुक्रम बरस सातको भयो, पडित पाम पठन को दयो।
शास्त्र कलामे भयो प्रवीन, श्रावक व्रत जुत समकित लीन ॥८८
जोवनवत भयो सुकुमार, व्याहन कीनो धरम विचार।
एक दिवस वन क्रीडा गयो, वड तरु बिजरीतें क्षय भयो ॥८९
देख कुमर उपजो वैराग, अनुप्रेक्षा भाई वड भाग।
चन्द्रकीर्ति मुनि के ढिग जाय, दीक्षा लीनी तव सुखदाय ॥९०
वाहिर आभ्यन्तर चौवीस, तजे ग्रन्थ मुनि नाये सीस।
पच महाव्रत गुप्ति जु तीन, पच समिति धारी परवीन ॥९१
इम तेरा विध चारित सजे, निश्चय रत्नत्रय सु भजे।
सुकल ध्यान-बल मोह विनास, केवल ज्ञान ऊपज्यो तास ॥९२
भवि उपदेशे बहुविधि जहा, आयु करम पूरण भयो तहा।
शेष अघातिय को करि नास, पायो मोक्षपुरी सुख वास ॥९३

सवैया

मोह कर्म नास भये प्रसमत्त गुण थये, ज्ञानावर्ण नास भये ज्ञान गुण लयो है,
दसण आवरण नास भयो दसण, सु अन्तराय नासतें अनन्तवीर्य थयो है।
नाम कर्म नास भये प्रगटयो सुहुमत्त गुण, आयु नास भये अवगाहण जु पायो है,
गोत्रकर्म नास किये भयी है अगुरुलघु, वेदनीके नासें अव्यावाध परिणयो है ॥९४

दोहा

विवहारे वसु गुण कहे, निश्चै सुगुण अनन्त। काल अनन्तानन्त तिते, निवसैं सिद्ध महन्त ॥९५

चौपाई

इह विधि भवि दर्शन जुत सार, पालै श्रावक व्रत-आचार।
अर मुनिवरके व्रत जो धरै, सुर नर सुख लहि शिव-तिय वरै ॥९६
निशि-भोजनतें जे दुख लये, अरु त्यागे सुख ते अनुभये।
तिनके फलको वरनन भरी, कथा अगयमी पूरण करी ॥९७

छप्पय

दिवस उदय द्वय घडी चढत पीछें ते लेकर,
अस्त होत द्वय घडी रहै पिछली एते पर।
भोजन जे भवि कर तजैं निशि चार अहार ही,
खादिम स्वादिम लेप पान मन वच कर वारही ॥
सो निशि भोजन तजन वरत नित प्रति जो जिनराज वखानियो।
इह विधि नित प्रति चित्त धरि श्रावक मन जिहि मानियो ॥९८
चित्रकूत्र गिरि निकट ग्राम मातग वसै तहैं,
नाम जागरी जान कुरग चडार तिया लहै।

सोरठा

दोष पच्चीस न जास, सवेगादिक गुण-सहित। सप्त तत्त्व अभ्यास कहै मुनीश्वर विप्र सुन ॥७०

दोहा

इस दरशन सरधान करि, निश्चै अरु व्यवहार। पूरब कथन विशेषतें, कह्यौ ग्रन्थ अनुसार ॥७१
सात व्यसन निशि अशन तजि, पालो वसु गुण मूल।
चरम वस्तु जल विनु छण्यो, त्यागै व्रत अनुकूल ॥७२

चौपाई

इत्यादिक मुनि-वचन सुनेइ, उपदेश्यो व्रत विधिवत लेइ।
हरषित आयो निजघर माहि, तासु क्रिया लखि सब विसमाहि ॥७३
अहो सात विसनी इह जोर, अरु मिथ्याती महा अघोर।
ताको चलन देखिये इसो, श्रीजिन आगम भाष्यो तिसो ॥७४
मात-पिता तसु नेह करेइ, भूपति ताको आदर देइ।
नगरमाहि मानैं सव लोग, विविध तर्णें बहु भुजै भोग ॥७५
पुण्य थकी सब ही सुख लहै, पाप उदै नाना दुख सहै।
ऐसो जान पुण्य भवि करो, अघतें डरपि सबै परिहरो ॥७६
महीदत्त बहुधन पाइयो, ततछिन पुण्य उदै आइयो।
पूजा करै जपै अरहत, मुनि श्रावक को दान करत ॥७७
जिनमन्दिर जिनविम्ब कराय, करी प्रतिष्ठा पुण्य उपाय।
सिद्ध क्षेत्र वदे बहु भाय, जिन आगम सिद्धान्त लिखाय ॥७८
आप पढै औरनिको देय, सप्त क्षेत्र धन खर्च करेय।
निशि दिन चालै व्रत अनुसार, पुण्य उपायो अति सुखकार ॥७९
कितेक काल गया इह भाति, अन्त समय धारी उपशाति।
दरशन ज्ञान चरण तप चार, आराधन मनमाहि विचार ॥८०
भाईं निश्चै अरु व्यवहार, धारि सन्यास अन्तकी वार।
शुभ भावनितें छाडे प्रान, पायो षोडश स्वर्ग विमान ॥८१
सिद्धि आठ अणिमादिक लही, आयु वीस द्वय सागर भई।
पाचो इन्द्री के सुख जिते, उदै प्रमाण भोगिये तिते ॥८२
समकित धरम ध्यान जुत होय, पूरण आयु करइ सुर लोय।
देश अवन्ती मालव जाण, उज्जैनी नगरी सुवखाण ॥८३
पृथ्वी तल तसु राज करेह, प्रेमकारिणी तिय गुण गेह।
समकित दृष्टी दपति सही, जिन-आज्ञा हिरदै तिन गही ॥८४
स्वर्ग सोलमे ते सुर चयो, प्रेमकारिणी के सुत भयो।
नाम सुधारस ताको दियो, मात-पिता अति आनन्द कियो ॥८५
दियो दान जाचक जन जितौ, मापै कथन होय नहिं तितौ।
विधिसो पूजै जिनवर देव, श्रुत-गुरु वदन करि वहु सेव ॥८६

अधिक महोत्सव कीनो सार, जैसो श्रावक को आचार।
वस्त्रादिक आभरण अपार, सब परिजन संतोषे सार ॥८७
अनुक्रम बरस सातको भयो, पंडित पास पठन को दयो।
शास्त्र कलामें भयो प्रवीन, श्रावक व्रत जुत समकित लीन ॥८८
जोवनवंत भयो सुकुमार, व्याहन कीनो धरम विचार।
एक दिवस वन क्रीडा गयो, बड तरु बिजरीतें क्षय भयो ॥८९
देख कुमर उपजो वैराग, अनुप्रेक्षा भाई बड भाग।
चन्द्रकीर्ति मुनि के ढिग जाय, दीक्षा लीनी तब सुखदाय ॥९०
बाहिर आभ्यन्तर चौवीस, तजे ग्रन्थ मुनि नाये सीस।
पंच महाव्रत गुपति जु तीन, पंच समिति धारी परवीन ॥९१
इम तेरा विध चारित सजे, निश्चय रत्नत्रय सु भजे।
सुकल ध्यान-बल मोह विनास, केवल ज्ञान ऊपज्यो तास ॥९२
भवि उपदेशे बहुविधि जहा, आयु करम पूरण भयो तहा।
शेष अघातिय को करि नास, पायो मोक्षपुरी सुख वास ॥९३

सवैया

मोह कर्म नास भये प्रसमत्त गुण थये, ज्ञानावर्ण नास भये ज्ञान गुण लयो है,
दसण आवरण नास भयो दसण, सु अन्तराय नासते अनन्तवीर्य थयो है।
नाम कर्म नास भये प्रगटयो सुहुमत्त गुण, आयु नास भये अवगाहण जु पायो है,
गोत्रकर्म नास किये भयो है अगुरुलघु, वेदनीके नासें अव्यावाध परिणयो है ॥९४

दोहा

विवहारे वसु गुण कहे, निश्चै सुगुण अनन्त। काल अनन्तानन्त तिते, निवसैं सिद्ध महन्त ॥९५

चौपाई

इह विधि भवि दर्शन जुत सार, पालै श्रावक व्रत-आचार।
अर मुनिवरके व्रत जो धरै, सुर नर सुख लहि शिव-तिय वरै ॥९६
निशि-भोजनसें जे दुख लये, अरु त्यागे सुख ते अनुभये।
तिनके फलको वरनन भरी, कथा अणथमी पूरण करी ॥९७

छप्पय

दिवस उदय द्वय घडी चढत पीछें ते लेकर,
अस्त होत द्वय घडी रहै पिछलौ एते पर।
भोजन जे भवि कर तजैं निशि चार अहार ही,
खादिम स्वादिम लेप पान मन वच कर वारही ॥
सो निशि भोजन तजन वरत नित प्रति जो जिनराज वखानियो।
इह विधि नित प्रति चित्त धरि श्रावक मन जिहि मानियो ॥९८
चित्रकूट गिरि निकट ग्राम मातंग वसै तहैं,
नाम जागरी जान कुरंग चंडार तिया तहै।

तिहि निसि-भोजन तजन वरत सेठणि पै लियो,
मन वच क्रम व्रत पालि मरण शुभ भावनि कियो ॥
वह सेठ तिया उरि ऊपनि सुता नागश्रिय जानिये।
जिन कथित-धर्म विधि जुत गहिवि सरग तणा सुख तिन लिये ॥९९
तिरयग एक सियाल सुणिचि मुनि-कथित धरम पर,
रख निसि-भोजन तजन वरत दियो लखि भविवर।
त्रिविध शुद्ध व्रत पालि सेठ सुत ह्वै प्रीतिकर,
विविध भोग भोगए नृपति-पुत्री परणवि वर ॥
मुनिराज पास दीक्षा लई, उग्र घोर तप ध्यान सजि।
वसु कर्म क्षेपि पहुचे मुकति, सुख अनन्त लहि जगत महि ॥१००
याही व्रतको धारि पूर्व ही वहुत पुरुष तिय,
तद्-भव सुर पद लहै त्रिविध पालिउ हरषित हिय।
अनुक्रमि मोक्षहि गये धरिसु दीक्षा जिनि धारी,
सुख अनन्त नहि पार, सिद्ध पदके जे धारी ॥
नर-नारी अजहु व्रत पालि हैं मन वच काय त्रिशुद्धि कर।
लहि धर्म देवगतिका अधिक, क्रम तैं पहूँचैं मुकति वर ॥१

इति अणथमी कथन।

अथ दर्शन-ज्ञान-चारित्र-कथन

दोहा

त्रेपन किरिया के विषें, दरसण ज्ञान प्रमाण।
अवर त्रितय चारित तणो, कछु इक कहो बखाण ॥२

निज आतम अवलोकिये, इह दर्शन परधान। तस गुण जाणपणो विविध, वहै ज्ञान परवान ॥३
तामे थिरता रूप रहै सु चारित होय। रत्नत्रय निश्चय यहै, मुकति-बीज है सोय ॥४
अब विवहार बखाणिये, सप्त तत्त्व परधान। नि शकादिक आठ गुण, जुत दर्शन सुख-दान ॥५

ज्ञान अष्ट विध भाषियो, व्यजन ऊजिति आदि।
जिन आगम को पाठ बहु, करै त्रिविध अहलादि ॥६

पच महाव्रत गुप्ति त्रय, समिति पच मिलि सोय। विध तेरा चारित्र है, जाणो भविजन लोय ॥७
इनको वर्णन पूव ही, निश्चय अरु व्यवहार। मति-प्रमाण सक्षेपते, कियो ग्रन्थ अनुसार ॥८

चौपाई

त्रेपन किरिया की विधि सार, पालो भवि मन वच तन धार।
सो सुर-नर-सुख लहि शिव लहै, इम गणधार गौतम जी कहै ॥९

इति त्रेपन क्रिया-कथन सम्पूर्ण।

अथ और वस्तु है तिनकी उत्पत्ति वगैरे कथन। अथ गोंद की उत्पत्ति

दोहा

गूंद हलद अरु आंवला, निपजन विधि जे थाहि।
क्रियावान पुरुषनि प्रतें, कहूँ सकल समझाहि ॥१०

चौपाई

गूंद खैरकें लागो होय, भील उतार लतु है सोय।
अरु अंगुलीकें लार लगाय, इह विधि गूंद उतारत जाय ॥११
कीडी माछर आहि अतीव, लागा रहै गूंद के जीव।
भील विवेक हीन अति दुष्ट, करुणा-रहित उतारै भ्रष्ट ॥१२
दूना मे धरते सो जाय, जीव कलेवर तामे आय।
इह विधि जाण लेहु जन दक्ष, नर-नारी सव खात प्रतक्ष ॥१३
भील-जूठ यह जाणो सही, क्रियावान नर खावै नही।
जो खैहै सो क्रिया नसाय, अवर वरतको दोप लगाय ॥१४

अथ अफीम की उत्पत्ति

अरु उतपत्ति अफीम जु तणी, जूठो दोप गूंदहि जिम भणी।
इह अफीम मे दोप अपार, खायें प्राण तजे निरधार ॥१५

अथ हल्दी की उत्पत्ति

हलद भील निज भाजन-माहि, अपने जलतें ते औटाहि।
ता पीछें सो देंय सुखाय, हलद विकै ते सव ही खाय ॥१६
कन्दमूलतें उपज्यो सोय, भाजन भील नीरमे जोय।
यामे है इतनौ लखि दोष, धरम भ्रष्ट शुभ क्रिया न पोष ॥१७

आंवला की उत्पत्ति

वरडि माझ आंवला अपार, हीण क्रिया तामे अधिकार।
हरयो आंवला भील लहाय, अपने भाजन माहि डराय ॥१८
निज पाणीमे ले औटाय, जमी माहि फिर डारैं जाय।
पहरि पाहनी तिन पर फिरैं, फूटत तिन गुठरी नीसरैं ॥१९
अरु भीलन के वालक ताम, तिनकी गुठली वीनत जाय।
लूण साथि ले खाते जांहि, झूठ होत तामे सक नांहि ॥२०
जल भाजनको दोष लहन्त, पाटा पाहनी से खूदन्त।
ऐसी उत्पत्ति वुध जन जान, धर्म फलै सोई मन आन ॥२१

अथ पान की उत्पत्ति

काथ खात हैं पानहि माहि, तिसके दोष कहे ना जांहि।
प्रथम पान साधारण जान, राखै मास वरसलो आन ॥२२

सरद रहै तिनमे अति सदा, त्रस उपजैं जिनवर यो वदा।
हिन्दु तुरक तबोली जान, नीर निरन्तर जिन छिटकान ॥२३
जल भाजन अशुद्ध अति जान, सारा नर मूतें तिह थान।
पूँगी लौंग गरु गिरी बिदाम, डोडादिक पुनि लावै ताम ॥२४
चूर्नो क्वाथ इत्यादि मिलाहि, सबै मसालो पाननि माहि।
धरकै बीडा बाँधे सोय, सव जन खात खुशी मन होय ॥२५
धरम पाप नहि भेद लहन्त, ते ऐसे बीडा जुग हन्त।
अरु उत्पत्ति क्वाथ की सुनो, अघ-दायक अति है तिम गुणो ॥२६

क्वाथ (कत्था) की उत्पत्ति

विन्ध्याचल तहँ भील रहन्त, खैर रूख की छाल गहन्त।
औंटावें निज पानी डार, अरुण होय तव लेय उतार ॥२७
तामे चून जु मडवा तणो, तन्दुल ज्वार सिघाडा तणो।
नाख खैर जल-माही जोय, राध रावडी गाढी सोय ॥२८
ताहि सुखावैं कुडा माहि, उत्पति क्वाथ कहि सकै नाहि।
कहूँ कहा लौं वारवार, होय पाप लख करि निरधार ॥२९
सुख-दायक सिख गहिये नीर, दुखद पापकी छाडयो धीर।
छाडे मन वच सुख सो लहै, बिनु छाडें दुर्गति को गहै ॥३०
तातैं सब वरणन इह कियो, सुनहु भविक जन दे निज हियो।
जिह्वा-लपटता दुखकार, सवरते सुरपद है सार ॥३१

दोहा

व्रत धारी जे पुरुष हैं, अवर क्रिया-पर जेह।
तजहु वस्तु जो हीण है, त्यो सुख लहो अछेह ॥३२

अथ वरनोडी खीचला कूरेडी फली हरी वर्णन

चौपाई

क्रियावान श्रावक है जेह, वस्तु इती नहिं खेहैं तेह।
राधै चून वाजरा तणो, और ज्वारि चावलको भणो ॥३३
वरनोडी रु खीचला करे, कूरेडी फूलै हरि धरे।
भाटैं शुद्र सुखावैं खाट, सीला वट वार्यो सुनि राट ॥३४
इह विधि वस्तु नीपजै सोई, ताहि तजो व्रत धरि अव लोई।
अरु ले जाइ रसोई माहि, सेकै तलै क्रिया तस जाहि ॥३५

अथ भडभूज्या के चवैणों सिकावें ताका कथन

भडभूज्यो सेकै जो धान, तास क्रिया सुनिये मतिमान।
राधा चावल देय सुखाय, तस चिवडा मुरमुरा वनाय ॥३६

गेहूँ बाजरा की घूघरी, राध मुरमुरा सेकैं धरी।
मका जवार उकालैं जाण, फूला कर वेचें मन आण ॥३७
कर भूगडा सेकैं चणा, मूंग मोठ चौलालिक घणा।
इत्यादिक नाजहिं सिकवाय, विकै चवैणो सब जन खाय ॥३८
शूद्र तुरक भुज्या न्हालि, तिनके भाजन मे जल घालि।
करै चवैणा ताजा जानि, सबै खाय मन भ्रान्ति न आनि ॥३९
जो मन होय चवैणो परै, तो खइये इतनी विधि करै।
निज घरतैं लीजे जल नाज, तिनहिं सिकावे व्रत धरि साज ॥४०
पीतल लोह चालणी माहि, छानि लेय बालू कढवाहि।
इह किरिया नीकी लखि रीति खाहु चवैणो मन धर प्रीति ॥४१

अथ चौंला की फली, कैर करेली सागली आदि को कथन

चौल हरी चौंला की फली, आवै गाव गाव तें चली।
तिनको शूद्र सिजाय सुखाय, वेंचें सो सगरे जन खाय ॥४२
जल-भाजन शूद्रन को दोष, वासी बटवोयो अघ कोप।
बहु दिन राखै जिम उपजाय, तिनहिं विवेकी कबहुँ न खाय ॥४३
कैर करेली अरु सागरी, शूद्र उकालैं ते निज घरी।
पड़ैं कुथवा वरषा काल, यह खैबो मति-हीनी चाल ॥४४
अवहलि कैरी की जो करै, जतन थकी राखै निज घरै।
जल वरसैं अरु नाही मेह, तब लो जोग खायबो तेह ॥४५
वरषा काल माहि निरधार, उपजैं लट कुथवा अपार।
इन परि चौमासो जब जात, ताहि विवेकी कबहु न खात ॥४६
नई तिली तिल नीपजैं जबै, फागुण लो खाइये सबै।
सो मरजाद तेल परमाण, होली पीछैं तजहु सुजान ॥४७
होली पछिलो ह्वै जो तेल, तिनमे जीव कलेवर-मेल।
यातैं होली पहिलो गही, ले राखैं श्रावक घर मही ॥४८
सो वरते कातिक लो तेल, तिन भवि सुनके लखिवो मेल।
चरमतणी जो ह्वै ताखडी, बुधजन घर राखै नहिं घडी ॥४९
तामे तोलै चून रु नाज, चरम वस्तु है दोष समाज।
कागद काठ बास धर घात, राखै किरियावन्त विख्यात ॥५०
सिंघाडा अति कोमल आहि, होली गये जीव उपजाहि।
ताकी होय मिठाई जिती, खैवो जोग न भाखी तिती ॥५१
केऊ कररिवि घूघरी खाय, केउक सीरो पुडो बनाय।
होली पहिली तो सब भली खैबो जोग कही मनरली ॥५२
पीछैं उपजे जीव अपार, क्रिया दया पालक नर सार।
तब इनको तो मीटे नाहि, कही धर्म साधै विन खाहि ॥५३

दूध गिदौडी कै गूजरी, दोहै पीछैं जाय बहु धरी ।
निज वासण मे धर ले जाहि, करै गिदौडी मावो ताहि ॥५४
दोष अधिक काचा पयतणो, ताको कथन कहालो भणो ।
अविवेकी समझै नहि ताहि, समझाये हम तिन ही आहि ॥५५
इतनी तो निजस्या लखि लेहु, मावो करता पयमे तेहु ।
पडै जीव उसमे लघु जाय, अरु फिर रात तणीका बात ॥५६
ताहू मे पुनि वरषा काल, पडै जीव तिहि निसि दर हाल ।
माँछर डास पतगा आदि, मावो इसो खात शुभवादि ॥५७
सदा पाप-दायक है सही, पाप-थकी दुरगति-दुख लही ।
लपट भख छूटै नहि जदा, निसिको कियो न खइये कदा ॥५८
जो खैवो विनु रह्यो न जाय, तो पय जतन थकी घर ल्याय ।
मरयादा बीते नहि जास, क्रिया-सहित मावो करि तास ॥५९
जिह्वा-लपटता वशि थाय, तो ऐसी विधि करि कै खाय ।
कोऊ छलप करैगो एम, उपदेश्यो आरभ बहु केम ॥६०
वामे काचा पयको दोष, अरु त्रस जीव-कलेवर-कोष ।
यातैं जतन थकी जो करै, जतन साधि भाष्यो है सिरै ॥६१
जतन थकी किरिया हूँ पलै, जतन थकी अदया हूँ घटै ।
जतन थकी सधि है विधि धर्म, जतन मुख्य लखि श्रावक-कम ॥६२

शोध के घृत की मर्यादा

दोहा

मरयादा सब शोध की, कही मूल गुण-माहि ।
जिहि व्रत मे भोजन करै, धिरत शोध को खाहि ॥६३

छन्द चाल

घर मे तो निपजै नाही, विकलपता लखि मोल गहाही ।
तिह शोध बखाणे कूर, शुभ क्रिया न तिनकें मूर ॥६४
वास्या लघु ग्रामावास, जल आदि क्रिया नहिं तास ।
तिनके घर को जो घीव, धर भाजन मलिन अतीव ॥६५
ले आवै शहर मझार, बैचेउ लोभ विचार ।
ड्योढा दुगुणा ले दाम, लखि लाभ खुशी ह्वै ताम ॥६६
तौलत परिहै तहँ माखी, करतैं काढै दे नाखी ।
जीवत मूई अहि जानै, तिहि जतन न कबहू ठानै ॥६७
परगाँव तणी इह रीति, सुन शहर तणी विपरीति ।
बेचै दधि छाछ विनाणी, तिनके घरको घृत आणी ॥६८
खावत हैं जे मति-हीण, तसु सकल क्रिया व्रत क्षीण ।
निसि सो तिय दूध मगावे, तुरतहि नहिं अगनि चढावै ॥६९

इह तें अघ उपजै भारी, पुनि तिह महि घृत बहु डारी।
दे जामण दही जमावै, दधि मथि कै घीव कढावै ॥७०
लूणी बहु वेला राखे, उपजो अघ वाणी भाखै।
वेचे ले बहुत पईसा, पुनि पाप जिही नहि दीसा ॥७१
जो धिरत शोध को मानैं, व्रत मे जो सेवो ठानें।
दूषण ऐसो लखि ताम, जैसो घृत वरिये चाम ॥७२
सुनिये अब अघकर वात, जानत जन सकल विख्यात।
निरमाय लखे है माली, भो जग सुनि लेहु विचारी ॥७३
तिन पास मगावे घीव, अरु शोध गिनै जे जीव।
तिनकी छुई जो वस्त, दोपीक गिणो जु समस्त ॥७४
आचार कहो शुभ भाय, तिनको जो वस्तु मिटाय।
आचरिये कवहूँ नाही, जिनवर भाष्यो श्रुत माही ॥७५
लघु ग्राम कोस दस वास, निज समधी तहा निवास।
किंकर भेजै तापाई, व्रत जोग विरत मगवाई ॥७६
जाता आता बहु जीव, विनसैं मारगमे अतीव।
त्रस घात मगावत होई, सो शोध कहो किम जोई ॥७७
कोई प्रश्न करै इह जागैं, श्रावक होते जे आगैं।
घृत खाते अक कछु नाही, हम मन इह शका आही ॥७८
ताके समझावन लायक, भाखैं अति ही सुखदायक।
श्रावक जु हुते व्रत धारी, तिन घृत विधि सुनि यह सारी ॥७९

चौपाई

जाके घर महिषी या गाय, पके ठाम तिन ही वधवाय।
सरद रहै न हिं ठाम मझार, वालू रेत तहा दे डार ॥८०
किंकर एक रहै तिन परै, सो तिन की इम रक्षा करै।
देय वुहारी साझ-सवार, उपजे नही जीव तिन ठार ॥८१
दोय-तीन दिन वीतें जवे, प्रासुक जलहि न्हवावे तवे।
परनाली राखे तिह ठाहि, वहै मूत्र तिनके ढिग नाहि ॥८२
वासन घर राखै तिहि तले, तामे परै मूत्र जा टले।
सूके ठाम नाखि है जाय, जहाँ सरद कवहूँ न रहाय ॥८३
गोवर तिनको ह्वै नित सोय, आप गेह थापे नहि कोय।
औरनिको माग्यो न हिं देय, त्रस सिताव तामे उपजेय ॥८४
वालू रेत नाखी जा माहि, करडो करि सो देय मुखाहि।
चरवे को रोन[1] न खिदाय, जल पीवे निवाण नहि जाय ॥८५

---

१ अरण्य जगल।

घरि बाघे राखै तिन सही, ह्रयो घास तिन नीरे नही ।
सूको घास करव खाखलो, पालो इत्यादिक जो भलो ॥८६
ले राखै इतनो घर माहि, दोष-रहित नहिं जिय उपजाहिं ।
नीरे झाडि उपरि जो वीर, अरु विधि तें जो छाण्यो नीर ॥८७
पीवै वासन धातु-मझार, सरद न राखै माजे मार ।
इंधन कुडि बाल तो जाय, राधि काकडा खली जु मिलाय ॥८८
खीर चरमू विरिया जेह, देव खवाय जतन ते तेह ।
स्यालै तापर जूठ डराय, जतन करै जिम जीव न थाय ॥८९

छन्द चाल

जब महिषी गाय दुहावै, जल तैं कर थनहिं धुवावै ।
कपडौ चरई-मुख राखै, दोहत पय तापर नाखै ॥९०
ततकाल सु अगनि चढावै, लकडी वालिर औंटावै ।
सखरौ जामण जहँ होई, तहँ दधि करै नहिं सोई ॥९१
पय करणें की जो ठाम, सीलौ करि है पय ताम ।
भाजन जु भरत का माही, जामन दे वेग जमाही ॥९२

जामण की जु विधि सारी, भाखी गुण-मूल मझारी ।
वैसे ही जामण दीजै, वहै टालि न और गहीजै ॥९३
इह प्रात तणी विधि जाणू, अब साझ तणी सु बखानू ।
सब किरिया जानो वाही, इह विधि सुध दही जमाही ॥९४
जावणीय वरणे की जागैं, तहँ हाथ न सखरो लागै ।
सो भी विधि कहहूँ बखाणी, सुणिज्यो सब भविजन प्राणी ॥९५
खिडकी इक जुदी रहाही, तिह धारि किवाड जडाही ।
ह्वै प्रात जबै दधि आनी, मथि है सो मेलि मथानी ॥९६
सो सगली किरिया भाखी, गोरस-विधि आगे आखी ।
लूण्यो निकलै ततकाल, औंटावै सो दरहाल ॥९७
वासण मे छानि धराही, ह्वै खरच जितौ ढकवाही ।
कहा वरत, कहा सुद्ध भाय, घृत गृही सोधि को खाय ॥९८

ऐसो घृत खैवे वालो, अन्तराय सुनीति प्रतिपालो ।
यह कथन कियो सब साच, यामे न अलीकी बांच ॥९९
ऐसी विधि निपजै नाही, गावन तें हूँ न मगाही ।
माखन लूणी वह राई, घृत खाय सु देय दताई ॥१०००
विधि वाही जेम सुल्यावै, किरिया जुत ताहिं जमावै ।
दधि छाछ विरत पय लूनी, विधि कही करिय न वि ऊनी ॥१
निज घर जो घृत निपजाही, व्रत धरि श्रावक सो खाही ।
कर छ्वै न माली व्यास, हिंसा त्रस ह्वै नहिं तास ॥२

प्राणी न परै जिह माही, सो तो घृत सोधि कहाही।
घृत सो निज घर निपजइये, घृत धरि सो व्रतमे पइये ॥३
निज घर घृत विधि न मिलाही, व्रत धरि तब लूखी खाही।
अरु विरत सोधिको खावै, व्रतमे बहु हरी मगावै ॥४
इह सोधि न कहिये भाई, जामे करुणा न पलाही।
करुणा-जुत कारज नीको, सुखदाई भवि सब ही को ॥५

दोहा

घिरत सोधिका की सुविधि, कही यथारथ सार।
अच्छी जाणि गहीजिये, बुरी तजहु निरधार ॥६

चौपाई

अब कछु क्रिया-हीन अति जोर, प्रगटयो महा मिथ्यात अघोर।
श्रावक सो कबहूँ नहि करैं, आनमती हरषित विस्तरैं ॥७
जैनधर्म कुल-केरे जीव, करे क्रिया जो हीण सदीव।
तिन के सचय अघ की जान, कहै तासकी चाल वखाण ॥८
तिहको तजै विवेकी जीव, करवे तें भव भ्रमे अतीव।
अब सुनियो वुधिवत्त विचार, क्रिया हीन वरणन विस्तार ॥९

इति सोधिका घृत-मर्यादा कथन सम्पूर्ण।

●

अथ मिथ्यामत कथन। दोहा

मिथ्यामति विपरीत अति, ढूढ़ा प्रकटा जेम। तिनि वरन सक्षेपते, कहो सुनौ हो नेम ॥१०

चौपाई

स्वामी भद्रबाहु मुनिराय, पचम श्रुतकेवलि सुखदाय।
मुनिवर अवर सहस चौबीस, चउ प्रकार सघ है गणईश ॥११
उज्जयनी मे जिनदत्त सार, ताके भद्रबाहु मुनि तार।
चारिया कौं पहुचे तहँ गणी, झूलत बालक वच इम भणी ॥१२
गच्छ-गच्छ विधि नही आहार, वारै वरप लगै निरधार।
अतराय मुनिवर मनि आन, पहुँचे सघ जहा वन थान ॥१३
स्वामी निमित लख्यौ तत्तकाल, पड़िहै बारा वरष दुकाल।
मुनिवर-धम सधै नवि सही, अब इहा रहनो जुगतौ नही ॥१४
कितेक मुनि दक्षिण को गये, कितेक उज्जैनी थिर रहे।
तहाँ काल पड़ियो अति घोर, मुनिवर क्रिया-भ्रष्ट ह्वै जोर ॥१५
मत श्वेतावर थापियो जान, गही रीत उलटी जिन वान।
तिनको गच्छ वध्यो अधिकार, हुडाकार दोप निरधार ॥१६
तिन अति हीण चलन जो गह्यो, चरित जु भद्रबाहु मे कह्यो।
ता पीछे पनरासे साल कितेक वरष गए इह चाल ॥१७

लुकामत प्रगट्यो अति घोर, पाप रूप जाको नहिं ओर।
तिन तें ढूँढा मत थाप्यो, काल दोष गाढो ह्वै वाढ्यो ।।१८

छन्द चाल

पापी नहिं प्रतिमा माने, ताकी अति निन्दा ठाने।
जिनगेह करन की बात, तिनको नहिं मूल सुहात ।।१९
जात्रा करवो न बखानै, पूजा करिवो अवगानै।
जिन-बिम्ब प्रतिष्ठा भारी, करिवो नहिं कहै जगारी ।।२०
जिन भाष्यो तिम अनुसारी, रचिया मुनि ग्रन्थ विचारी।
तिनकों निंदै अधिकाई, गौतम बच ए न कहाई ।।२१
ऐसे निरबुद्धी भाषै, कलपित झूठे श्रुत आषै।
सबको विपरीत गहावै, निज षोटे मारग लावे ।।२२
जिय उत्पत्ति भेद न जाने, समकितहू को न पिछाने।
गुरु देव शास्त्र नहिं ठीक, किरिया अति चलै अलीक ।।२३
निजको मानैं नहिं गुणथान, छट्ठो मुनि पद सरधान।
जामैं मुनि गुण नहिं एक, मिथ्या निज मति की टेक ।।२४
मुनि नगन रूप को धारै, चारित्त तेरह विधि पारै।
षटकाय दयाव्रत राखे, नित वचन सत्य जुत भाखै ।।२५
आदान अदत्तहि टारे, सीलाग भेद विधि पारे।
त्यागे परिग्रह चौवीस, गोपें तिहुँ गुपति मुनीस ।।२६
ईर्यापथ सोधत चालै, हित मित भाषाहि संभालै।
श्रावक घरि असन जु होई, विधि जोग जेम निपजोई ।।२७
भोजन के दोष छियाली, निपजावे श्रावक टाली।
चरिया को मुनिवर आही, श्रावक तिन ले पडिगाही ।।२८
मुनि अतराय चालीस, ऊपर छह ठालीज तीस।
पावे तो लेहि अहार, इम एषणा समिति विचार ।।२९
आदान निक्षेपण धारे, पचम समिति बिध पारे।
इम चारित तेरह भाषे, जैसे जिन-वानी आषे ।।३०
गुण मूल अट्ठाइस धारी, उत्तर गुण लख असि चारी।
गिरि शिखर कदरा थान, निरजन धरिय सुध्यान ।।३१
ग्रीषम गिरि सिर रवि-ताप, सिलाऊ परि ठाढे आप।
वरपा रितु तरु-तल ठाढे, उपसग सहै अति गाडे ।।३२
हिम नदी तलाव नजीक, मुनि सहहिं परीषह ठीक।
निज आतम सो लव लागी, पर वस्तु सकल परित्यागी ।।३३
पूजक निंदक सम जाके, तृण कनक समान जु ताके।
इत्यादिक मुनि गुणधार, कहतें लहिये नहिं पार ।।३४

इनतें उलटी जे रीत, धारे ढूंढिया विपरीत। आहार जु सीलो वासी, रोटी राबडी मगरासी ॥३५
काजी दुय तिय दिन केरी, बहु त्रस जावनि को वैरी।
तरकारी हरित अनेक, ले पापी धरि अविवेक ॥३६
आदो कदो अर सूरण, मूला त्रस थावर पूरण। ए लेय अहार मझारी, बहु केम दया तिन पारी ॥३७
आथाणो त्रस जिसधाम, फासू गिनि लेहे ताम। फुनि काचो दूध महाई, बहु वार लगै रखवाई ॥३८
दुय घडी गए तिह माही, पचेंद्री जिय उपजाही।
महिषी मौतणो जु खीर, तैसे ह्वै जीव गहीर ॥३९
इह भेद मूढ नहिं जानें, अघ-वाल अघ न वखानें। पचेंद्री तामे थाई, मुलो फासु गणवाई ॥४०
जिय अन्नतणी दुय दाल, दधि छाछि माहि दे डाल।
सो भोजन विदल कहाही, खाये ते पाप वढाही ॥४१
अन्न दाल छाछि दधि जेह, मुख-लाल मिले तब तेह।
उतरता गला मझारी, पचेन्द्री जिय निरधारी ॥४२
उपजै तामाहे जानो, मन में सशय नहिं आनो।
सो खैहे ढूढ्यो पापी, करुणा तिन निश्चै कापी ॥४३
कब खादि अखादि विचारी, उठ्या समझे न गवारी।
अघ उपजे वस्तु जु माही, भाष्यो मुनि लेहु तहाही ॥४४
ऐसो पापी मुख देखे, ह्वै पाप महा सुविशेखे। ऐसे कर अघ आचार, तिन माने मूढ गवार ॥४५
धोवण चावल हाडी को, तिन ले गिन फासू नीको।
सीलै जल अन्न मिलाई, तामे बहु जीव उपजाई ॥४६
रवि उदय होत तिह वार, घरि घरि भटकै निरधार।
जल ल्यावे फासू भाखै, तिह साझ लगे धरि राखै ॥४७
उपजै ता माहे जीव, घटिका दुइ माहि अतीव।
सो वरते पीवे पानी, करुणा न तहा ठहरानी ॥४८
घृत जल धरि तेल सुचाम, सो बहु जीवन को धाम।
तिनते निपज्यो जु अहार, सो मास-दोष निरधार ॥४९
ऐसो दोष न मन आने, तिनको हो नरक पयाने। ढूढा अघकेरी मूरत, इन माने पापी धूरत ॥५०
झूठी को साच बखानै, उपदेश सु झूठो ठाणै। झूठो मारग जु गहावै, सो झूठ दोष को पावै ॥५१
शीलांग हजार अठारा, लागे तिन दोष अपारा।
परिग्रह को ठीक न कोई, कपडा पात्रादिक होई ॥५२
ऐसो धरि भेष जु हीन, मानें तिन मूरख दीन।
ग्यारा प्रतिमा प्रतिपालक, कोपीन कमण्डल धारक ॥५३
कोमल पीछे हैं जाके, श्रावक व्रत गिनिये ताके।
परिग्रह तिल तुस सम होई, मुनिराज धरै जो कोई ॥५४
वह जाय निगोद मझारी, जिन वाणी एक उचारी।
सो कपडा की कहा रीत, चौथो पात्र विपरीत ॥५५

ए भ्रमें जगत के माही, दुख को नहिं अन्त गहाही।
तिन कहै महाव्रत धारी, ते पापी हीणाचारी ॥५६
इन माने ते ससार, भ्रमिहै न लहै कहुँ पार।
मन वच तन गुपति न गोपै, पापी मुनि धरमहि लोपै ॥५७

पिरथी जिम प्रान लहाही, चालै तिम भागे जाही।
ईर्या समिति जु किम पाली, प्राणौ हिंसा किम टाली ॥५८
हित मित वच कबहूँ न भाखे, जिन मत मे उलटी आखै।
सम जिन भाषा न पलै है, अदया कबहूँ न टलै है ॥५९

किम एषण समिति सधै है, जिनकै इम पाप बधै है।
जो दोष रहित आहार, नवि जाने वसु विध सार ॥६०
मुनि अन्तराय जे होई, तिन नाम न समझै कोई।
कुल ऊँच नीच नहिं जाणे, शूद्रन के असन जु आणें ॥६१

तबोली जाट कलाल, गूजर अहीर वनपाल।
खतरी रजपूत रु नाई, परजापति असन गहाई ॥६२
तेली दरजी अर खाती, छिपादिक जात्ति बहु भाती।
मदिरा हू को जो पीवे, आमिष हु भखे सदीव ॥६३

भोजन मित भाजन केरो, ल्यावें अतिदोष घनेरो।
तिन भीटो भोजन खैहै, ते मास दोष को पैहै ॥६४
तो भोजन की कह बात, जाने सब जगत विख्यात।
जिह भाजन अशन कराही, आमिष तिह माझ धाराही ॥६५

जिन मारग एम कहाही, बासन जिह मास धराही।
सो शुद्ध न ह्वै चिरकाल, गहिहैं सो भील चडाल ॥६६
तिनके घर को जु आहार, पापी ल्यावे अविचार।
अरु मुनिवर नाम धरावें, सो घोर पाप उपजावे ॥६७

ते नरक निगोद मझारी, भ्रमिहै ससार अपारी।
अपने श्रावक तिन भनि है, कुल ऊँच नीच नवि गिनिहै ॥६८
तिनको कुछ एक आचार, कहिए विपरीत विचार।
निजको मानै गुणथान, पचम श्रावक परधान ॥६९

दोहा

खत्री, ब्राह्मण, वैश्य, फुनि, अवर, पौण वहतीस। धरम गहे ढूढा निको, अरु तिन नावे सीस ॥७०
ढूढा तिन श्रावक गिने, आप साधु पद मान। छहो काय रक्षा सवनि, उपदेशे इह वान ॥७१
दुहुने दया छह काय की पलै नही तहकीक। जीव थान फासू गिनें, वस्तु गहै तहकीक ॥७२
कथन कियो ऊपर सवै, लखहु विवेकी ताहि। दुहुन चलन ह्वै एक से इहि मारग नहि आहि ॥७३
शुद्र करम करता जिके, निज-निज कुल अनुसार। पेट-भरन उद्यम सफल, करै दया किम धार ॥७४

चौपाई

गूजर, जाट, अहीर, किसान, खेती सीचे निर निरवान ।
हलवाहै त्रस को ह्वै घात, कहु वह श्रावक पद किम पात ॥७५
पवे अहाव प्रजापति गेह, अगनि निरतर वालत तेह ।
होत घात सव जीवनि तनी, तिनको कैसे श्रावक भनी ॥७६
अवर हीन कुल है अवतार, ढूढ्या मत चाले निरधार ।
मदिरा पीवे आमिष भखे, धरम पलति तिनके किम अखे ॥७७
विण्या विन वीधो जो नाज, घृत गुल लूण तेल वहु साज ।
होय घात त्रस जीव अपार, तिनको श्रावक कहै गँवार ॥७८
हीन करम करि पेट जु भरे, तिनपे कहु करुणा किम परे ।
जैसी जात हीन निज तणी, मानैं आप साव पद भणी ॥७९
तैसे ही श्रावक तिन तणे, कुकरम पाप उपावे घणे ।
ऐसे मत को साचो गिणे, ते पापी इम आगम भणे ॥८०

दोहा

साचे झूठे मत तणी, करिवि परीक्षा सार । साचो लखि हिरदय धरो, झूटो दीजे टार ॥८१

अथ श्री प्रतिमा जी की महिमा वर्णन

दोहा

श्री जिनवर प्रतिमा तणी, महिमा जो अतिसार ।
सुन्यो जिनागम मे कथन, मति वरण्यो निरधार ॥८२

चौपाई

मिथ्यादृष्टी एक हजार, तिनकी जो महिमा निरधार ।
एक मिथ्याती जैनाभास, सवही सरभर करै न तास ॥८३
जैनाभास सहस इक जोई, तिन सवही की प्रभुता होई ।
सम्यक दृष्टी एक प्रमाण, तिसहि वरावर ते नहि जान ॥८४
सम्यग्दृष्टी गिनहु हजार, एक अणु-व्रत धारी सार ।
महिमा गिनहु वरावर सही, इह जिन मारग माहे कही ॥८५
देशव्रती इक सहस सुजान, मुनि प्रमत्त गुणथान प्रमाण ।
एक वरावर महिमा धार, आगे सुनहु कथन विस्तार ॥८६
मुनि प्रमत्तधर एक हजार, तिनको जो प्रभुत्व विस्तार ।
इक सामान केवली सही, होय वरावर सशय नही ॥८७
ह्वै सामान्य केवली तेह, महिमा एक सहस्र की जेह ।
समवसरन धारी जिन देव, तीर्थंकर इकसम गिणि एव ॥८८
परतखि समवसरण जुत होय, तीर्थंकर पद धारी सोय ।
एक हजार प्रमाण वखान, एक प्रतिमा समानता ठान ॥८९

ए भ्रमें जगत के माही, दुख को नहिं अन्त गहाही।
तिन कहै महाव्रत धारी, ते पापी हीणाचारी ॥५६
इन माने ते ससार, भ्रमिहै न लहै कहुं पार।
मन वच तन गुपति न गोपै, पापी मुनि धरमहि लोपै ॥५७

पिरथी जिम प्रान लहाही, चालै तिम भागे जाही।
ईर्या समिति जु किम पाली, प्राणी हिंसा किम टाली ॥५८
हित मित वच कबहूं न भाखै, जिन मत मे उलटी आखैं।
सम जिन भाषा न पलै है, अदया कबहूं न टलै है ॥५९

किम एषण समिति सधै है, जिनकें इम पाप बधैं है।
जो दोष रहित आहार, नवि जाने वसु विध सार ॥६०
मुनि अन्तराय जे होई, तिन नाम न समझै कोई।
कुल ऊँच नीच नहिं जाणे, शूद्रन के असन जु आणें ॥६१

तबोली जाट कलाल, गूजर अहीर वनपाल।
खतरी रजपूत रु नाई, परजापत्ति असन गहाई ॥६२
तेली दरजी अर खाती, छिंपादिक जाति बहु भाती।
मदिरा हू को जो पीवे, आमिष हु भखे सदीव ॥६३

भोजन मित भाजन केरो, ल्यावें अतिदोष घनेरो।
तिन भीटो भोजन खैहै, ते मास दोप को पैहै ॥६४
तो भोजन की कह बात, जाने सब जगत विख्यात।
जिह भाजन अशन कराही, आमिष तिह माझ धराही ॥६५

जिन मारग एम कहाही, बासन जिह मास धराही।
सो शुद्ध न ह्वै चिरकाल, गहिहैं सो भील चडाल ॥६६
तिनके घर को जु आहार, पापी ल्यावे अविचार।
अरु मुनिवर नाम धरावे, सो घोर पाप उपजावे ॥६७

ते नरक निगोद मझारी, भ्रमिहै ससार अपारी।
अपने श्रावक तिन भनि है, कुल ऊँच नीच नवि गिनिहै ॥६८
तिनको कुछ एक आचार, कहिए विपरीत विचार।
निजको मानै गुणथान, पचम श्रावक परवान ॥६९

दोहा

खत्री, ब्राह्मण, वैश्य, फुनि, अवर, पौण वहतीस। धरम गहै ढूढा निको, अरु तिन नावे सीस ॥६०
ढढा तिन श्रावक गिने, आप साधु पद मान। छहो काय रक्षा सवनि, उपदेशे इह वान ॥७१
दुहुने दया छह काय की पलै नही तहकीक। जीव वान फासू गिनें, वस्तु गहै तहकीक ॥७२
कथन कियो ऊपर सवै, लखहु विवेकी ताहि। दुहुन चलन ह्वै एक मे, इहि मारग नहि आहि ॥७३
शुद्र करम करता जिके, निज-निज कुल अनुसार। पेट-भरन उद्यम सफल, करै दया किम धार ॥७४

चौपाई

गूजर, जाट, अहीर, किसान, खेती सींचे निर निरवान।
हलवाहै त्रस को ह्वै घात, कहु वह श्रावक पद किम पात ॥७५
पचे अह्राव प्रजापति गेह, अगनि निरंतर बालत तेह।
होत घात सब जीवनि तनी, तिनको कैसे श्रावक भनी ॥७६
अवर हीन कुल है अवतार, ढूंढ्या मत चाले निरधार।
मदिरा पीवे आमिष भखे, धरम पलति तिनके किम अखे ॥७७
विण्या विन वींधो जो नाज, घृत गुल लूण तेल बहु साज।
होय घात त्रस जीव अपार, तिनको श्रावक कहै गँवार ॥७८
हीन करम करि पेट जु भरे, तिनपे कहु करुणा किम परे।
जैसी जात हीन निज तणी, मानैं आप साध पद भणी ॥७९
तैसे ही श्रावक तिन तणे, कुकरम पाप उपावे घणे।
ऐसे मत को साचो गिणे, ते पापी इम आगम भणे ॥८०

दोहा

साचे झूठे मत तणी, करिवि परीक्षा सार। साचो लखि हिरदय धरो, झूटो दीजे टार ॥८१

अथ श्री प्रतिमा जी की महिमा वर्णन

दोहा

श्री जिनवर प्रतिमा तणी, महिमा जो अतिसार।
सुन्यो जिनागम मे कथन, मति वरण्यो निरधार ॥८२

चौपाई

मिथ्यादृष्टी एक हजार, तिनकी जो महिमा निरधार।
एक मिथ्याती जैनाभास, सवही सरभर करै न तास ॥८३
जैनाभास सहस इक जोई, तिन सवही की प्रभुता होई।
सम्यक दृष्टी एक प्रमाण, तिसहि बराबर ते नहि जान ॥८४
सम्यग्दृष्टी गिनहु हजार, एक अणु-व्रत धारी सार।
महिमा गिनहु बराबर सही, इह जिन मारग माहे कही ॥८५
देशव्रती इक सहस सुजान, मुनि प्रमत्त गुणथान प्रमाण।
एक बराबर महिमा धार, आगे सुनहु कथन विस्तार ॥८६
मुनि प्रमत्तधर एक हजार, तिनको जो प्रभुत्व विस्तार।
इक सामान केवली सही, होय बराबर संशय नही ॥८७
द्वै सामान्य केवली तेह, महिमा एक सहस्र की जेह।
समवसरन धारी जिन देव, तीर्थंकर इकसम गिणि एव ॥८८
परतखि समवसरण जुत होय, तीर्थंकर पद धारी सोय।
एक हजार प्रमाण बखान, एक प्रतिमा समानता ठान ॥८९

ए भ्रमें जगत के माही, दुख को नहिं अन्त गहाही।
तिन कहै महाव्रत धारी, ते पापी हीणाचारी ॥५६
इन माने ते ससार, भ्रमिहै न लहै कहुं पार।
मन वच तन गुपति न गोपै, पापी मुनि धरमहि लोपै ॥५७

पिरथी जिम प्रान लहाही, चालै तिम भागे जाही।
ईर्या समिति जु किम पाली, प्राणौ हिंसा किम टाली ॥५८
हित मित्त वच कबहूं न भाखै, जिन मत मे उलटी आखैं।
सम जिन भाषा न पले है, अदया कबहूं न टलै है ॥५९

किम एषण समित्ति सधै है, जिनके इम पाप बधैं है।
जो दोष रहित आहार, नवि जाने वसु विध सार ॥६०
मुनि अन्तराय जे होई, तिन नाम न समझै कोई।
कुल ऊंच नीच नहिं जाणे, शूद्रन के असन जु आणें ॥६१

तबोली जाट कलाल, गूजर अहीर वनपाल।
खतरी रजपूत रु नाई, परजापति असन गहाई ॥६२
तेली दरजी अर खाती, छिंपादिक जाति बहु भाती।
मदिरा हू को जो पीवे, आमिष हु भखे सदीव ॥६३

भोजन मित भाजन केरो, ल्यावें अतिदोष घनेरो।
तिन भीटो भोजन खैहै, ते मास दोप को पैहै ॥६४
तो भोजन की कह बात, जाने सब जगत विख्यात।
जिह भाजन अशन कराही, आमिख तिह माझ धाराही ॥६५

जिन मारग एम कहाही, बासन जिह मास धराही।
सो शुद्ध न ह्वै चिरकाल, गहिहैं सो भील चडाल ॥६६
तिनके घर को जु आहार, पापी ल्यावे अविचार।
अरु मुनिवर नाम धरावें, सो घोर पाप उपजावें ॥६७

ते नरक निगोद मझारी, भ्रमिहै ससार अपारी।
अपने श्रावक तिन भनि है, कुल ऊंच नीच नवि गिनिहै ॥६८
तिनको कुछ एक आचार, कहिए विपरीत विचार।
निजको माने गुणथान, पचम श्रावक परधान ॥६९

दोहा

खत्री, ब्राह्मण, वैश्य, फुनि, अवर, पौण वहतीस। धरम गहै ढूढा निको, अरु तिन नावे सीस ॥७०
ढूढा तिन श्रावक गिने, आप साधु पद मान। छहो काय रक्षा सवनि, उपदेशे इह वान ॥७१
दुहुने दया छह काय की पलै नही तहकीक। जीव थान फासू गिनें, वस्तु गहै तहकीक ॥७२
कथन कियो ऊपर सवै, लखहु विवेकी ताहि। दुहुन चलन ह्वै एक से इहि मारग नहिं आहि ॥७३
शुद्र करम करता जिके, निज-निज कुल अनुसार। पेट-भग्न उद्यम मफल करै दया किम धार ॥७४

प्रतिमा की निन्दा करिहै ते नरक निगोदे परि है।
प्रावर्त्तन पच प्रकार, भ्रमण करिहै नहिं पार ॥७
श्रावक मत जैन दिगम्बर, कुलधर्म कह्यो जिम जिनवर।
मन वच क्रम ताहि गहै है, सुर ह्वै अनुक्रम शिव पैहै ॥८
पूजा जिन प्रतिमा कीजे, पात्रनि चहुं दान जु दीजै।
तप शील भाव-जुत पारै, अरु कुगुरु कुदेवहिं टारै ॥९
बिनु जैन अवर मतवारे, वातुल सम गनिए सारे।
गहलौ नर जिम तिम भाखै, कुमती जिम झूठी आखै ॥१०
श्रावक कुल जिहि अवतार, जिन धर्महि तजहि गवार।
ढूढ्या मतको जो लैहैं, ते नरक निगोद परै हं ॥११
साचो झूठो न पिछाणै, अविवेक हिये मे आणै।
प्रतिमा-निदक जे जीव, तिनको उपदेश गहीव ॥१२
ताके पोतै ससार, वाकी कुछ वार न पार।
चहुं गति दुख विविध भरन्तो, रुलिहै वहु जोनि धरन्तो ॥१३
यातैं जे भविजन धीर, ढूढामत पाप गहीर।
छाडौ लखि अति दुखदाई, निहचै जिनराज दुहाई ॥१४
जिनमत हिरदय अवधारो, जप तप सयम व्रत पारो।
तातैं सुख लहो अपार, यामे कछु फेर न सार ॥१५

इति श्री प्रतिमाजी की वर्णन तथा ढूढ्या को मत निषेधन सपूर्ण।

चौपाई

अब कछु क्रिया-हीन अति जोर, प्रगटयो महा मिथ्यात अघोर।
श्रावक ला कवहूं नहिं करे, आन मती हरषित विस्तरै ॥१६
जैन धरम प्रतिपालक जीव, कर क्रिया जे हीन सदीव।
तिनके सम्बोधन को जान, कहो क्रियातैं हीन वखान ॥१७
तिनको तजै विवेकी जीव, कर तन भव भ्रमै अतीव।
अब सुनियो वुधिवन्त विचार, क्रियाहीन वरणन विस्तार ॥१८

अथ मिथ्यामत निषेध। चौपाई

भादव गए लगै आसोज, पडिवा दिवसतणी मुनि मौज।
लडकी वहुमिलि गोवर आनि, साझी माडैं अति हित ठानि ॥१९
पहर आठ लौ राखैं जाहि, फिर दूजे दिन माडै ताहि।
माडै दिन नव नव रीति, तेरसका दिन लौं धरि प्रीति ॥२०
चौदस अमावस दस दिन जाहिं, साझी वडी जु नाम धराहिं।
मिले पाच दस प्रौढा नारी, माडै ताहि विचारि विचारी ॥२१
हाथ पाव मुख करि आकार, गोवर का गहना तनवार।
उपर चिरमी जल पोस लगाय, कौडी फूल लगावै जाय ॥२२

कोई प्रश्न करै इह जाण, तीर्थंकर इक सहस प्रमाण।
प्रतिमा एक बराबर कही, इह महिरहै छहरत नही ॥९०
ताके सम श्रावन को बैन, कहिये है अति हो सुखदैन।
त्यो प्रतिमा पूजन सरधान, अति गाढौ राखो प्रतिमान ॥९१

छन्द चाल

जिन समवसरण जुत राजै, मूरत उत्कृष्ट सुछाजै।
निरखत उपजै वैराग, ह्वै शान्त चित्त अनुराग ॥९२
परतक्ष तिष्ट भगवान, समवादि सरन-जुत थान।
पेखत हुलास बढावै, भविजन हिरदय न समावै ॥९३
तिनकी वाणी सुनि जीव, तरिहै भव उदधि अतीव।
जिनवर जब मोक्ष लहाई, तब जिन प्रतिमा ठहराई ॥९४
निरखत प्रतिमा को ध्यान, बुधजन हिय उपजै ज्ञान।
तिनको निमित्त भविजीव, जग मे लहिहै जु सदीव ॥९५
प्रतिमा आकृति लखि धीर, उपजे वैराग गहीर।
मन वीतरागता आनै, तप व्रत सयम को ठानै ॥९६
दरसन प्रतिमा निरधार, भविजन को नित उपगार।
जिन मारग धरम बढावै, महिमा नहि पार न पावे ॥९७
जे प्रतिमा दरशन करिहै, पूरव सचित अब हरिहै।
कहिये का अधिक बखान, दायक भविजन सिरथान ॥९८
ऐसी प्रतिमा जुत होई, भविजन निश्चै चित सोई।
मन वच क्रम धरिहै ध्यान, ज्यो ह्वै सब विधि कल्यान ॥९९
कोऊ पूछै फिर येह, कहु साखि ग्रन्थ की जेह।
तिनको उत्तर ये जानी, सुनियो तुम कहूँ बखानी ॥११००
साधर्मी द्विज सुखधाम, सहदेव नाम अभिराम।
पूरब दिशि सेती आयो, सो सागानेर कहायो ॥१
पढियो जो ग्रन्थ अनेक, जिन मत धरे चतुर विवेक।
गाथाबध सततरि हजार, महाधवल ग्रन्थ अतिसार ।२
तिहकी टीका सुखदाई, लख साढा तीन कहाई।
ते श्लोक सस्कृत सारे, तिन कठ भलीविधि धारे ॥३
तिह कथन कियो सव पाही, महाधवल थकी मुकहाही।
ताकी लखि बा परतीत, पूछो जिनमत वहुरीत ॥४
जिहनी साकरी विधि सेती, आगम प्रमाण कहि तेती।
जैनी पडित जु वखानी, परतखि ए भवि प्रानी ॥५
प्रतिमा दरसन सम लोक-मवि अवर न दूजो थोक।
प्रतिमा पूजा जे कारक, ते होइ करम ते फारक ॥६

प्रतिमा की निन्दा करिहै ते नरक निगोदे परि है।
प्रावर्त्तन पच प्रकार, भ्रमण करिहै नहि पार ॥७
श्रावक मत जैन दिगम्बर, कुलधर्म कह्यो जिम जिनवर।
मन वच क्रम ताहि गहै है, सुर ह्वै अनुक्रम शिव पैहै ॥८
पूजा जिन प्रतिमा कीजे, पात्रनि चहुँ दान जु दीजै।
तप शील भाव-जुत पारे, अरु कुगुरु कुदेवहि टारे ॥९
विनु जैन अवर मतवारे, वातुल सम गनिए सारे।
गहलौ नर जिस तिम भाखे, कुमती जिम झूठी आखै ॥१०
श्रावक कुल जिहि अवतार, जिन धर्महि तजहि गवार।
ढूढ्या मतको जौलैहैं, ते नरक निगोद परै हैं ॥११
साचो झूठो न पिछाणै, अविवेक हिये मे आणे।
प्रतिमा-निंदक जे जीव, तिनको उपदेश गहीव ॥१२
ताके पोते ससार, वाकी कुछ वार न पार।
चहुँ गति दुख विविध भरन्तो, रुलिहै बहु जोनि धरन्तो ॥१३
यातें जे भविजन धीर, ढूढामत पाप गहीर।
छाडो लखि अति दुखदाई, निहचै जिनराज दुहाई ॥१४
जिनमत हिरदय अवधारो, जप तप सयम व्रत पारो।
तातें सुख लहो अपार, थामे कछु फेर न सार ॥१५

इति श्री प्रतिमाजी की वर्णन तथा ढूढ्या को मत्त निषेधन सपूर्ण।

चौपाई

अब कछु क्रिया-हीन अति जोर, प्रगटयो महा मिथ्यात अघोर।
श्रावक ला कवहूँ नहि करे, आन मती हरपित विस्तरे ॥१६
जैन धरम प्रतिपालक जीव, कर क्रिया जे हीन सदीव।
तिनके सम्बोधन को जान, कहौं क्रियातें हीन बखान ॥१७
तिनको तजै विवेकी जीव, कर तन भव भ्रमै अतीव।
अब सुनियो बुधिवन्त विचार, क्रियाहीन वरणन विस्तार ॥१८

अथ मिथ्यामत निषेध। चौपाई

भादव गए लगै आसोज, पडिवा दिवसतणी सुनि मौज।
लडकी बहुमिलि गोवर आनि, साझी माडैं अति हित ठानि ॥१९
पहर आठ लौ राखै जाहि, फिर दूजे दिन माडै ताहि।
माडै दिन नव नव रीति, तेरसका दिन लौं धार प्रीति ॥२०
चौदस अमावस दस दिन जाहिं, साझी वडी जु नाम धराहिं।
मिलै पाच दस प्रौढा नारी, माडै ताहि विचारि विचारी ॥२१
हाथ पाव मुख करि आकार, गोवर का गहना तनवार।
उपर चिरमी जल पोस लगाय, कौडी फूल लगावै जाय ॥२२

इम विपरीत करै अधिकाय, तास पापको कहैं बनाय।
खोड्यो बाभण साझी लेन, आयो भावै बनिता बैन ॥२३
राति जगावै गावै गीत, ऐसी महा रचै विपरीत।
करि गुलधाणी दे लाहणा, आवै सो राखै पर तणा ॥२४
सुदि पडिवा को ताहि उतारि, नदी ताल माहे दे डारि।
ऐसी प्रभुता देखौ जास, देव मान पूजत है तास ॥२५
अरु साझी किसकी है धिया, को षोड्यो द्विज कुण की तिया।
गोबर की माडे किम तिया, वरसा वरसी कहु समजिया ॥२६
परगट लखि निज रा इह रीति, माने ताहि धरै बहु प्रीति।
पापी भेद लहे तसु नाहि, गोवर सरद रहै जा माहि ॥२७
घटिका दोय बीत है जबै, तामे त्रस उपजत हैं तबै।
तिनके पाप तणौ नहिं पार, भव भव में दुख को दातार ॥२८
महा मिथ्यात तणो जे गेह, नरक तणौ दायक है जेह।
छेदन भेदन तापन जहाँ, ताडन सूलारोहण तहा ॥२९
दुख भुगतै तह पच प्रकार, इस मिथ्यात थकी निरधार।
जिन मत के धारी है जेह, सो मेरी विनती सुनि एह ॥३०
नही माडि मत पूजि लगार, इह ससार बढावन हार।
आन मती पूजन मन लाय, तिनसौं कछु कहनो न बसाय ॥३१

सोरठा

दिन पनरे के माहि, मरण दिवस पित-मात को। श्रावक जे हरषाहि, ते जिन मारगतें विमुख ॥३२

छन्द चाल

पित मात तृपति के हेत, भोजन बहुजन को देत। कैसे तृपति ह्वै, तेह जिन आगम भाष्यो एह ॥३३
मुए हुए वरष घनेरे, सुख दुख भुगतै भव केरे।
तहा ते वहुरि केम वह आवै, जिन मत मे इह न समावै ॥३४
सुत असन करै पितु देखे, तृपति न ह्वै परतछ पेखै।
तौ आन जनम कहा वात, जानो ए भाव मिथ्यात ॥३५
दुय कोस थकी निज वाग, सीचै चित धरि अनुराग।
रूख न वढवारी पावै, परभव किम तृपति लहावै ॥३६
तातैं जिनमत मे सार, ऐसो कह्यो न आचार।
इह घोर मिथ्यात सुजाणी, तजिए भवि उत्तम प्राणी ॥३७
आठे आसोज उजारी, अरु पूजे चेत दिहारी। करि कै घूघरी कसार, वाटे तसु घर घर वार ॥३८
गुड घिरत सुपारी रोक, नालेर धरै दे ढोक। निज वहिन भुवा कौं देहै, धरि लोभ हिए वे लेहै ॥३९
लेने देने को पाप, मिथ्यात वढै सन्ताप। तातैं जैनी है जेह, पूजो न चढ्यो कछु लेह ॥४०
सतियन की राति जगावै, पित्रनहूँ कौ जु मनावै।
वीजासण मोकि आरावै, जागरण करै हित साधे ॥४१

सजोडा अवर कवारा गोरणीय जिमावे सारा।
तिनके करि तिलक लिलाट, पायनिदे ढोक निराट ॥४२
पैसादिक तिनको देई, वे हरपि हरपि त्रित लेई।
इह किरिया अति विपरीति, छाडौ बुध जाणि अनीति ॥४३

अडिल्ल

बीजासण को कर विझालरो डरि धरे, मो किउ घटत वटाल पातरी हिय परे।
मूढ मान तिन पूजे घर लछमी जवै, उदै असाता भयै वेचि खाहै तबै ॥४४

दोहा

सकलाई तिन मे इसी, अविवेकीन लखाहि। मुरभख मे बहु मानता, उर वच मो विक जाहि ॥४५
खेत पालकी थापना, एम बनावे कूर। जिसा तिसा पापाण परि, डारे तेल सिंदूर ॥४६

छन्द चाल

वैशाख मे घर के वारे, पूजे दे जात विचारे।
तेल वटरुवा कला तेल, ऐसे पूजा विधि मेल ॥४७
दस वीस त्रिया वरि प्रीति, गावे जु गीत विपरीति।
सेवें तिह मानें देव, सो जान मिथ्याती एव ॥४८
बहुते खेडा पुर गाम, इकसे न कही तसु नाम।
तातें सकलाई माने, सुखदाता एम बखाने ॥४९
दीया सुत जो उपजाही, सुत विन तिय कोनि रहाही।
इह झूठ थापणो जाणी, तजिये भवि उत्तम प्राणी ॥५०
पाहण लघु धरें इक ठाही, पथवारी नाम कहाही।
तिनको पूजत धरि नेह, कबहू न सुखदाता तेह ॥५१
मिथ्यात तणौ अधिकार, नरकादिक दुख दातार।
जिन-भापित परचित दीजै, खोगी लखि तुरत तजीजे ॥५२
आसौज है आठे स्वेत, घोटक पूजे धरि हेत।
जिन राज एम बखानी, तिरयच है पूजे प्रानी ॥५३
सो पाप अधिक उपजावे, कहते कछु और न आवे।
तातैं जैनी जो होय, पसु पूजि न नरभव खोय ॥५४
दुसरा हाकादिन माहीं, लाडू पीहर ले जाही।
इह रीति तजो भवि जीव, जिन-वच धरि हृदय सदीव ॥५५
जिन चैत्यन वन कें माही, पून्यो दिन सरद कराही।
आगम में कहूँ न वखानी, विपरीत तजो तिह जानी ॥५६
मगल तेरसि दिन न्हावै, वसतर तन उजले ल्यावे।
आवे जब दिवस दिवाली, दीवा भरे तेल हवाली ॥५७

इम विपरीत करै अधिकाय, तास पापको कहैं बनाय ।
खोड्यो बाभण साझी लेन, आयो भावै बनिता बैन ॥२३
राति जगावैं गावै गीत, ऐमी महा रचै विपरीत ।
करि गुलधाणी दे लाहणा, आवै सो राखै पर तणा ॥२४
सुदि पडिवा को ताहि उतारि, नदी ताल माहे दे डारि ।
ऐसी प्रभुता देखौ जास, देव मान पूजत है तास ॥२५
अरु साझी किसकी है धिया, को षोड्यो द्विज कुण की तिया ।
गोबर की माडे किम तिया, वरसा वरसी कहु समजिया ॥२६
परगट लखि निज रा इह रीति, माने ताहि धरै बहु प्रीति ।
पापी भेद लहे तसु नाहि, गोबर सरद रहै जा माहि ॥२७
घटिका दोय बीत है जबै, तामे त्रस उपजत हैं तबै ।
तिनके पाप तणौं नहि पार, भव भव में दुख को दातार ॥२८
महा मिथ्यात तणो जे गेह, नरक तणौ दायक है जेह ।
छेदन भेदन तापन जहाँ, ताडन सूलारोहण तहा ॥२९
दुख भुगतै तह पच प्रकार, इस मिथ्यात थकी निरधार ।
जिन मत के धारी हैं जेह, सो मेरी विनती सुनि एह ॥३०
नही माडि मत पूजि लगार, इह ससार बढावन हार ।
आन मती पूजन मन लाय, तिनसौं कछु कहनो न बसाय ॥३१

सोरठा

दिन पनरे के माहि, मरण दिवस पित-मात को । श्रावक जे हरखाहि, ते जिन मारगतें विमुख ॥३२

छद चाल

पित मात तृपति के हेत, भोजन बहुजन को देत । कैसे तृपति ह्वै, तेह जिन आगम भाष्यो एह ॥३३
मुए हुए वरष घनेरे, सुख दुख भुगतै भव केरे ।
तहा ते वहुरि केम वह आवै, जिन मत मे इह न समावै ॥३४
सुत असन करै पितु देखे, तृपति न ह्वै परतछ पेखै ।
तौ आन जनम कहा बात, जानो ए भाव मिथ्यात ॥३५
दुय कोस थकी निज बाग, सीचै चित धरि अनुराग ।
रूख न बढवारी पावै, परभव किम तृपति लहावै ॥३६
तातैं जिनमत मे सार, ऐसो कह्यो न आचार ।
इह घोर मिथ्यात सुजाणी, तजिए भवि उत्तम प्राणी ॥३७
आठे आसोज उजारी, अरु पूजै चेत दिहारी । करि कै घूघरी कसार, बाटे तसु घर घर बार ॥३८
गुड घिरत सुपारी रोक, नालेर धरै दे ढोक । निज बहिन भुवा कौं देहै, धरि लोभ हिए वे लेहै ॥३९
लेने देने को पाप, मिथ्यात बढे सन्ताप । तातैं जैनी है जेह, पूजो न चढ्यौ कछु लेह ॥४०
सतियन की राति जगावै पित्रनहूं कौ जु मनावे ।
बीजासण सोकि आराधे, जागरण करै हित साधे ॥४१

सजोडा अवर कवारा गोरणीय जिमावै सारा।
तिनके करि तिलक लिलाट, पायनिदे ढोक निराट ॥८२
पैसादिक तिनको देई, वे हरपि हरपि चित लेई।
इह किरिया अति विपरीति, छाडौ वुध जाणि अनीति ॥८३

अडिल्ल

बीजासण को कर विझालरो डरि घरे, मो किउ घटत घडाल पातरी हिय परे।
मूढ मान तिन पूजे घर लछमी जवै, उदै असाता भयै वेचि खाहै तवै ॥८४

दोहा

सकलाई तिन मे इसी, अविवेकीन लखाहि। मुरभख मे वहु मानता, उर वख सो विक जाहि ॥८५
खेत पालकी थापना, एम वनावे कूर। जिसा तिसा पापाण धरि, डारे तेल सिंदूर ॥८६

छन्द चाल

वैशाख मे घर के वारे, पूजे दे जात विचारे।
तेल वटरुवा कला तेल, ऐसे पूजा विधि मेल ॥४७
दस वीस त्रिया धरि प्रीति, गावें जु गीत विपरीति।
सेवें तिह मानें हेव, सो जान मिथ्याती एव ॥४८
वहुते खेडा पुर गाम, इकसे न कही तसु नाम।
तातें सकलाई माने, सुखदाता एम वखाने ॥४९
दीया सुत जो उपजाही, सुत विन तिय कोनि रहाही।
इह झूठ थापणो जाणी, तजिये भवि उत्तम प्राणी ॥५०
पाहण लघु धरें इक ठाही, पथवारी नाम कहाही।
तिनको पूजत धरि नेह, कवहु न सुखदाता तेह ॥५१
मिथ्यात तणो अधिकार, नरकादिक दुख दातार।
जिन-भाषित परचित दीजे, खोटी लखि तुरत तजीजे ॥५२
आसौज है आठे स्वेत, घोटक पूजे धरि हेत।
जिन राज एम वखानी, तिरयच है पूजे प्रानी ॥५३
सो पाप अधिक उपजावे, कहते कछु और न आवे।
तातें जैनी जो होय, पसु पूजि न नरभव खोय ॥५४
दुसरा हाकादिन माही, लाडू पीहर ले जाही।
इह रीति तजो भवि जीव, जिन-वच धरि हृदय सदीव ॥५५
जिन चैत्यन वन कें माही, पून्यो दिन सरद कराही।
आगम में कहुं न वखानी, विपरीत तजो तिह जानी ॥५६
मगल तेरसि दिन न्हावे, असतर तन उजले ल्यावै।
आवे जव दिवस दिवाली, दीवा भरे तेल हवाली ॥५७

निज मन्दिर ऊपर धरि है, अति ही शोभा सो करि है।
तिन मे बहु त्रस को घात, अघ घोर महा उतपात ॥५८
दीवा थाली मे धरिकै, मिल है तसु घर घर फिर कै।
तिन मे कछु नाहि बडाई, पाणी मरिहैं अधिकाई ॥५९
पापी कछु भेद न जानें, मन मे उच्छ्व अति टानैं।
सो पापी महा दुख पावे, भव भामरि अन्त न आवे ॥६०
भरि तेल काकडा वाले, बालक हीडहि कर वाले।
घर-घर लीये सो डोले, बालक हीडहि बच बोले ॥६१
वो देय पईसा रोक, ढिग करे एकसा थोक।
मरयाद भटै ता माही, ताकी तो कहा चलाही ॥६२
बहु हीडमाहिं त्रस जीव, जलि हैं नहि सख्या कीव।
इह पाप न मन मे आवे, सुत लखि दम्पति सुख पावे ॥६३
ते पापी जानो जोर, पडिहै जो नरक अघोर।
भविजन जो निज हितदाई, किरिया इह हीण तजाई ॥६४
काती सुदि एकै जानी, गोधन को गोबर आनी।
साथ्यो निज बार करावे, गोर्धन तसु नाम धरावे ॥६५
जब साझ बैल घर आवे, पूजै तिन अति हरषावे।
साथ्यो निज पाय खुदावे, मिथ्यात महा उपजावे ॥६६
इन हीन क्रिया को धारी, जैहै सो नरक मझारी।
पकवान दिवाली केरो, करिहै धरि हरष घनेरो ॥६७
दुय चार पुत्र जे थाई, तिनको दे जुदी बनाई।
हाडीय भरे पकवान, पितु मात हरष चित आन ॥६८
पुत्रन सिर तिलक करावें, तिनपै तो हाट पुजावे।
सिर नाय तबै दे धोक, किरिया इह अघ की कोक ॥६९
व्यापारी बही बणावै, पूठा चमडा का ल्यावै।
तिनको पूजत है जेह, लखि लोभ नही तसु एह ॥७०
तिथि चौथि महाबदि मानी, व्रत पाप उदय को ठानी।
दिन मे नहि लेय अहार, निशि शशि ऊगे तिहि बार ॥७१
ले मेवो दूध मिठाई, देखो विपरीत बढाई।
जे चौथ मास सुदि होई, करिहै जे विवेकहि खोई ॥७२
इम पाप थकी अधिकाई, दुरगति मे बहु भटकाई।
पदरह तिथि मे इह जानी, तसु कहि सकट की रानी ॥७३
पद देव मान करि पूजै, सो अति मूरखता हूजै।
जैनी जन को नहि काम, मिथ्यात महा दुख धाम ॥७४
सकराति मकर जब आवे, तब दान देय हरषावे।
तिल धाणी माहि भराई, द्विज जनको देय लुटाई ॥७५

मूला का पिंड मँगावे, ब्राह्मण के घरहि खिनावें ।
खीचडी बाँट हरसावे, गिन है हम पुन्य बढाव ॥७६
जहँ त्रस थावर ह्वै नाश, तहँ किम ह्वै शुभ परकाश ।
अति घोर महा मिथ्यात, जैनी न करें ए बात ॥७७
फागुण वदि चौदस दिन को, वारह मासन में है तिनको ।
शिवरात तनो उपवास, कीए मिथ्या परकास ॥७८
होली जालै जिहिं वारै, पूजै सब भाग निवारै ।
जाको देखन नहिं जइये, कर जाप मौन ले रहिये ॥७९
पीछै वहु छार उडावे, जल तैं खेले मन भावे ।
छाण्या अणछाण्या की नही ठीक, लपट न गिने तहकीक ॥८०
करि चरम पोटली डोल, राखै मन करत किलोल ।
यदवा तदवा मुख भाखे, लघु वृद्ध न शंका राखे ॥८१
जल नाखै आपस माही, नर तिय नही लाज गहाही ।
न्हावण के दिन सब न्हावें, कपडा उजरे तन भावें ॥८२
सनबंधी गेह जुहार, करिहैं फिरिहैं हित धार ।
विपरीत लवण लखि एह, तामें कछु नहिं संदेह ॥८३
मिथ्यात तणी परि पाटी, क्रिया लागे जिन वाटी ।
सो भव-भव की दुखदाई, मानो जिनराज दुहाई ॥८४

दोहा

चैत्र-सित्त आठै दिवस, जाय सीतला थान ।
गीत विविध वादित्र जुत, पूजे मूढ अयान ॥८५
भाष्यो रोग मसूरिया, जिन श्रुत वैद्यक माँहि ।
करनि काकरा एकठा, धरी थापना आहि ॥८६

सोरठा

लखौ बडाई एह, वाहन गदहो तासको ।
लहै हीन पद जेह, जो लघु नर हि चढाइये ॥८७

दोहा

वालक याही रोग ते, मरै आव जिह छीन ।
जाकी दीरघ आयु है, सो सारै नकि सीन ॥८८

सोरठा

प्रगट भई कलिकाल, इह मिथ्यात कि थापना । जे जैनी सुविशाल, याहि न मानै सर्वथा ॥८९
मेले जे नर जाँहि, नही गीत सुनिकै खुसी । टका गाठि का खाहि, पाप उपावे अधिक वे ॥९०

गीताछन्द

जे चैत वदि-पडवा थकी गण-गौरि की पूजा सजे ।
परभाति लडकी होय भेली गीत गावै मन रुचै ॥

मालीतणी-बाडी पहूँचरु फूल दो बहलैं करी ।
हरपाय मन उछाह करती आसह ते निज धरी ॥९१
पूजे तहाँ तिह दिवस सो ले फूल दोय चढाय के ।
पाछे बनावे हेत धरि गण-गोरि गोरि अणायके ॥
ईश्वर महेसुर करे मूरति आँखि कोडी की करे ।
देखो बडाई नजर इमहो चित्र की थापना धरे ॥९२

नाराच छन्द

वणाय तीज को गुणो चढाई पूजि कै सही । बडी तियारु कन्यकाइ कत ब्रत्त को गही ॥
करें मिठान्न भोजना अनेक हर्ष मानि है । सुहाग भाव वत्त नाम जोषिता बखानि है ॥९३

गीता छन्द

गणगोरि की पूजा किए जो, आयु, पति की विस्तरै ।
तो लखहु परतछि आयु छोटी प्राय मानव क्यो मरै ॥
कन्या कुँवारीपणा ही तें तास पूजा आ चहैं ।
बारह वरष की होय विधवा क्यो न तसुकी रक्षा करे ॥९४
साहिब तणी जा करै, सेवा दिवसि निशि मन लायकै ।
धिक्कार तसु साहब पणो, कछु दिना सेब कराय कै ।
दायक सुहागनि विरद को गहि, सकति तसु अति हीनता ।
सेवा करती बाल विधवा होय लहि पद-हीनता ॥९५

तोटक छन्द

सिगरी नर नारि इहै दर से, धरि मूरखता फिरि कै पर से ।
कछु सिद्ध लहै नहिं तास थकी, तिहतैं तजिए तनु पूजन की ॥९६

गीता छन्द

भूषन वसन पहिराय, बहुविधि अधिक तिय मिलिकै गही ।
ले जाइ पुर से निकसि बाहर पहुचि है जल तीर ही ॥
गावे विनोद अनेक विनरी नीर मे तसु डारही ।
अति हरष धरती हरष करती आय गेह सिधारही ॥९७

दोहा

इह प्रभुता सहु देखि कै, गौरी ईश महेश । वाकू जल मे खेयतें, डर न कियो लव-लेश ॥९८
रहत सकत तिह देखिये, करिविथापना मूढ । महा मिथ्याती जान तिन, धारे दोप अगूढ ॥९९

सोरठा

इत पूजै फल येह, कुगति अधिक फल भोगवे । यामे नहिं सन्देह, जैनी को इह योग्य नहिं ॥१२००
दुर्लभ नर भव पाय, जैन धरम आचार जुत । ताको चित बिसराय, पूज करै गण-गौरिकी ॥१

सो मिथ्यात को मूल, त्रिविधि तजौ तिन सुखद लखि।
होय धरम अनुकूल, ताते भव-भव सुख लहे ॥२

सवैया ३१

चावडा वराही खेतपाल दुरगा भवानी पथवार देव ईंट थापना वखानिये।
सत्तनामी नाभिग ललितदास पथी आदि नाना परकार भव प्रगट जानिये॥
आशाकलवानी डाल भेव दीप वो मुगा की मत्र ते उतारै भूत डाकिनी प्रमानिये।
एती विपरीत घोर थापना मिथ्यात जोर अहो जैनी इन्हे कष्ट आए हू न मानिये ॥३

सोरठा

पीपर तुरसी जान, एकेंद्री परजाय प्रति। इन्हे देव पद ठान, पूजे मिथ्या दृष्टि जे ॥४

सवैया

ख्वाजे मोर साह अजमेर जाकी जात्ति वोलै पुत्र के गले मे बाँधी घाले चाम पाटकी।
मेरे सुत जीवै नाहि याते तुम पाय अहो सात वर्ष भए नीत पायनते वाटकी॥
जलालदीय पच पीर और वडो परिरने जाय करे चूरिमो कुवुद्धि जिनराटकी।
फातिहा पढवावैं जिदा दरवेश को जिमावें इह कलिकाल रीति मिथ्यात के थाट की ॥५

दोहा

तुरक आन के देव को, मानत नाहि लमार। हिन्दू जैनी मूढमती, सेवे वारम्वार ॥६
या समान मिथ्यात जग, और नही है कोय। दुखदायक लखि त्यागिहै, महाविवेकी सोय ॥७

सवैया ३१

भादो वदि नौमी दिन गारिको वनाय घोडो तापरि चढावे चहुँ वाण गोगो नाम ही।
वावडी मे मेलि कुम्भकारि तिय कर धर लोभते पुजावत फिरै है धाम धाम ही॥
ताको सुखदाई जानि मूढमती मानि ठानि देत दान पाय नमि सेवे गाम गाम ही।
मिथ्यात्व की रीति एह करै निरवुद्धी जेह कुगति लहै है जेह वाका दुख पावही ॥८
भादो वदि वारस दिवस पूजैं वछ गाय राति को भिजोवें नाज लाहण के काम ही।
निकसैं अकूरा तिनि माहि जे निगोदरासि हरप अधिक बाँटें ठाम ठामही।
जीवनि को नाश होय मानत तिवहार लोय कैसे सुख पावे सोय पशू पूजे नाम ही।
महा अविचारी मिथ्यावुद्धीचारी नर नारी ऐसी क्रिया करे स्वभ्र लहै दुख धाम ही ॥९

दोहा

हलद माहि रग सूत को, गाज लेत है तेह। सुणे कहानी खोलते रोट करत है तेह ॥१०
धोक देय पूजै तिसे कहि सुखदाई एह। नाम ठाम नहि देवको, भव भव मे दुख देह ॥११

चाल छन्द

नारी जो गभ धरे है, वालक परसूत करे है।
जनमे वालक जिहि वार, तसु औतिह लेत उतार ॥१२

केउन के ऐसी रीति, गावै त्रिय मन धर प्रीति।
गाडे चित्त अति हरषाई, ते ओलि हाट ले जाई ॥१३
केऊ रोटी के माही, गाडे के देत नखाही।
तामाही जीव अपार, गाढे सो हीणाचार ॥१४
ते अदया के अधिकारी, पावें दुरगति दुख भारी।
जिनके करुना मन माही, ताको दे दूरि नखाही ॥१५
दस दिन को ह्वै जब बाल, सूरज पूजै तिह काल।
लागै तसु दोष मिथ्यात, जिन मारग ए नही घात ॥१६
तीन्है जब न्हवण करै है, जलथानिक पूजन जैहै।
जल जीवन को भडार, एकेंद्री त्रस अधिकार ॥१७
जैनी जिनके घर माही, सकाचित्त माहि धराही।
जलथानक जाय न दूजे, घरमांहि परहडी पूजे ॥१८
ताको है दोष महत्त, ततक्षिण तजिए गुणवत।
दिन तीस तणो ह्वै बाल, जिन मारग मे इह चाल ॥१९
वसु दरब मनोहर लेई, चैत्याले गमन करेई।
ते बालक अक मझारी, तिह साथ चलै बहु नारी ॥२०
गावैं जिन गुण हरषती, इय मदिर जिन दरसती।
भगवत चरण सिरनाय, पुनि नृत्य रचै बहु भाय ॥२१
बाजित्र विविधि के बाजे, जामों धन अबर गाजे।
जिन भाव हरखि धरि सेवै, तसु जनम सफलता लेवै ॥२२
श्रुत गुरु पूजे बहु भाई, जिनकी युति मैं मन लाई।
भाषै अति उत्तम बैन, सब जन मन को सुख दैन ॥२३

दोहा

जिन श्रुत गुरु पूजा पढै, आवे अपने गेह। यथा सकति अरथी जनहि, दान हरषतें देय ॥२४
सनमानें परिवार को, यथायोग्य परवान। जैनी इह विध पुत्र को, जनम महोछो ठाम ॥२५
आठ वरष लो पुत्र जो, करद पाप विस्तार। तास दोष पितु मातु को, ह्वै है फेर न सार ॥२६
यातें सुनि निज कार मैं, राखै जे मति मान। ताहि पढावै लाभ लखि, ह्वै तब विद्यावान ॥२७

चाल छन्द

अब व्याह करन की बार, किरिया जे ह्वै अविचार।
प्रथमहि जब लगन लिखावै, सज्जन दस वोस बुलावै ॥२८
चावल ह्वै जिन कर माही, पूजा सब लगन कराही।
करि तिलक बिदा तिन कीजे, मिथ्यात महा सु गिनीजे ॥२९
माडै फिरि भीत विनायक, कहि सिद्ध सकल सुखदायक।
नर देह वदन तिरयच, सो तो सिधि देय न रच ॥३०

तातें जैनी जो होइ, ए जैन विनायक सोई।
साजी अवटावे जेह, पापड करण को तेह ॥३१
जल तीन चार दिन ताईं, राखै नही सक धराही।
वसु पहर गये तिन माही, सनमूर्छन जे उपजाही ॥३२
मांग्यो घर घर पहुचावे, वहुतो सो पाप वढावै। वसुजाम माहि वह नीर वरतै जे बुद्ध गहीर ॥३३
उपराँति दोष अति होई, मरयाद तजो मति कोई।
अरु वडी करण कै ताईं, भिजवावै दालि अथाही ॥३४
सो दालि घोय सब नाखे, वहुविरिया लगन न राखे।
घटिका दुय मे उस माही, सन्मूर्च्छन जीव उपजाही ॥३५
यातें भविजन मन लावे, तस तुरतहि ताहि सुकावे।
धोवण को पानी जेह, नाखे वहु जतन करेय ॥३६
वसु सरद रहै नही जाते, वीखरिवानासै यातैं।
साझै जो दालि पिसावै, वासन भरि राति रखावे ॥३७
उपसावै अधिक खटावे, उपजे त्रस वारन पावै।
फुनि लूण मसाला डारे, करतै मसलैं वहुवारै ॥३८
इम जीवनि नास करती, मनमाँही हरष धरती।
निज परतिय वहुत वुलावे, तिनपै ते वडो दिवावे ॥३९
सो पाप अनेक उपावे, कहते कछु ओर न पावै।
करुणा जाके मनि आवे, सो इह विधि वडो निपावे ॥४०
उनहै जलदालि भिजोवे, प्रासुक जल तैं फिर धोवे।
किरिया को दोष न लावे, सो दिन मे कलौ करावे ॥४१
ततकाल वडी तसु देह, उपजावे पुण्य न छेह।
स्याणो जन अवर अयाणो, दुहु व्याह करे इह जाणो ॥४२
किरिया मे भेद अपार, इक सुख दे इक दुखकार।
जाके करुणा मनमाँही, अविवेक न क्रिया कराही ॥४३
छाणा कौ गाडो आने, अविवेक की पूजा ठाने।
लकडी को थम वनाव, ताको तिय पूजण आवे ॥४४
गावती गीत घनेरा, जो जो जिह थानक केरा।
माटी पूजै करि टीको, कारण लखि सवही को ॥४५
सकडी राखी दिन ऐ है, तिर्यंचाकि पूजणो जे हैं।
तिसि को डोरे बँधवावै, परियण सज्जन मिलि आवै ॥४६
तह पूज विनायक करिके, रोली पूजै चित धरिके।
अरु वार वार विनायक, पूजे जानो सुखदायक ॥४७
इन आदि क्रिया विपरीति, करिहै मूरख धरि प्रीति।
मिथ्यात भेद नहिं जाने, अन्न को उर मन नहि आने ॥४८

अध तैं ह्वै नरक बसेरा, वोर न आवे दुख केरा।
यातैं सुनि बुध जन एह, मिथ्यात क्रिया तजि देह ॥४९
तातैं भव भव सुख पावै, आगम जिन राज बतावै।
यातैं सुख वाछक जीव, आज्ञा जिन पालि सदीव ॥५०
करि है जे क्रिया विवाह, सिव मत माफिक यह राह।
मिथ्यात दोष इह जाते, जैनी को वरजी यातैं ॥५१
पूरब दिस ज्योतिस जैन, कछुयक उद्योत सुख दैन।
रहियो दिन माफिक ब्याह, जैनी धरि करे उछाह ॥५२
तामे मिथ्या नहिं दोष, सिवमत विधि हूँ नहीं पोष।
जैनी श्रावक जो पडित, जिनमत आचार जु मडित ॥५३
ते व्याह करावैं आई, मन मे शका न धराई।
तिन हूँ स्यो आप समाही, सुत बेटी सगपन थाही ॥५४
प्रथमहि जो व्याह सँचैहै, जिन मदिर पूज रचै है।
बाजित्र अनेक बजावैं, युवती जन मगल गावैं ॥५५
कन्या वर को ले जाँही, जिन चरणनि नमन कराही।
जिन पूजि रुआवे गेहै, पीछे विधि एम करे है ॥५६
सज्जन परिवार सतोष, ऋषित भूषित जन पोषे।
जिन मत विधि पाठ प्रमाणैं, अपराजित मत्र वखाणै ॥५७
वर कन्या दोहुँ कर जोड, फेर कराय धरी कोड।
समधीजन असन करावे, दुहूँ तरफहि हरष बढावे ॥५८
देवो निज सकति प्रमाण, कन्या वर भूषण दान।
इह विधि जे व्याह कराही, मिथ्यात न दोष लगाही ॥५९
गुरु देव धरम परतीत, धारो जन की इह रीति।
तिनको जस है जगमाही, दूषण मिथ्यात तजाही ॥६०

दोहा

श्री हणवन्त कुमार की, मूढनि धरि चित प्रीति। गाम गाम की थापना, महाघोर विपरीत ॥६१

चाल छन्द

मूरति पाषण घडावे, तसु ऐसे अङ्ग बनावे।
मानुष कैसे कर पाय, वन्दर को सो मुख थाय ॥६२
लबी पूछ जु अधिकाई, मूरति इस भाँति रचाई।
कहु इक क्षत्री जु चुणावे, कहु मढि रचिकै पधरावै ॥६३
कहुँ चौडे निकटाहि गाम, कहुँ काकड दूरहि धाम।
तिनतेल लगावे पूर, चरचै काँ बीरू सिन्दूर ॥६४॥
कहिहै तसुखेडा देव, बहु जन तिह पूजैं एव।
पापी जन भेद न जानैं, जिह आगे अदया ठानैं ॥६५

चौपाई

जात्री दूर दूर का घणा, आवे पायनि मे तिह तणा ।
जीव बद्ध करि तास चढाय, निहचैते नरकहि जाय ।।६६
कामदेव हणमन्त कुमार, विद्याधर कुल मे अवतार ।
तीर्थंकर विनु जग नर जिते, तिह सम रूपवान नहि तिते ।।६७
वन्दरवशी खगपति जान, धुजा माहि कपि चिह्न बखान ।
माता अजनी जाकी जानी, पवनजय तसु पिता बखानी ।।६८
दादी खगपति नृप प्रहलाद, जैनधर्म धरि चित अहलाद ।
पाले देव गुरु श्रुत ठीक, महाशीलधारी तहकीक ।।६९
हणुकुमार दीक्षा धरि सार, मोक्ष गये सुख लहै अपार ।
ताको भाषै कपि को रूप, ते पापी पडिहैं भवकूप ।।७०
आनमती सो कछु न बसाय, जैनी जन सो कहु समझाय ।
जिनमारग मैं भाष्यो यथा, तिह अनुसार चलो सरवथा ।।७१
गगा नदी महा सिरदार, जाको जल पवित्र अधिकार ।
जिन पषाल पूजा तिह थाकी, करिये जिन आगम मे बकी ।।७२
जैनी श्रावक नाम धराय, हाड रु लावे तिह पितु माय ।
धन्य जनम मानै जग आप, गगा घाले माय रू बाप ।।७३
आनमती परशसा करे, तिन वच सुनि चित्त हरषहि धरे ।
मूढ धरम अघ भेद न लहै, बातुल-सम जिम तिम सरदहै ।।७४
पदमद्रह हिमवन ऊपरी, ताइहतैं गगा नीकरी ।
विकल त्रस जल मे नही होय, बहुदिन रहै न उपजै वोय ।।७५
जिस पर जाय तजे ततकाल, और ठाम उपजे दरहाल ।
हाड रु लाए गगा माहि, कैसे ताकी गति पलटाहि ।।७६
जैनी जन तिन शिक्षा एह, जैन विरुद्ध कीजे है तेह ।
ते करिये नही परम सुजान, तिम उत्तम गति लहै पयाण ।।७७

अथ जनम मरण की क्रिया को कथन

दोहा

मरण समय कीजे क्रिया, आगमते विपरीत ।
पोषक मिथ्यादृष्टि की, कहूँ सुनहुँ तिन रीत ।।७८

चौपाई

पूरी आयु करवि जे मरे, मेल्हि सनहती ए विधि करे ।
चून पिण्ड का तीन कराय, सो ताके कर पास धराय ।।७९
भ्रात पुत्र पोता की बहू, धरि नालेष्ट धोक दे सहू ।
पान गुलाल कफन पर धरे, एम क्रिया करि ले नीसरै ।।८०

दग्ध क्रिया पाछे परिवार, पानी देय तबै तिह बार।
दिन तीजो सो तीयो करे, भात सरा इम ताके धरे ॥८१
चाँदी सात तवा परिडारि, चन्दन टिपकी दे नर नारि।
पानी दे पत्थर खटकाय, जिन दर्शन करिकै घर आय ॥८२
सब परिजन जीमत तिहि बार, बाबा करते गास निकार।
साझ लगे तिहि ढाकरि खाय, गाय बछाक देय खुवाय ॥८३
जिह थानक मृवो जन होय, लीपै ठाम करै सुख होय।
फेरै ता ऊपरि के रडी, ए मिथ्यात क्रिया अति बडी ॥८४
ए सब क्रिया जैन मत माँहि, निंद सकल भाषै सक नाहि।
अवर क्रिया जे खाटी होय, सकल त्यागिए बुध जन सोय ॥८५
जब जिय निज तजि कै परजाय, उपजै दूजी गति मैं जाय।
इक दुय तिन समये के माहि, लेइ आहार तहा सक नाहि ॥८६
गति माफिक पर्यापति धरै, अन्त मुहूरत पूरो करै।
जिह गति ही मे मगन रहाय, पिछलो भव कुण याद कराय ॥८७
पिंड मेल्हि तिहि कारण लोय, धोक दिये जै लै नही सोय।
पाणी देवे की जो कहै, मूए को कबहु न पहोचिहै ॥८८
भात सराई काकै हेत, वह तो आय आहार न लेत।
जाकै निमित्त काढिये गास, पहुचै वहै यहै मन आस ॥८९
सो जाणै मूरख की वाणि, मूवो गास लेय नहि आणि।
गउ के रडी गास ही खाहि, अरे मूढ किम पहुँचै ताहि ॥९०
मृत्यकभूमि फिरै के रडी, सो मिथ्यात भूल अति बडी।
उलटी किरिया ते ह्वै पाप, जो दुरगति दुख लहै सताप ॥९१
यातै जैन धरम प्रति पाल, जे शुभ क्रिया अझूठी चाल।
तिनहि भूलि मति करियो कोय, जो आगम हिरदै दृढ होय ॥९२
पूरी आयु करिवि जिय मरै, ता पीछे जैनी इम करै।
घडी दोय मैं भूमि मसान, ले पहुँचे परिजन सब जान ॥९३
पीछे लास कलेवर माहिं, त्रस अनेक उपजैं सक नाहिं।
मही जीव बिन लखि जिह थान, सूको प्रासुक ईंधण आन ॥९४
दगध करिवि आवै निज गेह, उसनोदक स्नान करेह।
वासर तीन वीति है जबै, कछु इक सोक मिटण को तबै ॥९५
स्नान करिवि आवे जिन-गेह, दर्शन करि निज घर पहुँचेह।
निज कुल के मानुष जे थाय, ताके घर तैं असन लहाय ॥९६
दिन द्वादश वीते है जबे, जिन मन्दिर इम करिहै तबे।
अष्ट द्रव्य तैं पूज रचाय, गीत नृत्य वाजित्र वजाय ॥९७
शक्ति जोग उपकरण कराय, चदोवादिक तासु चढाय।
करिवि महोछब इह विधि सार, पात्र दान दे हरष अपार ॥९८

परिजन पुरजन न्योति जिमाय, यथाशक्ति इम शोक मिटाय ।
अरु परिजण सूतक की वात, सूतक विधि में कही विख्यात ॥९९
ता अनुसार करे भवि जीव, हीण क्रिया को तजो सदीव ।
इह विधि जैनी क्रिया करेय, अवर कुक्रिया सवहि तजेय ॥१३००

अथ सूतक-विधि लिख्यते । उक्त च मूलाचार उपरि भाषा

त्रोटक छन्द

इम सूतक देव जिनिन्द कहै, उतपत्ति विनास वि भेद लहै ।
जन मे दस वासर को गनिए, मरिहै जब वारह को भनिए ॥१
कुल मे दिन पच लगी कहिये, जिन पूजन द्रव्य चढै नहि ये ।
परसूत भई जिह गेह मही, वह गाम भलो दिन तीस नही ॥२

चौपाई

चेरी महिषी घोडी गाय, ए घर मे परसूतिज थाय ।
इनको सूतक इक दिन होय, घर वारे सूतक नहि कोय ॥३
महिषी क्षीर पक्ष इक गए, गाय दूध दिन दस गत भये ।
छेली आठ दिवस परमाण, पाछे पय सबको सुध जाण ॥४
जनम तणो सूतक इह होय, मरण तणौ सुनिये अव लोय ।
दिन वारह इह सूतक ठानि, पीढी तीनि लगैं इक जानि ॥५
चौथी साखि दिवस दस आय, पचम पीढी षट दिन जाय ।
षष्ठी साखि चार दिन कहे, साख सातमी तिहु दिन रहे ॥६
अष्टम साखि अहो निसि सोग, नवमी जामहि दोय नियोग ।
दसमी हीन मात्रही जाणि, सूतक गोत्रनि गहै वखाणि ॥७
करि सन्यास मरे जो कोय, अथवा रण मे जूझैं सोय ।
देशातर मे छोडै प्रान, वालक तीस दिवस लो जान ॥८
एक दिवस इनको ह्वै सोग, आगे अवर सुनो भवि लोग ।
पीढो वालक दासी दास, अरु पुत्री सूतक सम भास ॥९
दिवस तीन लो कह्यो वखान, इसकी मरयादा मे जान ।
वनिता गरभ पतन जो होय, जितना मास तणी थिति सोय ॥१०
जितने दिन को सूतक मही, पीछे स्नान शुद्धता लही ।
पति का मोह थकी तिय जरे, अथवा अपघातक जु करे ॥११
अरु निज परि मरि है जो कोय, इन तिनहूँ की हत्या होय ।
पखवारा सूतक ता तणो, आगे अवर विशेष जो भणो ॥१२
जाके घर के असन रु नीर, खाय न पीवे वुद्ध गहीर ।
अरु श्री जिन चैत्यालय मही, द्रव्य न चढै रु आवै नही ॥१३
वीति जाय जव ही छह मास, जिन पूजा उच्छव परकास ।
जामैं पच तासु के गेह, जाति माहि तव आवै जेह ॥१४

मरयादा ऐसी को छाड, और भाति करवा नहिं माड।
जो जिन आगम भाखी रीत, सो करिए नित मन धर प्रीत ॥१५

कुडलिया

सूतक क्षत्री गेह पच वासर कह्यो, ब्राह्मण गेह मझारि दिवस दस ही लह्यो।
अहो रात्रि दस दोय वैश्य घर जाणियै, सब सूद्रनि के सूतक पाप बखानिये ॥१६
ऋतुवती तिय प्रथम दिवस चडालणी, ब्रह्मघातिका दिवस दूसरा मे भणी।
त्रितिय दिवस के याहि निदिसम रजकणी,
बासर चोथे स्नान क्रियासो सुध भणी ॥१७
जाके घर मे नारि अधिक है दुष्टणी, जाकै किरिया हीण सदा पूरब भणी।
व्यभिचारणि पर पुरुष रमण मति है सदा,
ताके घर को सूतक निकसै नहि कदा ॥१८

सोरठा

को कवि कहै बनाय, ताके अवगुण को कथन।
प्रायश्चित न समाय, जिहि दिन दिन खोटी क्रिया ॥१९

कुडलिया

अरु जाकै घर त्रिया दया व्रत पालनी, सत्य वचन मुख कहै अदत्तहि टालिनी।
ब्रह्मचर्य को धरै सती सब जन कहै, पतिबरता पति भक्ति रूप नित ही रहै ॥२०
जिनवर की सो पूज करै नित भाव सो, पात्रनि को दे दान महा उच्छाह सो।
सूतक पातक ताके घर नहि पाइये, प्रायश्चित तिय तिहि को केम बताइये ॥२१

दोहा

इह सूतक वरनन कियो, मूलाचार प्रमान।
तिह अनुसार जु चालिहै, ता सम और न जान ॥२२

सोरठा

भाषा कीनी सार, जो मत सशय ऊपजै।
देखो मूलाचार, मन सशयो भाजै सही ॥२३

इति सूतक विधि

अथ तमाखू भाग निषेध वर्णनम्

चाल छन्द

सुनियै बुध जन कलिकाल, प्रगटी होणी दोय चाल।
इक प्रथम तमाखू जानो, दूजी बिजियाहि बखानो ॥२४
सुनिलेहु तमाखु दोष, अदया कारण अघ कोष।
निपजन की विधि है जैसें, परगट भाषत हौं तैसें ॥२५

तसु हरित तोडि के पान, साजी जलते छिडकान ।
गदहा को मूत्र जु नाखे, वाविरु जुडाधरि राखे ॥२६
दिन बहुत सरदता जामें, त्रस जीव ऊपजें तामे ।
तिनकी अदया है भूरि, करुणा परि है नहि मूरि ॥२७
पिरथी मे आगि डराही, तिनिके जिय नास लहाही ।
धूवा मुखसेती निकसे, तववाय जीव वहु विनसे ॥२८
थावर की कौन चलावे, त्रस जीव मरण वहु पावे ।
दुरगन्ध रहै मुख माही, कारे कर ह्वै अधिकाही ॥२९
उत्तम जन ढिग नहि आवे, निंदा सव ठाम लहावें ।
दुरगतिहि दिखावे वाट, सुरगति को जाणि कपाट ॥३०
अतिरोग बढावे श्वास, ऐसैं नरकी का आस ।
दोषीक जानि करि तजिए, जिन आज्ञा हिरदय भजिए ॥३१
उपवास करे दे दान, किरिया पालै धरि मान ।
पीवे हैं तमाखू जेह, ताके निरफल ह्वै एह ॥३२
अघ-तरु सिंचन जल-धार, शुभ पादप-हनन कुठार ।
वहु जनकी झूटि घनेरी, दायक गति नरकहि केरी ॥३३
इह काम न वुधजन लायक, ततक्षिण तजिये दुखदायक ।
के सूघे केंऊ खेहैं, तेऊ दूपण को लैहैं ॥३४

दोहा

भाग कसूंभो खात ही, तुरत होत वे रोस ।
काम बढावन अघ करन, श्री जिनवर पद सोस ॥३५
अतीचार मदिरा तणो, लागै फेर न सार ।
जग मे अपजस विस्तरे, नरक लहै निरधार ॥३६
लखहु विवेकी दोष इह, तजहु तुरत दुखधाम
षट मत मे निन्दित महा, हनै अरथ शुभ काम ॥३७

मरहटा छन्द

इह जगमाही अति विचराही क्रिया मिथ्यात जु केरी ।
अदया को कारण शुभगति-वारण भव-भटकावन फेरी ॥
करिहै अविवेकी ह्वै अति टेकी तजिकै नेकी सार ।
धरि मन चित आनै अघही जानै कौन बखानै पार ॥३८
तामै रमि रहिया ग्रह ग्रह गहिया तिय वच सहिया तेह ।
मन मे उर आनैं कहैं सु वखानै वचन वखानै जेह ॥
नरपद जिन पायो वृथा गमायो पाप उपायो भूरि ।
अस मन मे रमिहै कुगुरुन नमि है भव-भव भ्रमिहै कूर ॥३९

किरिया लखि ऐसी भाषी तैसी तजिय वैसी वीर।
ताते सुख पावे अघ नसि जावे जो मन आवे धीर॥
जिनभाषित कीजै निज रस पीजे कुगति है दीजै नीर।
भव भ्रमणहि छाडो सकतिह माडो उतरो भवदधि तीर॥४०

अथ ग्रहशांति जोतिष वर्णन लिख्यते

चौपाई

जोतिस चक्रतणी सुनि बात, जम्बूद्वीप माहिं विख्यात।
दोय चन्द सूरिज दो कहे, जैनी जिन आगम सरदहे॥४१
इक रवि भरत उदै जब होय, दूजो ऐरावति मे जोय।
दुहुनि बिदेह माहिं निसि जाणि, जोतिस चक्र फिरे इहवाणि॥४२
भरत अरु ऐरावति निसि जवै, दुहुन विदेह दुहू रवि तवै।
इक पूरब विदेह रवि जान, अपर विदेह दूसरो मान॥४३
फिरते रवि शशि को इह भाय, आदि अन्त थिरता नहिं थाय।
एक चन्द्रमा को परिवार, आगम भाष्यो पच प्रकार॥४४
शशि रवि ग्रह नक्षत्र जाणिये, पचम सहु तारा ठाणिए।
तिनकी गिनती इह विधि कही, एक चन्द्रमा इक रवि सही॥४५
ग्रह अठ्यासी अवर नक्षत्र, भाषै अट्ठाईस विचित्र।
छासठ सहसरु नव सय सही, ऊपरि पचहत्तरिको गही॥४६

अडिल्ल छन्द

पच अक इन ऊपर चौदह सुनि हिये, अक भये उगणीस सकल मेले किये।
छासठ सहसरु नव सय पचहत्तर भणे, कोडा कोडी तारा इतने गण गणे॥४७

चौपाई

एक चन्द्रमा को परिवार, तैसो दूजा को विस्तार।
मेरुतणी परदिक्षणा देई, थिरता एक निमिष ना लेई॥४८
जिन आगममे इह तहकीक, आनमतीकै सो नहि ठीक।
जिन मत जोतिष विच्छिति भई, अट्ठासी ग्रह भेद न लई॥४९

दोहा

प्रगटचो शिवमत जोर जब, पडित निजवुधि धार।
ग्रन्थ कियो जोतिष तणो, तिम फैल्यो विस्तार॥५०
आदित सोम रु भूमि-सुत, बुध गुरु शुक्र सुजान।
राहु केतु शनि ए सकल, नव ग्रह कहे बखान॥५१
चौथो अष्टम बारहौ, अरु घातीक बनाय।
साडे साती शनि कहैं, दान देहु समथाय॥५२

चालछन्द

तदुल रूपो सित वास, रवि शशि को दान प्रकास।
रातो कपडो गोधूम, तावो गुलद्यो सुत भूम ॥५३
वुध केतु दुहूँ इकसेही, मूगादि कर्म्यो इत देही।
गुरुज वसन द्यो हेम, अरु दालि वनन करि प्रेम ॥५४
जिम कहे शुक्र को दान, तिमही दे मूढ अयान।
शनि राहु श्याम भणि लोह, तिल तेल उडद तद्योह ॥५५
हस्ती अरु घोटक श्याम, जुत श्याम विलरथ नाम।
इत्यादिक दान वखाने, ग्रह शान्ति निमित मन आने ॥५६
नवग्रह सुरपद के धारी, तिनके नहिं कवल अहारी।
किह काज नाज गुल देहै, सुर किम हि तृपतिता लेहै ॥५७
हाथी घोडा असवारी, तिनि निमित देह उर धारी।
वन के विमान अतिसार, सुवरण नग जडित अपार ॥५८
भूपरि कछु पाय न चालै, किह कारण दानहि झालै।
तातें ए दान अनीति, शिवमत भाषै विपरीति ॥५९
वालक जनमे तिय कोई, मूला असलेखा होई।
दिन सात वीस परमाणै, वनिता नहिं स्नान जु ठानै ॥६०
पति पहिरै वसन मलीन, वालक निज स्वाद नवीन।
सिर दाढी केस न ल्यावे, स्नानहुं करिवो नहिं भावै ॥६१
दिन ह्वै सव जाय वितीत, किरिया वहु रचै अनीति।
द्विज को निज गेह वुलावे, वह मूला शाति करावे ॥६२
तरु जाति वीस पर सात, तिनके जु मगावे पात।
इतने ही कूवा जानी, तिनको जु मगावे पानी ॥६३
इतने ही छाहि जु केरा, सो फूस करै तस मेरा।
अरु सताईस कर टूक, सीधा इतने ही अचूक ॥६४
दक्षिणा एती जु मगावे, सामग्री होम अनावै।
करि अगिनि वाल अगियारी, घृत आदिक वस्तु जु सारी ॥६५
होमे करि वेद उचारे, इह मूल शाति निरधारे।
पाछे फिर एम कराई, वह फूस जो देय जलाई ॥६६
वालक पग तेल जु माही, परियण को देहि वुलाई।
सवहीनें वालक के पाय, कहि ढोल द्योह सिरनाय ॥६७
सव मुख वच एम कहावे, हमते तू वडो कहावे।
ऐसी विधि शिवमत रीति, जैनी करिहै धरि प्रीति ॥६८
धरम न अर्थ भेद लहाही, किम कहिए तिन शठ पाही।
ते अघ उपजावे भारी, तिनके शुभ नही लगारी ॥६९

गुरुदेव शासत्तर प्रीति, धरिहै जे मन धरि प्रीति ।
तें ऐसी क्रिया न महै, अघ-कर लखि तुरतहिं छडै ॥७०
सत्तवीस नक्षत्र जु सारे, बालक ह्वै सकल मझारे ।
जाके शुभ पूरव सार, सो भुगतै विभव अपार ॥७१
जाके अघ ह्वै प्राचीन, सोइ यहै दलिद्री हीन ।
ए दान महादुख दाई, दुरगति केरे अधिकाई ॥७२
मिथ्यात महा उपजावे, दर्शन सिव-मूल नसावे ।
निज हित वाछक जे प्रानी, ए खोटे दान बखानो ॥७३
जिनमारग भाष्यौ एह, विधि उदै आय फल देह ।
तैसो भुगते इह जीव, अधिको ओछो न गहीव ॥७४
जाके निश्चय मन माही, विकलप कबहू न कराही ।
मन माहि विचारै एह, अपनो लहनो विधि लेह ॥७५

दोहा

निमित तास चित पूजसी, अधिका जे द्रव्य लाय ।
कोटि जनम करतो रहो, ज्यो को त्यो ही थाय ॥७६
ग्रह की शांति निमित जो, विकलप छूटै नाहि ।
भद्रबाहु कृत श्लोक मैं, कहो जेम करवाहि ॥७७

अडिल्ल

नमसकार कीरति न जगत गुरु पद लही,
सद गुरु मुखतै कथन सुण्यो जो होहि सही ।
लोक सकल सुख निमित्त कह्यो शुभ वैन को,
नवग्रह शांतिक वर्णन सुनिये चैनको ॥७८

नाराचछन्द

जिनेंद्र देव पासेव खेचरीय लाय है, निमित्त तासु पूजि जैन अष्ट द्रव्य लाय है ।
सुनीर गंध तदुलै प्रसून चारु नेवज, सुदीप धूप औ फल अनर्घ सिद्धद भज ॥७९

चालछन्द

सूरज क्रूर जब थाय, पदमप्रभ पूजे पाय ।
श्री चद्रप्रभू पूजा तैं, सिद्ध दोष न लागै तातें ॥८०
जिन वासुपूज्य पद पूजत, भाजे मगल दुख धूजत ।
बुध क्रूर पण जब थाय, बसु जिन पूजें मन लाय ॥८१

अडिल्ल

विमल अनन्त सुधर्म शान्ति जिन जानिए, कुन्थु अरह नमि वर्धमान मन आनिए ।
आठ जिनेसुर चरण सेव मन लाय है, बुद्धतणो जो दोष तुरत नसि जाय है ॥८२

रिषभ, अजित, सभव, अभिनन्दन वदिए, सुमति, सुपारस, शीतल मन आनदिए।
श्री श्रेयास जिनद पाय पूजत सही, विसपति दोष नमाय यही आगम कही ॥८३
सुवुधनाथ पद पूजित शुक्र नमाय है, मुनिसुव्रत को नमत दोष जनि जाय है।
नेमनाथ पद वदत राहु रहै नही, मल्लि र पारस भजत केतु भजिहै सही ॥८४
जनम लगन के समै क्रूर ग्रह जो परै, अथवा गोचर माहि अशुभ जे अनुसरै।
तिनि तिनि ग्रह कै काजि पूजि जिनकी कही, जाप करे जिन नाम लिए दुष ह्वै नही ॥८५
नवग्रह सातिहू काज जिनेश्वर सो भणी, घडो होय सिरनाय कर सो थुति घणी।
वार एक सो आठ जाप तिनको जपै, ग्रह नक्षत्र की वात कम वहुविधि खपै ॥८६
भद्रवाहु इम कही तासु ऊपरि भणी जो पूरव विद्यानुवाद श्रुति त भणी।
इह नवग्रह शान्ति वखाणी जैन मे, करिवि श्लोक अनुसार किसनसिंघ पै नम ॥८७
आन धरम के माहि उपाय इम कहत हैं, विपरीत वुद्धि उपाय न मारग लहत हैं।
चडारनि के दान दियाँ ह्वै शुद्धता, कल्प्यो एम विपरीत ठाणि मति मुग्धता ॥८८
चद दोय दोय रवि दोय जिनागम मे कहै, मेरु सुदरसन गिरिंद सदा फिर लेत है।
शशि विमान तल राहु एक योजन वहै, रवि कै नीचें केतु एम भमतो रहै ॥८९
पखि अधियारे माहि कला शशि की सही, एक दवावति जाय अमावस लो कही।
शुकल पक्ष इक कला उघरती है, पूरणमासी दिन शशि निरमल थाय है ॥९०
नित्यहि ग्रह को मिलन इहा होय न सवै, पूज्य विन विपरीति राहु उलटै जावै।
देवे शशि जव दान ग्रहण जव ठान ही, जिन मत मे सो दान कवहूँ न वखानही ॥९१
रवि शशि चारयो तणो ग्रहण चतु जानियो, ऐरावत अरु भरत माहि परमानियो।
छठै महीने अतर पडे आकाश मे, फेरि चाल कू लहै दवावे तास मे ॥९२
तिह विमान की छाया अवर न मानिए, जिन मारग के सूत्रनि एक वखानिए।
भरत माहि एक ऐरावत मे भी सही, इक ऐरावत माहि भरत तिहुँही लही ॥९३
भरत माहि ऐरावत चहूँ मे ना कही, ऐरावत हे च्यारि भरत पै ए नही।
दोय दोय दुहुँ थान होय तो नहि मनैं, इह ग्रहण की रीत अनादि थकी वनै ॥९४

उक्त च गाथा त्रैलोक्यसारे नेमिचन्द-सिद्धान्ति-कृते।

राहु अरिट्ठविमाण किचूणा कि पि जोयण अधोगता।

छम्मासे पव्वन्ते च-व रवि छादयदि कमेण ॥९५

चालछन्द

ससि राहु कतु रवि जाण, आछादह हे जु विमान।
विपरीत चाल षट् मास, पावत है जव आकास ॥९६
चारयो सुर पद के धार, तिह के कछु नहि व्यापार।
देणो लेहणो को करि है, फिरि है जोजन अतर है ॥९७
चहूँ को मिलिवो नही कवही, निज थानकि माहिव सवही।
औरनि की दीयो दान, लहैणी नही उतरे आन ॥९८
शशि राहु चाल इक वारी, शशि वढे घटै निरधारी।
षटमास विना लहि दावे, रवि को नहि केतु दवावे ॥९९

दोहा

एह कथन सुनि भविक जन, करि चित्त मे निरधार ।
कथित आन मत दान जे, तजहु न लावो बार ॥१४००
पाप बढावन दु खकरन, भव भटकावन हार ।
जास हृदय सत जैन दृढ, त्यागे जानि असार ॥१

इति नवग्रह शान्ति विधि ।

अथ निज तन सबधी क्रिया कथन

चौपाई

निज तन सबधी जे क्रिया, करहु भव्य तामे दे हिया ।
शयन थकी जब उठिये सवार, प्रथमहि पढै मन्त्र नवकार ॥२
प्रासुक जल भाजन कर-मांहि, त्रस-भूषित जो भूमि तजाहि ।
वृद्धि नीति को जैहै जबै, अवर वसन तन पहरै तवै ॥३
नजरि निहारि निहारि करत, जीव-दया मन माहि धरत ।
होत निहार पछै जल लेइ, वामा करतै शौच करेइ ॥४
फिरि माटी वामा कर माहि, वार तीन ले धोवै ताहि ।
अर तहतें आवै घर करी, वस्त्रादिक सपरस परिहरी ॥५
कर धोवण को ईटा खोह,लेह तदा पद मर्दित सोह ।
बालू अरु भसमी करि धारि, हाथ धोइ नागरि नर-नारि ॥६
वावो हाथ फेरि तिहुबार, धोवै जुदो गारि करि धार ।
हाथ दाहिणो हूँ तिहु बार, धोवै जुदो वहै परकार ॥७
माटी ले दुहु हाथ मिलाय, धोवै तीन बार मन लाय ।
पच्छिम दिशि मुख करिकै सोइ, दातुण करिय विवेकी जोइ ॥८
स्नान करन जल थोडो नाखि, कीजे इह जिन आगम साखि ।
करुणा कर मन माहि विचारि, कारिज करिए करुणा धारि ॥९
प्रथमहि महि देखिए नैन, जहँ त्रस जीव न लहै अचेन ।
रहै नही सरदी बहु बार, स्नान जहाँ करिहै वुध धार ॥१०
पूरब दिसि सन्मुख मुख करै, उजरे वसन उत्तर दिसि धरे ।
जीमत वार धोवती धार, अवर सकल ही वसन उतारि ॥११
सिर डाढी सव राखै जबै, स्नान करै किरिया जुत तवै ।
लोकाचार उठै किहि तणैं, तवहू स्नान करत ही वर्णै ॥१२
तिय सेवै पीछै इह जाणि, परम विवेकी स्नानहि ठाणि ।
शयन जुदी सेज्या परि करै, इम निति ही किरिया अनुसरै ॥१३
राति सुपन मैं मदन द्रवाय, धातु विषै को कारण पाय ।
कपडे दूरि डारि निरवार, जल तैं स्नान करै तिहि वार ॥१४

निसि सोवन को सेज्या-थान, पलग करै दक्षिण सिरहान।
अरु पश्चिम दिसहू सिर करै, उठत दुहु दिसि निज रिजु परै ॥१५
पूरब अरु उत्तर दुहु जाणि, उत्तम उठिए हरपहि ठाणि।
इह विधि क्रिया अहो निसि करै, सो किरिया विधि को अनुसरै ॥१६

इति तन-सबधी क्रिया।

अथ जाप्य पूजा की विधि लिख्यते

चौपाई

जाप-करण पूजा की वार, जो भाषो किरिया निरधार।
ताको वरणन भवि सुन लेहु, श्लोकनि मे वरणी है जेह ॥१७
पूरब दिसि मुख करि बुधिवान, जाप करै मन वच तन जानि।
जो पूरब कदाचिटरिजाय, उतर समुख करि चितलाय ॥१८
दक्षिण पश्चिम दुहु दिसि जथा, जाप-करन वरजी सरवथा।
तीन सास-उसास मझारि, जाप करै नवकार विचारि ॥१९
प्रथम जाप अक्षर पैंतीस, दूजी सोलह वरण बत्तीस।
तृतीय अक छह अरहत सिद्ध, अ सि आ उ सा तुरी परसिद्ध ॥२०
पच वरण च्यारि अरहत, षष्ठम दुय जपि सिद्ध महत।
वरण एक जोवो ऊकार, जाप सताईस जपिए सार ॥ २१
कही द्रव्यसग्रह मे एह, सात जाप लखि तजि सदेह।
और जाप गुरु-मुख सुनि वाणि, तेऊ जपिए निज हित जानि ॥२२
मेरु विना मणिया सौ आठ, जाप तणा जिन मत इह पाठ।
स्फटिक मणि अरु मोती माल, सुवरण रूपो सुरग प्रवाल ॥ २३
जीवा पोतारे सम जाणि, कमल-पाटा अरु सूत वखान।
ए नौ भाँति जाप के भेद, भाव-सहित जपि तजि मन खेद ॥ २४

दोहा

दिसि विशेष तिनिको कह्यौ, जिन मदिर बिनु थान।
चैत्यालय मे जाप करि, सन्मुख श्री भगवान् ॥ २५

चौपाई

पूजा निमित्त स्नान आचरै, सो पूरब दिसि को मुख करै।
धौत वस्त्र पहिरै तनि तबै, उत्तर दिसि मुख करिहै जबै ॥ २६

उक्त च श्लोक

स्नान पूर्वमुखी भूप, प्रतीच्या दन्त-धावनम्।
उदीच्या श्वेतवस्त्राणि, पूजा पूर्वोत्तरामुखी ॥२७

दोहा

एह कथन सुनि भविक जन, करि चित मे निरधार।
कथित आन मत दान जे, तजहु न लावो बार ॥१४००
पाप बढावन दु खकरन, भव भटकावन हार ।
जास हृदय सत जैन दृढ, त्यागे जानि असार ॥१

इति नवग्रह शान्ति विधि ।

अथ निज तन सबधी क्रिया कथन

चौपाई

निज तन सबधी जे क्रिया, करहु भव्य तामे दे हिया।
शयन थकी जब उठिये सवार, प्रथमहि पढे मन्त्र नवकार ॥२
प्रासुक जल भाजन कर-माहि, त्रस-भूषित जो भूमि तजाहि।
वृद्धि नीति को जैहै जबै, अवर वसन तन पहरै तबै ॥३
नजरि निहारि निहारि करत, जीव-दया मन माहि धरत।
होत निहार पछे जल लेइ, वामा करतै शौच करेइ ॥४
फिरि माटी वामा कर माहि, वार तीन ले धोवै ताहि।
अर तहतें आवै घर करी, वस्त्रादिक सपरस परिहरी ॥५
कर धोवण को ईटा खोह,लेह तदा पद मर्दित सोह।
बालू अरु भसमी करि धारि, हाथ धोइ नागरि नर-नारि ॥६
वावो हाथ फेरि तिहुबार, धोवै जुदो गारि करि धार।
हाथ दाहिणो हूँ तिहु बार, धोवै जुदो वहै परकार ॥७
माटी ले दुहु हाथ मिलाय, धोवै तीन बार मन लाय।
पच्छिम दिशि मुख करिकै सोइ, दातुण करिय विवेकी जोइ ॥८
स्नान करन जल थोडो नाखि, कीजे इह जिन आगम साखि।
करुणा कर मन माहि विचारि, कारिज करिए करुणा धारि ॥९
प्रथमहि महि देखिए नैन, जहँ त्रस जीव न लहै अचैन।
रहै नही सरदी बहु बार, स्नान जहाँ करिहै बुध धार ॥१०
पूरब दिसि सन्मुख मुख करै, उजरे वसन उत्तर दिसि धरे।
जीमत वार धोवती धार, अवर सकल ही वसन उतारि ॥११
सिर डाढी सब राखैं जबै, स्नान करै किरिया जुत तबै।
लोकाचार उठै किहि तणैं, तबहू स्नान करत ही वर्णै ॥१२
तिय सेवै पीछे इह जाणि, परम विवेकी स्नानहि ठाणि।
शयन जुदी सेज्या परि करै, इम निति ही किरिया अनुसरै ॥१३
राति सुपन मैं मदन द्रवाय, धातु विषै को कारण पाय।
कपडे दूरि डारि निरधार, जल तैं स्नान करै तिहि वार ॥१४

करित तै फिरियो सिर ऊपरै, वसन हीण मलीन नही धरै ।
कटि तलै परसै जय अग ही, दरवसै जिन पूजन लौ गही ॥४४
वहु जना करतैं कर मचर्स्यो, मनज दुष्टनि भोटि करै वर्न्यो ।
त्रसन दुखित दर्व सवै तजौ, भगति तै जिन पूज मदा सजौ ॥८५

दोहा

असन पहरि भोजन करै, सो जिन पूजा माहि ।
तनु धारे अघ ऊपजे, यामै सशय नाहि ॥८६

कुडलिया छन्द

कवहु सधिही वसन तैं, भगति वत तन होइ ।
मन वचन तन निहचै इहै, पूजा करै न सोइ ॥
पूजा करै न सोइ, दगध फटियौ ह जात ।
पहरयो अवर नितणौ, कटिहि वधियो पुनि तातैं ॥
करी वृद्ध लघु नीति, धारि सेई तिय जवही ।
करहि नाहि भवि सेव, वसन सधिततै कवही ॥४७

चौपाई

जो भविजन जिन पूजा रचै, प्रतिमा परसि पखालहि सचै ।
मौन सहित मुख कपडो करै, विनय विवेक हरप चित धरै ॥४८
पूजा की विधि ऊपर कही, करिवै पुण्य ऊपजै सही ।
नर को करवो पूजा जथा, आगम मे भापी सरवथा ॥४९
जिन पूजा वनिता जो करै, सो ऐसी विधि को अनुसरै ।
प्रतिमा-भीटण नाही जोग, ऐसें कहे सयाणे लोग ॥५०
स्नान क्रिया करिकै थिर होइ, धौत वसन पहरे तनि सोइ ।
विना कचुकी सो नहि रहै, पूजा करै जिनागम कहै ॥५१
बडी साखि मैना सुन्दरी, कुष्ट व्याधि पति-तनुकी हरी ।
लै गधोदक सीची देह, सुवरण वरण भयो गुण-गेह ॥५२
अनतमती उर्विल्या जाणि, रेवतीय चेलना वखानि ।
मदनसुदरी आदिक घणी, तिन कीनो पूजा जिन-तणी ॥५३
लिंग नपु सक धारी जेह, जिनवर पूजा करिहै तेह ।
प्रतिमा-परसण कौ निरधार, ग्र थनि मैं सुणि लेहु विचार ॥५४
नर वनिता रु नपु सक तीन, पूजा-करण कही विधि लीन ।
अव जिनिकों पूजा सरवथा, करण जोगि भापी नहि जथा ॥५५
औढेरो काणो भणि अध, फूलोधूधि जाति चखि वध ।
प्रतिमा-अवयव सूझै नही, जाकौ पूजा करन न कही ॥५६
नासा कान कटी अगुरी, हुई अगनि दाझे वाकुरी ।
पट् अगुलिया कर अरुपाय, पूजा करणी जोगि न थाय ॥५७

चौपाई

पूरव उत्तर दिसि सुखकार, पूजक पुरुष करै सुख सार।
जिन प्रतिमा पूरव जो होइ, पूजक उत्तर दिसि को जोइ ॥२८
जो उत्तर प्रतिमा मुख ठाणि, तो पूरव मुख सेवक ठाणि।
श्री जिन चैत गेह मैं एम, करै भविक पूजा धरि येम ॥२९
निज मदिर मे प्रतिमाधाम, करै तास विधि सुनि अभिराम।
धर माहे पौलि प्रवेश करत, वाम भाग दिसि स्वय महत ॥३०
मदिर उपलेखणकी मही, ऊँचो हाथ जोड कर सही।
जिन प्रतिमा पदरावन गेह, परम विचित्र करै धरि नेह ॥३१
प्रतिमा मुख पूरव दिसि करै, अथवा उत्तर दिसि मुख धरै।
पूजक तिलक रचै नव जाणि, सो सुनि बुधजन कहूँ बखान ॥३२
सीस सिखादिक करिए एह, दूजो तिलक ललाट करेह।
कठ तीसरो चौथो हिए, कानि पाचमो ही जानिए ॥३३
छठो भुजा कूखि सातवो, अष्टम हाथि नाभि परि नवो।
एह तिलक नव ठामि बनाय, अरु गहनो तरु विविध बनाय ॥३४
मुकुट सीस परि धारै सोय, कठ जनेउ पहिरै सोय।
भुज वाजूहि विराजत करै, कुडल कानह ककण धरै ॥३५
कटि-सूत्र रु कटि-मेखल धरै, क्षुद्र घटिका सबदहि करै।
रतन जडित सुवरण मय जाणि, दस अगुलनि मुद्रिका ठाणि ॥३६
पाय साकला घुघुरु धरै, मधुर शब्द बाजे मन हरै।
भूषण भूषित करिवि शरीर, पूजा आरम्भै वर वीर ॥३७

पद्धड़ी छन्द

पूर्वादिक पूजा जो करेइ, वसु दरव मनोहर करि धरेइ।
मध्याह्न पूज समए सु एह, मनु हरण कुसुम बहु पेखि देह ॥३८
अपराह्न भविक जन करिह एव, दीपहि चढाय बहु धूप खेव।
इहि विधि पूजा करि तीन काल, शुभ कठ उचारिय जयह माल ॥३९
जिन वाम अगि धरि धूप दाह, खेवै सुगध सुभ अगर ताह।
अरहत दक्षिणा दिसि जु एह, अति ही मनोज्ञ दीपक धरेहु ॥४०
जप ध्यान धरै अति मन लगाय, जिन दक्षिण दिसि मौन लाइ।
प्रतिमा वदन मन वचन काय, करि दक्षिण भुज दिसि सीस नाय ॥४१
इह भाँति करिय पूजा प्रवीण, उपजै बहु पुन्य रु पाप क्षीण।
पूजा माहे नहिं जोगि दर्व, तिनि नाम वखानै सुनहु सर्व ॥४२

द्रुत विलबित छन्द

प्रथम ही पृथ्वी परि जो धर्यो, अरु कदा करतैं खिसि के पर्यो।
जुगल पायनि लागि गयो जदा, दरवसे जिन-पूजन ना वदा ॥४३

निज तिरहि भविन तारहि सदा इहै विरद तिन पै खरो,
ऐसे मुनीश जयवत जग सकल सघ मगल करो ॥७०
तीर्थंकर मुख थकी दिव्य ध्वनि तै जिनवाणी,
स्याद्वादमय खिरी सप्त-भगी सुखदानी ।
ताकौ लहि परसाद गए शिवथानक मुनिवर,
अज हौ याहि सहाय पाप तिरिहै भवि धरि उर ।
तसु रचिय देव गणधरनि जो द्वादशाग विधि श्रुतवरी,
भारती जगत जयवत निति सकल सघ मगल करी ॥७१

अथ श्री चैत्यालयजी मे ए चौरासी काम कीजे तो आसादना लागै तिस कौ कथन प्रत्येक होजैछै

दोहा

श्री जिन श्रुत गुरु को नमो, त्रिविधि शुद्धता ठानि ।
चौरासी आसादना, कहू प्रत्येक वखान ॥७२
श्री जिन चैत्यालय विषै, क्रिया हीण है जेह ।
कीये पाप अति ऊपजै, ते सुणि भवि जिन देह ॥७३

चालछन्द

मुखतैं खखार निकारै, हास्यादि केलि विसतारै ।
पुनि विविध कला जु वणावै, पात्र्यादिक नृत्य करावै ॥७४
अरु कलह करै रिसधारी, खैहै तबोल सुपारी ।
जल पीवै कुरला डारै, पखा तैं पवन हिडारै ॥७५
गारी वच हीण उचरिहैं, मल मूत्र वावनहि सरिहै ।
कर पद धोवै अरु न्हावै, सिर डाढी कच उतरावै ॥७६
कर पगके नख ही लिवावै, कारी तै रुधिर कढावै ।
औषध वणवावै खाही, नाख पसेव उतराही ॥७७
तनु व्रण की तुचा उतरावै, कर वमन कफादिक डारै ।
दातिण पुनि सिलक कराही, हाल दतन उपराही ॥७८
बाधै चौपद तनधार, पुनि करिहै जहाँ आहार ।
आँखन के गीडहि डारै, कर पग नख मैलि उतारै ॥७९
जह कठ कान सिर जानी, नासा को मैल डरानी ।
जो वस्तु शरीर की थाय, बाँटै निज थानक जाय ॥८०
मित्रादिक समधी कोऊ, मिलि जाहि जिनालय दोऊ ।
ठडे मिलि भेंटवि देही, पुनि हरप चित्त धरि लेई ॥८१
परधान जु भूपति केरे, वय गुरु धनवान घनेरे ।
आए उठि करि सन मानौ इह दोष वडो इक जानौ ॥८२
पुनि व्याह करन की वात, मिलि कै जह जन बतलात ।
जिन श्रुत गुरु चरन चढावै, ताकौ भडार रखावै ॥८३

खोडो दुऊ पायन पागलौ, कुवज गू गौ वचन तोतलौ।
जाकै मेद गाठि तनि घणी, ताकौं पूजा करत न वणी ॥५८
काछ दाद पुनि कोडी होइ, दाग-सुपेद सरीरहि जोइ।
मडल फोडा पाव अदीठ, अर जाकी बाकी ह्वै पीठि ॥५९
गोसो वधै आत नीकलै, ताकौं पूजा विधि नहि पलै।
होइ भगदर कानि न सुणैं, सून्य पिंड गहलो वच सुणैं ॥६०
खयनो ऊद्धस्वास ह्वै जास, सरै नासिका श्लेषम तास।
महा सुस्त चाल्यौ नहि जाय, पूजा तिनहि जोग नहि थाय ॥६१
द्यूत विसन जाकै अधिकार, अर आमिष-लपट चडार।
सुरा-पान तैं कबहु न हटै, सो पापी पूजा नहि थटै ॥६२
वेश्या रमहै लगनि लगाय, अवर अहेडा सौ न अघाय।
चोरी करै रमै पर-नारि, पूजा जोगि नही हिय धारि ॥६३

दोहा

इत्यादिक पापी जिके, तिनकौ नरक नजीक।
वह पूजा कैसे करै, परी कुगति की लीक ॥६४
जो जिन पूजक पुरुष है, ते दुरगति नहि जाय।
तिनकी मूरति सबनि को, लागै अति सुखदाय ॥६५

चालछन्द

जिन पूजा तै ह्वै इद्र, ताको सेवै सुर वृद।
अरु चक्री पद को पावै, षट खडहि आणि फिरावै ॥६६
धरणेदन्र है पद जीको, स्वामी दश भुवनपती को।
हरि प्रति हरि पदई थई, जलभद्र मदन मुसकाय ॥६७
पूजा फल को नाहि पार, अनुक्रम हो तीर्थंकर सार।
पदवी पावै सिव जाइ, किसनेस नमै सिर नाइ ॥६८

छप्पय छन्द

दोष अठारह रहित तीस चउ अतिसय मडित,
प्रातिहार्य युत आठ चतुष्टय च्यारि अखडित।
समवशरण विभवादिरूढ त्रिभुवन पति नायक,
भविजन कमल प्रकास करन दिनकर सुखदायक।
देवाधिदेव अरहत मुझ भगति-तणौ भव-भय हरौ,
जयवत सदा तिहुँ लोक मे सकल सघ मगल करौ ॥६९
अठाईस गुण मूल लाख चौरासी उत्तर धरै,
करै तप घोर सुद्ध आतम अनुभो परै।
ग्रीषम पावस सीत सहै बाईस परीसहि,
भवि भावहि शिवपथ ज्ञान द्रग चरण गसीरहि।

निज तिरहिं भविन तारहिं सदा इहै विरद तिन पै खरी,
ऐसे मुनीश जयवंत जग सकल संघ मंगल करी ॥७०
तीर्थंकर मुख थकी दिव्य ध्वनि तै जिनवाणी,
स्याद्वादमय खिरी सप्त-भंगी सुखदानी।
ताकौ लहि परसाद गए शिवथानक मुनिवर,
अज हौं याहि सहाय पाप तिरिहैं भवि धरि उर।
तसु रचिय देव गणधरनि जो द्वादशांग विधि श्रुतवरी,
भारती जगत जयवंत निति सकल संघ मंगल करी ॥७१

अथ श्री चैत्यालयजी मे ए चौरासी काम कीजे तो आसादना लागै तिस कौ कथन प्रत्येक होजैछै

दोहा

श्री जिन श्रुत गुरु को नमो, त्रिविधि शुद्धता ठानि।
चौरासी आसादना, कहूं प्रत्येक बखान ॥७२
श्री जिन चैत्यालय विर्षे, क्रिया हीण है जेह।
कीयै पाप अति ऊपजै, ते सुणि भवि जिन देह ॥७३

चालछन्द

मुखतै खखार निकारै, हास्यादि केलि विसतारै।
पुनि विविध कला जु वणावै, पाच्यादिक नृत्य करावै ॥७४
अरु कलह करै रिसधारी, खैहै तबोल सुपारी।
जल पीवै कुरला डारै, पखा तैं पवन हिडारै ॥७५
गारी वच हीण उचरिहैं, मल मूत्र वावनहि सरिहै।
कर पद धोवै अरु न्हावै, सिर डाढी कच उतरावै ॥७६
कर पगके नख ही लिवावै, कारी तैं रुधिर कढावै।
औषध वणवावै खाही, नाख पसेव उतराही ॥७७
तनु व्रण की तुचा उतरावै, कर वमन कफादिक डारै।
दातिण पुनि सिलक कराही, हालै दतन उपराही ॥७८
बांधै चौपद तनधार, पुनि करिहै जहाँ आहार।
आँखन के गीडहि डारै, कर पग नख मैलि उतारै ॥७९
जह कंठ कान सिर जानी, नासा कौ मैल डरानी।
जो वस्तु शरीर की थाय, बाँटै निज थानक जाय ॥८०
मित्रादिक समधी कोऊ, मिलि जाहि जिनालय दोऊ।
ठंडै मिलि भेंटवि देही, पुनि हरष चित्त धरि लेई ॥८१
परखाल जु भूपति केरे, वय गुरु धनवान घनेरे।
आए उठि करि सन मानौ, इह दोष बडौ इक जानौ ॥८२
पुनि व्याह करन की वात, मिलि कै जह जन बठलात।
जिन श्रुत गुरु चरन चढावै, ताकौ भंडार रखावै ॥८३

निज घर कौ माल रखीजै, पद परि पद धरि बैठीजै।
कोऊ भयतैं जाय छिपीजै, काहू दुख दूर न करीजै ॥८४

चौपाई

कपडा धोवै धूपति देई, गहणारा व घडावै लोई।
ले असलाख जभाई छीक, केस सवारि करै तिन ठीक ॥८५
धोवै दालि वडी दै जहाँ, पापड सोज बणावै तहाँ।
मैदा छानन छपर बधान, करन कढाई तें पकवान ॥८६
राज असन तिय तसकर तणी, चारोविकथा कौ भाखणी।
करण सीधादिक सीवणो, कर नासिका कौ वीधणो ॥८७
पछी डारि पिंजरो धरै, अगनि जारि तन तापन करै।
सुवरण रज तप हर ही जोई, छत्र चमर सिर धारै कोई ॥८८
वदन आवैं ह्वै असवार, पुनि तनकौ धारै हथियार।
तेल अर गजादिक मिलवाय, बैठ करै पसारै पाय ॥८९
बाधै पाग पेंच फुनि देई, आवै तुररादिक ढाकेय।
जूवा खेलै होड बदेय, निद्रा आवै शयन करेय ॥९०
मैथुन करै तथा तिसवात, चालै झोग शरीर खुजात।
बात करण व्यापार हि तणी, चौपाई परि बैठ न गिणी ॥९१
पान द्रव्य ले जेहैं जोय, जलतै क्रीडा करिहै कोय।
सवद जुहार परसपर करै, गीडू प्रमुख खेलि चित धरै ॥९२
जिन मदिर परवेस जो करै, सवद निसही न वि ऊचरै।
पुनि कर जोडै विनु जो जोय, ए दोन्यौं आसादन थाय ॥९३
ए चौरासी अघ कर क्रिया, करनी उचित नही नर त्रिया।
जिन मन्दिर श्रुत गुरु लखि जानि, रहनौ अधिक विनय उर आनि ॥९४

दोहा

किसनसिंघ विनती करै, सुनौ भविक चित आनि।
क्रिया हीण जिन ग्रहि तजो, सजौ उचित सुखदान ॥९५

इति पूजा विधि-आसातना वर्णन सपूणम्।

अथवा त्रेपन क्रिया तथा अवर क्रिया को वर्णन कीयो तिण को मूल कथन।

दोहा

त्रेपन किरिया की कथा, लिखी सस्कृत जेह।
गौतम-कृत पुस्तक महै, मडो नाम सुनि एह ॥९६
ता उपरि भाषा रची, विविध छदमय ठानि।
श्रावक को करनी किरिया, किरिया कही बखान ॥९७
अतीचार द्वादश वरत, लगै तिनहि निरधार।
सूत्रनिमैतें पाय कैं, करी भाष विस्तार ॥९८

कछू त्रिवरणाचारतैं, जो धरिवे कौ जोग।
सुणी तेम भाषी तहा, चाहिए तिसो नियोग ॥९९
कछू श्रावकाचार तैं, नियम आदि बहु ठाम।
कही जेम तस चाहिए, धरी भाष अभिराम ॥१५००
जगत माहि मिथ्यातकी, भई थापना जोर।
क्रिया हीण तामैं चलन, दायक नरक अघोर ॥१
ताहि निषेधनको कथन, सुन्यो जिनागम जेह।
जिसो बुधि अवकास मुझ, भाषा रची मैं एह ॥२
मूलाचार थकी लिखी, सूतक विधि विस्तार।
श्लोक सस्कृत ऊपरै, भाषा कीनी सार ॥३
विद्यानुवाद पूरव थकी, भद्रबाहु मुनिराय।
कथन कियो ग्रहशान्ति कौ, तिह परिभाष बनाय ॥४
निज तन निति प्रति की क्रिया, अरु पूजा परबंध।
श्लोकनि परिभाषा धरी, जह जैसो सम्बन्ध ॥५

भुजगी प्रयात छन्द

कथा मे कह्यो पचेन्द्री निरोध, कथा मे कह्यो पच पाप विरोध।
कथा मे मध्य बाईस भाषे अभक्ष, कथा मे कह्यो गोरस भेद भक्ष।
कथा मध्य काजी निषेधी प्रत्यक्ष, कथा मे कह्यो मुरब्बादि लक्ष ॥६
कथा मध्य मूल गुण अष्ट भेद, कथा मध्य रत्नत्रय कर्म खेद।
कथा मध्य शिक्षा व्रत भेद चार, कथा मध्य तीन्यो गुणाव्रत्तधार ॥ ७
कथा मध्य भाषी प्रतिज्ञा सु ग्यारा, मध्य भाषे तपो भेद बारा।
कथा मध्य भाषै बहुदान सार, कथा मध्य भाषे निशाहार ढार ॥८
कथा मध्य सलेषणा भेद भाख्यो, कथा मध्य सुद्ध सम भाव आख्यो।
कथा मध्य पानी क्रिया कौ विशेष, कथा मध्य त्यागी कह्यो राग द्वेष ॥९
कथा मे कह्यो नेम सत्रा प्रमाण, कथा मे क्रिया जोषिता धर्म जाण।
कथा मे कही मौन सप्त निकाय, कथा मध्य भाषे जिके अन्तराय ॥१०
कथा मध्य भाषी ग्रहा की जु शाति, कथा मे कह्यो सूतक दोइ भाति।
कथा मध्य देही क्रिया को प्रमाण, कथा मध्य पूजा विधान वखान ॥११

दोहा

कलौ काल कारण लही, जगत माहि अधिकार।
प्रगटी क्रिया मिथ्यात की, हीणाचार अपार ॥१२
तिनहि निषेधन को कथन, सुन्यो जिनागम माहि।
ता अनुसारि कथा महै, कह्यो जथारथ आहि ॥१३

अथ मनोक्त व्रत निषेध कथन लिख्यते।

दोहा

श्री जिन आगम मे कहे, वरत एक सौ आठ ।
श्रावक कौ करणै सही, इह सब जागा पाठ ॥१४
इनि सिवाय विपरीत्ति अति, चलण थापियो मूढ ।
सुगम जाणि सो चलि पड्यो, सुणहु विशेष अगूढ ॥१५

चाल छन्द

वनिता लखिकै लघु वेस, तिनिको इम दे उपदेस ।
दिन मे जीमो दुय बार, जल की संख्या नहिं धार ॥१६
एकत वरत धरि नाम, आगमि न बखाण्यो ताम ।
खखल्यो एकंत कराही, सिर-खड सुनाम धराही ॥१७
तदुल केसर दधि माही, करि गोली वरत कहाही ।
टीकी व्रत नाम सुलेई, वनिता सिर टीकी देई ॥१८
अरु तिलक वरत को धारै, बहु तिय सिर तिलक निकारै ।
करि देइ टको इक रोक, लेहै तिनकै अघ कोष ॥१९
कोथलीय व्रत धर नाम, बाटै तिन तीसहि ठाम ।
मधि सोठ मिरच धरि रोक, प्रभुताह्वै भाषै लोक ॥२०
अर व रत खोपरा भाषै, एकन्त तीस अभिलाषै ॥२१
नारेल वरत को लेह, बाँटै घर घर धरि नेह ।
खीर जु व्रत नाम धरावै, निज घर जो दूध मगावै ॥२२
चावल ता माँही डारी, निपजावै खीर जु नारी ।
भरि ताहि कचोला माही, बाँटै बहु घरि हरषाही ॥२३
काचली व्रत तिय धरि है, काचली दस बीस जु करि है ।
निज सगपण कीजे नारी, तिनको दे हेत विचारी ॥२४
तिन पहिरे जू उपजाही, त्रस घात पाप अधिकाही ।
जिनको व्रत नाम धरावै, सो कैसे शुभ फल पावै ॥२५
व्रत करि घृत नाम बखानो, घृत दे घर घर मन आनो ।
बाटत माखी तहँ परिहै, उपजाय पाप दु ख भरिहै ॥२६
चूडा व्रत नाम धराही, करिकै मन मे हरपाई ।
वाटत मन धरि अति राग, इसते मुझ बढै सुहाग ॥२७
बिन न्योतो पर घर जाई, निज करते असन गहाई ।
भोजन कर निज घर आवै, व्रत नाम धिगानो पावै ॥२८
भरि खाड रकेबी तीस, बाटै ते घर दस बीस ।
व्रत नाम रकेबी तास, करिहै मूरखता जास ॥२९
बनिता चैत्यालय जाही, पाछे विधि एम कराही ।
धरि अशन थाल इक माही, इक जल दुहुँ टाक धराही '।३०

तिय चैत्यालय ते आवै, इक थाली आय उठावै ।
जो असन उभारे तीय, भोजन करि जल वहु पीय ॥३१
जल थाल उघाडे आयी, जल पीवे वैठि रहाही ।
इम वरत करम पति वन्यों, सूत्रनि मे नवी वखान्यो ॥३२
इत्यादि कहाँलो ठीक, आगम ते अधिक अलीक ।
करिके शुभफल को चाहे, हियरे तिय अधिक उमाहे ॥३३
जो कलपित वरत जु मान, भाषे तेते अघवान ।
जो सकल वस्तु ले आवै, निज पूजा माहिं चढावे ॥३४
निज सगपन गेह मिलाय, बाटै घर घर फिरि आय ।
भादो के मास जु माही, तप करन सकति ह्वै नाही ॥३५
इम कहि एकन्त कराही, जिन-उक्त व्रत सो नाही ।
बाटै जो वस्तु मगाई, सोई व्रत नाम धराई ॥३६
जिनमत व्रत बिनु मरयाद, करिये मन उक्त प्रमाद ।
जिन सूत्रनि मे जैनी है, सुखदायक व्रत जाही है ॥३७
जिन आज्ञा को जे गोपै, ते निज कृत सव शुभ लोपै ।
यातैं सुनिये नरनारी, मन मे तिस ते अवधारी ॥३८
जिन-भाषित जे व्रत कीजे, उक्त न कवहू लीजे ।
आज्ञा विधिजुत व्रत धार, सुरपद पावे निरधार ॥३९

सवैया ३१ ॥

त्रेपन क्रिया ने आदि देके नाना भेद भाति क्रिया को कथन साखि ग्रन्थन की आनिकै ।
अवर मिथ्यात कलिकाल भई थापना जे तिनको निषेध कीयो आगम तें जानिकै ॥
व्रत मन उकति सुगम जानि चालि परै कहे नहिं नते जिते दुख वृथा मानिकै ।
अबै नर नारी मन लाय जो वरत धरै यहि समय शील तप व्रत जीय सानिकै ॥४०

छप्पय ।

बहुविधि क्रिया प्रसंग कही इह कथा मझारी,
अब उछाह मन माहि आनि इह वात विचारी ।
क्रिया सफल जब होइ वरत विधि यामे आए,
मन्दिर शोभा जेम शिखर पर कलश चढाए ।
इह जान वास व्रत विधिनि की, सुनी जेम आगम भनी,
दरशन विशुद्ध जुत धरहु भवि इह बिनती किसना-तनी ॥४१

चाल छन्द

समकित जुत व्रत सुखदाई, अनुक्रम ते शिव पहुँचाई ।
कछु नाम वरत के कहिए, भवि जन जे जे व्रत गहिए ॥४२

अथ अष्टाह्निक व्रत कथन । चौपाई

अष्टाह्निक महाव्रत सार, रहै अनादि जाको नहिं पार ।
जो उत्कृष्ट भए नर तेह, तिन पूरव व्रत कीन्हो एह ॥४३

व्रत करन की है विधि जिसी, जिन आगम मे भाषी तिसी।
तीन बार इक बरष मझार, आसाढ कातिक फागुण धार ॥४४
जो उतक्रिष्ट बरत को करै, आठ-आठ उपवास जु धरै।
दूजो भेद कोमली जाँन, जिन मारग मे करो बखान ॥४५
आठैं दिन कीजे उपवास, नौमी एक भुक्त परकास।
दसमी दिन काजी करि सार, पाणी भात एक ही बार ॥४६
ग्यारस अल्प असन कीजिए, दुयवट तजि इकवट लीजिए।
मुख सोध्यो वारस विधि एह, त्रिविधि पात्रको भोजन देय ॥४७
अतराय तिनको नहि थाय, तो वह व्रत धरि असन लहाय।
अतराय तिनिको जो परे, तो उस दिन उपवास हि करे ॥४८
तेरसि दिन आँविल कीजिए, ताकी विधि भवि सुन लीजिए।
एक अन्न षटरस विनु जानि, जल मे मूँकि लेइ इक ठाँनि ॥४९
चउदस चित्त वेलडी थाय, भात नीर जुत मिरच लहाय।
पूरणवासी को उपवास, किए होय चिर को अघ नास ॥५०
इह कोमली की विधि कही, जिन आगम मे जैसी लही।
आदि अत करिए एकत, दस दिन धरिये शील महत ॥५१
जाके जिम चउदस उपवास, चौदस पदरस वेलो तास।
तेरस आबिल के दिन जेह, रहित्त विवेक आंवली लेह ॥५२
सदा सरद जाकी नहि जाय, उपजै जीव न ससै थाय।
चउदस दिवस वेलडी करे, तादिन इम अनीति बिसत्तरे ॥५३
खाँहि खलरा अर काचरी, तथा तोरई निज मतहरी।
तिनमे उपजै जीव अपार, सो व्रत जिन लेवो नहि सार ॥५४

दोहा

काजी के दिन नीर मे, नाखि कसेलो लेह।
तदुल जल विनु अवर कछु, द्रव्य न भाषो जेह ॥५५

चौपाई

तीजी विधि जु आठई जान, आठैं तें चउदसहि बखान।
बारस असन पछैं तिहुं बास, इहै भेद लखि पुण्य निवास ॥५६
दशमी तेरस जीमण होइ, बेला तीन करहु भवि लोय।
चौथो भेद यहै जानिए, शीलव्रत ताको ठानिये ॥५७
आठैं दशमी वारस तीन, प्रोषध धरिये भाव प्रवीन।
चउदस पदरस बेलो करे, पचम विधि बुधजन उच्चरे ॥५८
आठैं ग्यारस चौदस जान, तीन दिवस उपवास बखान।
अथवा दोय करे नर कोय, एकासन पण छइ दिन जोय ॥५९

यह व्रत सवर धरि मन लाय, सवरी हरी तजिए दुखदाय ।
दस दिन शील वरत पालिये, सँवरहू इह विधि धारिये ॥६०
वसु एकासण, विधि जुत करे, पाँच पाप व्रत धरि परिहरे ।
धरि आरम्भ तजै अघ-दाय, दिवस आठलो शुभ उपजाय ॥६१
अब मरयादा सुनि भवि जीव, धरि त्रिशुद्धता सो लखि लीव ।
सत्रह वरष साखि इक जान, करिये वावन साख प्रवान ॥६२
अथवा आठ वरष लो जान, बीस चार तसु साख वखान ।
पच वरष करि पदरा साख, धरि मन वच तन शुभ अभिलाख ॥६३
तीन वरष नो साख प्रमाण, एक वरष तिहु साख सुजाण ।
जैसी सकति छइ अवकास, सो विधि आदर करि भवि तास ॥६४
सकति प्रमाण उद्यापन करे, सँवर तै कवहूँ नहि टरे ।
मैना सुन्दरि अरु श्रीपाल, कियौ वरत फल लह्यो रसाल ॥६५
कोढ अठारह रहते जास, सबै गए सुवरण परकास ।
और जहूँ ते सात सै वीर, तिनके निर्मल भए शरीर ॥६६
चक्री भयो नाम हरषेण, व्रत त्रिशुद्ध आराध्यो तेण ।
तिन फरु पायौ सुख दातार, करम नासि पहुँचे भव-पार ॥६७
अतराय पारो भवि सार, मौन सहित करिए आहार ।
व्रत मे हरी जिके नर खाय, सँवर तास अकारथ जाय ॥६८
तातें व्रत धारी नर नार, मन वच क्रम हियरे अवधार ।
विधि माफिकते भविजन करो, सुर नर सुख लहि शिव-तिय वरो ॥६९
सकल वरष के दिन मैं जान, परब अठाई भूपित मान ।
खग भूमीस मिले नरेस, तिनकरि पूज जेम चक्रेस ॥७०
चक्री की जो सेवा करे, सो मनवाछित सुख अनुसरे ।
आज्ञा-भग किए दुख लहै, ऐसे लोक सयाणे कहै ॥७१
तिन जो इम दिन सँवर धरे, तास पुण्य वरनन को करे ।
जो इन दिन मे अघ उपजाय, सख्यातीत तास दुख थाय ॥७२

दोहा

इहै अठाही व्रत धरो, प्रगट वखाण्यौ मर्म ।
सुरगादिक की वारता, लहै सास्वतो सर्म ॥७३

अथ सोलह कारण, दश लक्षण, रत्नत्रय व्रत विधि-कथन

चौपाई

सोलह कारण विधि सुनि लेह, जिन आगम मे भाषी जेह ।
भादो माघ चैत तिहुँ मास, मध्य करे चित धारि हुलास ॥७४
वास इकतर विधि जुत धरे, वीच दोय जीमण नहि करे ।
सोलह वरस करे भवि लोय, उद्यापन करि छाडे सोय ॥७५

व्रत करन की है विधि जिसी, जिन आगम मे भाषी तिसी ।
तीन बार इक बरष मझार, आसाढ कातिक फागुण धार ॥४४
जो उतकिष्ट वरत को करै, आठ-आठ उपवास जु धरै ।
दूजो भेद कोमली जाँन, जिन मारग मे करो बखान ॥४५
आठैं दिन कीजे उपवास, नौमी एक भुक्त परकास ।
दसमी दिन काजी करि सार, पाणी भात एक ही बार ॥४६
ग्यारस अल्प असन कीजिए, दुयवट तजि इकवट लीजिए ।
मुख सोध्यो वारस विधि एह, त्रिविधि पात्रको भोजन देय ॥४७
अतराय तिनको नहिं थाय, तो वह व्रत धरि असन लहाय ।
अतराय तिनिको जो परे, तो उस दिन उपवास हि करे ॥४८
तेरसि दिन आँविल कीजिए, ताकी विधि भवि सुन लीजिए ।
एक अन्न षटरस विनु जानि, जल मे मूँकि लेइ इक ठाँनि ॥४९
चउदस चित्त वेलडी थाय, भात नीर जुत मिरच लहाय ।
पूरणवासी को उपवास, किए होय चिर को अघ नास ॥५०
इह कोमली की विधि कही, जिन आगम मे जैसी लही ।
आदि अत्त करिए एकत, दस दिन धरिये शील महत ॥५१
जाके जिम चउदस उपवास, चौदस पदरस वेलो तास ।
तेरस आँबिल के दिन जेह, रहित विवेक आँवली लेह ॥५२
सदा सरद जाकी नहिं जाय, उपजै जीव न ससै थाय ।
चउदस दिवस बेलडी करे, तादिन इम अनीति बिसतरे ॥५३
खाँहि खलरा अर काचरी, तथा तोरई निज मतहरी ।
तिनमे उपजै जीव अपार, सो व्रत जिन लेवो नहि सार ॥५४

दोहा

काजी के दिन नीर मे, नाखि कसेलो लेह ।
तदुल जल विनु अवर कछु, द्रव्य न भाषो जेह ॥५५

चौपाई

तीजी विधि जु आठई जान, आठैं तैं चउदसहि वखान ।
बारस असन पछैं तिहुँ वास, इहै भेद लखि पुण्य निवास ॥५६
दशमी तेरस जीमण होइ, बेला तीन करहु भवि लोय ।
चौथो भेद यहै जानिए, शीलव्रत ताको ठानिये ॥५७
आठैं दशमी वारस तीन, प्रोषध धरिये भाव प्रवीन ।
चउदस पदरस बेलो करे, पचम विधि बुधजन उच्चरे ॥५८
आठैं ग्यारस चौदस जान, तीन दिवस उपवास बखान ।
अथवा दोय करे नर कोय, एकासन पण छह दिन जोय ॥५९

यह व्रत संवर धरि मन लाय, सवरी हरी तजिए दुखदाय ।
दस दिन शील वरत पालिये, सँवरहू इह विधि धारिये ।।६०
वसु एकासण, विधि जुत करे, पाँच पाप व्रत धरि परिहरे ।
धरि आरम्भ तजै अघ-दाय, दिवस आठलो शुभ उपजाय ।।६१
अब मरयादा सुनि भवि जीव, धरि त्रिशुद्धता सो लखि लीव ।
सत्रह वरष साखि इक जान, करिये बावन साख प्रवान ।।६२
अथवा आठ वरष लो जान, वीस चार तसु साख बखान ।
पच वरष करि पदरा साख, धरि मन वच तन शुभ अभिलाख ।।६३
तीन वरष नो साख प्रमाण, एक वरष तिहु साख सुजाण ।
जैसी सकति छइ अवकास, सो विधि आदर करि भवि तास ।।६४
सकति प्रमाण उद्यापन करे, सँवर तै कबहूँ नहि टरे ।
मैना सुन्दरि अरु श्रीपाल, कियौ वरत फल लह्यो रसाल ।।६५
कोढ अठारह रहते जास, सबै गए सुवरण परकास ।
और जहूँ ते सात सै वीर, तिनके निर्मल भए शरीर ।।६६
चक्री भयो नाम हरषेण, व्रत त्रिशुद्ध आराध्यो तेण ।
तिन फल पायौ सुख दातार, करम नासि पहुँचे भव-पार ।।६७
अतराय पारो भवि सार, मौन सहित करिए आहार ।
व्रत मे हरी जिके नर खाय, सँवर तास अकारथ जाय ।।६८
तातैं व्रत धारी नर नार, मन वच क्रम हियरे अवधार ।
विधि माफिकते भविजन करो, सुर नर सुख लहि शिव-तिय वरो ।।६९
सकल वरष के दिन मैं जान, परब अठाई भूपित मान ।
खग भूमीस मिले नरेस, तिनकरि पूज जेम चक्रेस ।।७०
चक्री की जो सेवा करे, सो मनवाछित सुख अनुसरे ।
आज्ञा-भग किए दुख लहै, ऐसे लोक सयाणे कहै ।।७१
तिन जो इम दिन सँवर धरे, तास पुण्य वरनन को करे ।
जो इन दिन मे अघ उपजाय, सख्यातीत तास दुख थाय ।।७२

दोहा

इहै अठाही व्रत धरो, प्रगट वखाण्यौ मर्म ।
सुरगादिक की वारता, लहै सास्वतो सर्म ।।७३

अथ सोलह कारण, दश लक्षण, रत्नत्रय व्रत विधि-कथन

चौपाई

सोलह कारण विधि सुनि लेह, जिन आगम मे भाषी जेह ।
भादो माघ चैत तिहुँ मास, मध्य करे चित धारि हुलास ।।७४
वास इकतर विधि जुत धरे, वीच दोय जीमण नहि करे ।
सोलह वरस करे भवि लोय, उद्यापन करि छाडे सोय ।।७५

सकति नहीं उद्यापन-तणी, करै दुगुण व्रत श्री जिन भणी।
दश लक्षण याही परकार, उत्कृष्टी दश वासहि धार ॥७६
दूजी विधि छह वासह तणी, करै इकन्तर भाण्यो गणी।
मरयादा दश वरषहि जान, वरष मद्धि तिहुँ बारहि ठान ॥७७
अवर सकल विधि करिहै जिती, सबर माहिं जानिये तिती।
रत्नत्रय की विधि ए सही, वरषावधि तिहुँ बारह कही ॥७८
भादों माघ चैत पखि सेत, बारसि करि एकन्त सुहेत।
पोसह सकति प्रमाण जु धरै, अति उच्छाहतै तेलो करै ॥७९
पडिवा दिन करिहै एकन्त, पंच दिवस धरि सील महन्त।
बरस तीन मरयादा गहै, उद्यापन करि पुनि निरवहै ॥८०
सकति-हीन जो नर तिय होय, सबर दिवस न छाडै सोय।
जाको फल पायो सो भणौ, नृप वैश्रवण विदेहा तणौ ॥८१
मल्लिनाथ तीर्थंकर होय, ताके पद पूजित तिहुँ लोय।
बाल ब्रह्मचारी तप कियो, केवल पाय मुकति पद लियो ॥८२
अजहूँ जे या व्रत को धरे, दरसन त्रिविधि शुद्धता करे।
ताको फल शिव है तहकीक, श्री जिन आगम भाष्यो ठीक ॥८३

अथ लब्धि विधान व्रत। चौपाई

भादों माघ चैत विध जान, वदि पदरसि एकन्तहि ठान।
पडिवा दोयज तीज प्रवान, थापै तेला करि विधि जान ॥८४
सकति प्रमाण जु पोसह धरै, चौथ दिवस एकासण करै।
पाँचौ दिवस सीलको पाल, तीन बरस व्रत करहि सम्हाल ॥८५
पुत्री तीन कुटुम्बी तणी, जिन व्रत लियो एम मुनि भणी।
विधिवत करि उद्यापन कियो, तियपद छेदि देवपद लियो ॥८६
वह द्विज-सुत ह्वै पडित नाम, गौतम भर्ग रु भाग रु नाम।
महावीर के गणधर भए, तिनके नाम इन्द्र ए दिए ॥८७
इन्द्रभूति गौतम को नाम, अग्निभूत दूजो अभिराम।
वायुभूत तीजे को सही, वरत तणो तीनो फल लही ॥८८
इन्द्रभूत तदभव शिव गयो, दुहँ तिहूँ उत्तम पद को लयो।
याते ते भवि परम सुजान, करो वरत पावो सुखथान ॥८९
दूजी विधि आगम इम कहै, पडिवा तीजहि प्रोषध गहै।
दोयज दिवस करे एकन्त, इस मरयाद वरष छह सन्त ॥९०
परिवा तीज एकान्त करेय, दोयज को उपवास धरेय।
मरयादा भाषी नव वर्ष, करिये भवि मन मे धरि हर्ष ॥९१
पच दिवस लो पालै शील, सुरगादिक सुख पावै लील।
पुनि उत्तम नर पदवी लहैं, दीक्षा धर शिव-तिय-कर गहै ॥९२

अथ अक्षयनिधि व्रत । चौपाई

व्रत अक्षयनिधि को उपवास, श्रावण सुदि दशमी करि तास ।
भादो वदि जब दशमी होय, तिनहूँ के प्रोषध अवलोय ॥९३
अवर सकल एकंत जु धरै, सो दश वर्षहि पूरो करै ।
उद्यापन करि छाडैं ताहि, नातर दुगुणो करिहै जाहि ॥९४

अथ मेघमाला व्रत । चौपाई

वरत मेघमाला तसु नाम, भादव मास करे सुखधाम ।
प्रोषध परिवा तीन वखान, आठै दुहुँ चौदसि दुहु जान ॥९५
सात वास चौईस इकत्त, त्रिविधि शील जुत करिए सत्त ।
वरष पांच लो तसु मरयाद, सुर-सुख पावे जुत अहलाद ॥९६॥

अथ जेष्ठ जिनवर व्रत । चौपाई

वरत जेष्ठ जिनवर भवि लोइ, ज्येष्ठ मास मे करिये सोय ।
किशन पक्ष पडवा उपवास, एकासण चौदा पुनि तास ॥९७
प्रोषध शुकल प्रतिपदा करै, पुनि एकन्त चतुर्दश धरै ।
ज्येष्ठमास के दिवस जु तीस, तास सहित व्रत करे गरीस ॥९८
वृषभनाथ जिन पूजा रचै, गीत नृत्य वाजित्र मुसवै ।
अति उछाह धरि हिये मझार, मरयादा लखि कथा विचार ॥९९

अथ षट्रसीव्रत । अडिल्ल

दूध दही घृत तेल लूण मीठो मही, तजै पाख दोय दोय सकल सख्या कही ।
करे असन इक वार व्रती इम व्रत सजै, पख वारह मरयाद षट्रसी व्रत भजे ॥१६००

अथ पाख्या व्रत

लूण दीत ससि हरी मगल मीठो हरै, घिरत वुद्ध गुरु दही दूध भृगु परिहरै ।
तेल तेल सनि इहै वरत पाख्या गहै, मरयादा जिम नेम धरे जिम निरवहै ॥१

अथ ज्ञानपचीसी उपवास लिख्यते

प्रोषध चौदह चौदसि के विधि जुत करे, तैसें ग्यारा ग्यारसि के प्रोषध धरे ।
सव उपवास पचीस शील व्रत जुत धरे, ज्ञान पचीसी व्रत जिनागम इम कहै ॥२

अथ सुखकरण व्रत

एक वास एकत एक अनुक्रम करैं, मास चार पख एक इकन्तर इम धरैं ।
देव शास्त्र गुरु पूज सजें व्रत धरि सदा, नाम तास सुख-करण हरण दुख जिन वदा ॥३

अथ समवशरण व्रत । दोहा

श्वेत किशन चौदसि तणी, प्रोषध वीस रु चार ।
शील-सहित भविजन करै, समोशरण व्रत धार ॥४

अथ आकास पचमी व्रत । चौपाई

भादव सुदि पचमि उपवास, करे व्रत पचमि आकाश ।
वरष पच मरयादा जास, शील सहित प्रोषध धरि तास ॥५

अथ अक्षय दशमी व्रत

श्रावण सुदि दशमी को सही, अक्षय दशमि व्रत को जन गही ।
प्रोषध करे शील जुत सार, तसु मरयाद वरष दश धार ॥६

अथ चदन षष्ठी व्रत

भादव बदि छठि दिन उपवास, चंदन षष्ठी व्रत-धर तास ।
मन वच काय शील व्रत पाल, तसु परमाण वरष छह धार ॥७

अथ निर्दोष सप्तमी व्रत

भादो सुदि सातें निर्दोष, वरत करे प्रोषध शुभ कोष ।
सख्या सात वरष लो जाहि, उद्यापन करि तजिए ताहि ॥८

अथ सुगध दशमी व्रत

व्रत सुगन्ध दशमी को जान, भादो सुदि दशमी दिन ठान ।
प्रोषध करे वरष दश सही, शील सहित मर्यादा गही ॥९
अष्ट द्रव्य सों पूजा करे, धूप विशेष खबे अघ हरे ।
धीवर-सुता हुती दुरगध, व्रत-फल तस तन भयो सुगन्ध ॥१०

श्रवण द्वादसी व्रत

भादो सुदी द्वादशि व्रत नाम, श्रवण द्वादशी जो अभिराम ।
बारह वरष लगे जो करैं, शील सहित प्रोषध अनुसरे ॥११

अथ अनन्त चतुर्दशी व्रत

भादौं सुदि चौदस दिन जानि, व्रत अनत चौदसि को ठानि ।
तीर्थंकर चौदहौ अनत, रचै पूज सो जीव महत ॥१२
प्रोषध करे शील जुत सार, चौदह वरष लगे निरधार ।
उद्यापन विधि करि वह तजै, सो जन स्वर्ग-तणा सुख भजै ॥१३

अथ नवकार पैंतिस व्रत । चौपाई

अपराजित मत्र नवकार, अक्षर तसु पैंतीस विचार ।
करि उपवास वरण परमानि, सातैं सात करो बुध मानि ॥१४
पुनि चौदा चौदसि गनि साँच, पाँचै तिथि के प्रोषध पाँच ।
नवमी नव करिये भवि सत, सव प्रोषध पैंतीस गणत ॥१५
पैंतीसी नवकार जु एह, जाप्य मन्त्र नवकार जपेह ।
मन वच तन नर नारी करै, सुर नर सुख लहि शिव तिय वरे ॥१६

अथ त्रेपन क्रिया व्रत

त्रेपन किरिया की विधि जिसी, सुणिए बुध भाषी जिन तिसी ।
आठे आठ मूल गुण तणी, पाँचै पाल अणुव्रत भणी ॥१७
तीन तीन गुणव्रत की धार, शिक्षाव्रत की चौथ जु सार ।
तप बारह की बारसि जानि, तिसका प्रोषध बारह ठान ॥१८
सामि भाव की पडिवा एक, ग्यारसि प्रतिमा की दश एक ।
चौथ चार चहु दानहि तणी, पडिवा एक जल-गालन भणी ॥१९
अणथमीय पडिवा अघ-रोध, तीनहु तीज चरण दृग बोध ।
ए त्रेपन प्रोषध जे करै, शील-सहित तप को अनुसरै ॥२०
सो नर तिय सुर-नृप-सुख पाय, अनुक्रमते शिव-थान लहाय ।
उद्यापन विधि करिए सार, सकति जेम हीननि विस्तार ॥२१

अथ जिनेंद्र गुण संपत्ति व्रत । चालछन्द

जिनगुण सपत्ति व्रत धार, सुनिए तिनको अवधार ।
दस अतिसै जिन जनमत ही, लीये उपजै लखि सति ही ॥२२
उपज्यौ जब केवल ज्ञान, दस अतिसै प्रगटे जान ।
इम अतिसय वीस जु करी, करि वीस दसै सुखवरी ॥२३
देवाकृत अतिसय जाणो, चौदस चौदह तिह ठाणो ।
वसु प्रातिहार्य जिन देव, वसु आठैं करिए एव ॥२४
भावन सोल्ह कारण की, पडिमा षोडश करि नीकी ।
पाँचो कल्याणक जाकी, पाँचौं पाँचे करि ताकी ॥२५
प्रोषध ए त्रेसठि जाणो, जुत सील भविक जन ठाणो ।
उत्तम सुर-नर सुख पावै, अनुक्रमते शिव पहुँचावै ॥२६

अथ पचमी व्रत । चौपाई

फागुण आसाढ कातिक एह, सित पचमि तैं व्रत को लेह ।
पैंसठ प्रोषध करिए तास, वरष पाँच पाँच परि मास ॥२७
श्वेत पचमी को व्रत धार, कमलश्री पायो फल सार ।
भविसदत्त तब मिलियो आय, तिनहूँ व्रत कीनो मन लाय ॥२८
तास चरित्त माहे विसतार, वरनन कीयो सब निरधार ।
अजहुँ नर तिय करिहै सोय, त्रिविध सुधी तैसो फल होय ॥२९

अथ शीलकल्याणक व्रत । दोहा

शील कल्याणक व्रत तणो भेद सुनो जे मत ।
मन वच काय त्रिशुद्धि करि, धारौ भवि हरषत ॥

चालछन्द

तिरयचणि सुर तिय नारि, चौथी विनु चेतन सारि।
पचइन्द्रिनिते चहु गुणिए, तिनि सख्या बीसज मुणिये ।।३१
मन वच तन तें ते वीस, गुणतैं ह्वै तीस रु तीस।
कृत कारित अनुमोदन ते, गुणिए पुनि साठहि गनते ।।३२
एक सौ असी हुई जोई, प्रोषध करु भवि धरि सोई।
इक वरष माहि निरधार, करिए पूरण सब व्रत सार ।।३३
इक दिन उपवास जु कीजे, दूजी दित असन जु लोजे।
तीजे दिन फिर उपवास, इम करहु इकतर तास ।।३४
एक सो अस्सी एकत, इतने ही वास करत।
दिन साढे तोन सै धीर, पालै निति शील गहीर ।।३५
इह शील कल्याणक नाम, व्रत है बहुविधि सुख-धाम।
ह्वै चक्री काम कुमार, हरि प्रति हरि बल अवतार ।।३६
तीर्थंकर पदवी पावै, समकित जुत व्रत जो ध्यावै।
ऐसें लखि जे भवि जाण, करिए व्रत शील कल्याण ।।३७

अथ शीलव्रत। चालछन्द

अब सुनहु शील व्रत सार, जैसो आगम निरधार।
वैशाख सुकल छठि लीजै, प्रोषध उपवास करीजै ।।३८
अभिनन्दन जिनवर मोष, कल्याणक दिन शिव पोषं।
शुभ शीलवरत तसु नाम, करि पच वरष सुखधाम ।।३९

अथ नक्षत्रमाला व्रत। गीताछन्द

अश्विनी नक्षत्र की जु वासर च्यार अधिक पचास ही,
तिहि मध्य एकासन सताईस बीस सात उपवास ही।
जुत शील मन वच तन त्रिशुद्धहि करि विवेकी चाव स्यो,
माला नक्षत्र सुनाम व्रत तैं छूटिये विधि-दाव स्यो ।।४०

अथ सर्वार्थसिद्धि व्रत

कातिक सुकल अष्टम दिवस तैं अष्ट वास जु कीजिए,
तसु आदि अत इकत दस दिन सील सहित गनीजिए।
जिनराज श्रुत गुरु पूज उत्सव सहित नृत्यादिक करै,
सर्वार्थसिद्धि जु नाम व्रत इह मोक्ष सुख को अनुसरै ।।४१

अथ तीन चोविसी व्रत। दोहा

व्रत चौबीसी तीन की, सुकल भाद्रपद तीज।
प्रोषध कीजै शील जुत, सुर-सुख शिव को वोज ।।४२

अथ श्रुत-स्कन्ध व्रत

श्रुत-स्कन्ध व्रत तीन विधि, उत्तम मध्य कनिष्ट।
षोडश प्रोषध तीस दुय, वासर माँहि गरिष्ट ॥४३
दस प्रोषध दिन बीस मे, मध्य सुविधि लखि लेह।
वसु प्रोषध इक वास मे, है कनिष्ट व्रत एह ॥४४
कथन विशेष कथा मही, द्वादशाग के भेद।
त्रिविध जिनेश्वर भाषियो, करके कर्म उछेह ॥४५

अथ जिनमुखावलोकन व्रत

जिन मुखावलोकन व्रत, करिये भादो मास।
जिन मुख देखे प्रति उठि, अवर न पेखै तास ॥४६

चाल छन्द

प्रोषध इक मास इकन्तर, काजो जुत करिये निरन्तर।
अथवा चन्द्रायण करिहै, लघु सकलि इकन्त जु धरिहै ॥४७
सख्या धरि वस्तु जु केरी, तातें अधिक ले नहि केरी।
इह वरत महा सुखदाई, चहुँ गति-भव-भ्रमण नसाई ॥४८

अथ लघु सुख-सपत्ति व्रत

सुख-सपत्ति व्रत दुय भेद, तिनकी विधि भवि सुनि एव।
षोडश तिथि प्रोषध पट दश, लहुही सुखदाय अनेकश ॥४९

वडा सुख-सपत्ति व्रत

पडिवा इक दोयज दोई, तिहुँ तोज चौथ चहुँ जाई।
पाँचै पण छठ छह जाणो, सातै पुनि सात वखाणो ॥५०
आठै के प्रोषध आठ, नवमी नव आगम पाठ।
दसमी दस ग्यारस ग्यारै, वारसि के प्रोषध वारै ॥५१
तेरसि तेरा गनि लीजे, चौदसि के चौदह कीजे।
पदरसि पदरह शिवकारी, मीसरु सो प्रोषध धारी ॥५२
इह सुख-सपत्ति व्रतनिको, भव भव सुखदायक जी को।
मन वच काया शुध कीजे, भविजन नर-भवफल लीजे ॥५३

अथ वाराव्रत। चौपाई

वारा व्रत तणी विधि जिसी, वारा भाति वखाणो तिसी।
प्रोषध कीजे वारा भाँति, अरु वारा ही करिए एकन्त ॥५४
वारा काजी तदुल लेय, निगोरसे गोररस तजि देय।
अलप अहार असन इक भाग, लेहै करिहै दुय वट भाग ॥५५

इकठाणो भोजन जल सबै, ले पुरसाय बार इक तबै।
मूंग मोट चौला अरु चिणा, लेहि इकौण बोणी तत छिणा ॥५६
पाणी लूण थकी जो खाय, नयड नाम ताको कहवाय।
घिरत छाडिये सब परकार, सो जाणो लूखो जु अहार ॥५७
त्रिविधि पात्र साधरमी जाण, ताहि आहार देय विधि जाण।
ले मुख सोधि निरन्तर थाय, पाछै व्रत धर असन लहाय ॥५८
अतराय हुए उपवास, करै नाम मुख सोध्यो तास।
घर के लोक बुलाय कहेई, बिन जांचे भोजन जल देई ॥५९
धरै थाल माही जो खाय, किरिया जैन अयाची थाय।
लूण सर्वथा त्यागे जदा, भाँति अलुणा की ह्वै तदा ॥६०
जिन पूजा सुत शास्त्र बखान, एक गेह को करि परिमाण।
जाय उडड तास के बार, भोजन लेहु कहै नर नार ॥६१
ठाम असन जल को जो गहै, बरतमान निरमान जु कहै।
बारा बरत भाँति दस दोय, अनुक्रमि सेत पक्ष भवि लोय ॥६२
समकित-सहित जु व्रत को धरै, त्रिविध शुद्ध शीलहि आचरे।
करिहै पूरण वरष मझार, सो सुर पद पावे नर नार ॥६३

अथ एकावली व्रत। अडिल्ल

सुनहु भव्यक एकावली विधि है जिसी, सुकल प्रतिपदा पचम अष्टम चउदसी।
कृष्ण चतुरथी आठैं चउदसि जाणिए, चउरासी उपवास वरष-मधि ठाणिये ॥६४
वीर्य कान्ति नृप प्रोषध विधि है तिसी, उद्यापन की रीति करी आगम जिसी।
दीक्षा धरि मुनि होय घोर तप को गह्यो, केवल ज्ञान उपाय मोक्ष पदवी लह्यो ॥६५

अथ दुकावली व्रत। दोहा

विधि दुकावलो बरत की, श्री जिन भाषी ताम।
बेला सात जु मास मे, करिए सुनि तिय नाम ॥६६

चाल छन्द

पक्षि श्वेत थकी व्रत लीजै, पडिवा दोयज वृद्धि कीजै।
पुनि पाँचे षष्टी जाणो, आठै नवमी छठि ठाणो ॥६७
चौदसि पूण्यौ गिन लेह, वेला चहुं पखि सित एह।
तिथि चौथी पाचमी कारी, आठै नौमो सुविचारी ॥६८
चौदसि मावस परवीन, पखि किसन करै छठ तीन।
इम सात मास इक माही, बारा मासहि इक ठाही ॥६९
चौरासी वेला कीजे, उद्यापन करि छाडीजे।
इस व्रत ते सुर शिव पावे, सुख को तहाँ वोर न आवै ॥७०

अथ रतनावली व्रत । चाल छन्द

रतनावलि व्रत इम करिये, प्रोपध सुदि तीजहि धरिये ।
पचम अष्टम उपवास, सित पक्ष तिहूँ प्रोपध तास ।।७१
दोयज पचम अँधियारी, आठें प्रोषध सुखकारो ।
इक मास माहि छह जानो, वरप सतरि दुय ठानो ।।७२
उद्यापन सकति समान, करिके तजिए मतिमान ।
दृग-जुत धरि शील वरीजे, तातें उत्तम फल लीजे ।।७३

अथ कनकावली व्रत

कनकावलीय व्रत जैसे, आगम भाष्यो सुणि तैसे ।
सितपक्ष थकी उपवास, करिये विधि सुनिए तास ।।७४
प्रोपध सित्त पडिवा कीजे, पुनि वास पचमी लीजे ।
सुदि दशमी पुनि होय जवही, वदि छठ वारस व्रत सजही ।।७५
छह मास मास इक माही, करिए भवि भाव धराही ।
उपवास वहत्तरि जास, इक वरप मध्य कर तास ।।७६

अथ मुक्तावली व्रत

मुक्तावली व्रत लघु एम, करिहै भवि करि प्रेम ।
भादौं सुदि सातैं जाणो, पहिलो उपवास वखाणो ।।७७
आसोज किसन छठि तेरस, उजियारी करिये ग्यारस ।
कातिक वदि वारस ताम, सुदि तीज रु ग्यारस ठाम ।।७८
मगसिर वदि ग्यारसि जानो, प्रोपध सुदि तीजहि ठानो ।
नव नव प्रति वरप गहीजे, प्रोषध इक असी करीजे ।।७९
पूरो नव वरख मझारी, जुत शील करहु नर नारी ।
तातें फल पावें मोटो, मिटि है विधि उदय जु खोटो ।।८०

अथ मुकुटसप्तमी व्रत । दोहा

सावण सुदि सप्तमी दिवस, प्रोपध को नर वाम ।
सात वरप तक कीजियै, मुकुट सप्तमी नाम ।।८१

अथ नदीश्वर पक्ति व्रत

नदीश्वर पर्क्ति वरत, सुनहु भविक चित लाय ।
किये पुण्य अति ऊपजे, भव-आताप मिटाय ।।८२

चौपाई

प्रथमहि चार इकतर वीस, करहु पछै तेलो इकतीस ।
ता पीछें जु एकतर करै, द्वादश प्रोपध विधि जुत धरै ।।८३

पुनि बेलो करिये हित जानि, बारा बास इकतर ठानि।
पाछैं इक बेलो कीजिए, इक अंतर दश दुय लीजिए ॥८४
फिरि इक वेलो करि धरि प्रेम, वसु उपवास एकतर एम।
सब उपवास आठ चालीस, बिचि बेलो चहु गहे गणीस ॥८५
दधिमुख रतिकरके उपवास, अंजनगिरि चहुँ बेला तास।
दिवस एक सो आठ मझार, बरत यहै पूरणता धार ॥८६
छप्पन प्रोषध भवि मन आन, करे पारणा बावन जान।
लगत करें ना अंतर परै, अघ अनेक भव-संचित हरै ॥८७

अथ लघु मृदंग-मध्य व्रत। अडिल्ल

दोय वास फिर असन फिर तिहु चउ करैं, पांच वास धरि चार तीन दुय अनुसरै।
दिवस तीस मे वास कहे तेईस हैं, लघु मृदंग मधि सात पारणा जुत गहै ॥८८

अथ बड़ो मृदंग-मध्य व्रत। गीता छन्द

उपवास इक करि दोय थापे तीन चहु पण छह धरैं,
पुनि सात आठ रु चढ़े नवलो फेरि वसु सात जु करै।
छह पांच चार रु तीन दुय इक वास इक्यासी गहै,
मिरदंग मधि जु नाम दीरघ पारणा सत्रह लहै ॥८९

अथ धर्मचक्र व्रत। अडिल्ल छन्द

एक वास करि दोय तीन पूनि चहुँ धरे, ता पीछैं करि पांच एक पुनि विस्तरे।
दिन बाईस मझार बास षोडश कहे, धरम चक्र व्रत धारि पारणा छह गहै ॥९०

बड़ी मुक्तावली व्रत

एक वास दुय तीन चार पण थापई चार तीन दुय एक धार अघ कांचई।
सर्बै वास पणवीस पारणा नव गही, गुरु मुक्तावली व्रत दिवस चौंतीसही ॥९१

अथ भावना-पचीसी व्रत

दसमी दस उपवास पंचमी पंच है, आठैं वसु उपवास प्रतिपदा दुय गहै।
सब प्रोषध पच्चीस शील युत कीजिए, ए भावना-पचीसी वरत गहीजिए ॥९२

अथ नवनिधि व्रत

चौदा चौदसि चौदा रतन तणी करै, नव निधि की तिथि नवमी नव प्रोषध धरे।
रतनत्रय तिहु तीज ज्ञान पण पंचमी, नवनिधि प्रोषध एक तीस करि अघ गमी ॥९३

अथ श्रुतज्ञान व्रत। दोहा

प्रोषध व्रत श्रुत ज्ञान के, जिनवर भाषे जेम।
सकल आठ ने एक सौ, बुधि सुणि भवि धर प्रेम ॥९४

चौपाई

सकल पाप में व्रत लीजिए, पोडस तिथि ताकी कीजिए।
सोला पड़िवा प्रोपध सार, सित मित करि पख में निरधार ॥९५
और कहूँ तिथि तिन कर तीज, चौथ चार पण पाच लीज।
छह छठि सातैं सात वखाणि, आठे आठ नवमी नव जाणि ॥९६
वीस दसैं ग्यारा ग्यारसी, प्रोपध करि बारा बारसी।
तेरसि तेरस वास वखाणि, चौदसि चौदह प्रोपध ठाणि ॥९७
पून्यो पन्दरह करि उपवास, अमावस पन्दरह करि तास।
शील सहित प्रोपध सब करे, भव भव के सचित्त अघ हरे ॥९८

अथ सिंहनि क्रीडित व्रत। दोहा

सिंहनि क्रीडित तप तणो, कहुँ विशेष वखाण।
विधि सो कीजे भावजुत, करम निरजरा ठाण ॥९९

चालछन्द

प्रथम हि करि इक उपवास, पुनि दोय एक तिहु जास।
दोय चारि तीन पणि कीजे, चव पांच थापि करि दीजे ॥१७००
चहु पाँच तीन चहु दोई, तिहु एक दोय इक होई।
सब वास साठि गण लीजे, तसु वीस पारणा कीजे ॥१
अस्सी दिन मे व्रत एह, करि कह्यो जिनागम जेह।
इह तप शिव-सुख के दायक, कीन्हो पूरव मुनि-नायक ॥२

अथ लघु चौतीसी व्रत। दोहा

अतिशय लघु चौतीस व्रत, तास तणो कछु भेद।
कथा-मांहि सुनियो जिसो, किये होय दुख छेद ॥३

अडिल्लछन्द

दस दसमी जनमत के अतिसय दस तणी, फिरि दस केवल ज्ञान ऊपजै दस भणी।
चौदसि चौदह अतिशय देवाकृत कही, चार चतुष्टय चौथ चार इह विधि गही ॥४
षोडश आठैं प्रतिहाय की वसु भणी, ज्ञान पाँच की पाँचै पांच कही गणी।
अरु पष्ठी छह लही सबै प्रोषध सुनो, पांच अधिक भवि साठ कीए फल बहु गुणो ॥५

अथ बारासै चौतीसी को व्रत

दोयज पाँचैं आठैं ग्यारस चउदसी, इनके प्रोपध करै सकल अघ जैन सी।
प्रोषध सब बारह सौ अरु चौतीस ही, नाम बरत बारासै चौतीसी कही ॥६

अथ पचपरमेष्ठी का गुणव्रत। उक्त च गाथा

अरहता छेयाला सिद्धा अट्ठेव सूरि छत्तीसा।
उवझायापणवीसा साहुण हुति अडवीसा ॥७

दोहा

कहूं पंच परमेष्ठि के, जे जे गुण सगरीस।
छयालीस वसु तीस छह, अरु पचीस अठवीस ॥८

अरहंत के गुण वर्णन

कहूं छियालीस गुण अरहन्त, दस अतिसय जनमत ह्वै सन्त।
केवलज्ञान भये दश थाय, दुहु की बीस दसे करवाय ॥
प्रातिहार्य को आठें आठ, चौथि चतुष्टय चहु ए पाठ।
सुरकृत अतिशय चवदह जास, चौदहस चौदसि गनिए तास ॥१०

सिद्ध के गुण वर्णन

अब सुनिए वसु सिद्धन भेद, करिए वास आठ मुणि तेह।
समकित दूजो णाण बखाण, दसण चौथो वीरज जाण ॥११
सूक्षम छट्ठो अवगाहण सही, अगुरुलघु सप्तम गुण गही।
अव्याबाध आठमो धरै, इन आठो की आठें करै ॥१२

आचार्य के छत्तीस गुण

आचारिज गुण जेह छतीस, तिनकी विधि सुनिए निसि दीस।
बारसि बारा तप दश दोय, षडावश्यकी छठि छह होय ॥१३
पाचैं पाच पाच आचार, दश लक्षण की दशमी धार।
तीन तीज तिहुं गुप्त जो तणी, प्रोषध ए छह तीस जो भणी ॥१४

उपाध्याय के पच्चीस गुण

गुण पचीस उवझाया जानि, चौदह पूरव कहे बखान।
ग्यारा अंग प्रकाशे धीर, ए पचीस गुण लखिये वीर ॥१५
चौदा चौदस के उपवास, ग्यारा ग्यारसि प्रोषध तास।
उपाध्याय के गुण हैं जिते, वास पचीस वखाणे तिते ॥१६

साधु के अट्ठाईस गुण

साधु अठाईस गुण जाणिये, तिनि प्रोषध इनि विधि ठाणिए।
पंच महाव्रत समिति जु पंच, इन्द्री विजय पंच गणि संच ॥१७
इनिकी पद्रह पखे करे, षडआवसिकी छठि छह धरे।
भूमि सयन मञ्जन को त्याग, वसन-त्यजन कचलोच विराग ॥१८
भोजन करे एक ही वार, ठाडो होइ सो लेइ अहार।
करे नही दातण की वात, इनि सातो को पडिवा सात ॥१९
सब मिलि प्रोषध ए अठवीस, करिहै भवि तरिहै शिव ईस।
पंच परम गुरु गुण सब जोड, सौ पर तियालीस धरि कोड ॥२०

करिए प्रोषध तिनके भव्व, सुरपद के सुखदायक सव्व ।
अनुक्रम शिव पावै तहकीक, जिनवर भाष्यो है इह ठीक ॥२१

अथ पुष्पाजलि व्रत । अडिल्ल

भादौं तें वसु चैत मास परयत ही, तिनके सित पख मे व्रत पुष्पाजलि कही ।
पचम तें उपवास पाच नवमी लगै, किये पुण्य उपजाय पाप सिगरे भगै ॥२२
अथवा पाचै नवमी वास दुय ही करै, छठि सातैं दिन आठै तिहु काजी करै ।
छठि आठैं एकन्त वास तिहु कीजिए, दोय वास एकत तिनहूँ लीजिये ॥२३
पाच वरष लौ वरत इह, करि त्रिशुद्धता धार ।
तातैं फल उतकिष्ट ह्वैं, यामें फेर न सार ॥२४

अथ शिवकुमार का वेला । चौपाई

शिवकुमार का वेला जान, सुनी कथा जिन कहूँ वखान ।
चक्रवर्त्ति का सुत सुखधाम, शिवकुमार है ताको नाम ॥२५
घर मे तप कीनो तिह सार, वेला चौसठि वर्ष मझार ।
त्रिया पाच सै कै घर माहि, करै पारणै काजी आहि ॥२६
पूरण आयु महेन्द्र सुर थयो, तहतै जवू स्वामी भयो ।
दीक्षा घर तपकरि शिव गयो, गुण अनत सुख अत न पयो ॥२७
वरष हजार एक प्रति एक, वेला चौसठि धरि सुविवेक ।
करै आयु लघु जानी अवै, शील सहित धारो भवि सवै ॥२८
लगतै कारण सकति को नाहि, आठैं चौदस कर सक नाहि ।
इनमे अतर पाडै नही, सो उतकिष्ट लहै सुखग्रही ॥२९

अथ तीर्थंङ्करों का वेला । दोहा

ऋषम आदि तीर्थेश के, वेला वीस रु चार ।
आठै चौदस कीजिए, अतर भूर न पार ॥३०

चौपाई

सातै आठमि वेलो ठान, नौमी दिवस पारणो जान ।
तेरसि चौदसि दुय उपवास, मावस पूण्यो भोजन तास ॥३१
अव पारणा की विधि जिसी, सुणो वखाणत हो मैं तिसी ।
वेला प्रथम पारणै एह, तीन आजली शर्वत लेह ॥३२
अरु तेईस पारणा जान, तीन आजली दूध वखान ।
इम वेला कीजे चौवीस, तिन तैं फल अति लहै गरीस ॥३३

अथ जिनपूजा पुरदर व्रत

गीताछन्द

वरत जिन पूजा पुरदर सुनहु भवि चित्त लाय कै,
बारा महीना माझ कोई मास इक हित दायकै ।

ताकी सुकल पडिवा थकी ले अष्टमी लौं कीजिए,
प्रोषध इकतर आठ दिन मैं पूज जिन शुभ लीजिए ।।३४

दोहा

बरत यह दिन आठ को, बार एक करि लेह ।
मन वच तन तिरकाल जिन, पूजें सुरपद देह ।।३५

अथ रोहिणी व्रत

व्रत अशोक रोहणि तनो, करिहै जे भवि जीव ।
सात बीस प्रोषध सकल, धरि त्रिशुद्धता कीव ।।३६

अडिल्ल छन्द

जिह दिन माह्ये नक्षत्र रोहिणी आय है, ताको प्रोषध करै सकल सुखदाय है ।
अनुक्रमते उपवास सताईस जानिए, वरष सवा दुय माहि पूणता मानिए ।।३७

अथ कोकिला पञ्चमी व्रत । दोहा

अबै कोकिला पञ्चमी, बरत कहो विधि सार ।
शील सहित प्रोषध किये, सुरपति को दातार ।।३८

द्रुत विलबित छन्द

पक्ष अधयारे मास असाढ ही, करिये प्रोषध कातिक लौं सही ।
तिथि मु पचमी के उपवास ही, प्रति सुकोकिल पचमि कौं लही ।।३९

दोहा

मरयादा या बरत की, सुनहु भविक परवीन ।
पाच वरष लौं कीजिए, त्रिविध शुद्धता कीन ।।४०

अथ कवल चद्रायण व्रत

वरत कवल चद्रायणा, बारह मास मझार ।
एक महीना मे करै, एक बार चित धार ।।४१

चौपाई

करहि अमावस को उपवास, पाछै तैं इक चढता ग्रास ।
पडिवा दिवस ग्रास इकलीन, दोयज दोय तीज दिन तीन ।।४२
चौथ चार पण पाचै सही, छट्ठि छह सातैं सत लही ।
आठैं आठ नवमि नौ टेक, दशमी दस ग्यारहि दस एक ।।४३
बारसि बारह तेरसी जान, तेरसि चौदस चौदह ठान ।
पून्यो दिवस लेई दस पाच, सुकल पक्ष की ए विधि साच ।।४४

कृष्ण पक्ष की पडिवा जास, चौदह् गास तणो परगास ।
दोयज तेरह् वारह् तीज, चौथ ग्यार पचमी दस लीज ।।४५
छह् नव सातैं आठ वखाण, आठैं सात नवमि छह् जाण ।
दसमी पाँच ग्यारसी चार, बारसि तिहु तेरसि दुय धार ।।४६
चौदस दिनहि गास इक जाण मांवस दिवस पारणौ ठाण ।
एक मास को व्रत है एह, गास लीजिये तिम सुणि लेह ।।४७
गास लैंन को ऐसी करै, मुख मे देत न करतैं परै ।
बीच पिवो पाणी न गहाय, अतराय गल अटकै थाय ।।४८
जिन पूजा विधि जुत दिन तीस, करे वन्दना गुरु नमि सीस ।
शास्त्र वखाण सुणै मन लाय, धरम कथा मे दिवस गमाय ।।४९
पालै शील वचन मन काय, इह् विधि महा पुण्य उपजाय ।
यातैं सुरपद होवै ठीक, अनुक्रम शिव पावै तहकीक ।।५०

अथ मेरु पक्ति व्रत

वरत मेरु पकति जो नाम, तास करन विधि सुनि अभिराम ।
दीप अढाई मध्य सुजाण, पचमेरु जो प्रकट वखाण ।।५१
जवूद्वीप सुदर्शन सही, विजय सु पूरव धातकी सही ।
अपर धातकी अचल प्रमान, प्राची पोहकर मंदर मान ।।५२
पुहकर अपर जु विद्युन्मालि, पच मेरु वन वीस सम्हालि ।
तिन मे असी चैत्यगृह सार, तिनके व्रत प्रोपध निरधार ।।५३
सुनहु सुदरशन भूधर जेह, भद्रसाल वन चहुँ दिसि तेह ।
जिन मदिर तिह चार वखाण, प्रोपध चार इकतर ठाण ।।५४
पाछैं वैलो कीजे एक, वन सौमनस दूसरो टेक ।
चार जिनेश्वर भवन प्रकाश, चार वास पुनि वेलो तास ।।५५
नदन वन जिन प्रोपध चार, पीछैं ताके वेलो धार ।
पाडुक वन चउ जिनवर गेह, ताके चहु प्रोषध धरि एह ।।५६
पुनि बेलो धारो भवि सार, मेरु सुदरसन इह विसतार ।
प्रोषध सोलह् बेला चार, व्रत दिन चहु चालीस मझार ।।५७
चार वीस उपवास वखाण, वीस जु तास पारणा जाण ।
ऐसे अनुक्रम करिए भव्व, पच मेरु व्रत विधि सो सव्व ।।५८
ध्यावत मेरु सुदरशन नाम, तेई नाम सवनि सुख धाम ।
वाही विधि सव वरत जु तणी, जाणो सही जिनागम भणी ।।५९
इनमे अन्तर पाडे नही, लगते प्रोषध वेला गही ।
सव प्रोषध को ऐसे जोड, वेला वास करे चित कोड ।।६०
वास सकल एक सौ बीस, करे पारणा सत्तर तीस ।
सात महीना दिन दस माँहि, सकल वरत इम पूरण थाहि ।।६१

ताकी सुकल पडिवा थकी ले अष्टमी लौं कीजिए,
प्रोषध इकतर आठ दिन में पूज जिन शुभ लीजिए ॥३४

दोहा

बरत यह दिन आठ को, बार एक करि लेह ।
मन वच तन तिरकाल जिन, पूजै सुरपद देह ॥३५

अथ रोहिणी व्रत

व्रत अशोक रोहणि तनो, करिहै जे भवि जीव ।
सात बीस प्रोषध सकल, धरि त्रिशुद्धता कीव ॥३६

अडिल्ल छन्द

जिह दिन माह्ये नक्षत्र रोहिणी आय है, ताको प्रोषध करै सकल सुखदाय है ।
अनुक्रमते उपवास सताईस जानिए, वरष सवा दुय माहि पूर्णता मानिए ॥३७

अथ कोकिला पञ्चमी व्रत । दोहा

अबै कोकिला पञ्चमी, बरत कहो विधि सार ।
शील सहित प्रोषध किये, सुरपत्ति को दातार ॥३८

द्रुत विल्बित छन्द

पक्ष अधयारे मास असाढ ही, करिये प्रोषध कातिक लौं सही ।
तिथि सु पचमी के उपवास ही, प्रति सुकोकिल पचमि कौं लही ॥३९

दोहा

मरयादा या बरत की, सुनहु भविक परवीन ।
पाच वरष लौं कीजिए, त्रिविध शुद्धता कीन ॥४०

अथ कवल चद्रायण व्रत

वरत कवल चद्रायणा, बारह मास मझार ।
एक महीना मे करे, एक बार चित्त धार ॥४१

चौपाई

करहि अमावस को उपवास, पाछैं तैं इक चढता ग्रास ।
पडिवा दिवस ग्रास इकलीन, दोयज दोय तीज दिन तीन ॥४२
चौथ चार पण पाचै सही, छट्ठि छह सातैं सत लही ।
आठैं आठ नवमि नो टेक, दशमी दस ग्यारहि दस एक ॥४३
बारसि बारह तेरसी जान, तेरसि चौदस चौदह ठान ।
पून्यो दिवस लेई दस पाच, सुकल पक्ष की ए विधि साच ॥४४

कृष्ण पक्ष की पडिवा जास, चौदह गास तणी परगास ।
दोयज तेरह बारह तीज, चौथ ग्यार पचमी दस लीज ॥८५
छह नव सातैं आठ वखाण, आठैं सात नवमि छह जाण ।
दसमी पाँच ग्यारसी चार, वारसि तिहु तेरसि दुय धार ॥८६
चौदस दिनहि गास इक जाण मॉवस दिवस पारणी ठाण ।
एक मास को व्रत है एह, गास लीजिये तिम सुणि लेह ॥८७
गास लैंन को ऐसी करै, मुख मे देत न करतैं परै ।
बीच पिवो पाणी न गहाय, अतराय गल अटक थाय ॥८८
जिन पूजा विधि जुत दिन तीस, करै वन्दना गुरु नमि सीस ।
शास्त्र वखाण सुणै मन लाय, धरम कथा मैं दिवस गमाय ॥८९
पालै शील वचन मन काय, इह विधि महा पुण्य उपजाय ।
यातैं सुरपद होवै ठीक, अनुक्रम शिव पावै तहकीक ॥५०

अथ मेरु पंक्ति व्रत

वरत मेरु पकति जो नाम, तास करन विधि सुनि अभिराम ।
दीप अढ़ाई मध्य सुजाण, पचमेरु जो प्रकट वखाण ॥५१
जबूद्वीप सुदर्शन सही, विजय सु पूरव धातकी सही ।
अपर धातकी अचल प्रमान, प्राची पोहकर मदर मान ॥५२
पुहकर अपर जु विद्युन्मालि, पच मेरु वन बीस सम्हालि ।
तिन मे असी चैत्यगृह सार, तिनके व्रत प्रोषध निरधार ॥५३
सुनहु सुदरशन भूधर जेह, भद्रसाल वन चहुँ दिसि तेह ।
जिन मदिर तिह चार वखाण, प्रोषध चार इकतर ठाण ॥५४
पाछैं बेलो कीजे एक, वन सौमनस दूसरो टेक ।
चार जिनेश्वर भवन प्रकाश, चार वास पुनि वेलो तास ॥५५
नदन वन जिन प्रोषध चार, पीछैं ताके बेलो धार ।
पाडुक वन चउ जिनवर गेह, ताके चहु प्रोषध धरि एह ॥५६
पुनि वेलो धारो भवि सार, मेरु सुदरसन इह विसतार ।
प्रोषध सोलह वेला चार, व्रत दिन चहु चालीस मझार ॥५७
चार वीस उपवास वखाण, वीस जु तास पारणा जाण ।
ऐसे अनुक्रम करिए भव्व, पच मेरु व्रत विधि सो सव्व ॥५८
ध्यावत मेरु सुदरशन नाम, तेई नाम सवनि सुख धाम ।
वाही विधि सव वरत जु तणी, जाणो सही जिनागम भणी ॥५९
इनमे अन्तर पाडै नही, लगते प्रोषध वेला गही ।
सव प्रोषध को ऐसे जोड, वेला वास करे चित कोड ॥६०
वास सकल एक सौ वीस, करे पारणा सत्तर तीस ।
सात महीना दिन दस माँहि, सकल वरत इम पूरण थाहि ॥६१

सकल वास बेला विच जाण, बीस इकत जु कहे वखाण।
ऐसे बीस दिवस जानिए वरत मेरु पकति मानिए ।।६२
शील सहित शुभ व्रत पालिये, हीण उदै विधि के टालिए।
सुरपद पावै सशय नाहिं, अनुक्रम भव लहि शिवपुर जाहि ।।६३

दोहा

वरत मेरु पकत इहै, वरन्यो सुख-दातार।
करहु भविक समकित-सहित, ज्यो पावै भाव पार ।।६४
पचमेरु के बीस वन, तहाँ असी जिन गेह।
तिनके व्रत की विधि सकल, पूरण कीनी एह ।।६५

अथ पल्य विधान व्रत । दोहा

सुनहु पल्य विधान व्रत, जिन आगम अनुसार।
वरष बहत्तर कीजिए, बारा मास मझार ।।६६

चाल छन्द

आसोज किसन छठि तेरस, सुदि बेलो ग्यारस बारस।
चौदसि सित प्रोषध धरिये, कातिक वदि बारस वरिए ।।६७
प्रोषध सुदि तीजरु बारसि, मगसिर वदि वारसु ग्यारसि।
सुदि तीज अबर करि बारसि, वदि पोसह दुतिया पदरसि ।।६८
सुदि पाँचैं सातैं कीजे, पून्यूं को वास धरीजै।
वदि माघ चौथ सातैं गनि, चौदस उपवास धरो मनि ।।६९
सुदि सातैं आठैं बेलो, दशमी करि वास अकेलो।
फागुण पाँचै छठि कारी, बेलो सुणि तिथि उजियारी ।।७०
पुनि पडिवा ग्यारसि लीजे, दोनो दिन भेलौ कीजे।
वदि पडिवा दोयज बेलो, चैत की करो इकेलो ।।७१
चौथ छठि इकादस अठमी, सुदि सातैं को अर दसमी।
वैशाख चौथ वदि धारी, दशमी वास पुनि कारी ।।७२
सित दोयज तीज धरीजे, नौमी तेरसि दुहुँ लीजे।
दसि प्रोषध तेरसि ठान, चौदस मावस तेलो जान ।७३
सुदि आठैं दसमी पदरस, उपवास करो करि मन वस।
अव सावण मधि जे वास कहि हो भवि सुनियो तास ।।७४
छठि चौथि अष्टमी सावण, पुनि चोदसि सित तृतीया भण।
वारसि तेरस को मेलो, पून्यूं को वास अकेलो ।।७५
भादा वदि दोयज वास, छठि सातैं वेलो तास।
वारस उपवास धरीजैं, सित पाखज एक करीजै ।।७६

तेलो पाचैं छठि सातैं, सुत नौमी वास क्रियातैं ।
ग्यारस वारस तेरस को, प्रोपध तेलो पन्दरस का ॥७७
उपवास आठ चालीस, तेला चहु कहे गरीस ।
वेला छह जिनवर भाखे, जिन आगम मे इह आखे ॥७८
ए वरष एक मे वास, सत्तरि दुय आगम मे भास ।
धारणे पारणा सन्त, करिये एकन्त महन्त ॥७९
धरि शील त्रिविधि नर नारी, व्रत करहु न ढील लगारो ।
सुर ह्वै अनुक्रम शिव जाई, विधिपल्यतणी इह गाई ॥८०

अथ रुक्मिणी व्रत

सवैया इकतीसा

लक्षमी मती का भव वाहि व्रत कीनो इह श्वेत भाद्र पद आठैं प्रोपध अदाय कै ।
दोय जाम धरणे और चार उपवास दिन पूजा रचै दोय याम पारणा वनायकैं ॥८१
कीनो आठ वरष लौ शुद्ध भाव देह त्यागि अच्युत सुरेश इद्राणी पद पायकैं ।
भई रुक्मिणी कृष्ण वासुदेव पट तिया रुक्मिणो नाम व्रत जाणो चित लायकै ॥८२

अथ विमानपक्ति व्रत । दोहा

व्रत विमान पकति तणे, विधि सुनिये भवि सार ।
मन वच क्रम करिए सही, सुर सुरेश पद धार ॥८३

अडिल्ल

सौधर्म रु ईशान स्वर्ग दुहु तैं गही, पच पिचोत्तर लगैं पटल त्रेसठ कही ।
तिनकी चहुदिस माहि वद्ध श्रेणी जहा, जैन भवन है अनेक अकृत्रिम हो तहा ॥८४

दोहा

तिनके नाम विधान को, वरत इहै लखि सार ।
जहा जहा जेते पटल, सो सुनिये विस्तार ॥८५

चौपाई

दुय सुर गनि इकतीस विख्यात, सनत कुमार महेद्रहि सात ।
चार व्रह्म ब्रह्मोत्तर सही, लातव कापिष्ठ है द्वय सही ।८६
एक सुक्र महासुक्रह वार, एकहि शतार अरु सहसार ।
आणत प्राणत आरण तीन, अच्युत लगै छह पटल प्रवीन ॥८७
नव नव ग्रैवेयक जानिये, नव नवोत्तर इक मानिये ।
पच पचोत्तर पटल जु एक, ए त्रेसठ मुणि धरि सुविवेक ॥८८
अवै वरत प्रोपध विधि जिसी, कथा प्रमाण कहो सुनि तिसी ।
एक पटल प्रति प्रोषध चार, करै एकतर चित अवधार ॥८९

प्रोषध लगते बेलो एक, करि भविजन मन धरि सुविवेक।
ता पीछै प्रोपध चहुजान, तिनके पीछै बेलो ठान ॥९०
चहु प्रोषध वेलो चहु वास, छट चहु अनसन पुनि छठ तास।
इह विधि त्रेसठ बार विधान, चहु प्रोषध छठ अनुक्रम जान ॥९१
त्रेसठ बार जु पूरण थाय, इक लगतो तेलो करवाय।
बीच इकतर असन जु करे, एक भुक्त अतर नही परे ॥९२
इनके वेला अरु उपवास, अनसन दिवस रु तेलो जास।
अरु सब दिन इकठे कर जोड, सो सुणल्यौ भवि चित धरि कोड ॥९३
छह सौ दिवस सताणवैं जाण, वरत दिवस मरयाद बखाण।
बास इकन्तर दुइसे जाण, तिन ऊपर बावन परवान ॥९४
त्रेसठ छठ तेलो इक जान, अब सव वास जोड इम मान।
वास इक्यासी पर सय तीन, असन तीन सै सोला जान ॥८५
इह व्रत तीन भवन मे सार, विधिजुत किए देवपद धार।
अनुक्रम शिव जैहै तहकीक, अवधारहु भवि चित धरि ठीक ॥९६

अथ निर्जर पचमी व्रत

सवैया इकतीसा

प्रथम असाढ सेत पचमी को वास करे कातिकलो मास पाच प्रोषध गहीजिये।
आठ परकार जिनराज पूजा भावसेती उद्यापन विधि करि सुकृत लहीजिये ॥
कीयो नागश्रिय सेठ सुता एक वरष लो सुरगत्ति पाय विधि कथातें पाईजिये।
निर्जर पचमी को व्रत इह सुखकार भाव शुद्ध कीए दु ख को जलाजलि दीजिये ॥९७

अथ कमनिर्जरणी व्रत

दरसण के निमत्ति चौदसि आसाढ सुदि, सावण की चौदस सुज्ञानकाज कीजिये।
भादो सुदि चौदस को प्रोषध चारित केरो तपजोग चौदसि असौज सित लीजिये ॥
एई चार प्रोषध वरष माहि विधि सेती कर्म निर्जरनी वरत सुन लीजिये।
धनश्रीय सेठ सुता करि सुरपद पायो अजो भवि भावि करिवें को चित दीजिये ॥९८

अथ आदित्य वार व्रत

दोहा

सुणो वरत आदित्यको, विधि भाषी है जेम।
कथा प्रमाण सु कहत हो, दायक सव विधि क्षेम ॥९९

चौपाई

प्रथम एक माहे आसाढ, आठई पून्यू विचि आठ।
सावण माहि करे पुनि चार, चार वास कर भादो मझार ॥१८००

तजै चकार मकार विचार, वरष एक माहे नव वार ।
करैं वरष नवलो निरधार, उजुमण करो सकति समार ॥१
उत्तम प्रोषध की विधि जाण, आमिल दूजी जगत वखाण ।
तृतीय प्रकार कह्यो इकठान, एक भुक्ति विधि चौथी जान ॥२
सयम शील सहित निरधार, वरष जु नव को इह विसतार ।
वरष एक मे कोयो चहै, दोत आठ चालीस जु गहै ॥३
विधि वाही चहु वार वखाण, पार्श्वनाथ जिन पूजा ठाण ।
कीजे उद्यापन चहूँ सार, पीछैं तजिए व्रत निरधार ॥४
उद्यापन की शक्ति न होय, दूणो व्रत करिये भवि लोय ।
सेठ नाम मति सागर जाण, त्रिया गुणवती जास वखाण ॥५
तिह इह व्रत को फल पाइयौ, विधि तैं कथा माहिं गाइयौ ।
इह जाणी कर भविजन करौ, व्रत फल तै शिवतिय कू वरो ॥६

अथ कर्म-चूर व्रत

कर्म चूर व्रत की विधि एह, आठ भाति भाषत हो जेह ।
आठें आठ आठ मैं करे, चौसठि आठें पूरा परै ॥७
प्रोषध आठ करै विधि सार, इक ठाणा वसु एक ही वार ।
एक गास ले इक दिन माहि, आठहि नयेड करे सक नाहिं ॥८
करहि इक फल्यो हरित तजेय, सीत दिवस तन्दुल इक लेय ।
लाडू तिथि इक लाडू खाय, काजी आठ करैं सुखदाय ॥९

दोहा

वरष दोय वसु मास मे, व्रत पूरो ह्वै एह ।
शील सहित व्रत कीजिये, दायक सुर शिवगेह ॥१०

अथ अनस्तमित व्रत

चौपाई

अनस्तमित व्रत विधि इम पाल, घटिका दुय रवि अथवत टालि ।
दिवस उदय घटिका दुय चढै, तजि आहार चहु विधि व्रत वढै ॥११
याकी कथा विशेष विचार, भाषी त्रेपन क्रिया मझार ।
याते कही नही इह ठाम, निसि भोजन तजिये अभिराम ॥१२

अथ पचकल्याणक व्रत

दोहा

व्रत कल्याणक पचमी, प्रोषध तिथि विधि जाण ।
आचारज गुणभद्रकृत, उत्तर पुराण प्रमाण ॥१३
तीर्थंकर चौवीस के, गरभकल्याणक सार ।
तिथि उपवास तणी सुनो, करिये तिस मन धार ॥१४

गर्भ कल्याणक । पद्धडी छन्द

दोयज असाढ वदि वृषभधीर, छठि वासुपूज्य सुदि छठि जु वीर।
मुनिसुव्रत सावण दुतीय श्याम, दसम करी जिन कुथुनाम ॥१५
सित दोयज सुमति सुगरभ एव, भादौं बदि सातैं साति देव।
सुदि छठि सुपारस उदर-मात नमि बदि कुवारि दोयज विख्यात ॥१६
कातिक बदि पडिवा जिन अनन्त, सुदि छठि नेमि प्रभु सूर महत।
पद्मप्रभु वदि छठि माघमास, फागुणवदि नौमी सुविधि तास ॥१७
अरहनाथ सुकल त्रितिया वखाण, आठैं सभव उर मात ठाण।
शसि प्रभ वदि पाचैं चैत एव आठैं सीतल दिन गरभमेव ॥१८
सुदि एकैं जिनवर मल्लि जानि, वदि तीज पार्श्व वैशाख मानि।
सुदि छठि अभिनन्दन गरभवास, जिन धर्मनाथ तेरसि प्रकाश ॥१९
श्रेयास जेठ वदि छठि गरीस दशमी दिन उच्छव विमल ईश।
जिन अजित अमावसि उदरमात, चौबीस गरभ उत्सव विख्यात ॥२०

दोहा

बीस चार जिनवर गरभ, बासर कहे बखान।
अबैं जनम दिन तिथि सकल, सुनि भवि चित्त हित आन ॥२१

जन्म कल्याणक । पद्धडी छन्द

आसाढ दसमी वदि नमि जिनेश, सावण वदि छठि नेमीश्वरेश।
कातिक वदि तेरस पदम संत, मगसिर सुदि नौमी पुष्पदत ॥२२
ग्यारसि मल्लिनु जनमावतार, अरहनाथ जनम चौदसि सु सार।
पूरणमासी सम्भव सुदेव, शसिप्रभ वदि ग्यारसि पौष एव ॥२३
ग्यारस दिन पारश नाथ जान, शीतल जिन बारसि किसन मान।
सित चौथ विमल नाम जु उछाह, दसमी सित उच्छव अजित नाह ॥२४
बारसि अभिनन्दन जनम लीय, तेरसि जिन धम प्रकाशकीय।
ग्यारसि फागुण श्रेयासस्वामि, जिन वासुपूज्य चौदसि प्रणामि ॥२५
बदि चैत नवमि रिसहेस स्वामि, दसमी सुनि सुव्रत पय नमामि।
सुदि तेरस जन्मे वीरनाथ, सुमति दसमी वैशाख श्याम ॥२६
सुदि पडिवा जनमे कुथुवीर, बारसि वदि जेठ अनन्त धीर।
चौदसि श्री शाति कियो प्रकाश, सित बारसि जनमे श्री सुपाश ॥२७

तप कल्याणक

नमि नाथ दशमी आसाढ श्याम, सावण सुदि छठ तप नेमिनाथ।
कातिक वदि तेरस वीर धीर, मगसिर वदि दशमी पद्म वीर ॥२८
सुदि एकैं दीक्षा पुहुप दन्त, दशमी दिन अरह जिन तप महन्त।
जिन मल्लि तजो ग्यारसि सुगेह, सुदि पून्यो शभव तप गनेह ॥२९

चन्द्रप्रभ बारस कृष्ण पौष, ग्यारसि पास तप्यो उ पखि पोष ।
सीतल जिन वदि द्वादसीय माह, सुदि चौथ विमल तप लियहु नाह ॥३०
नवमी दिन दीक्षा अजित देव, वारस अभिनन्दन सु तप भेव ।
तेरस जिन धर्म तपो प्रशस, फागुण वदि ग्यारसि श्री श्रेयास ॥३१
प्रभु वासु पूज्य चौदस सुजान, वदि चैतर नवमी रिसहमान ।
सुव्रत दशमी वैशाख श्याम, सुदि पडिवा कुन्थु जिनेस ताम ॥३२
सित नवमी लियो तप सुमति वीर, तिन शान्ति जेठ वदि चौथ धीर ।
वदि वारसि तप जिनवर अनत, वारस सुपार्श्व सित जेठ सन्त ॥३३

दोहा

तप कल्याणक को कथन, उत्तर पुराणह माँहि ।
काढि कियो अब ज्ञान को, सुनिहुँ चित्त इक ठाहि ॥३४

ज्ञान कल्याणक । पद्धडीछन्द

जिन नेमीश्वर पडिवा कुवार, सभव जिन चौथहि ज्ञान धारि ।
कातिक सुदि दोयज पुहपदन्त, लहि केवल वारस अर महत ॥३५
मगसिर सुदि ग्यारस मल्लि सुबोध, ग्यारस नमि हणिया कर्म जोध ।
शीतल वदि चौदसि पौष ज्ञान, सुदि दसमी सुमति केवल महान ॥३६
सुदि ग्यारसि अजित सुबोध पाय, चौदस अभिनन्दन ज्ञान पाय ।
पून्यो लहि केवल धम वीर, श्रेयास अमावस माघ धीर ॥३७
सुदि वासुपूज्य दोयज प्रकाश, छठि विमल नाथ केवल विभास ।
फागुण वदि छट्ठी सुपार्श्व ईश, सातैं चन्द्रप्रभु नमूँ सीश ॥३८
फागुण वदि ग्यारस वृषभ जान, वदि चैत चौथ पारश वखान ।
अमावस श्री जिनवर अनत, सुदि तीज कुथु केवल लहत ॥३९
सुदि ग्यारस सुमति जु बोध पाय, पदम प्रभु पून्यो ज्ञान थाय ।
सुव्रत नौमी वैशाख श्याम, सुदि दसै वीर जिन बोध पाम ॥४०

दोहा

ज्ञान कल्याणक वर्णयो, उत्तर पुराण मे जेम ।
अब निर्वाण प्रमाण तिथि, सुनहु भविक धर प्रेम ॥४१

निर्वाण कल्याणक । पद्धडी छन्द

आसाढ विमल आठैं असेत, सुदि सातैं शिव नेमी सहेत ।
सावण सुदि सातैं पार्श्वनाथ, पून्यो श्रेयास लहि मोक्ष साथ ॥४२
भादो सुदि आठैं पुहपदत, जिन वासुपूज्य चौदस नमत ।
सीतल जिन आठैं सित कुमार, कातिक मावस भव वीर पार ॥४३
वदि महा चतुर्दशि वृषभनाम, पद्म प्रभु फागुन चौथ श्याम ।
सातैं सुपार्श्व शिव लहीय धीर, चद्र प्रभु सातैं त्रिजग तीर ॥४४

वदि बारसि मुनि सुव्रत बखाण, सुदि पाँचें मल्लि जिनेस जाण।
वदि चैत मावसी नत नाथ, अमावस अर जिन मोक्ष साथ ।।४५
सुदि पाँचैं शिव जिन अजित पाय, सुदि छठ संभव निर्वाण थाय।
सुदि ग्यारसि सुमति सु मोक्ष धीर, नमि वदि चौदसि बैशाख तीर ।।४६
सुदि एकै शिव-दिन कुंथु जाण, अभिनंदन छठ निर्वाण ठाण।
वदि चौदसि जेठ सु शांतिनाथ, सुदि चौथ धर्म शिव कियो साथ ।।३७

दोहा

कल्याणक निर्वाण की, तिथ चौबीस विचार।
कही जेम भाषी तिसी, उत्तर पुराण मझार ।।४८
ह्वै सम्पूरण व्रत जबै, कर उद्यापन सार।
आगम में जिन भाषियो, सो भवि सुन निरधार ।।४९

उद्यापन की विधि। चौपाई

पाँच कीजिये जिनवर गेह, पाँच प्रतिष्ठा कर शुभ लेह।
झालरि झांझ कसाल, ताल, छत्र चमर सिंघासन सार ।।५०
भामंडल पुस्तक भंडार, पंच-पंच सब कर निरधार।
घंटा कलश ध्वजा पण थाल, चंद्रोपक बहु मोल विशाल ।।५१
पुस्तक पाँच चैत गृह धरे, तिन बाँचैं भवि जन भव तरै।
चार संघ को देय आहार, जिन आगम भाषी विधि सार ।।५२
इतनी विधि जो करी न जाय, सकति प्रमाण करै सो आय।
सकति उलंघन न करनी कही, सकति बान कर परहै नही ।।५३
काहू भाँति कछू नहिं थाय, तो दूणो व्रत कर चित्त लाय।
अबैं बरत करिहैं नर नार, करै दान सुन हिये अवधार ।।५४
गरभ कल्याणक की दत्त जान, मैदा का करि खाजा आन।
बाटे सबको घर अहलाद, करे इसी विधि हर परमाद ।।५५
जनम कल्याणक दत्त विस्तरे, चिणा भिजोय रु बिरहा करे।
मैदा फल घर बाटै नार, चित्त माहि अति हित अवधार ।।५६
तप कल्याणक दत्त अवधार, बाजर पापर खिचडी धार।
जिन आगम ही बखाणी नहीं, युक्ति मान मानस विधि गही ।।५७
ज्ञान कल्याणक पूरा थाय, जबै दान दे मन चित लाय।
पाठ मगाय बाटै तिया, मन मे हरष सफल निज जिया ।।५८
करके कल्याणक निर्वाण, तास दान को करै बखान।
मोतीचूर रु मगद कसार, लाडू कर बाटै सब ठार ।।५९
बीस चार घर की मरयाद, दे अति मान हिये अहलाद।
मन की उकति उपावै घणी, जिन शास्त्रनि माहें नही भणी ।।६०

यातें सुनिये परम सुजान, जिन आगम भाष्यो परमान।
थोडो किये अधिक फल देय, भाव-सहित कर सुर-पद लेय ॥६१

अडिल्ल

जिम निज आगम कह्यो दान तिम दीजिये,
निज मन युक्ति उपाय कबहु नहि कीजिये।
कलीकाल नहि जोग संग नहि पाइये,
जास बराबर धर्म तिनहि चित लाइये ॥६२

भोजनादि निज सकति जुत, दानादिक विधि सार।
करि उपजावै पुण्य बहु, यामे फेर न सार ॥६३
एकासन कर धारणे, अवर पारणें जान।
शील सहित प्रोषध सकल, करहु सुभवि चित आन ॥६४

मरहटा छन्द

कल्याणक सार पंच प्रकार गरभ जनम तप णाण,
पंचम निर्वाण वरत प्रमाण कहियो महापुराण।
तिनकी विधि भाखी जिम जिन आखी किए लहै सुर गेह,
अनुक्रम शिव पावै जे मन भावे ते सब जानी एह ॥६५

निर्वाण कल्याणक का बेला। चौपाई

जे जे तीर्थङ्कर निर्वाण, गए तास दिन की तिथि ठाण।
तिह दिन को पहिलो उपवास, लगतो दूजो तास प्रकाश ॥६६
इह विधि बारह मास मझार, बेला करिये बीस रु चार।
बेला कल्याणक निर्वाण, वरत नाम लखिये बुध माण ॥६७

लघुकल्याणक को व्रत। दोहा

गरभ जनम तप ज्ञान शिव, तीर्थङ्कर चौवीस।
वरस माहि तिथि सबन की, करै एक सो बीस ॥६८

छप्पय

रिषभ गरभ वदि दुतिय गर्भ छठि वासु पूज गन,
आठैं विमल सुज्ञान दशमी नमि जनम रु तप मन।
वर्धमान छठि सुकल गरभ माता के आए,
सुदि सातैं जिन नेमि करन हणि मोक्ष सिधाए।
आसाढ मास माहे दिवस, छह माहे ही जाणियो,
छह कल्याणक सातमो, छह जिनवर को ठाणियो ॥६९

मुनि सुव्रत जिन देव गरभ वदि दोयज वासर,
कुंथु गरभ वदि दसे सुमति सित बीज गरभ वर।
नेमनाथ सित छठी जनम दिन तप पुनि धरियो,
साते पारशनाथ मोक्ष लहि भव दधि तरियो।
श्रेयासनाथ निरवान पद, पून्यू के दिन सरदही।
सावण सुमास छठि दिन विषै, सप्त कल्याणक है सही ॥७०

वदि भादौ जिन शांति गरभ सातैं माता उर,
सुदि छठि गरभ सुपास अष्टमी मोक्ष सुविधि पर।
वासुपूज्य निर्वाण चतुर्दसि भादौं जाणो,
वदि दोयज आसोज गरभ नमि जिनवर मानो।
लहि मोक्ष नेमि एकै सकल, आठै शीतल शिव गए।
दुह मास माहि दिन सात मैं, कल्याणक सातहिं भए ॥७१

गरभ अनन्त जिनेश प्रतिपदा कातिक करियो,
संभव केवल चौथ त्रयोदसि पद्म जनम लियो।
तप पुनि तेरसि पद्म मोक्ष नमति जु अमावस,
सुविधि ज्ञान सित बीज नेमि छठि मात गरभ वस।
अरनाथ चतुष्टय विधि हणिवि, केवल ज्ञान उपानियो।
दिन सात कल्याणक आठ सब, काती माहि सुजानियो ॥७२

सन्मति तप वदि दसैं सुविधि सुदि एकै तप गत,
पुहपदन्त नय जनम दसम तप अरहनाथ मन।
मल्लि जनम तप ज्ञान कल्याणक चिहु सित ग्यारस,
नमि तिस ग्यारसि ज्ञान जनम अरनाथ सु चौदस।
संभव जु कल्याणक जनम तप, दुहू पूरणवासी थए।
दिन सात कल्याणक, एकदस मगसिर माही वरणए ॥७३

पारशनाथ सु जनम अवर तप ग्यारसि कारी,
जनम चन्द्र प्रभ तास दिवस दिक्षाहू धारी।
चौदस शीतल ज्ञान शांति सुदि दशमौ विधि तसु,
ग्यारस केवल अजित जिनेश्वर प्रगट भयो जसु।
प्रभु अभिनन्दन चौदसि दिवस, लोकालोक प्रकासियो।
दिन पांच कल्याणक आठ जुत, पौष महीनो भासियो ॥७४

दोहा

फागुण दिन ग्यारसि विषे, कल्याणक जिनराय।
पदरह किये त्रिजगत-पति, नमैं किसन सिर नाय ॥७५

छन्द त्रिभंगी

अष्टाह्निक धारण सोलह कारण व्रत दशलक्षण रतनत्रय,
शुभ लब्धि विधान अखय निधान मेघ सु मालो पडरसय ।
ज्येष्ठादिक जिनवर रसपाष्यावर ज्ञान पचीसी अखय दसै,
समवादिक सरण व्रत सुख करण सुख पचम आकास लसै ॥७६
खडेलीवाल वसविसाल नागर वाल देस धिय,
रामापुर वास देव निवास धर्म प्रकास प्रकट किय ।
सघ ही कल्याण सव गुण जाण गोत्र पाटणी सुजस लिय,
पूजा जिनराय श्रुत गुरुपाय नमैं सकति जिन दान दिय ॥७७
तसु सुत दोय एव गुरु सुखदेव लहुरो आणदसिव सुणौ,
सुखदेव सुनदन जिनपद वदन ज्ञान मान किमनेस मुणो ।
किसनै इह कीनी कथा नवीनी निज हित चीनी सुरपदको,
सुखदाय क्रिया भनि इह मन वच तन शुद्ध पलै दुरगति रदको ॥७८

दोहा

मधुर राय वसन्त को, जाने सकल जहान ।
तस प्रधान सुत कौन जू, किसन सिंह मनमान ॥७९

अडिल्ल

क्षेत्र विपाकी कम उदै जब आइयो, निज पुर तजि कै सागानेर वसाइयो ।
तह जिन धर्म प्रसाद गनै दिन सुखलही, सावरमी जन सजन मान दे हित गही ॥८०

दोहा

इह विचार मन आनियो, क्रिया कथन विविसार ।
होय चौपई वध तो, सब जन कु उपगार ॥८१
सब ही जन वाचो पढौ, सुणौ सकल नर नार ।
सुखदाई मन आणिये, चलौ क्रिया अनुसार ॥८२

छन्दचाल

व्याकरण न कबही देख्यो, छन्द न नजरा अवलेख्यो ।
लघु दीरघ वरण न जाणू, पद मात्रा हू न पिछाणू ॥८३
मति-हीन तहा अधिकाई, पटुता कबहूं नहि पाई ।
मनमाही वोहि आई, त्रेपन किरिया सुख दाई ॥८४
इह कथा सस्कृत केरी, भापा रचिहो शुभ वेरी ।
कछु अवर ग्रथ ते जानी, नानाविध किरिया आनी ॥८५
धर क्रियाकोप तिस नाम, पूरण करिहो अभिराम ।
जिम मूढ समुद्र अवगाहै, जिन भुजतें उतरो चाहै ॥८६
गिरि परि तरु को फल जानी, कुब्जक मनि तोरन ठानी,
शशि नीर कुड के माही, करतें शशि-बिम्ब गहाही ॥८७

तिम सज्जन मुझको भारी, हसिहै संशय नहिं कारी।
बुधजन मो क्षिमा करीजे, मेरो कछु दोष न लीजे ॥८८
जो अशुद्ध होय पद याही, शुध करि पढियो भवि ताही।
अधिको नहिं कहनो जोग, बुधजन को यही नियोग ॥८९

अडिल्ल

किसन सिंह इह अरज करै सब जन सुनो,
कर मिथ्यात को नाश निजातम पद सुनो।
क्रिया सहित व्रत पाल करण बश कीजिये,
अनुक्रम लहि शिव थान शास्वता जीजिए ॥९०

॥ सवैया इकतीसा ३१ ॥

सत्रह सौ सम्बत् चौरासी यासु भादों मास वर्षारितु स्वेत तिथि पून्यो रविवार है।
शतिभिषा रवि धृतनाम जोग कुम्भ ससि सिंघको दिनेस मूहरत अति सार है ॥
ढुंढाहर देस जान बसे सागानेर थान जैसिंह सवाई महाराज नीति धार है।
ताके राज-समय परिपूरण की इह कथा भव्यनि को हिरदय हुलास देनहार है ॥९१
द्वैसे चौवन पैंतीस इकतीसा मरहटा पचास पांच से बीस ठाने हैं।
सातसै छाणवे सु चौपई छबीस छप्पै पद्धडी पैंतीस तेरा सोरठा बखाने हैं ॥
अडिल्ल बहत्तर नाराच आठ गीता दस कुण्डलिया तीन छह तेईसा प्रमान है।
द्रुत विलंबित्त चार आठ हे भुजंगी तीन त्रोटक त्रिभंगी नव छन्द ऐते आने हैं ॥९२

॥ सवैया तेईसा २३ ॥

छन्द कहे इस ग्रन्थ मझार लीए गनि जे उक्त च धराई,
दोय हजार मही लखि घाट पचसीय एह प्रमान कराई।
जो न मिलै तुक अक्षर मात तदा पुनरुक्त न दोष ठराही,
तो मुझको लखि दीन प्रवीन दसो मति मे तुम पाय पराही ॥९३
ग्रन्थ लिखै इह लेखक को इक है मरयाद सिलोक किता है,
छन्दनि के सब अक्षर जोरि रूप ध्वनि अंक जु मांधि तिठी है।
ते सब वर्ण वतीस प्रमाण श्लोकनि की गणती जुड़ती हैं,
दोय हजार परी नवसे लखि लेहु जिके भवि शुद्धमती है ॥९४

छप्पय छन्द

मंगल श्री अरिहंत सिद्ध मंगल सिव-दायक,
आचारज उवझाय साधु गुरु मंगल-लायक।
मंगल जिनमुख खिरी दिव्य धुनि मय जिनवाणी,
मंगल श्रावक नित्य समकिती मंगल जानी।
मंगल जु ग्रन्थ इह जानियो, वक्ता-मुख मंगल सदा।
श्रोता जु सुनै निज गुण मुनैं, मंगल कर तिनको सदा ॥९५

दोहा

किसनसिंह कवि वीनती, जिन श्रुत गुरु मो एह ।
मगल निज तन सुपद लखि, मुझहि मोक्ष पद देह ।।९६

चौपाई

जब लो धर्म जिनेश्वर सार, जगत माहि वरते सुखकार ।
तब लो विस्तारो यह ग्रन्थ, भविजन सुर-शिव-दायक पथ ।।९७

इति श्री क्रियाकोष भाषा मूल त्रेपन क्रिया ते आदि दे
और ग्रन्थो की साख का मूल कथन ऊपर व्रत सम्पूर्णम् ।।

७

श्री दौलतराम कृत क्रियाकोष

मंगलाचरण

दोहा

प्रणमि जिनन्द मुनिंद को नमि जिनवर-मुख वानि ।
क्रियाकोष भाषा कहू, जिन आगम परवानि ॥१
मोक्ष न आतम-ज्ञान विन, क्रिया ज्ञान विन नाहि ।
ज्ञान विवेक विना नही, गुन विवेक के माहि ॥२
नहि विवेक जिनमत विना, जिनमत जिन विन नाहि ।
मोक्ष मूल निमल महा, जिनवर त्रिभुवन माहि ॥३
तातें जिनको वन्दना, हमरी वारवार ।
जिनतैं आपा पाइये, तीन भुवन मे सार ॥४
द्वीप अढाई के विर्षे, आरज क्षेत्र अनूप ।
सौ ऊपर सत्तरि सवे, व्रतभूमि शुभरूप ॥५
जिनमे उपजे जिनवरा, व्रतविधान निरूप ।
कवहूँ इक इक क्षेत्र मे, इक इक ह्वै जिनभूप ॥६
तव सत्तरि सौं ऊपरें, उतकिष्टे भुवनेस ।
तिनमे महा विदेह मे, अस्सी दूण असेस ॥७
भरतैरावत क्षेत्र दस, तिनके दस जिनराय ।
ए दस अर वे सर्व ही, सौ सत्तरि सुखदाय ॥८
घटि ह्वै तौ जिन बीसतें, घटै न काहू काल ।
पच विदेह विषै महा, केवल रूप विशाल ॥९
चलै धर्म द्वय सासता, यति श्रावक व्रतरूप ।
टलै पाप हिंसादिका, उपजें पुरुप अनूप ॥१०
कालचक्र की फिरणि विन, कुलकर तहा न होय ।
नाहि कुलिगम वर्त्ति है, तातें रुद्र न जोय ॥११
तीर्थाधिप चक्री हल, हरि प्रतिहरि उपजन्त ।
इन्द्रादिक आवें जहा, करें भक्ति भगवन्त ॥१२
तीर्थंकर अर केवली, गणधर मुनि विहरन्त ।
जहा न मिथ्यामारगी, एक धर्म अरहन्त ॥१३
तात मात जिनराज के, अर नारद फुनि काम ।
परगट पुरुप पुनीत वहु, शिवगामी गुण धाम ॥१४
हूवें विदेह मुनिवर जहा, पच महाव्रत धार ।
तातें महाविदेह मे, सत्यारथ सुखकार ॥१५

भरतैरावत दस विषे, कालचक्र है दोय ।
अवसर्प्पिणी उतसर्प्पिणी, पट् पट् काला सोय ॥१६
तिनमे चौथे काल ही, उपजें जिन चौबीस ।
द्वादश चक्री नव हली, हरि प्रतिहरि अवनीस ॥१७
त्रिसठि सलाका पुरुष ए, जिन मारग धर वीर ।
इनमे तीर्थंकर प्रभू, और भक्ति वर वीर ॥१८
तात मात जिनदेव के, चौवीसा चौवीस ।
नौ नारद चौदा मनू, कामदेव चौवीस ॥१९
एकादश रुद्र महा, इत्यादिक पद धार ।
उपजें चौथे काल ही, ए निश्चय उर धार ॥२०
या विध भए अनन्त जिन, होसी देव अनन्त ।
सवको मारग एक ही, ज्ञान क्रिया वुधिवन्त ॥२१
सव ही शान्ति-प्रदायका, सवही केवल रूप ।
सव ही धर्म-निरूपका, हिंसा-रहित सरूप ॥२२
सवही आगम भासका, सव अध्यातम मूल ।
युक्ति-मुक्ति-दायक सवे, ज्ञायक सूक्षम थूल ॥२३
वरणन मे आवें नही, तीन काल के नाथ ।
सव क्षेत्र के जिनवरा, नमो जोरि जुग हाथ ॥२४
भरत क्षेत्र यह आपनो जम्बूद्वीप मझारि ।
ताके मैं चौवीसिका, वन्दू श्रुत-अनुसारि ॥२५
निर्वाणादि भये प्रभू, निर्वाणी चौवीस ।
ते अतीत जिन जानिये, नमो नाय निज शीस ॥२६
जिन भाष्यौ द्वै विधि धरम, परम धाम को मूल ।
यति श्रावक के भेद करि, इक सूक्षम इक थूल ॥२७
वहुरि वर्तमाना जिना, रिषभादिक चौवीस ।
नमो तिनें निज भाव करि, जिनके राग न रीस ॥२८
तिनहूँ सो ही भापियो, द्वै विधि धर्म विसाल ।
महाव्रत अणुव्रतमय, जीवदया प्रतिपाल ॥२९
वहुरि अनागत काल मे होगे तीरथनाथ ।
महापद्म प्रमुख प्रभु, चौवीसा वडहाथ ॥३०
तातें सो ही भासि है, जे जो अनादि प्रवन्ध ।
सवको मेरी वन्दना, सवको एक निवन्ध ॥३१
चौवीसी तीनू नमू, नमो तीस चौवीस ।
सीमधर आदिक प्रभू, नमन करो पुनि वीस ॥३२
पन्द्रा कर्मधरा सवै, तिनमे जे जिनराय ।
अर सामान्य जु केवली, वर्ते निमल काय ॥३३

तिन सबको परणाम करि, प्रणमो सिद्ध अनत ।
आचारिज उपाध्याय को, बिनऊ साधु महन्त ।।३४
तीन काल के जिनवरा, तीन काल के सिद्ध ।
तीन काल के मुनिवरा, वदो लोक प्रसिद्ध ।।३५
पच परमपद-पद प्रणमि, वन्दो केवलवानि ।
वदो तत्त्वारथ महा, जैनधम गुण-खानि ।।३६
सिद्धचक्रकू वदिकै सिद्धमत्रकू वदि ।
नमि सिद्धान्त-निबन्धको, समयसार अभिनदि ।।३७
वदि समाधि तन्त्रकू , नमि समभाव-सरूप ।
नमोकारकू करि प्रणति, भाषो व्रत्त अनूप ।।३८
चउ अनुयोगर्हि वदिकें, चउ सरणा ले सुद्ध ।
चउ उत्तम मगल प्रणमि, कहूँ क्रिया अविरुद्ध ।।३९
देव-धर्म गुरु प्रणति करि, स्यादवाद अवलोकि ।
क्रियाकोष भाषा कहू, कु दकु द मुनि ढोकि ।।४०
अरचो चरचा जैनकी चरचो चरचा जैन ।
क्रोध लोभ छल मोह मद, त्यागि गहूँ गुन वैन ।।४१
कृत्रिम और अकृत्रिमा जिनप्रतिमा जिनगेह ।
तिन सबकू परणाम करि, धारू धम सनेह ।।४२
गाऊ चउविधि दान शुभ, गाऊ दसधा धर्म ।
गाऊ षोडश भावना, नमि रतनत्रय धर्म ।।४३
स्तवऊ सव यतीसुरा, विनऊ आर्या सव ।
सब श्रावक अर श्राविका, नमन करो तजि गर्व ।।४४
करो बीनती मना धर, समदृष्टिसो एह ।
अपनो सौं धीरज मुझे, देहु धम मे लेह ।।४५
लोक-शिखर पर थान जो मुक्ति क्षेत्र सुख-धाम ।
जहा सिद्ध शुद्धातमा, तिष्ठे केवल राम ।।४६
नमो नमो ता क्षेत्र को, जहा न कोई उपाधि ।
आधि व्याधि असमाधि नहिं, वरतै परम समाधि ।।४७
प्रणमि ज्ञान कैवल्य को केवलदशन ध्याय ।
यथाख्यात चारित्रकू वदो सीस नमाय ।।४८
प्रणमि सयोगिस्थानको, नमि अजोग गुणथान ।
क्षायिक सम्यक वदिकै, वरणो व्रतविधान ।।४९
वन्दो चउ आराधना, वदो उपशमभाव ।
जाकरि क्षायिकभाव ह्वै, होय जीव जिनराव ।।५०
मूलोत्तर गुण साधुके, ह्वै जिनकरि जन सिद्ध ।
तिनकू वदि कहूँ क्रिया, त्रेपन परम प्रसिद्ध ।।५१

जहा मुनी निजध्यान करि, पावें केवलज्ञान।
वदो ठौर प्रशस्त जो, तीरथ महानिवान ॥५२
जा थानकसो केवली, पहुँचे पुर निर्वाण।
वदो धाम पुनीत जो, जा सम थान न आन ॥५३
तीर्थंकर भगवान के, वदो पच कल्याण।
और केवली को नमो, केवल अर निर्वाण ॥५४
नमो उभैविधि धर्म को, मुनि श्रावक निरधार।
धर्म मुनिन को मोक्ष दे, काटे कर्म अपार ॥५५
तातें मुनि-मत अति प्रवल, वार-वार थुति जोग।
धन्य धन्य मुनिराज ते, तजें समस्त अजोग ॥५६
पर परणति जे परिहरें, रम ध्यान मे धीर।
ते हमकू निज दास करि, हरौ महा भव-पीर ॥५७
मुनि की क्रिया विलोकि कैं, हम पैं वरनि न जाय।
लौकिक क्रिया गृहस्थ की, वरणू मुनि-गुण ध्याय ॥५८
यतिव्रत ज्ञान विना नही, श्रावक ज्ञान विना न।
वुद्धिवत नर ज्ञान विन खोवें वादि दिनान ॥५९
मोक्ष मारगी मुनिवरा, जिनकी सेव करेय।
सो श्रावक धनि धन्य है, जिनमारग चित्त देय ॥६०
जिन-मदिर जो शुभ रचे, अरचै जिनवर देव।
जिनपूजा नित-प्रति करै, करै साधुकी सेव ॥६१
करै प्रतिष्ठा परम जो, जात्रा करैं सुजान।
जिन शासन के ग्रन्थ शुभ, लिखवावें मतिमान ॥६२
चउविधि सघतणो सदा, सेवा धारे वीर।
पर उपकारी सव की, पीडा हरे जु वीर ॥६३
अपनी शक्ति प्रमाण जो, धारैं तप अर-दान।
जीवमात्र को मित्र जो, शीलवन्त गुणवान ॥६४
भाव शुद्ध जाके सदा, नहि प्रपच को लेश।
पर-धन पाहन सम गिनै, तृष्णा तजी विशेष ॥६५
तातें गृहपति हू प्रवल, ताकी क्रिया अनेक।
जिनमे त्रेपन मुख्य है, तिनमे मुख्य विवेक ॥६६
नमस्कार गुरुदेव को, जे सव रीति कहेय।
जिनवानी हिरदे धरी, ज्ञानवन्त व्रत लेय ॥६७
क्रियाकाड को करि प्रणति, भाषो किरिया कोष।
जिनशासन अनुसार शुभ, दयारूप निरदोष ॥६८
प्रथमहि त्रेपन जे क्रिया, तिनके वरणो नाम।
ज्ञान-विराग-सरूप जे, भविजनकू विश्राम ॥६९

त्रेपन क्रिया

गाथा—गुण-वय-तव-सम-पडिमा, दाण जलगालण च अणत्थमिय।
दसण णाण चरित्त किरिया तेवण्ण सावया भणिया ॥१

चौपाई

गुण कहिये अठमूल जु गुणा, वय कहिये व्रत द्वादस गुणा।
तव कहिये तप बारह भेद, सम कहिये समदृष्टि अभेद ॥७०
पडिमा नाम प्रतिज्ञा सही, ते एकादस भेद जु लही।
दाण कहिये दान जु चार, अर जलगालण रीति विचार ॥७१
निसिको खान-पान नहिं भला, अन्न औषधी दूध न जला।
रात्रि विषें कछू लेवौ नाहिं, अति हिंसा निसि-भोजन माहिं ॥७२
कह्यौ "अणत्थमिय" शब्द जु अर्थ, निसि भोजन सम नाहिं अनर्थ।
दसण णाण चरित्र जु तीन ए त्रेपन किरिया गिणि लीन ॥७३
प्रथमहिं आठ मूलगुण कहो, गुण-परसाद विषाद न कहो।
मद्य मास मधु मोटे पाप, इन करि पावे अतुलित ताप ॥७४
बर पीपर पाकर नहिं लीन, ऊमर और कठूमर हीन।
तीन पच ए आठो वस्तु, इनको त्यागे सकल प्रशस्त ॥७५
मन-वच-काय तजो नर नारि, कृत-कारित-अनुमोद विचारि।
जिनमे इनको दोष जु लगे, तिन वस्तुनितें बुधजन भगें ॥७६
अमल जाति सबही नहिं भक्ष, लगै मद्यको दोष प्रत्यक्ष।
रस चलितादिक सडिय जु वस्तु, ते सब मदिरा तुल्यउ वस्तु ॥७७
जाये खाये मन ठोक न रहै, सो सब मदिरा दूषण लहै।
अर्क अनेक भातिके जेह, खइबे मे आवत है तेह ॥७८
आली वस्तु रहै दिन घना, तामे दोष लगै मदतना।
अब सुनि आमिष दोष जु भया, चर्मादिक घृत तेल न लया ॥७९
हीग कदापि न खावन बुधा, बोधौ सीधौ भखिवौ मुधा।
चून चालियो चलनी चाम, नीच जाति पीस्यौ हु न काम ॥८०
फूल आयो धान अखान, फूल्यौ साग तजो मतिवान।
कन्द अथाणा माखन त्याग, हाट मिठाई तज बडभाग ॥८१
निसि भोजन अणछण्यू नीर, आमिष तुल्य गिनें वर-वीर।
निसि पीस्यौ निसि राध्यौ होय, हाड चाम को परस्यो जोय ॥८२
मास अहारी के घर तनी, सो सब मास समानहिं गिनो।
विकलत्रय अर तिर नर जेह, तिनको मास रुधिरमय जेह ॥८३
तजौ सवे आमिष अघ-खानि, या सम पाप न और प्रमानि।
त्यागौ सहत जु मदिरा सभा, मधु दोउको नाम निरभ्रमा ॥८४
अर जिन वस्तुनि मे मधुदोप, सो सब तजहु पापगण-पोप।
काकिब और मुरब्बा आदि, इनहिं खाहिं तिनको व्रत वादि ॥८५

मधु मदिरा पल जे नर गहे, ते शुभ गतिते दूरहिं रहैं ।
नरक निगोद माहिं दुख सहे, अतुल अपार त्रासना लहे ॥८६
ताते तीन मकार विकार, मद्य मास मधु पाप अपार ।
ये तीनो औ पच कुफला, तीन पाँच ये आठो मला ॥८७
इन आठो में अगणित त्रसा, उपजे मरण करे परवसा ।
जीव अनता वहुत निगोद, ताते कृत कारित अनुमोद ॥८८
इनको त्याग किये वसु मूल गुणा होंहि अघते पतिकूल ।
पाच उदम्बर तीन मकार, इनसे पाप न और प्रकार ॥८९
वार-वार इनको धिक्कार, जो त्यागे सो धन्य विचार ।
इन आठनिसे चौदा और, भखे सु पावे अति दुख ठौर ॥९०॥
वहुत अभक्षनमें वाईस, मुख्य कहे त्यागे व्रतईस ।
ओला नाम वडा जु वखानि, जीव-रासि भरिया दुख-खानि ॥९१
अणछणया जलके वँधाण, दोप करे जसे सधाण ।
भखे पाप लागे अधिकाय, ताते त्याग करो सुखदाय ॥९२
घोल वडा में दूपण वडा, खाहिं तिके जाणे अति जडा ।
दही मही मे विदल जु वस्तु, खाये सुकृत जाय समस्त ॥९३
तुरत पचेन्द्री उपजे तहा, विदल दही मुख म ले जहा ।
अन्न मसूर मूग चणकादि मोठ उडद मटूर तूरादि ॥९४
अर मेवा पिस्ता जु वदाम, काजू चारोली अति नाम ।
जिन वस्तुनि की ह्वै द्वै दाल, सो मो मव दधि भेला टालि ॥९५
जानि निशाचर जे निशि चरें, निशि-भोजन करि भव दुख करें ।
ताते निशि-भोजन तजि भया, जो चाहे जिनमारग लया ॥९६
दोय मुहूरत दिन जब रहै, तवतें चउविहार वुध गहै ।
जौलौं जुगल मुहूरत दिना, चढि है तौलौं अनसन गिना ॥९७
रात-चसौं अर रातहिं कियो, रात-पिस्यौ कवहूँ नहिं लियो ।
जहा होय अधेरो वीर, तहा दिवस हू असन न वीर ॥९८
दृष्टि देखि भोजन करि शुद्ध, दृष्टि देखि पग धरहु प्रवुद्ध ।
वहुवीजा जामे कण घणा, ते फल कुफल जिनेसुर भणा ॥९९
प्रगट तिजारा आदिक जेह, वहुवीजा त्यागो सव तेह ।
वेंगण जाति सकल अघ-खानि, त्याग करो जिन आज्ञा मानि ॥१००
सधाणा दोषीक विसेस, सो भव्या छाडो जु असेस ।
ताके भेद सुनो मन लाय, सुनि यामे उपजें अधिकाय ॥१०१
अत्थाणा सधाणा मथाण, तीन जाति इनकी जु वखानि ।
राई लूणी कलजी आदि, अवादिक में डारहिं वादि ॥१०२
नाखि तेल में करहिं अथाण, या मम दोष न सूत्र प्रमाण ।
त्रस जीवा तामें उपजन्त, मखिया आमिप दोष लहन्त ॥१०३

त्रेपन क्रिया

गाथा—गुण-वय-तव-सम-पडिमा, दाण जलगालण च अणत्थमिय।
दसण णाण चरित्त किरिया तेवण्ण सावया भणिया ॥१

चौपाई

गुण कहिये अठमूल जु गुणा, वय कहिये व्रत द्वादस गुणा।
तव कहिये तप बारह भेद, सम कहिये समदृष्टि अभेद ॥७०
पडिमा नाम प्रतिज्ञा सही, ते एकादस भेद जु लही।
दाण कहिये दान जु चार, अर जलगालण रीति विचार ॥७१
निसिको खान-पान नहिं भला, अन्न औषधी दूध न जला।
रात्रि विषें कछू लेवौ नाहिं, अति हिंसा निसि-भोजन माहिं ॥७२
कह्यौ "अणत्थमिय" शब्द जु अर्थ, निसि भोजन सम नाहिं अनर्थ।
दसण णाण चरित्र जु तीन ए त्रेपन किरिया गिणि लीन ॥७३
प्रथमहिं आठ मूलगुण कहो, गुण-परसाद विषाद न कहो।
मद्य मास मधु मोटे पाप, इन करि पावे अतुलित ताप ॥७४
बर पीपर पाकर नहिं लीन, ऊमर और कठूमर हीन।
तीन पच ए आठो वस्तु, इनको त्यागे सकल प्रशस्त ॥७५
मन-वच-काय तजौ नर नारि, कृत-कारित-अनुमोद विचारि।
जिनमे इनको दोष जु लगै, तिन वस्तुनितें बुधजन भगें ॥७६
अमल जाति सबही नहिं भक्ष, लगै मद्यको दोष प्रत्यक्ष।
रस चलितादिक सडिय जु वस्तु, ते सब मदिरा तुल्यउ वस्तु ॥७७
जाये खाये मन ठीक न रहै, सो सब मदिरा दूषण लहै।
अर्क अनेक भातिके जेह, खइबे मे आवत है तेह ॥७८
आली वस्तु रहै दिन धना, तामे दोष लगै मदतना।
अब सुनि आमिष दोष जु भया, चर्मादिक धृत तेल न लया ॥७९
हीग कदापि न खावन बुधा, बीधौ सीधौ भखिवौ मुधा।
चून चालियो चलनी चाम, नीच जाति पीस्यौ हु न काम ॥८०
फूल आयौ धान अखान, फूल्यौ साग तजौ मतिवान।
कन्द अथाणा माखन त्याग, हाट मिठाई तज बडभाग ॥८१
निसि भोजन अणछण्यू नीर, आमिष तुल्य गिनें वर-वीर।
निसि पीस्यौ निसि राध्यौ होय, हाड चाम को परस्यो जोय ॥८२
मास अहारी के घर तनी, सो सब मास समानहिं गिनो।
विकलत्रय अर तिर नर जेह, तिनको मास रुधिरमय जेह ॥८३
तजौ सबै आमिष अघ-खानि, या सम पाप न और प्रमानि।
त्यागौ सहत जु मदिरा समा, मधु दोउको नाम निरभ्रमा ॥८४
अर जिन वस्तुनि मे मधुदोष, सो सव तजहु पापगण-पोप।
काकिब और मुरब्बा आदि, इनहिं खाहि तिनको व्रत बादि ॥८५

मधु मदिरा पल जे नर गहे, ते शुभ गतितें दूरहिं रहे।
नरक निगोद माहिं दुख सहे, अतुल अपार त्रासना लहे ॥८६
तातें तीन मकार विकार, मद्य मांस मधु पाप अपार।
ये तीनो औ पंच कुफला, तीन पांच ये आठों मला ॥८७
इन आठों मे अगणित त्रसा, उपजै मरण कर परवसा।
जीव अनंता बहुत निगोद, ताते कृत कारित अनुमोद ॥८८
इनको त्याग किये वसु मूल गुणा होंहिं अघतें प्रतिकूल।
पांच उदम्बर तीन मकार, इनसे पाप न और प्रकार ॥८९
बार-बार इनको धिक्कार, जो त्यागें सो धन्य विचार।
इन आठनिसें चौदा और, भखें सु पावें अति दुख ठौर ॥९०॥
बहुत अभक्षनमें बाईस, मुख्य कहे त्यागें व्रतईस।
ओला नाम बडा जु बखानि, जीव-रासि भरिया दुख-खानि ॥९१
अणछणया जलके बंधाण, दोष करै जैसे सधाण।
भखै पाप लागे अधिकाय, ताते त्याग करौ सुखदाय ॥९२
घोल बड़ा में दूषण बडा, खाहिं तिके जाणें अति जडा।
दही मही मे विदल जु वस्तु, खाये सुकृत जाय समस्त ॥९३
तुरत पंचेन्द्री उपजे तहा, विदल दही मुख मे ले जहा।
अन्न मसूर मूंग चणकादि मोठ उड़द मट्टर तूंगादि ॥९४
अर मेवा पिस्ता जु बदाम, काजू चारौली अति नाम।
जिन वस्तुनि की ह्वै द्वै दाल, सो सो सब दधि भेला टालि ॥९५
जानि निशाचर जे निशि चरें, निशि-भोजन करि भव दुख करें।
ताते निशि-भोजन तजि भया, जो चाहे जिनमारग लया ॥९६
दोय मुहूरत दिन जब रहै, तबतें चउविहार बुध गहै।
जौलौं जुगल मुहूरत दिना, चढि है तौलौं अनसन गिना ॥९७
रात-बसौं अर रातहिं कियो, रात-पिस्यौ कबहूं नहिं लियौ।
जहा होय अंधेरो वीर, तहा दिवस हू असन न वीर ॥९८
दृष्टि देखि भोजन करि शुद्ध, दृष्टि देखि पग धरहु प्रबुद्ध।
बहुबीजा जामे कण घणा, ते फल कुफल जिनेसुर भणा ॥९९
प्रगट तिजारा आदिक जेह, बहुबीजा त्यागौ सब तेह।
बेंगण जाति सकल अघ-खानि, त्याग करौ जिन आज्ञा मानि ॥१००
सधाणा दोषीक विसेस, सो भव्या छाडौ जु असेस।
ताके भेद सुनो मन लाय, सुनि यामे उपजें अधिकाय ॥१०१
अत्थाणा सधाणा मथाण, तीन जाति इनकी जु बखानि।
राई लूणी कलजी आदि, अन्नादिक में डारहिं वादि ॥१०२
नाखि तेल में करहिं अथाण, या सम दोष न सूत्र प्रमाण।
त्रस जीवा तामें उपजन्त, मखिया आमिष दोष लहन्त ॥१०३

नीवू आम्रादिक जे फला, लूण माहिं डारै नहिं भला ।
याको नाम होय सधाण, त्यागें पण्डित पुरुष सुजाण ॥१०४
अथवा चलित रसा सब वस्त, सधाणा जाणो अप्रशस्त ।
बहुरि जलेबी आदिक जोय, डोहा राव मथाणा होय ॥१०५
लूण छाछि माही फल डारि, केर्यादिक जे खाहि गवारि ।
तेहि विगारें जन्म स्वकीय, जैसें पापी मदिरा पीय ॥१०६
अब सुनि चन तनी मरजाद, भाषै श्री गुरुजी अविवाद ।
शीतकाल म सातहि दिना, ग्रीषम मे दिन पाचहिं गिना ॥१०७
वरषा रितु माही दिन तीन आगे सधाणा गण लीन ।
मरजादा बीतें पकवान, सो नही भक्ष कहे भगवान ॥१०८
ताहि भखें जु असूत्री लोक, पावै दुरगति मे दुख शोक ।
मर्यादा की विधि सुनि धीर, जो भाषी गौतम प्रति वीर ॥१०९
जामें अन्न जलादिक नाहि, कछु सरदी जामाहि नाहि ।
बूरा और बतासा आदि, बहुरि गिंदौडादिक जु अनादि ॥११०
ताकी मर्यादा दिन तीस, शीतकाल मे भापी ईश ।
ग्रीष्म पदरा वर्षा आठ, यह धारी जिनवाणी पाठ ॥१११
अर जो अन्नतणो पकवान, जलको लेश जु याहे जान ।
आठ पहर मरजादा तास, भाषें श्री गुरु धर्म प्रकाश ॥११२
जल-वर्जित जो चूनहि तनी, घृत मीठी मिलिकै जो बनी ।
ताकी चून समानहि जानि, मरजादा जिन-आज्ञा मानि ॥११३
भुजिया वडा, कचौरी पुवा, मालपुवा घृत तेलहि हुवा ।
इत्यादिक है अवरहु जेह, लुचई सीरा पूरी एह ॥११४
ते सब गिनौ रसोई समा, यह उपदेश कहे पति रमा ।
दारि भात कडही तरकारि, खिचडी आदि समस्त विचारि ॥११५
दोय पहर इनकी मरजाद, आगे श्री गुरु कहे अखाद ।
केई नर सधारक त्यागि, ल्यू जी खाँय सवादहि लागि ॥११६
केरी नीबू आदि उकालि, नाना विधि सामग्री घालि ।
सरस्यू केरी तेल तपाय, तामे तलें सकल समुदाय ॥११७
जिह्वालपट बहु दिन राख, खाय तिन्हे मतिमद जु भाख ।
तरकारी सम ल्यू जी एह, आगे सधाणा समुझेह ॥११८
अणजाण्यू फल त्यागहु मित्र, अणछाण्यो जल ज्यो अपवित्र ।
त्यागौ कदमूल बुधिवत्त, कदमूल मे जीव अनत ॥११९
गारि न कवहूँ भखहु गुणवन्त, गारी कवहु न काढउ मत ।
हरी गारि मे जीव असख, निन्दैं साधु अशाक, अकख ॥१२०
जा खाये छूटें निज प्राण, सो विपजाति अभक्ष प्रवान ।
आफू और महोरा आदि, तजी सकल मुनि सूत्र अनादि ॥१२१

काचो माखण अति हि सदोप, भखिया करै सर्व शुभ सोग्व ।
पहले आमिप दूपण माहिं, पुनि-पुनि निन्द्यो सशय नाहिं ॥१२२
फल अति तुच्छ खाहु मति वीर, निन्दे महावीर जगवीर ।
पालौ राति जमावै कोय, ताहि भखत दुरगति फल होय ॥१२३
निज सवाद तजि ह्वै विपरीत, सो रस-चालित तजो भवभीत ।
आगें मदिरा दूपण मही, निंद्यौ ताहि सु वुध नहि गहै ॥१२४
ए वाईस अभख तजि सखा, जो चाहौ अनुभव रस चखा ।
अवर अनेक दोपके भरे, तजो अभख भव्यनि परिहरे ॥१२५
फूल जाति सव ही दोपीक, जीव अनन्त फिरे तहकीक ।
कवहु न इनको सपरस करौ, इह जिन आज्ञा हिरदै धरौ ॥१२६
खावौ और सूंघिवौ सदा, इनकू तजहु न ढाकहु कदा ।
शाक पत्र सव निंद वखानि, त्याग करौ जिन आज्ञा मानि ॥१२७
नेम धर्म व्रत राख्यौ चहै, तौ इन सवकू कवहु न गहै ।
झाड तनें वड वोरि जु तनें, तजौ वौर त्रस जीव जु घनें ॥१२८
पेठा और कोहला तजौ, तजि तरवूज जिनेसुर भजौ ।
जावू और करोदा जेहु, दूध झरै त्यागौ सहु तेह ॥१२९
कन्द शाक दल फल जु त्यागि, साधारण फलतें दुर भागि ।
जो प्रत्येकहु छाडै वीर, ता सम और न कोई धीर ॥१३०
जो प्रत्येक न त्यागे जाय, तौ परमाण करो सुखदाय ।
तेहु अलप ही कवहुक खाय, नहिं तोडे न तुडावन जाय ॥१३१
ताजा ले वासी नहि भखै, रस चलितादिक कवहुँ न चखै ।
हरित कायसो त्यागै प्रीति, सो जानें जिन-मारग रीति ॥१३२
जे अनन्तकाया दुखदाय, सव साधारण त्यागौ राय ।
तजि केदार तूवडी सदा, खाहु म नाली ढिस तुम कदा ॥१३३
कचनारादिक डोडी तजौ, तजि अण फोडयो फल जिन भजौ ।
पहली विदलतनू अति दोष, भाख्यौ भेद सुनहु तजि रोप ॥१३४
अन्न मसूर मूग चणकादि, तिनकी दालि जु होय अनादि ।
अर मेवा पिस्ता जु निदाम, चारौली आदिक अतिनाम ॥१३५
जिन जिन वस्तुनि की है दालि, सो सो सव दधि मेला टालि ।
अर जो दधि मेलो, मिष्टान तुरतहिं खावा सूत्र प्रमान ॥१३६
अन्तमुहूरत पीछें जीव, उपजें इह गावें जगपीव ।
तातें मीठा जुत जो दही, अन्तमुहूरत्त पहले गही ॥१३७
दधि-गुड खावौ कवहू न जोग, वरजें श्री वस्तु अजोग ।
पुनि तुम सुनहु मित्र इक वात्त, राई लूण मिलैं उतपात्त ॥१३८
तातें दही मही मे करै, तजौ रायता काजी धरै ।
घी ताजा गहिवौ भवि लोय, सूद्रनिको घृत जोगि न होय ॥१३९

नीबू आम्रादिक जे फला, लूण माहिं डारै नहिं भला।
याको नाम होय सधाण, त्यागें पण्डित पुरुष सुजाण ॥१०४
अथवा चलित रसा सब वस्त, सधाणा जाणो अप्रशस्त।
बहुरि जलेबी आदिक जोय, डोहा राव मथाणा होय ॥१०५
लूण छाछि माही फल डारि, केर्यादिक जे खाहिं गवारि।
तेहि विगारें जन्म स्वकीय, जैसें पापी मदिरा पीय ॥१०६
अब सुनि चन तनी मरजाद, भाषै श्री गुरुजी अविवाद।
शीतकाल म सातहि दिना, ग्रीषम मे दिन पाचहिं गिना ॥१०७
वरषा रितु माही दिन तीन, आगे सधाणा गण लीन।
मरजादा बीतें पकवान, सो नही भक्ष कहे भगवान ॥१०८
ताहि भखें जु असूत्री लोक, पावैं दुरगत्ति मे दुख शोक।
मर्यादा की विधि सुनि धीर, जो भाषी गौतम प्रति वीर ॥१०९
जामें अन्न जलादिक नाहिं, कछु सरदी जामाहिं नाहिं।
बूरा और बतासा आदि, बहुरि गिंदौडादिक जु अनादि ॥११०
ताकी मर्यादा दिन तीस, शीतकाल मे भाषी ईश।
ग्रीष्म पदरा वर्षा आठ, यह धारौ जिनवाणी पाठ ॥१११
अर जो अन्नतणो पकवान, जलको लेश जु याहै जान।
आठ पहर मरजादा तास, भापें श्री गुरु धम प्रकाश ॥११२
जल-वर्जित जो चूर्नहि तनी, घृत मीठी मिलिकै जो वनी।
ताकी चून समानहि जानि, मरजादा जिन-आज्ञा मानि ॥११३
भुजिया बडा, कचौरी पुवा, मालपुवा घृत तेलहि हुआ।
इत्यादिक है अवरहु जेह, लुचई सीरा पूरी एह ॥११४
ते सब गिनौ रसोई समा, यह उपदेश कहे पति रमा।
दारि भात कडही तरकारि, खिचडी आदि समस्त विचारि ॥११५
दोय पहर इनकी मरजाद, आगे श्री गुरु कहे अखाद।
केई नर सधारक त्यागि, ल्यू जी खांय सवादहि लागि ॥११६
केरी नीबू आदि उकालि, नाना विधि सामग्री घालि।
सरस्यू केरी तेल तपाय, तामे तलें सकल समुदाय ॥११७
जिह्वालंपट वहु दिन राख, खाय तिन्हे मतिमद जु भाख।
तरकारी सम ल्यू जी एह, आगे सधाणा समुझेह ॥११८
अणजाण्यू फल त्यागहु मित्र, अणछाण्यो जल ज्यो अपवित्र।
त्यागौ कदमूल वुधिवत, कदमूल मे जीव अनत ॥११९
गारि न कवहुं भखहु गुणवन्त, गारी कवहु न काढउ सत।
हरी गारि मे जीव असख, निन्दैं साधु अशक, अकख ॥१२०
जा खाये छूटें निज प्राण, सो विषजाति अभक्ष प्रवान।
आफू और महोरा आदि, तजौ सकल मुनि सूत्र अनादि ॥१२१

काचौ माखण अति हि सदोप, भखिया करै सत्रै शुभ सोख ।
पहले आमिष दूपण माहि, पुनि-पुनि निन्द्यौ सशय नाहि ॥१२२
फल अति तुच्छ खाहु मति वीर, निन्दे महावीर जगवीर ।
पालो राति जमावे कोय, ताहि भखत दुरगत्ति फल होय ॥१२३
निज सवाद तजि ह्वै विपरीत, सो रस-चालित तजो भवभीत ।
आगें मदिरा दूपण महै, निंद्यौ ताहि सु बुध नहि गहै ॥१२४
ए बाईस अभख तजि सखा, जो चाहौ अनुभव रस चखा ।
अवर अनेक दोपके भरे, तजो अभख भव्यनि परिहरे ॥१२५
फूल जाति सब ही दोषीक, जीव अनन्त फिरे तहकीक ।
कबहु न इनको सपरस करौ, इह जिन आज्ञा हिरदै धरौ ॥१२६
खावौ और सूंघिवौ सदा, इनकू तजहु न ढाकहु कदा ।
शाक पत्र सब निंद वखानि, त्याग करौ जिन आज्ञा मानि ॥१२७
नेम धम व्रत राख्यौ चहै, तौ इन सबकू कवहु न गहै ।
झाड तनें बड बोरि जु तनें, तजौ वौर त्रस जीव जु घने ॥१२८
पेठा और कोहला तजौ, तजि तरबूज जिनेसुर भजौ ।
जाबू और करोदा जेहु, दूध झरै त्यागौ सहु तेह ॥१२९
कन्द शाक दल फल जु त्यागि, साधारण फलतें दुर भागि ।
जो प्रत्येकहु छाडै वीर, ता सम और न कोई धीर ॥१३०
जो प्रत्येक न त्यागे जाय, तौ परमाण करौ सुखदाय ।
तेहु अलप ही कबहुक खाय, नहिं तौडै न तुडावन जाय ॥१३१
ताजा ले बासी नहिं भखै, रस चलितादिक कबहूँ न चखै ।
हरित कायसो त्यागै प्रीत्ति, सो जानें जिन-मारग रीति ॥१३२
जे अनन्तकाया दुखदाय, सब साधारण त्यागौ राय ।
तजि केदार तूवडी सदा, खाहु म नाली छिस तुम कदा ॥१३३
कचनारादिक डौंडी तजौ, तजि अण फोडयो फल जिन भजौ ।
पहली बिदलतनू अति दोष, भाख्यौ भेद सुनहु तजि रोष ॥१३४
अन्न मसूर मूग चणकादि, तिनकी दालि जु होय अनादि ।
अर मेवा पिस्ता जु निदाम, चारौली आदिक अतिनाम ॥१३५
जिन जिन वस्तुनि की है दालि, सो सो सब दधि भेला टालि ।
अर जो दधि मेलो, मिष्टान तुरतहिं खावा सूत्र प्रमान ॥१३६
अन्तमुहूरत पीछे जीव, उपजें इह गावें जगपीव ।
तातें मीठा जुत जो दही, अन्तमुहूरत पहले गही ॥१३७
दधि-गुड खावौ कवहु न जोग, वरजें श्री वस्तु अजोग ।
पुनि तुम सुनहु मित्र इक वात, राई लूण मिलें उतपात ॥१३८
तातें दही मही मे करै, तजौ रायता काजी वरै ।
घी ताजा गहिवौ भवि लोय, सूद्रनिको घृत जोगि न होय ॥१३९

स्वाद-चलित जो खावै घीव, सो कहिये अविवेकी जीव ।
घिरत सोधिको लेवौ अल्प, भजिवौ जिनवर त्यागि विकल्प ॥१४०
घृतहू छाडै तौ अति तपा, नीरस तप धरि श्रीजिन जपा ।
सिंधव लोन व्रतिनिको लेन, कृत्रिम लोन सबै तजि देन ॥१४१
जो सिंधवहू त्यागै भया, महा तपस्वी श्रुत मे लया ।
अब तुम गोरस की विधि सुनो, जिनवर की आज्ञा उर गुणो ॥१४२
दोहत जब महिषी अर गाय, तबतें इह मरजाद गहाय ।
काचौ दूध न राखै सुधी, ह्वै घटिका राखैं तौ कुधी ॥१४३
काचौ दूध न लेवौ वीर, अणछाण्यू पय तजिवो धीर ।
अतर एक मुहूरत बसा, उपजे जोव असखित त्रसा ॥१४४
जाको पय ह्वै तैसे जीव, प्रगटें इह भावे जगपीव ।
पचेन्द्री सम्मूर्छन प्राणि, भैया तू जिनवचन प्रवाणि ॥१४५
इह तो दूध तणी विधि कही, अब सुनो दही महीकी सही ।
जामण दीयौ ह्वै जिह दिना, ताके दूजौ दिन शुभ गिना ॥१४६
पीछे दधि खावौ नहि जोगि, इह भाषें जिनराज अरोगि ।
दधि को मथियौ पानी डारि, ताको नाम जु छाछि विचारि ॥१४७
ताही दिवस होय सो भक्ष, यह जिन आज्ञा हैं परतक्ष ।
मथता ही जा माही तोय, बहुर्यो वारि न डार्यो होय ॥१४८
माथिया पाछे काचौ वारि, नाख्यौ सो लेवौ जु विचारि ।
जेतो काचा जलको काल, तेतौ ही ताको जु विचारि ॥१४९
छणयू जल सो काचौ रहै, एक मुहूरत जिनवर कहै ।
आगें त्रसजीवा उपजत, अणछणया को दोष लगत ॥१५०
तिक्त कषाय मिल्यौ जो नीर, सो प्राशुक भाख्यौ जिन वीर ।
दोय पहर पहिली ही गहौ, यह जिन आज्ञा हिरदै बहो ॥१५१
तातौ जल जो भात उकाल, आठ पहर मरजादा काल ।
आगे सनमूर्छन उपजाहिं पीवत धर्मध्यान सब जाहिं ॥१५२

दोहा

अघ-तरुवर को मूल इह, मोह मिथ्यात जु होय ।
राग द्वेष कामादिका, ए सकध वहु जोय ॥१५३
अशुभ क्रिया शाखा घनी, पल्लव चचल भाव ।
पत्र असजम अव्रता छाया नाहि लखाव ॥१५४
इह भव दुख भाखै पहुप, फल निगोद नरकादि ।
इह अघ-तरु को रूप है, भव-वन माहि अनादि ॥१५५

चौपाई

क्रिया कुठार गहै कर कोय, अघ-तरुवरको काटै सोय ।
जे वेचें दधि और जु मठा, उदर भरण के कारण शठा ॥१५६

तिनको मोल लेय जे खाहिं, ते नर अपनो जन्म नसाहिं।
तातै मोललनो दधि तजो, यह गुरु आज्ञा हिरदै भजो ॥१५७
दधी जमावै जा विधि व्रती, सो विधि धारहु भापहिं जती।
दूध दुहाकर ल्यावै जबै, ततछिन अगनि चढावै तबै ॥१५८
रूपो गरम करे पयमाहि, जामण देय जु ससै नाहि।
जमे दही या विधि कर जोहु, बाधै कपरा माही सोह ॥१५९
बूंद रहै नहि जल को एक, तबहिं सुकाय धरै सुविवेक।
दहो वडी इह भाषी सही, गृही जमावै तासो दही ॥१६०
अथवा दधि मे रूई भेय, कपरा भेय सुकाय धरेय।
राखै इक द्वै दिन ही जाहि, वहुत दिना राखै नहि ताहि ॥१६१
जल मे घोलिर जामण देय, दधि ले तो या विधि करि लेय।
और भांति लेवौ नहि जोगि, भाखें जिनवर देव अरोगि ॥१६२
शीतकाल की इह विधि कही, उष्णऊ वरपा राखै नही।
जो हि सर्वथा छांडै दधी, तासम और न कोई सुधी ॥१६३
सूद्रतनें पात्रनि को दुग्ध, दधि-घृत-छाछि भखे ते मुग्ध।
उत्तम कुल हू जे मतिहीन, क्रियाहीन जु कुविसन अधीन ॥१६४
तिनके घरको कछहु न जोगि, तिनकी किरिया वहुत अजोगि।
दूध ऊंटणी मेढिन तनो, निद्यो जिनमत माही घनो ॥१६५
गो महिषी विन और न भया, कवहू न लेनो नाही पया।
महिषी दूध प्रमाद करेय, तातें गायनि की पय लेय ॥१६६
नीरसव्रत धर दूधहि तजै, ताते सकल दोप हो भजै।
हाटें विकते चूनरु दालि, बुधजन इनको खावौ टालि ॥१६७
बीधौ खोटौ पीसै दलै, जीवदया कैसे करि पलै।
चूनो सखतणो कसतूरि, इनको निंद कहे जिनसूरि ॥१६८

दोहा

चरम सपरसी वस्तु को, खातें दोष जु होय।
ताको सक्षेपहि कथन, कहो सुनो भवि लोय ॥१६९
मूये पसूके चर्मको, चीरै जो चडार।
ता चडालहि परसिकै, छोति गिनै ससार ॥१७०
तो कैसे पावन भयो, मिल्यौ चम सो जोहि।
आमिप तुल्य प्रभू कहे, याहि तजौ बुध सोहि ॥१७१
उपजैं जीव अपार सुनि, जिनवानी उर धारि।
जा पसुको है चर्म जो, तैसे ही निरधारि ॥१७२
सन्मूर्छन उपजै जिया, तातें जल घृत तेल।
चर्म सपरसे त्यागिये, भाषें साधु अचेल ॥१७३

जैसे सूरज काच के, रूई बीचि धरेय।
प्रगटै अगनि तहाँ सही, रूई भस्म करेय ॥१७४
तैसे रस अर चर्म के जोगै, जिय निपजाहि।
खावे वारे के सकल, धमब्रत लुपि जाँहि ॥१७५
जीमत भोजन के समैं, मुवौ जिनावर देखि।
तजै नही जे असनका, ते दुरबुद्धि विशेखि ॥१७६
जे गँवार पाठातनी, फली खाय मतिहीन।
तिनके घट नहिं समुझि है, यह भावै परवीन ॥१७७

रसोई, परडा, चक्की आदि क्रियाओं का वर्णन। चौपाई

जा घर माँहि रसोई होय, धारे चदवा उत्तम सोय।
वहुरि परडा ऊपर ताणि, उखली चाकी आदिक जाणि ॥१
फटकै नाज बीणिये जहाँ, चून चालिये भैय्या तहाँ।
अर जिह ठौर जीमिये धीर, पुनि सोवे की ठौहर वीर ॥२
तथा जहाँ सामायिक करे, अथवा श्री जिनपूजा धरे।
इतने थानक चदवा होय, दीखै श्रावक को घर सोय ॥३
चाकी अर उखली परमाण, ढकणा दीजै परम सुजाण।
स्वान विलाव न चाटै ताहि, तब श्रावक को धर्म रहाहि ॥४
मूसल धोय जतन सो धरे, निशि घोटन पीसन नहिं करे।
छाज तराजू अर चालणी, चर्मतणी भविजन टालणी ॥५
निशिको पीसै घोटै दलै, जीवदया कबहूँ नहिं पलै।
चाकी गालै चून रहाय, चोटी आदि लगै तसु आय ॥६
निसिको पीसत खबर न परे, तातैं निशि पीसन परिहरे।
तथा रातिको भीज्यौ नाज, खावौ महापाप को साज ॥७
अकूरे निकसैं ता माहिं, जीव अनन्ता सशय नाँहि।
तातै भीज्यौ नाज अखाज, तजौ मित्र अपने सुखकाज ॥८
सुल्यौ सड्यो गडियौ जो धान, फूली आयौ होय नखान।
स्वाद चलित खावौ नहिं वीर, रहिवौ अति विवेकसू धीर ॥९
नहिं छीवे गोवर गोमूत, मल, मूत्रादिक महा अपूत।
छाणा ईंधन काज अजोगि, लकडी हू वीधी नहिं जोग ॥१०
जेती जाति मुरब्बा होय, लेणा एक दिवस ही सोय।
पीछे लागै मधुको दोष तासम और न अध को पोष ॥११
आथाणा का नाम अचार, मखें अविवेकी अविचार।
या सम अणाचार नहिं कोय, याको त्याग करें वुध सोय ॥१२

राह् चल्यौ भोजन मत्ति खाहु, उत्तम कुलको धर्म रखाहु ।
निकट रसोई भोजन करौ, अणाचार सब ही परिहरौ ॥
करौ रसोई भूमि निहारि, जीव-जन्तु की बाधा टारि ॥१३

वेसरी छन्द

दोव खोदि मति करौ रसोई, तहा जीव की हिंसा होई ।
मलिन वस्तु अवलोकन होवे, सो थानक तजि औरहि जोवे ॥१४
नरम पूजणी सो प्रतिलेखै, करै रसोई चर्म न देखै ।
माटी के वासण इक वारा, दूजी विरिया नाही अचारा ॥१५
जो दूजे दिन राखै कोई, सो नर सूद्रनि सदृश होई ।
मिटै न सरदी करै न कोई, मिट्टी के वासण की भाई ॥१६
उपजें जीव असख्य जु तामे, वासी भोजन दूपण जामे ।
दया न किरिया उत्तम ताई, माटी के वासण मे भाई ॥१७
तातैं भले धातु के वासन, इह आज्ञा गावै जिन शासन ।
धातु-पात्र ही नीका मजै, सोई अशन अक्रिया भजै ॥१८
रहै अशन को लेश जु कोई, सो वासन माज्यौ नहि होई ।
दया क्रिया को नास जु तामे, अन्न जोग उपजे जिय जामे ॥१९
माजि धोय अर पूछ जु राछा, राखै उज्जल निर्मल आछा ।
दया सहित करणी सुखदाई, करुणा विन करणी दुखदाई ॥२०
जीवनिकू सन्ताप न देवै, तव आचार तणी विधि लेवै ।
बिन जिनधर्मा उत्तम वसा, देइ न लेय सुराक्ष नृशसा ॥२१
श्रावक कुल किरिया करि युक्ता, तिनके करको भोजन युक्ता ।
अथवा अपने करको कीयौ, आरम्भी श्रावक ने लीयौ ॥२२
अन्यमती अथवा कुलहीना, तिनक करको कवहु न लीना ।
अन्य जाति जो भीटै कोई, तौ भोजन तजवौ है सोई ॥२३
नीली हरी तजै जो सारी, ता सम और नही आचारी ।
जो न सर्वथा छाडी जाई, तौ प्रत्येक फला अलपाई ॥२४
हरी सुकावौ योग्य न भाई, जामे दोष लगै अधिकाई ।
सूके पत्र औषधी लेवा, भाजी सूकी सब तजि देवा ॥२५
पत्र-फूल-कन्दादि मखें जे, साधारण फल मूढ चखें जे ।
ते नहि जानो जैनी भाई, जीभ-लपटी दुरगति जाई ॥२६
पत्र-फूल-कन्दादि सवै ही साधारण फल सर्व तजै ही ।
अर तुम सुनहु विवेकी भैय्या, भेलै भोजन कवहु न लैया ॥२७
मात तात सुत बाधव मित्रा, भेले भोजन अति अपवित्रा ।
महा दोष लागै या माही, आमिष को सो सशय नाही ॥२८

अपने भोजन के जे पात्रा, काहूकू नहिं देय सुपात्रा।
बुधजन भेलें जीमे कैसें, भाषें श्री जिन-नायक ऐसें ।।२९
माहि सराय न भोजन भाई, जब श्रावक को व्रत्त रहाई।
अन्तिज नीचनि के घर माही, कबहुँ रसोई करणी नाही ।।३०
मास त्यागि व्रत जो नि धारै, नीचन को सगर्ग न कारै।
उत्तम कुलहू परमट धारी, तिनहू के भोजन नहिं कारी ।।३१
जैन धर्म जिनके घट नाही, अन्य देव पूजा घर माही।
तिनको छूयौ अथवा करको, कबहू न खावै तिनके घरको ।।३२
कुल किरिया करि आप समाना, अथवा आप थकी अधिकाना।
तिनको छुयौ अथवा करको, भोजन पावन तिनके घरको ।।३३
अर जे छाणि न जाणे पाणी, अन्न वीण की रीति न जाणी।
भक्षाभक्ष भेद नहिं जानें, कुगुरु कुदेव मिथ्यामत मानें ।।३४
तिनतें कैसी पाति जु मित्रा, तिनको छयौ है अपवित्रा।
चर्म रोम मल हाथी दन्ता, जेहि कचकडा विमल कहन्ता ।।३५
तिनतें नहिं भोजन सम्बन्धा, यह किरिया को कह्यौ प्रबन्धा।
जङ्गम जीवनि के जु शरीरा, अस्थि चर्म रोमादिक वीरा ।।३६
सब अपवित्रा जानि मलीना, थावर दल भोजन मे लीना।
रोमादिक को सपरस होवै, सो भोजन श्रावक नहिं जोवै ।।३७
नीला वस्त्र न भीटै सोई, नाहिं रेशमी वस्त्र हु कोई।
बिन धोया ह्वै कपरा नाही, इह आचार जैनमत नाही ।।३८
दया लिया ह्वै किरिया धारी, भोजन करैं सोधि आचारी।
पाच ठावसू भोजन नाही, धोति दुपट्टा विमल धराही ।।३९
विन उज्ज्वलता भई रसोई, त्याग करै ताकू विधि जोई।
पचेन्द्री पसु हू को छूयौ, भोजन तजै अविधितें हूयौ ।।४०
सोध तनी सव वस्तु जु लेई, वस्तु असोधी त्यागै तेई।
अन्तराय जो परे कदापी, तजै रसोई जीव निपापी ।।४१
दया क्रिया बिन श्रावक कैसे, बुद्धि पराक्रम विन नृप जैसे।
मास रुधिर मल अस्थि जु, चामा तथा मृतक प्राणी लखि रामा ।।४२
अर जो वस्तु तजी है भाई, सो कवहू जो थाल धराई।
तौ उठि बैठें होउ पवित्रा, यह आज्ञा गावै जगमित्रा ।।४३
दान विना जीमौ मति वीरा, इह आज्ञा धारौ उर धीरा।
विना दान भोजन अपवित्रा, शक्ति प्रमाणे दान दो चित्रा ।।४४
मुनी अजिका श्रावक कोई, कै सुश्राविका उत्तम होई।
अयवा अव्रत सम्यकदृष्टी जिह उर अमतधारा वृष्टी ।।४५
इनकू महाभक्ति करि देही तिनके गुण हिरदा में लेही।
अयवा दुखित भुखित नर नारी, पसु पखी दुखिया ससारी ।।४६

अन्न वस्त्र जल सबको देना, नर भव पाये का फल लेना।
तिर्यंचनिकू तृण हू देना, दान तणो गुण उरमे लेना ॥४७
भोजन करत ओठि जिन छोडौ, ओठि खाय देही मति भाडौ।
काहूकू उच्छिष्ट न देनो, यही वात हिरदै धरि लेनो ॥४८
अन्तराय जो परै कदापी, अथवा छीवें खल जल पापी।
तब उच्छिष्ट तजन नहि दोषा, इह भाषे वुधजन व्रत पोषा ॥४९
घृत दधि दूध मिठाई मेवा, जोहि रसोई माहि जु लेवा।
सो सब तुल्य रसोई जानो, यह गुरु आज्ञा हिरदै मानो ॥५०
जहा वापरे अन्न रसोई, ताते न्यारे राखै जोई।
जेतौ चहिये तेतौ ल्यावें, आवे, सो वतन मे आवे ॥५१
पाका वस्तु रु भोजन भाई, एक भये वाहिर नहि जाई।
जल अर अन्न तणो पकवाना, सो भोजन ही सादृश जाना ॥५२
असन रसोई बाहर जावे, मो वढ वोषा नाम कहावे।
मौन विना भोजन वर्ज्या है, मौन सात श्रुत माहि कह्या है ॥५३
भोजन भजन स्नान करता, मैथुन वमन मलादि करता।
मूत्र करता मौन जु होई, इह आज्ञा धारै वुध सोई ॥५४
अन्तराय अर मौन जु सप्ता, पालै श्रावक पाप अलिप्ता।
अब जल की किरिया सुनि धर्मी, जे नहि धारैं तेहि अधर्मी ॥५५
नदी तीर जो होय मसाणा, सो तजि घाट जु निन्द्य वखाणा।
और घाटको पाणी आणो, इह जिन आज्ञा हिरदै जाणो ॥५६
लोक भरत जे निजरमा आवे, तिनके ऊपरलौ जल ल्यावे।
सरवर माहि गाव को पानी, आवे सो सरवर तजि जानी ॥५७
गावथकी जो दूरि तलावा, ताका जल ल्यावौ सुभ भावा।
तजौ अपावन नदी किनारा, अब वापी की विधि सुनि वीरा ॥५८
जा माही न्हावे नर नारी, कपरा धोवहि दातुनि कारी।
ता वापी को जल मति आनों, तहा न निर्मलताई जानो ॥५९
कूपतणी विधि सुनहु प्रवीना, जहा भरैं पानी कुल हीना।
तहा जाहि मति भरवा भाई, तबै ऊचको धर्म रहाई ॥६०
उत्तम नीच यहै मरजादा, यामे है कहुं हू न विवादा।
यवन अन्तिजा सबसे हीना, इनको कूप सदा तजि दीना ॥६१
अब तुम वात सुनो इक औरै, शका छाडि वखानौ चौरै।
धर्म रहित के पानी घर को, त्यागौ वारि अधर्मी नरको।
बिन साधर्मी उत्तम बसा, पर घर की छाडौ जल असा ॥६२

दोहा

जल के भाजन धातु के, जो होवें घर माहि।
पूछ माजि नित्त धोयवा, यामे संशय नाहि ॥६३

अर जे वासण गारके, गागर घट मटकादि।
ते हि अल्प दिन राखिवौ, इह आज्ञा जु अनादि ॥६४
राति सुकाय धराय वा, माटी वासण बीर।
तिनमे प्रातहि छाणिवौ, आछी विधिसो नीर ॥६५
जौ नहिं राखै गारके, जल भाजन बुधिवान।
राखै बासण धातु ही, सो अति ही शुचिवान ॥६६

चौपाई

इह तौ जल की क्रिया बताई, अब सुनि जल-गालन विधि भाई।
रगे वस्त्र नहिं छानो नीरा, पहरे वस्त्र न गालौ वीरा ॥६७
नाहिं पातरे कपडे गालौ, गाढे वस्त्र छाडि अघ टालौ।
रेजा दिढ आगुल छत्तीसा, लबा अर चौरा चौबीसा ॥६८
ताको दो पुडता करि छानो, यही नातणा की विधि जानो।
जल छाणत इक बू दहु धरती, मति डारहु भाषें महावरती ॥६९
एक बू द मे अगणित्त प्राणी, इह आज्ञा गावै जिनवाणी।
गलना चिउटी धरि मति दाबौ, जीव दयाको जतन धरावौ ॥७०
छाणे पाणी बहुते भाई, जल गलणा धोवैं चित लाई।
जीवाणी को जतन करौ तुम, सावधान ह्वै विनवें क्या हम ॥७१
राखहु जलकी किरिया शुद्धा, तब श्रावक व्रत लघौ प्रबुद्धा।
जा निवाणको ल्यावौ वारी, ताही ठौर जिवाणी डारी ॥७२
नदी तालाब वावडी माही, जलमे जल डारौ सक नाही।
कूप माहिं नाखौ जु जिवाणी, तौ इह बात हिये परवाणी ॥७३
ऊपरसू डारौ मति भाई, दयाधर्म धारौ अधिकाई।
भवरकली को डोल मगावौ, ऊपर नीचे डौरि लगावौ ॥७४
द्वै गुण डोल जतन करि वीरा, जीवाणी पधरावौ धीरा।
छाण्या जल को इह निरधारा, थावरकाय कहे गणधारा ॥७५
द्वै घटिका तीतै जो जाको, अणछाण्या को दोष जु ताको।
तिक्त कषाय भेलि किय फासू, ताहि अचित्त कहे श्रुत भासू ॥७६
पहर दोय बीतै जो भाई, अगणित त्रस जीवा उपजाई।
ड्योढ तथा पौणा दो पहरा, आगें मति वरतौ वुधि-गहरा ॥७७
भात उकाल उष्ण जल जो है, सात पहर ही लेणो सो है।
बीतें वसु जामा जल उष्णा, त्रस भरिया इह कहैं जु विष्णा ॥७८
विष्णु कहावें जिनवर स्वामी, सर्व व्यापको अन्तर-यामी।
या विधि पाणी दिवसें पीवो, निसिकू जल छाडौ भवि जीवो ॥७९
अशन पान अर खादिम स्वादी, निशि त्यागे विन व्रत सव वादी।
दया विना नहिं व्रत जु कोई, निश भोजन मे दया न होई ॥८०

परिशिष्ट

छाण्यू जाय न तिसको नीरा, बीण्यू जाय न धानहुँ बीरा।
छाण बीण बिन हिंसा होवे, हिंसातें नारक पद जोवे ॥७१

अवर कथन इक सुनबे योगा, सुनकर धारहु सुबुधि लोगा।
नारिन को लागै बड रोगा, मास मास प्रति होहि अजोगा ॥८२

ताकी किरिया सुनि गुणवन्ता, जा विधि भाषें श्रीभगवन्ता।
दिवस पाच बीतें सुचि होई, पाच दिनालौं मलिन जु सोई ॥८३

उक्त च श्लोक—त्रिपक्षे शुद्धयते सूती, रजसा पच वासरे।
अन्यशक्ता च या नारी, यावज्जीव न शुद्धयते ॥१

अर्थ—प्रसूता स्त्री डेढ महीनेमे शुद्ध होय है, रजस्वला पाच दिवस गये पवित्र होय है अर जो स्त्री परपुरुष सो रत भई सो जन्म पर्यन्त शुद्ध नाही, सदा अशुचि ही है।

वेसरी छन्द

पाच दिवस लौं सगरे कामा, तजिकर, रहिवौ एकै ठामा।
कछु धधा करवौ नहि जाको भई अजोग अवस्था ताको ॥८४
निज भर्तांहूँ को नहि देखै, नीची दृष्टि धर्म को पेखैं।
दिवस पाचलौं न्हावौ उचिता, नितप्रति कपडा धोबो सुचिता ॥८५
काहूँ सो सपरस नहि करिवौ, न्यारे आसन बासन धरिवौ।
जो कबहूँ ताके बासन सो, छुयौ राछ अथवा हाथन सो ॥८६
तो वह बासन ही तजि देवौ, या विधि शुद्ध जिनाज्ञा लेवौ।
अन्न वस्त्र जल आदि सबैही, ताकौ छुऔ कछू नहि लेही ॥८७
कोरो पीस्यौ कछु नहि गहिवौ, ताकौ ताके ठामहि रहिवौ।
ठौर त्याग फिरवौ न कितेही, इह जिनवर की आज्ञा है ही ॥८८
करवौ नाही असन गरिष्ठा, नाही जु दिवसैं शयन वरिष्ठा।
हास कुतूहल तेल फुलेला, इन दिन माहि न गीत न हेला ॥८९
काजल तिलक न जाको करिवौ, नाहि महावर महेदी धरिवौ।
नख केशादि सुधार न करनो, या विधि भगवत-मारग धरनो ॥९०
और नियम मे मिलवौ जाको, पच दिवस है वर्जित ताको।
चडाली छूतें अति निंद्या, भाषें जिनवर मुनिवर वद्या ॥९१
पच दिवस पति ढिग नहि जावौ, अर नहि थाके सज्या रचावौ।
भूमि-सयन है जोग्य जु ताको, सिगारादि न करनो जाको ॥९२
छट्टे दिवस न्हाय गुणवन्ती, शुभ कपडा पहरे बुधिवन्ती।
ह्वै पवित्र पतिजुत जिन अर्चा, कर वाते धारै शुभ चर्चा ॥९३
पूजा दान करे विधि सेती, सुभ मारग माही चित देती।
निसि को अपने पति ढिग जावै, तौ उत्तम बालक उपजावै ॥९४

सुबुधि विवेकी सुव्रत-धारी, शीलवन्त सुन्दर अविकारी।
दाता सूर तपस्वी श्रुतधर, परम पुनीत पराक्रम भर नर ॥९५
जिनवर भरत बाहुबलि सगग, रामहणू पाडव अर विदरा।
लव अकुश प्रद्युम्न सरीसा, वृषभसेन गौतम स्वामी सा ॥९५
सेठ सुदर्शन जबू स्वामी, गज कुमार आदि गुण-धामी।
पुत्र होय तौ या विधि को ह्वै, अर कबहू पुत्री हो जो ह्वै ॥९७
तो सुशील सौभाग्यवती अति, नेम धरम परवीन हम गति।
बाल सुब्रह्मचारिणी शुद्धा, ब्राह्मी सुन्दरि सी प्रतिबुद्धा ॥९८
चन्दन बाला अनन्तमतीसी, तथा भगवती राजमतीसी।
अथवा पतिव्रता जु पवित्रा, ह्वै सुशील सीतासी चित्रा ॥९९
कै सुलोचना कौशल्या सी, शिवा रुकमनी वीशल्या सी।
नीली तथा अजना जैसी, रोहणि द्रौपद सुभद्रा तैसी ॥१००
अर जो कोऊ पापाचारी, पच दिवस वीतें बिन नारी।
सेवै विकल अन्ध अविवेकी, ते चडालनि हूतें एकी ॥१
अति ही घृणा उपजै ता समये, तातें कबहु न ऐसे रमिये।
फल लागै तौ निपट हि विकला, उपजै सतति सठ बे-अकला ॥२
सुत जन्मे तौ कामी क्रोधी, लापर लपट धम विरोधी।
राजा बक बसु से अति मूढा, ग्रन्थनि माहिं अजस आरूढा ॥३
सत्यघोष द्विज पर्वत दुष्टा, धवल सेठ से पाप सपुष्टा।
पुत्री जन्मे तोहो कुशीली, पर-पुरुषा रति अवहीली ॥४
राव जसोधर की पटरानी, नाम अमृतादेवि कहानी।
गई नरक छट्ठे पति मारे, किये कुबज सो कम असारे ॥५
रात्रि विषैं कपरा ह्वै नारी, तौ इह बात हिये मे धारी।
पच दिवस मे सो निसि नाही, ता बिन पच दिवस श्रुत माही ॥६
इह आज्ञा धारो तजि पापा, तब पावो आचार निपापा।
अब सुनि गृहपति के षट् कर्मा, जो भाषैं जिनवर को धर्मा ॥७
निज पूजा अर गुरु की सेवा, पुनि स्वाध्याय महासुख देवा।
सजम तप अर दान करौ नित, ए षट् कर्म धरौ अपने चित ॥८
इन कमनि करि पाप जु कर्मा, नासें भविजन सुनि निज धर्मा।
चाकी उखरी और वुहारी, चूला वहुरि परडा धारी ॥९
हिंसा पाँच तथा घर धन्धा, इन पापनि करि पाप हि वधा।
तिनके नासन को षट कर्मा, सुभ भावैं जिनवर को धर्मा ॥१०
ए सब रीति मूल गुण माही, भाषें श्री गुरु ससै नाही।
आठ मूल गुण अगोकारा, करौ भव्य तुम पाप निवारा ॥११
अर तजि सात विसन दुखकारी, पाप मूल दुरगति दातारी।
जूवा आमिष मदिरा दारी, आखेटक चोरी पर नारी ॥१२

जूवा सम नहिं पाप जु कोई, सब पापनि को यह गुरु होई।
जूवारी को संग जु त्यागो, द्यूत कर्म के रंग न लागो ॥१३
पासा सारि आदि बहु खेला, सब खेलनि में पाप हि मेला।
सकल खेल तजि जिन भजि प्रानी, जाकरि होय निजातम ज्ञानी ॥१४
ठौर ठौर मद मांस जु निंदे, तातें तजिये प्रभू को वंदे।
तज वेश्या जो रजक-शिला सम, गनिका को घर देखहु मति तुम ॥१५
त्यागि अहेरा दुष्ट जु कर्मा, ह्वै दयाल सेवौ जिन धर्मा।
करै अहेरातें जु अहेरी, लहै नर्क में आपद ढेरी ॥१६
क्षत्री को इह होय न कर्मा, क्षत्री को है उत्तम धर्मा।
क्षत् कहिये पीरा को नामा, पर-पीरा-हर जिनको कामा ॥१७
क्षत्री दुर्बल को किम मारै, क्षत्री तो पर-पीरा टारै।
मांस खाय सो क्षत्री कैसो, वह तौ दुष्ट अहेरी जैसो ॥१८
अर जु अहेरी तजै अहेरा, दयापाल ह्वै जिनमत हेरा।
तौ वह पावै उत्तम लोका, सबको जीव-दया सुख थोका ॥१९
त्यागौ चोरी जो सुख चाहौ ठग विद्या तजि लोभ विलाहौ।
पर धन भूले बिसरें आयो, राखौ मति यह जिन श्रुत गायो ॥२०
लूटि लेहु मति काहू को धन, पर धन हरवेको न धरौ मन।
चुगली करन, लुटावौ काको, छाडो भाई अन्य रमा को ॥२१
काहू की न, धरोहरि दाबौ, सूधौ राखौ मिश्र हिसाबौ।
तौल मांहि घटि-बधि मत्ति कारो, इह जिन आज्ञा हिरदै धारो ॥२२

दोहा

तजौ चोर की संगती, तासूं नहिं व्यवहार।
चोरयो माल गृहौ मती, जो चाहो सुख सार ॥२३
परदारा सेवन तजौ, या सम दोष न और।
याको निंदे जिनवरा, जो त्रिभुवन के मौर ॥२४
पापी सेवें पर तिया, परें नरक में जायँ।
तेतीसा-सागर तहाँ, दुख देखें अधिकाय ॥२५
तातें माता बहन अर, पुत्री सम पर-नारि।
गिनो भव्य तुम भाव सों, शील वृत्त उर धारि ॥२६
जे जेठी ते मात सम, समवय बहन समान।
आप थकी छोटी उमरि, सो जिन सुता प्रमान ॥२७
निन्दे विसन जु सात ए, सात नरक दुखदाय।
मन बच तिन ए परिहरौ, भजौ जिनेसुर पाय ॥२८
इन विसननि करि बहु दुखी, भये अनन्ते जीव।
तिनको को वर्णन करै, ए निंदें जग-पीव ॥२९

कैयक के भाखें भया, नाम, सूत्र-अनुसार।
राव जुधिष्ठर सारिखे, धर्मात्तम अविकार ॥३०
दुर्योधन के हठ थकी, एक बारही द्यूत।
॥३१
हारि गये पाडव प्रगट, राज सम्पदा मान।
दुखी भये जो दीन जन, ग्रन्थनि माँहि बखान ॥३२
पीछे तजि सब जगत को, जगदीश्वर उर ध्याय।
श्री जिनवर के लोक को, गये जुधिष्ठर राय ॥३३
मास भखनतें बक नृपति, गये सातवें नर्क।
तीस तीन सागर महा, पायौ दुख सपर्क ॥३४
अमल थकी जदुनन्दना, रिषिको रिस उपजाय।
भये भस्मभावा सबै, पाप करम फल पाय ॥३५
कैयक उबरे जिन जपी, भये मुनीसुर जेह।
येह कथा जिनसूत्र मे, तुम परगट सुन लेह ॥३६
चारुदत्त इक सेठ हौ, करि गनिकासो प्रीति।
लही आपदा जिह घनी, गई सपदा बीति ॥३७
ब्रह्मदत्त पापी महा, राजा हौ मृग मार।
आखेटक अपराधतें, बूड्यो नरक मझार ॥३८
चोरी करि शिवभूति शठ, लहे बहुत दुख दोष।
ताकी कथा प्रसिद्ध है, कहिवे को सतघोष ॥३९
परदारा पर चित्त धरी, रावण से बलवन्त।
अपजस लहि दुरगति गये, जे प्रतिहरि गुणवन्त ॥४०
बिसन बुरे बिसनी बुरे, तजौ इनो तें प्रीति।
व्रत क्रियाके शत्रु ये, इनमे एक न नीति ॥४१
अब सुनि भैया बात इक, गुण इकवीसौ जेह।
इनही मूल गुणानिको, परिवारो गनि लेह ॥४२
लज्जा दया प्रशातता, जिन मारग परतीति।
पर औगुनको ढाकिवो, पर उपगार सुप्रीति ॥४३
सोमदृष्टि गुणग्रहणता, अर गरिष्ठता जानि।
सबसो मित्राई सदा, वैरभाव नहिं मानि ॥४४
पक्ष पुनीत पुमान की, दीरघदरसी सोय।
मिष्ट वचन वोलै सदा, अर वहु ज्ञाता होय ॥४५
अति रसज्ञ धर्मज्ञ जो, है कृतज्ञ पुनि तज्ञ।
कहै तज्ञ जाकू वुधा, जो होवै तत्त्वज्ञ ॥४६
नही दीनता भाव कछु, नहि अभिमान धरेय।
सवमो समताभाव है, गुण को विनय करेय ॥४७

पापक्रिया सब परिहरौ, ए गुण होय एकीस ।
इनको धारै सो सुधी, लहै धर्म जगदीश ॥४८
इन गुण बाहिर जीव जो, स्रावक नाहि गनेय ।
श्रावक व्रत के मूल ए, श्री जिनराज कहेय ॥४९
श्रावक व्रत सब जाति को, जति-व्रत तीन गहेय ।
द्विज क्षत्री वाणिज विना, जति व्रत नाहि जु लेय ॥५०
अर एते विणज न करै, श्रावक प्रतिमा धार ।
धान पान मिष्टान अर, मोम हीग हरताार ॥५१
मादक लवण जु तेल घृत, लोह लाख लकडादि ।
दल फल कन्दादिक सबै, फूल फूस सीसादि ॥५२
चीट चावका जेवडा, मूज डाभ सण आदि ।
पसु पंखी नहि विणजवो, साबुन मधु नीलादि ॥५३
अस्थि चर्म रोमादि मल, मिनखा बेचवौ नाहि ।
वन्दि पकडनी नाहि कछु, इह आज्ञा श्रुत माहि ॥५४
पशु-भाडे मति द्यौ भया, त्यागि शस्त्र व्योपार ।
वध बंधन व्यवहार तजि, जो चाहौ भव-पार ॥५५
जहाँ निरंतर अगिनि को, उपजै पापारंभ ।
सो व्यौहार तजौ सुधी, तजौ लोभ छल दंभ ॥५६
कन्दोई लोहार अर, सुवर्णकार शिल्पादि ।
सिकलीगर वाटी प्रमुख, अवर लखेरा आदि ॥५७
छीपा रंगरेजादिका, अथवा कुम्भ जु कार ।
व्रत धारी ए नहि करै, उद्यम हिंसाकार ॥५८
रंग्यो नीलथकी जिको, सो कपरा तजि वीर ।
अति हिंसाकर नीपनो, है अजोगि वह चीर ॥५९
कूप तडाग न सोखियो, करिये नही अनर्थ ।
हिंसक जीव न पालिये, यह श्रुत धारौ अर्थ ॥६०
चिपनि विणजवौ है भला, इसा विणजवौ नाहि ।
नही सीदरी सूतली, होय विणज के माहि ॥६१
विणज करौ तो रतन को, कै कंचन रूपादि ।
कै रूई कपडा तनो, मति खोवौ भव वादि ॥६२
जिनमे हिंसा अल्प ह्वै, ते व्यापार करेय ।
अति हिंसा के विणज जे, ते सब ही तज देय ॥६३
ए सब रीति कही बुधा, मूल गुणनि मे ठीक ।
ते धारौ सरधा करी, त्यागौ बात अलीक ॥६४
जैसें तरु के जड गिनो, अह मंदिर के नींव ।
तैसें ए वसु मूलगुण, तप जप व्रत की सींव ॥६५

वेसरी छन्द

ए दुरगति दाता न कदेही, शिव-कारण ह्वै कहइ विदेही।
सम्यक सहित महाफल दाता, सब व्रत्तनि को सम्यक श्राता ॥६६
समकित सो नहिं और जु धर्मा, सकल क्रिया मे मम्यक पर्मा।
जाके भेद सुनो मन लाए, जाकरि आतम तत्व लखाए ॥६७
भेद बहुत पर द्वै बड भेदा, निश्चय अर व्यवहार अछेदा।
निश्चय सरधा निज आतम की, रुचि परतीति जु अध्यातम की ॥६८
सिद्ध समान लखै निज रूपा, अतुल अनन्त अखड अनूपा।
अनुभव रसमे भोग्यौ भाई, धोई मिथ्या मारग काई ॥६९
अपनो भाव अपुनमे देखौ, परमानन्द परम रस पेखौ।
तीन मिथ्यात चौकडी पहली, तिन करि जीवनि की मति गहली ॥७०
मोह-प्रकृति है अट्ठाबीसा, सात प्रबल भाषें जगदीसा।
सात गये सबही नसि जावें, सर्व गये केवल पद पावें ॥७१
उपशम क्षय-उपशम अथवा क्षय, सात तनो कीयौ तजि सब भय।
ये निश्चय समकित को रूपा, उपजै उपशम प्रथम अनूपा ॥७२
सुनि सम्यक व्यवहार प्रतीता, देव अठारा दोष वितीता।
गुरु निरग्रन्थ दिगम्बर साधू, धम दयामय तत्व अराधू ॥७३
तिनकी सरधा दिढ करि धारै, कुगुरु कुदेव कुधर्म निवारै।
सप्त तत्व को निश्चय करिवौ, यह व्यवहार सु सम्यक धरिवौ ॥७४
जीव अजीवा आस्रव बधा, सवर निजर मोक्ष प्रबन्धा।
पुण्य पाप मिलि नव ए होई, लखै जथारथ सम्यक सोई ॥७५
ये हि पदारथ नाम कहावै, एई तत्व जिनागम गावै।
नव पदार्थ मे जीव अनन्ता, जीवनि माहि आप गुणवता ॥७६
लखै आपको आपहि माही, सो सम्यक दृष्टि शक नाही।
ए दाय भेद कहे समकित के, ते धारो कारण निज हितके ॥७७
सम्यकदृष्टि जे गुण धारै, ते सुनि जे भव-भाव विडारै।
अठ मद त्यागै निमद होई, मार्दव धम धरै गुन सोई ॥७८
राज गर्व अरु कुलको गर्वा, जाति मान वल मान जु सर्वा।
रूप तनू मद तपको माना, सपति अर विद्या अभिमाना ॥७९
ए आठो मद कवहु न धारै, जगमाया तृण-तुल्य निहारै।
अपनी निधि लखि अतुल अनन्ती, जो परपचनि मे न वसती ॥८०
अविनश्वर सत्ता विकसती, ज्ञान-दृगोत्तम द्युति उलसती।
तामे मगन रहै अति रगा, भवमाया जानें क्षण भगा ॥८१
तीन मूढता दूरी नाखै, देव धमगुरु निश्चय राखै।
कुगुरु कुदेव कुधर्म न पूजा, जैन विना मत गहै न दूजा ॥८२

छह् जु अनायतनी बुधि त्यागे, त्याग मिथ्यामत जिनमत लागे ।
कुगुरु कुदेव कुधर्म बडाई, अर उनके दासनि की भाई ॥८३
कबहु करै नहिं सम्यकदृष्टी, जे करिहैं ते मिथ्यादृष्टी ।
शका आदि आठ मल छाढै करि, परपच न आपौ भाडे ॥८४
जिनवच मे शका नहिं ल्यावें, जिनवाणी उर धरि दिढ भावै ।
जग की वाछा सब छिटकावैं, नि स्पृह भाव अचल ठहरावैं ॥८५
जिनके अशुभ उदै दुख पीरा, तिनकी पीर हरै वर वीरा ।
नाहि गिलानि धरै मन माही, साची दृष्टि धरै शक नाही ॥८६
कबहु परको दोष न भाखै, पर उपगार दृष्टि नित राखै ।
अपनो अथवा परको चित्ता, चल्यौ देखि थाभै गुणरत्ता ॥८७
थिरीकरण समकित को अगा, धारै समकित धार अभगा ।
जिनधर्मीसू अति हित राखे, सो जिनमारग अमृत चाखे ॥८८
तुरत जात वछरा परि जैसें, गाय जीव देय है तैसे ।
साधर्मी परि तन धन वारे, गुण वात्सल्य धरै अघ डारै ॥८९
मन वच काय करै वह ज्ञानी, जिनदासनि को दासा जानी ।
जिनमारग की करै प्रभावन, भावे ज्ञानी चउ विधि भावन ॥ ९०
सब जीवनि मे मैत्रीभावा, गुणवतनिकू लखि हरसावा ।
दुखी देखि करुणा उर आनें, लखि विपरीत राग न ठानें ॥९१
दोषहु माही है मध्यस्था, ए चउ भावन भावै स्वस्था ।
जिन चैत्याले चैत्य करावै, पूजा अर परतिष्ठा भावै ॥९२
तीरथ जात्रा सूत्र सु भक्ती, चउविधि सघ सेव है युक्ती ।
एहै सप्त क्षेत्र परिसिद्धा, इनमे खरचे धन प्रतिबुद्धा ॥९३
जीरण चैत्यालय की मरमती, करवावे, अर पुस्तक की प्रति ।
साधर्मी कूं बहु धन देवे, या विधि परभावन गुन लेवे ॥९४
कहे अग ए अष्ट प्रतक्षा, नाहि धरवो सोई मल लक्षा ।
इन अगनि करि सीझे प्रानी, तिनको सुजस करै जिन वानी ॥९५
जीव अनन्त भये भवपारा, को लग कहिये नाम अपारा ।
केयक के शुभ नाम बखानो, श्रुत-अनुसार हिए मे आनो ॥९६
अजन और अनन्तमती जो, राव उदायन कम हूतीजो ।
रेवति राणी धर्म-नकासा, सेठ जिनेन्द्र भक्त अघ नासा ॥९७
पर औगुन ढाके जिह भाई, जिनवर की आज्ञा उर लाई ।
वारिषेण ओ विष्णुकुमारा, वज्रकुमार भवोदधि तारा ॥९८
अष्ट अग करि अष्ट प्रसिद्धा, और बहुत हूए नर सिद्धा ।
अठ मद त्यागि अष्ट मल त्यागा, तीन मूढता त्यागि सभागा ॥९९
षट जु अनायतना को तजिवौ, ए पच्चीस महागुण भजिवौ ।
अर तजिवौ तिनकूं भय सप्ता, निर्भय रहिवौ दोष अलिप्ता ॥१००

इह भव पर भव को भय नाही, मरण वेदना भय न धराही।
हमरौ रक्षक कोऊ नाही, इह सशय नाही घट माही ॥१०१
सबको रक्षक आयु जु कर्मा, कै जिनवर जिनवर को धर्मा।
और न रक्षक कोई काको, इह गुरु गायौ गाढ जु ताको ॥१०२
अर नहि चोर तनो भय जाको, अपनो निज धन पायौ ताको।
चिद घन चोरयौ नाही जावै, तातें चित्त अडोल रहावै ॥१०३
अर नहिं अकस्मात भय कोई, जिन-सम लखियौ निज तन जोई।
चेतन रूप लख्यौ अविनासी, तातें ज्ञानी है सुख रासी ॥१०४
काहू को भय तिनको नाही, भय-रहिता निरबैर रहा ही।
सप्त भया त्यागे गुण होई, सप्त बिसन तजियो शुभ जोई ॥१०५
सप्त सप्त मिलि चौदा गुन ए, मिलि पचीसा गुणताल जु ए।
पच दुरगछा भाव कबै ही, नहिं मिथ्यात सराह करैही।
नही स्तवन मिथ्यादृष्टी को, यह लक्षण सम्यक दृष्टी को ॥१०७
पच अतीचारनि कूं त्यागा, सो ह्वै पच गुणा बड भागा।
मिलि गुणताली चौवालीसा, गुणा होंहि भाषें जगदीसा ॥१०८
इनकूं धारे सम्यकती सो, भव भ्रम तजि पावे मुकी सो।
ए गुन मिथ्याती के नाही, आतमज्ञान न मध्या माही ॥१०९

उक्त च गाथा

मयमूढमणायदण सकाइवसणभयमईयार।
एहिं चउदालेदे ण सति ते हुति सद्दिट्ठी ॥१

अर्थ—जिनके अष्ट मद नाही, तीन मूढता नाही, षट आयतन नाही, शकादि अष्ट मल नाही, सप्त व्यसन नाही, सप्त भय नाही, पच अतीचार नाही, ए चवालीस नाही ते सम्यक-दृष्टि कहे।

दोहा

व्रत के मूल जु मूल गुण, सम्यक सबको मूल।
कह्यौ मूलगुण को सुजस, सुनि व्रतविधि अनुकूल ॥११०

इति क्रियाकोषे मूलगुण निरूपणम्।

बारह व्रत वर्णन

दोहा

द्वादस व्रतनि की सुविधि, जा विधि भाषी वीर।
सो भाषो जिन गुन जपी, जे धारें ते धीर ॥१
द्वादस व्रत माहे प्रथम, पंच अणुव्रत सार।
तीन गुण व्रत चारि पुनि, शिक्षा व्रत आचार ॥२

हिंसा मृषा अदत्तधन, मैथुन परिग्रह साज।
एकदेश त्यागी गृही, सव त्यागी रिपिराज ॥३
सव व्रतनि के आदिही, जीवदया व्रतसार।
दया सारिसौ लोक मे, नहिं दूजो उपगार ॥४
सिद्ध समान लख्यौ जिनें, निश्चय आतम राम।
सकल आतमा आपसे, लखै चेतना-धाम ॥५
ते सव जीवनि की दया, करें विवेकी जीव।
मन वच तन करि सर्व को, शुभ वाछै जु सदीव ॥६
सुख सो जीवौ जीव सहु, क्लेश कष्ट मति होह।
तजौ पाप को सर्व ही, तजौ परस्पर द्रोह ॥७
काहू को हु पराभवा, कवहु करौ मति कोइ।
इह हमरी वाछा फलौ, सुख पावौ सहु लोइ ॥८
सवके हितकी भावना, राखै परम दयाल।
दयाधर्म उरमे धरी, पावै पद जु विशाल ॥९
थावर पच प्रकार के, चउविधि त्रस परवानि।
सवसो मैत्री भावना, सो करुणा उर आनि ॥१०
पृथीकाय जलकाय का, अग्निकाय अर वाय।
काय वहुरि हैं वनस्पति, ए थावर अधिकाय ॥११
वे इन्द्री ते इन्द्रिया, चउ इन्द्रिय पचेन्द्रि।
ए त्रस जीवा जानिये, भावें साधु जितेन्द्रि ॥१२
कृत-कारित-अनुमोद करि, धरे अहिंसा जेह।
ते निर्वाण पुरी लहै, चउ गति पाणी देह ॥१३
निरारंभि मुनि की दशा, तहा न हिंसा लेश।
छहूं काय पीराहरा, मुनिवर रहित कलेश ॥१४
गृहपति के गृहजोगतें, कछु आरम्भ जु होइ।
तातें थावरकाय को, दोष लगै अघ सोइ ॥१५
पै न करे त्रस घात वह, मन वच तन करि धीर।
त्रस कायनि को पीहरा, जाने परकी पीर ॥१६
विना प्रयोजन वह सुधी, थावर हू पीरै न।
जो निशक थावर हने जिनके जिनमी रैन ॥१७
हिंसाको फल दुरगती, दया स्वर्ग-सुख देइ।
पहुचावे पुनि शिवपुरै, अविनाशी जु करेइ ॥१८
दया मूल जिन धर्म को, दया समान न और।
एक अहिंसा व्रतही, सव व्रतनि को मौर ॥१९
यम नियमादिक वहुत जे, भावे श्री जिनराय।
ते सहु करुणा कारणे, और न कोइ उपाय ॥२०

बिना जैन मत यह दया, दूजे मत दीखै न।
दया मई जिनदास है, हिंसा विधि सीखै न ॥२१
दया दया सब कोउ कहै, मर्म न जाने मूर।
अणछान्यू पाणी पिवै, ते हि दयातें दूर ॥२२
दया भली सबही रटै, भेद न पावै कोय।
वरतै अणगाल्यौ उदक, दया कहा ते होय ॥२३
दया बिना करणी वृथा, यह भावे सब लोक।
न्हावै अणगाले जलहि, बाधै अघ के थोक ॥२४
छाण्यू जल घटिका जुगल, पाछे अगाल्यौ होय।
विना जैन यह बारता, और न जाने कोय ॥२५
दया समान न धर्म कोउ, इह गावे नर-नारि।
निशा माहि भोजन करे, जाहि जमारो हारि ॥२६
दया जहा ही धर्म है, इह जाने ससार।
पै नहि पावै भेदको, भखै अभक्ष आहार ॥२७
दया वडी सब जगत मे, धरै न मूढ तथापि।
परदारा परधन हरै, परै नरक मे पापि ॥२८
दया होय तौ धर्म ह्वै, प्रगट बात है एह।
तजै न तोहू द्रोह पर, धरै न धर्म सनेह ॥२९
व्रत करै पुनि मूढधी, अन्न त्यागि फल खाय।
कदमूल भक्षण करै, सो व्रत निष्फल जाय ॥३०
दया धर्म कीजे सदा, इह जपै जग सर्व।
नहि तथापि सब सम गिने, हनै न आठू कर्म ॥३१
परम धर्म है यह दया, कहै सकल जन इह।
चुगली-चाटी नहि तजै, दया कहा ते लेह ॥३२
दया व्रत के कारणे, जे न तजे आरम्भ।
तिनके करुणा होय नहि, इह भाषे परब्रह्म ॥३३
दया धर्म को छाडिकै, जे पशु घात करेय।
ते भव भव पीडा लहै, मिथ्या मारग सेय ॥३४
दया व्रतावे सब मता, समझ न काहू माहि।
धर्म गिनै हिंसा विषे, जतन जीव को नाहि ॥३५
दया नही परमत विषे, दया जैनमत माहि।
विना फैन यह जैन है, यामे सशय नाहि ॥३६
दया न मिथ्या मत विषे, कहै कहा लो वीर।
करुणा सम्यक भाव है, यह निश्चय धरि धीर ॥३७
काहे के वे देवता, करे जु मास अहार।
ते चडाल वखानिये, तथा श्वान मार्जार ॥३८

श्री पदम कृत श्रावकाचार

मंगलाचरण

वस्तु छन्द

सकल जिनेश्वर चरण-कमल ते नमु
गुण छैतालीस सद्धारक वारक मोह-तिमिर-हर ।
पचकल्याण-नायक, दायक
शिवसुखकार मनोहर ।
शारदा स्वामीनें मन धरू
आण धरूँ गुरु निर्ग्रन्थ पाय ।
श्रावकाचार-विधि वरणवु
जो तुम्हो करो अवसाय ॥१

चौपाई

महीतल द्वीप असख्य मझार, जम्बू द्वीप जम्बु तरु धार ।
द्वीप लक्ष योजन विस्तार, चौत्रीस क्षेत्र सोहै सविचार ॥२
ते मध्य मेरु सुदर्शन नाम, लक्ष योजन ऊँचो गुण दाम ।
कनक-तणा सोल जिनगेह, त्रिण काल वदु हु नेह ॥३
मेरु तणी दक्षिण दिस जान, भरतक्षेत्र नामे मन आन ।
षट् खडे करि सोहै तेह, पच मलेच्छ एक आरज एह ॥४
आरज खड माहे शुभ ठाम, जनपद जानु मगध सुनाम ।
गिरि-गुहा वन वाडी कूप, वावि खडोर वलि नदी स्वरूप ॥५
द्रोण कर्वट मटव खेट ग्राम, पुर पाटण वाहन भेद नाम ।
मणि माणिक मोती परवाल, धन धान्ये भरिआ हु विशाल ॥६
ठामि ठामि दीसे जिन गेह हेम रत्न प्रतिमा नहि छेह ।
ऋषि मुनी जती अनगार, सघ सहित ते करें विहार ॥७
सरस मगध देश माहि मझार, राजगृही नयरी गुणधार ।
गढ गोपुर खाई जलभृत्त, मटकोसीसा शोभाजुत्त ॥८
नगर माहे सोहे जिनगेह, हाट मन्दिर नाला नहि छेद ।
चतु वण वसे परजा लोक, मनुष्य जन्म पामा करि रोक ॥९
जिन पूजे पोषे यति पात्र, तीर्थ सिद्धक्षेत्र करे जात्र ।
पुण्यतणा करे पट् कर्म, चार वर्ग साधे ते मर्म ॥१०

देवनिको आहार ह्वै, अमृत और न कोय ।
मासाशी देवानिकू, कहै सु मूरखि होय ॥३९
मगल कारण जे जणा, जीवनि को जु निपात ।
करें अमङ्गल ते लहे, होय महा उतपात ॥४०
जे अपने जीवे निमित, करे औरको नास ।
ते लहि कुमरण वेग ही गहे नरक को वास ॥४१
मद्य मास मधु खाय करि, जे वाधे अघ कर्म ।
ते काहे के मिनख हैं, इह भाखे जिनधर्म ॥४२
कन्दमूल फल खाय करि, करे जु वनको वास ।
तिनको वनवासा वृथा, होय दयाको नास ॥४३
बिना दया तप है कुतप, जाकरि कर्म न जाय ।
हिंसक मिथ्यामत धरा, नरक निगोद लहाय ॥४४
जैसो अपनो आतमा, तैसे सबही जीव ।
यह लखि करुणा आदरौ, भाखें त्रिभुवन-पीव ॥४५

छन्द जोगीरासा

काहे के ते तापस, करुणा नाहिं धरावें ।
कर अपनो आरम्भ सपष्टा, जीव अनेक जरावें ॥
जे तजि कपड़ा तपके कारण, धारें शठमति चर्मा ।
ते न तपस्वी भवदधि कारण, वाधे अशुभ जु कर्मा ॥४६
रिषि तौ ते जे जिनवर-भक्ता, नगन दिगम्बर साधा ।
भव तनु भोग थकी जु विरक्ता, करै न थिर चर वाधा ॥
मैत्री मुदिता करुणा भावा मध्यस्था जु धारें ।
राग दोष मोहादि अभावा ते भवसागर तारे ॥४७
विना दया नहि मुनिव्रत होई, दया विना न गृही ह्वै ।
उभय धर्म को सरवस करुणा जा विन धर्म नही ह्वै ॥
दया करौ मुखतैं सब भाखे भेद, न पावे पूरा ।
बासी भोजन भखि करि, भोदू रहे धर्म तें दूरा ॥४८
बासी भोजन माहिं जीव बहु, भखें दया नहि होई ।
दया विना नहि धर्म न श्रत्ता, पावे दुरगति सोई ॥
अत्थाणा सधाण मथाणा, काजी आदि आहारा ।
करे विवेक वाहिरा कुवुधी, तिनके दया न धारा ॥४९
मासाशी के घरको भोजन, करें कुमति के धारी ।
तिनके घट करुणा कहु कैसे, कहा शोध आचारी ॥
तातौ पाणी आठ हि पहरा, आगें त्रस उपजाही ।
ताकी तिनका सुधि वुधि नाही, दया कहा तिन माही ॥५०

निशिको पीस्यौ निसि को राध्यौ थीधौ सीधौ खावै ।
हरितकाय राधी सब स्वादे, दया कहा तें पावै ॥
चर्म-पतित घृत तेल जलादिक, तिसमे दोष न माने ।
गिने न दोष हीग मे मूढा, दया कहा ते आने ॥५१
हाटें बिकते चून मिठाई, कहे तिने निरदोषा ।
भखें अजोगि अहार सबै ही, दया कहा तें पोषा ॥
दूध दही अरु छाछि नीर को, जिनके कछु न विचारा ।
दया कहा है तिनके भाई, नही शुद्ध आचारा ॥५२
सूद्धा नही मल मूत्रादिक की, ढोर समाना तेई ।
तिनकू जो नर जैनी जाने, ते नहि शुभ मति लेई ॥
बाधक जिन शासन सरधाके, साधकता कछु नाही ।
साधु गिनें तिनकू जे कोई, ते मुरख जग माही ॥५३
एक बारको नियम न कोई, बार-बार जल पाना ।
बार-बार भोजन को करिवौ, तिनके व्रत्त न जाना ॥
त्रस काया को दूषण जामे, सो नहि प्रासुक कोई ।
भखै असूत्री शठमति जोई, नाही ब्रत्त धर होई ॥५४
दयाधम को परकाशक है, जिन मन्दिर जगमाही ।
ताहि न पूजें पापी जीवा, तिनके समकित नाही ॥
कारण आतम-ध्यान तणी है, श्रीजिन प्रतिमा शुद्धा ।
नाहि न बन्दें निन्द जु तेई, जानहु महा अबुद्धा ॥५५
बूढें नरक मझार महा शठ, जे जिन प्रतिमा निंदे ।
जाहि निगोद विवेक-वितीता, जे जिनगृह नहि वन्दें ॥
अज्ञानी मिथ्याती मूढा, नही दया को लेशा ।
दयावन्त तिनकू जे भाखें, ते न लहे निज देशा ॥५६

दोहा

सुर नर नारक पशुगती, ए चारो परदेश ।
पचमगति निज देश है, यामे भ्राति न लेश ॥५७
पचमगति की कारणा, जीवदया जग माहि ।
दया सारिखौ लोक मे, और दूसरौ नाहि ॥५८
दया दोय विधि है भया स्व-पर दया श्रुत माहि ।
सो धारौ दृढ चित्त मे, जाकरि भव-भ्रम जाहि ॥५९
स्वदया कहिये सो सुधी रागादिक अरि जेह ।
हने जीव की शुद्धता, टारि तिन्हे शिव लेह ॥६०
प्रगट करे निज शुद्धता, रागादिक मन मोरि ।
निज आतम रक्षा करे, डारे कम जु तोरि ॥६१

सो स्वदया भाषे गुरु हरै कर्म-विस्तार।
निजहि बचावै कालतें, करै जीव निस्तार ।।६२
षट कायाके जीव सहु, तिनतें हेत रहाय।
वैरभाव नहिं कोइसू, सो पर-दया कहाय ।।६३
दया मात सब जगत की, दया धर्म को मूल।
दया उधारै जगत ते, हरै जीव की भूल ।।६४
दया सुगुन की वेलरी दया सुखन की खान।
जीव अनन्ता सीजिया, दयाभाव उर आन ।।६५
स्व-पर दया दो विधि कही, जिनवाणी में सार।
दयावन्त जे जीव है, ते भावे भवपार ।।६६

सवैया इकतीसा

सुकृत की खानि इन्द्रपुरी की निसेनी जानि,
पापरज खडन को पौनराशि पेखिये।
भवदुख-पावक बुझाय वे कू मेघमाला,
कमला मिलायवे को दूतो ज्यू विसेखिये ।।
मुकति-बधूसो प्रीति पालिवे को आलो सम,
कुगति के द्वार दिढ आगलसी देखिये।
ऐसी दया कीजे चित्त तिहूँ लोक प्राणी हित,
और करतूति काहू लेखे मे न लेखिये ।।६७

दोहा

जो कहु पाषाण जल, माहिं तिरै अर भान।
ऊगै पश्चिम की तरफ, दैवयोग परवान ।।६८
शीतल गुन ह्वै अगनि मे, धरा पीठ उलटेय।
तौहू हिंसा-कर्मतें, नाही शुभ गति लेय ।।६९
जो चाहै हिंसा करी, धर्म मुकति को मूल।
सो अगनीसू कमल-वन, अभिलाषै मति भूल ।।७०
प्राणि-घात करि जो कुधी, वाछै अपनी वृद्धि।
सो सूरज के अस्त तें, चाहे वासर शुद्धि ।।७१
जो चाहै व्रत धर्म को, करै जीव को नास।
सो शठ अहिके वदन ते, करै सुधा की आस ।।७२
धर्म बुद्धि करि जो अबुध, हनै आपसे जीव।
सो विवाद करि जस चहै, जल-मथन तें घीव ।।७३
जैसे कुमती नर महा, काल कूटकू पीय।
जीवो चाहै जीव हति, तैसे श्रेय स्वकीय ।।७४

करि अजीर्ण दुर्बुद्धि जो, इच्छै रोग-निवृत्ति।
तैसे शठ पर-घात करि, चाहै धर्म-प्रवृत्ति ॥७५
दया थकी इह भव सुखी, पर-भव सब सुख होय।
सुरग मुकति दायक दया, धारै उधरै सोय ॥७६

इन्द नरिन्द फणिन्द अर, चद सूर अहमिन्द।
दया थकी इह पद लहै, होवै देव जिणद ॥७७
भव सागर के पार ह्वै, पहुचै पुर निर्वान।
दया तणो फल मुख्य सो, भाषे श्री भगवान ॥७८

हिंसा करिकै राज सुत, सुबल नाम मति-हीन।
इह भव पर भव दुख लह्यो, हिंसा तजौ प्रवीन ॥७९
चौदसिके इक दिवस की, दया धारि चडार।
इह भव नृप पूजित भयौ, लह्यौ स्वग-सुख सार ॥८०

जे सीझे जे सीझि हैं, ते सब करुणा धार।
जे बूढे जे बूढि हैं, ते सब हिंसा कार ॥८१
अतीचार भजि व्रत तजि, करुणा तिनते जाय।
वध बधन छेदन बहुरि, वोझ धरन अधिकाय ॥८२
अन्न पान को रोकिवौ, अतीचार ए पच।
त्यागौ करुणा धारिकै, इनमे दया न रच ॥८३

हिंसा तुल्य न पाप है, दया समान न धर्म।
हिंसक बूडे नरक मे, बाधै अशुभ जु कर्म ॥८४
हुती धन श्री पापिनी, वणिक-नारि व्यभिचारि।
गई नरक मे पुत्र हति, मानुष जन्म विगारि ॥८५
हिंसा के अपराधते, पापी जीव अनत।
नये नरक पाये दुखा, कहत न आवै अत ॥८६

जे निकसे भव-कूपतैं, ते करुणा उर धारि।
जे बूडे भव कूपतैं, ते सब हिंसा कारि ॥८७
महिमा जीव दया तनी, जानें श्री जगदीश।
गणधर हू कहि ना सकें, जे चउ ज्ञान अधीश ॥८८
कहि न सकें इन्द्रादिका, कहि न सकें अहमिंद्र।
कहि न सकें लोकान्तिका, कहि न सकें जोगीन्द्र ॥८९
कहि न सकें पाताल-पति, अगणित जीभ बनाय।
सो महिमा करुणा तणी, हम पै वरणि न जाय ॥९०
दया मात को आसरो, और सहाय न कोय।
करि प्रणाम करुणा व्रते, भाषाँ सत्य जु सोय ॥९१

इति दयाव्रत निरूपण

हिंसा ह्वै परमादतें अर प्रमादतें झूठ।
तातें तजौ प्रमादकू, देय पापसो पूठ ॥९२

चौपाई

श्री पुरुषारथ सिद्धि उपाय, ग्रन्थ सुन्या सब पाप लुभाय।
जहँ द्वादश व्रत कहे अनूप, सम दम यम नियमादि स्वरूप ॥९३
सम जु कहावे समताभाव, सम्यकरूप भवोदधि नाव।
दम कहिये मन इन्द्रिय-रोध, जाकर लहिये केवल बोध ॥९४
जीवो जाव वरत यम कह्यौ, अवधिरूप सो नियम जु लह्यौ।
ऐसे भेद जिनागम कहै, निकट भव्य ह्वै सो ही गहै ॥९५
तामें सत्य कह्यौ चउ भेद, सो मुनि करि तुम वरहु अछेद।
चउविधि झूठ तना परिहार, सो है सत्य महागुण सार ॥९६
प्रथम असत्य तजौ बुध वहे, वस्तु छतीकू अछती कहै।
दूजे अछती को जो छती, भाषै अविवेकी हतमती ॥९७
तीजे कहै औरसो और, विरथा मूढ करै झकझोर।
चौथे झूठ तनें त्रय-भेद, गर्हित सवद प्रति उछेद ॥९८
ए सब कृत कारित अनुमत्त, मन वच तन करि तज गुनवत।
चुगली-चारी परकी हासि, कर्कश वचन महा दुख-राशि ॥९९
विपरीत न भाषौ बुधिवान, सवद तजौ अन्याय सुजान।
वचन प्रलाप विलाप न बोलि, भजि जिन नायक तजि सहु भोलि ॥१००
भाषौ मत उतसूत्र कदेह, मिथ्यामत सौ तजौ सनेह।
ए सल गर्हित बैन तजेहु, जिनशासन की सरधा लेहु ॥१
बहुरि सबै सावद्य अजोग, वचन न बोलौ सुबुधी लोग।
छेदन भेदन मारण आदि, त्यागौ अशुभ वचन इत्यादि ॥२
चोरी जोरी डाका दौर, ए उपदेश पाप सिरमौर।
हिंसा मृषा कुशील विकार, पाप वचन त्यागौ व्रत धार ॥३
खेती विणज विवाह जु आदि, वचन न बोलै व्रती अनादि।
तजहु दोषजुत वानी भया, बोलहु जामे उपजे दया ॥४
ए सावद्य वचन तजि धीर, तजि अप्रीति वचन वर वीर।
अरति-करन भय-करन न बोल, शोक-करन त्यागौ तजि भोल ॥५
कलह-करन अघ-करन तजेहु, वैर-करन वाणी न भजेहु।
ताप-करन अर पाप-प्रधान, त्यागहु बचन जु दोष-निधान ॥६
मर्म-छेद को वचन न कहौ, जो अपने जियको शुभ चहौ।
इत्यादिक जे अप्रिय बैन, त्यागहु, सुनि करि मारग जैन ॥७
बोलौ हित मित वानी सदा, संशय वानी बोलि न कदा।
सत्य प्रशस्त दया रस भरी, पर उपगार करन शुभ करी ॥८

करि अजीण दुर्बुद्धि जो, इच्छे रोग-निवृत्ति ।
तैसे शठ पर-घात करि, चाहै धर्म-प्रवृत्ति ।।७५
दया थकी इह भव सुखी, पर-भव सब सुख होय ।
सुरग मुकति दायक दया, धारै उधरै सोय ।।७६

इन्द नरिन्द फणिन्द अर, चद सूर अहमिन्द ।
दया थकी इह पद लहै, होवै देव जिणद ।।७७
भव सागर के पार ह्वै, पहुचे पुर निर्वान ।
दया तणो फल मुख्य सो, भापे श्री भगवान ।।७८

हिंसा करिकै राज सुत, सुबल नाम मति-हीन ।
इह भव पर भव दुख लह्यो, हिंसा तजौं प्रवीन ।।७९
चौदसिके इक दिवस की, दया धारि चडार ।
इह भव नृप पूजित भयौ, लह्यो स्वग-सुख सार ।।८०

जे सीझे जे सीझि हैं, ते सब करुणा धार ।
जे बूढे जे बूढि हैं, ते सब हिंसा कार ।।८१
अतीचार भजि व्रत तजि, करुणा तिनते जाय ।
बध बधन छेदन बहुरि, बोझ धरन अधिकाय ।।८२
अन्न पान को रोकिबौ, अतीचार ए पच ।
त्यागौ करुणा धारिकै, इनमे दया न रच ।।८३

हिंसा तुल्य न पाप है, दया समान न धर्म ।
हिंसक बूडै नरक मे, बाघै अशुभ जु कर्म ।।८४
हुती धन श्री पापिनी, वणिक-नारि व्यभिचारि ।
गई नरक मे पुत्र हति, मानुष जन्म बिगारि ।।८५
हिंसा के अपराधते , पापी जीव अनत ।
नये नरक पाये दुखा, कहत न आवै अत ।।८६

जे निकसे भव-कूपतें, ते करुणा उर धारि ।
जे बूडे भव कूपतें, ते सब हिंसा कारि ।।८७
महिमा जीव दया तनी, जानें श्री जगदीश ।
गणधर हू कहि ना सकें, जे चउ ज्ञान अधीश ।।८८
कहि न सकें इन्द्रादिका, कहि न सकें अहमिंद्र ।
कहि न सकें लोकान्तिका, कहि न सकें जोगीन्द्र ।।८९
कहि न सकें पाताल-पति, अगणित जीभ बनाय ।
सो महिमा करुणा तणी, हम पै बरणि न जाय ।।९०
दया मात को आसरो, और सहाय न कोय ।
करि प्रणाम करुणा व्रतें, भाषी सत्य जु सोय ।।९१

इति दयाव्रत निरूपण

हिंसा ह्वै परमादतें अर प्रमादतें झूठ।
तातें तजौ प्रमादकूं, देय पापसौं पूठ ॥९२

चौपाई

श्री पुरुषारथ सिद्धि उपाय, ग्रन्थ सुन्या सब पाप लुभाय।
जहँ द्वादश व्रत कहे अनूप, सम दम यम नियमादि स्वरूप ॥९३
सम जु कहावै समताभाव, सम्यकरूप भवोदधि नाव।
दम कहिये मन इन्द्रिय-रोध, जाकर लहिये केवल बोध ॥९४
जीवो जाव वरत यम कह्यौ अवधिरूप सो नियम जु लह्यौ।
ऐसे भेद जिनागम कहै, निकट भव्य ह्वै सो ही गहै ॥९५
तामैं सत्य कह्यौ चउ भेद, सो मुनि करि तुम धरहु अछेद।
चउविधि झूठ तना परिहार, सो है सत्य महागुण सार ॥९६
प्रथम असत्य तजौ बुध वहै, वस्तु छतीकूं अछती कहै।
दूजे अछती को जो छती, भाषै अविवेकी हतमती ॥९७
तीजे कहै औरसो और, विरथा मूढ करै झकझोर।
चौथे झूठ तनें वय-भेद, गर्हित सवद प्रति उच्छेद ॥९८
ए सब कृत कारित अनुमत्त, मन वच तन करि तज गुनवंत।
चुगली-चारी परकी हासि, कर्कश वचन महा दुख-राशि ॥९९
विपरीत न भाषौ बुधिवान, सवद तजौ अन्याय सुजान।
वचन प्रलाप विलाप न वोलि, भजि जिन नायक तजि सहु भोलि ॥१००
भाषौ मत उतसूत्र कदेह, मिथ्यामत सो तजौ सनेह।
ए सल गर्हित बैन तजेह, जिनशासन की सरधा लेह ॥१
बहुरि सबै सावद्य अजोग, वचन न बोलौ सुबुधी लोग।
छेदन भेदन मारण आदि, त्यागौ अशुभ वचन इत्यादि ॥२
चोरी जोरी डाका दौर, ए उपदेश पाप सिरमौर।
हिंसा मृषा कुशील विकार, पाप वचन त्यागौ व्रत धार ॥३
खेती विणज विवाह जु आदि, वचन न बोलै व्रती अनादि।
तजहु दोपजुत वानी भया, बोलहु जामे उपजै दया ॥४
ए सावद्य बचन तजि धीर, तजि अप्रीति वचन वर वीर।
अरति-करन भय-करन न बोल, शोक-करन त्यागौ तजि भोल ॥५
कलह-करन अघ-करन तजेहु, बैर-करन वाणी न भजेहु।
ताप-करन अर पाप-प्रधान, त्यागहु बचन जु दोष-निधान ॥६
मम-छेद को वचन न कहौ, जो अपने जियको शुभ चहौ।
इत्यादिक जे अप्रिय बैन, त्यागहु, सुनि करि मारग जैन ॥७
बोलौ हित मित वानी सदा, सशय वानी बोलि न कदा।
सत्य प्रशस्त दया रस भरी, पर उपगार करन शुभ करी ॥८

अविरुध अव्याकुलता लिए, बोलहु करुणा धरिकै हिये ।
कबहु ग्रामणी वचन न लपौ, सदा सवदा श्री जिन जपौ ॥९
अपनी महिमा कबहुँ न करौ, महिमा जिनवर की उर धरौ ।
जो शठ अपनी कीरति करै, ते मिथ्यात सरूप जु धरै ॥१०
निन्दा परकी त्यागहु भया, जो चाहौ जिनमारग लया ।
अपनी निन्दा गरहा करौ, श्री गुरु पै तप व्रत आदरौ ॥११
पापनि को प्रायश्चित्त लेहु, माया मच्छर मान तजेहु ।
होवै जहा धम को लोप, शुभ किरिया होवै पुनि गोप ॥१२
अर्थ शास्त्र के ह्वै विपरीत, मिथ्यामत की ह्वै परतीत ।
तहा छाडि शका प्रतिबुद्ध, भावै सत्य वचन अविरुद्ध ॥१३
इनमे शका कबहु न करहू यही बुद्धि निश्चय उर धरहु ।
सत्य मूल यह आगम जैन, जैनी बोलै अमृत बैन ॥ १४
चार्वाक बौद्ध विपरीत, तिनके नाहिं सत्य परतीति ।
कौलिक कापालिक जे जानि, इनमे सत्य लेश मति मानि ॥१५
सत्य समान न धर्म जु कोय, बडो धर्म इह सत्य जु होय ।
सत्य थकी पावै भव पार, सत्यरूप जिनमारग सार ॥१६
सत्य प्रभाब शत्रु ह्वै मित्र, सत्य समान न और पवित्र ।
सत्य प्रसाद अगनि ह्वै शीत, सत्य प्रसाद होय जग-जीत ॥१७
सत्य प्रभाव भृत्य ह्वै राव जल ह्वै थल धरिया सत भाव ।
सुर ह्वै किकर वन पुर होय, गिरि ह्वै घर सतकरि जोय ॥१८
सर्प माल ह्वै हरि मृगरूप, विल सम ह्वै पाताल विरूप ।
कोऊ करै शस्त्र की घात, शस्त्र होय सो अबुज-पात ॥१९
हाथी दुष्ट होय सम श्याल, विष ह्वै अमृतरूप रसाल ।
कठिन सुगम ह्वै सत्य-प्रभाव, दानव दीन होय निरदाव ॥२०
सत्य-प्रभाव लहैं निज ज्ञान, सत्य धरे पावै वर ध्यान ।
सत्य-प्रभाव होय निरवाण, सत्य बिना ना पुरुष बखाण ॥२१
सत्य-प्रसाद वणिक धनदेव, राजा करि पाई बहु सेव ।
इह भव पर भव सुखमय भयौ, जाको पाप करम सब गयौ ॥२२
झूठ थकी वसु राजा आदि, पर्वत, विप्र सत्यघोषादि ।
जग देवादिक वाणिज घनें, गये दुरगती जाय न गिनें ॥२३
सत्य दया को रूप न दोय, दया बिना नहिं सत्य जु होय ।
सत्य तनें द्वय भेद अछेद, व्यवहारो निश्चय निरखेद ॥२४
निश्चय सत्य निजातम बोध, व्यवहारो जिन वचन प्रबोध ।
सत्य बिना सब व्रत तप वादि, सत्य सकल, सूत्रनिमे आदि ॥२५
सत्य प्रतिज्ञा बिन यह जीव, दुरगति लहैं कहे जग-पीव ।
सूकर कूकर वृक चडार, घूघू श्याल काग मजार ॥२६

नाग आदि जे जीव विरूप, तापर सवतें निंद्य प्ररूप ।
सवते बुरो महा असपर्श, तापरका लखिये नहिं दर्श ॥२७
चुगली-साचहु झूठ हि जानि चुगल महा चंडाल समान ।
चुगली उगली मुखतें जवै, इह भव पर भव खोये तवै ॥२७
सत्य-हेत धारौ भवि मौन, सत्य विना सव संजम गौन ।
थोरो वोलहु कारण सत्य, मन वच तन करि तजौ असत्य ॥२९
मुनि के सत्य महाव्रत होय, गृहि के सत्य अणुव्रत होय ।
मुनि तौ मौन गहे कै जैन, वचन निरूपें अमृत वैन ॥३०
लौकिक बचन कहे नहि साध, सव जीवन के मित्र अगाध ।
मृषावाद नही वोले रती, सो जिनमारग साचे जती ॥३१
श्रावक को किंचित आरम्भ, त्यागै कुविणज पापारम्भ ।
लौकिक वचन कहन जो परै, तौ पनि पाप वचन परिहरै ॥३२
पर उपगार दया के हेत, कवहुक किंचित झूठहु लेत ।
जेतौ आटे माहे लोन, ते तौ वोलै अथवा मौन ॥३३
झूठ थकी उचरै पर-प्रान, तौ वह झूठ सत्य परमान ।
अपने मतलब कारिज झूठ, कवहु न वोलै अमृत वूठ ॥३४
प्राण तजै पर सत्य न तजै, यद्वा तद्वा वचन न भजै ।
यहै देह अर भोगुपभोग, सव ही झूंठ गिनें जग रोग ॥३५
परिग्रह की तृष्णा नहिं करै, करि प्रमाण लालच परिहरै ।
पाप झूठ को है यह लोभ, याहि तजे पावै व्रत शोभ ॥३६
सत्य प्रताप सुजस अति बधै, सत्य धरै जिन आज्ञा सधै ।
राजद्वार पचायति माहिं, सत्यवन्त पूजित सक नाहिं ॥३७
इन्द्र चन्द्र रवि सुर धरणेंद, सत्य वचे अहमिन्द मुणिन्द ।
करें प्रशसा उत्तम जानि, इहे सत्य शिव-दायक मानि ॥३८
दया सत्य मे रंच न भेद, ए दोऊ इकरूप अभेद ।
विपति हरन सुख करन अपार, याहि धरें तें ह्वै भव-पार ॥३९
याहि प्रसंसें श्री जिनराय, सत्य समान न और कहाय ।
भुक्ति मुक्ति दाता यह धर्म, सत्य विना सव गनिये भर्म ॥४०
अतीचार पाचो तजि सखा जो तें जिन वच अमृत चखा ।
तजि मिथ्योपदेश मतिवान, भजि तन मन करि श्री भगवान ॥४१
देहि मूढ मिथ्या उपदेश, तिनमे नाहि सुमति को लेश ।
वहुरि तजौ जु रहोऽभ्याख्यान, ताको व्यक्त सुनो व्याख्यान ॥४२
गुप्त वारता परकी कोइ, मति परकासौ मरमी होइ ।
कूट कुलेख क्रिया तजि वीर, कपट कालिमा त्यागहु धीर ॥४३
करि न्यासापहार परिहार, ताको भेद सुनहु व्रत धार ।
पेलो आय धरोहरि धरै, अर कवहू विसरन वह करै ॥४४

तौ वाको चित एम जु भया, देहु परायो माल जु लया ।
भूलिर थोरो मागै वहै, तौ वाको समझा कर कहै ॥४५
तुमरो दैनो इतनो ठीक, अलप बतावन बात्त अलीक ।
ले जावौ तुमरो यह माल, लेखा मे चूकौ मति लाल ॥४६
घटि देवे को जो परिणाम, सो न्यासापहार दुखधाम ।
अथवा धरी पराई वस्त, जाकी बुद्धि भई विघ्वस्त ॥४७
और ठौरकी और जु ठौर, करै सोइ पापनि सिरमौर ।
पुनि साकारमन्त्र है भेद, तजौ सुबुद्धी सुनि जिन वेद ॥४८
दुष्ट जीव परको आकार, लखतो रहै दुष्टता कार ।
लखि करि जानै परको भेद, सो पावै भव-वन मे खेद ॥४९
परमत्रनि को करइ विकास, सो खल लहै नरक को वास ।
जो परद्रोह धरै चित-माँहि इह भव दुख लहि नरकहि जाहि ॥५०
अतीचार ए पाचो त्यागि, सत्य धरम के मारग लागि ।
परदारा परद्रव्य समान, और न दोष कहे भगवान ॥५१
परद्रोहसो पाप न और, निंद्यो श्रुत मे ठौर जु ठौर ।
जिन जान्यू निज आतमराम, तिनके परधन सो नहिं काम ॥५२
सत्य कहे चोरी पर-नारि, त्यागी जाइ यहै उर धारि ।
झूठ बकें तें जैनी नाहिं, परधन हरन न इह मत माहिं ॥५३

दोहा

सत्य-प्रभावे धर्म-सुत, गये मोक्ष गुण कोष ।
लहे झूठ अर कपटतें, दुर्योधन दुख दोष ॥५४
जे सुरझे ते सत्य करि, और न मारग कोय ।
जे उरझे ते झूठ करि, यह निश्चय अवलोय ॥५५
सत्यरूप जिनदेव हैं, सत्यरूप जिनधर्म ।
सत्यरूप निर्ग्रन्थ गुरु, सत्य समान न पर्म ॥५६
सत्यारथ आतम-धरम, सत्यरूप निर्वाण ।
सत्यरूप तप सयमा, सत्य सदा परवाण ॥५७
महिमा सत्य सुब्रत्त की, कहि न सकें मुनिराय ।
सत्य वचन परभावतें, सेवें सुर नर पाय ॥५८
जैसो जस है सत्य को, तैसौ श्री जिनराय ।
जाने केवल ज्ञान मे, परमरूप सुखदाय ॥५९
और न पूरण लखि सके, कीरति सुर नर नाग ।
या व्रतकू धारें सदा, तेहि पुरुष बडभाग ॥६०
नमस्कार या व्रतको, जो व्रत शिव-सुख देय ।
अर याके धारीनिको, जे जिनशरण गहेय ॥६१

राजभवन राजा बसे चग, श्रेणिक नाम भूप उत्तिंग।
क्षायिक समकित सोहे सार, देव शास्त्र गुरु भक्ति उदार ॥११
चेलणा राणी आदि बहु नार, अभय वारिषेण आदि कुमार।
राजा सुख भोगवे ससार, साधर्मी जन करे उपकार ॥१२
एक दिवस श्रेणिक महिपाल, सभा पूरि बैठो गुणमाल।
प्रधान पुरोहित श्रेष्ठी भूपती, बहुविध बात करै निजमती ॥१३
तिण अवसर आव्यो वनपाल, करड भरि फल फूल अपार।
भेंट मुकीने करेय जुहार, स्वामी मुझ बोनती अवधार ॥१४
विपुलाचल मस्तक सुविशाल, समोसरया श्रीवीर गुणमाल।
बार सभानें दे उपदेश, त्रिभुवनपति सेवें जिनेश ॥१५
तब आनद्यो श्रेणिक राय, निणी दिश सात पग जाय।
परोक्ष नमोऽस्तु कियो जोडी हाथ, विनय सहित भूप रूक साथ ॥१६
पछें मालीनें कीयो पसाय, वस्त्र आभूषण आख्या राय।
आनद मेरी तब उछली, वन्दन चाल्यो भूप मन रली ॥१७
राज प्रजा लोके सचरयो, अन्त पुर भविजन पर वस्यो।
हय गय रथ पालखी पदाति, गीत नृत्य बाजित्र जय क्षाति ॥१८
समोसरण माही जब गया, तब आनन्द भवियण मन भया।
मुखतें करता जय जयकार, भेंटया जिननर त्रिभुवन तार ॥१९
तीन प्रदक्षिणा जावे दोध, अष्ठ प्रकारी पूजा कीध।
जल गन्ध अक्षत पुष्प नैवेद्य, दीप धूप-फल अर्घ वसु भेद ॥२०
जिन पूजी स्तवन उच्चरी, भाव-सहित भक्ती घणु करी।
अनन्त गुणसागर जिनदेव, सुर नर फणिपति करें जिन सेव ॥२१
सफल चरण जाणो तेह तणा, जे जिन यात्र घरि आपणा।
प्रशस्त हस्त कमल ते कही, जिन पूजे ते पात्र-दान तें सही ॥२२
धन्य मुख जिह्वा तेह तणी, स्तवन करो जे जिन गुण भणी।
नयन सफल कीधो वली नेह, दीठ स्वामी जु जिन जेह ॥२३
जिनवाणी सुनी निज करण, सफल मस्तक तें नमे जिन-चरण।
तप जप ध्यान अध्ययन अभ्यास, उत्तम शरीर जे साधे शिववास ॥२४
पूजी स्तवी वाछे भूप इष्ट, जन्म जरा मृत्यू हरो अनिष्ट।
दुक्ख करमनो क्षय जिन करो, जनमि जनमि पाइ अनुसरो ॥२५
साष्टाग प्रणमी जिन पाय, पाछे वद्या गौतम गुरु पाय।
यथायोग्य भगति सहु करी, साधरमी जन विनय अनुसरी ॥२६
नर सभाइ कीयो परवेश, निज निज स्थानें बैठ्या नरेश।
धर्म वाछा करें भविजन्न, जिम चातक मेह जीवन्न ॥२७
दिव्य वाणि प्रगट तव भई, निज निज भासा पृच्छ जु जुई।
अर्ध मागधि श्री जिनवर भाप, सर्व सदेह करे विनाश ॥२८

दया सत्य को कर प्रणति, भाषो तीजो व्रत्त ।
जो इन द्वय विन ना हुवै, चोरी त्याग प्रवृत्त ॥६२

चालछन्द

चोरी छाडौ बड भाई, चोरी है अति दुखदाई ।
चोरी अपजस उपजावै, चोरी ते जस नहि पावै ॥६३
चोरी तें गुणगण नाशा, चोरी दुर्बुद्धि प्रकाशा ।
चोरी तें धर्म नशावें, इह आज्ञा श्रीगुरु गावें ॥६४
चोरी सो माता ताता, त्यागें लखि अपनो घाता ।
चोरी सो भाई-बंधा, कबहूँ न राखै सबधा ॥६५
चोरी तें नारि न नीरै, चोरी तें पुत्र न तीरै ।
चोरी सो मित्र विडारै, चोरी सो स्वामी न धारै ॥६६
चोरी सो न्याति न पाती, चोरी सो कबहुँ न साती ।
चोरी तें राजा दडै, चोरी तैं सीस विहडै ॥६७
चोरी तें कुमरण होई, चोरी मे सिद्धि न कोई ।
चोरी तें नरक निवासा, चोरी तें कष्ट प्रकाशा ॥६८
चोरी तें लहै निगोदी, चोरी तें जोनि जु बोदी ।
चोरी मे सुमति न आवै, चोरी तें सुमति न पावै ॥६९
चोरी तें नासे करुणा, चोरी मे सत्य न धरणा ।
चोरी तें शील पलाई, चोरी मे लोभ धराई ॥७०
चोरी तें पाप न छूटै, चोरी तें तलवर कूटै ।
चोरी तें इज्जति भगा, त्यागौ चोरनि को सगा ॥७१
चोरी करि दोष उपावे, चोरी करि मोक्ष न पावे ।
चोरी के भेद अनेका, त्यागौ सब धारि विवेका ॥७२
परको धन भूले-विसरे, राखौ मति ल्यो गुण पसरै ।
परको धन गिरियो परियो, दाबौ मति कबहु न धरियौ ॥७३
तोला घटि वधि जिन राखै, बोलौ मति कूडी साखै ।
कबहू औटा जिन देहो, डाका दे धन मति लेहो ॥७४
मति दगडा लूटो भाई, दौडाई है दुखदाई ।
ठग विद्या त्यागौ मित्रा, परधन है अति अपवित्रा ॥७५
काहूकू द्यो मति तापा, छाडो तन मन के पापा ।
पासीगर सम नहि पापी, पर प्राण हरै सतापी ॥७६
सो महानरक मे जावै, भव-भव मे अति दुख पावै ।
हाकिम ह्वै धन मति चोरौ, ले घूस न्याव मति बारौ ॥७७
लेखा मे चूक न कारै, इहि नरभव मूढ । न हारै ।
जे हरियो पर को वित्ता, ते पापी दुष्ट जु चित्ता ॥७८

रुलिहे भव माहि अनता, जे परधन प्राण हरता।
चुगली करि मतिहि लुटावौ, काहूकूं नाहि कुटावौ ॥७९
परको इज्जति मति हरि हो, परको उपगार जु करिहो।
धन धान नारि पसु बाला, हरिये कछुके नहिं लाला ॥८०
काहू को मन नहिं हरिये, हिरदा मे श्री जिन धरिये।
तिर नर जीवन की जीवी, मेटो मति करुणा कीवी ॥८१
तुम शल्य न राखौ बीरा, कर शुद्ध चित्त गुण धीरा।
रोका बाधी मति करिहो, काहू की सोपि न हरिहो ॥८२
बोलो मति दुष्ट जु बाके, तुम दोष गहौ मति काके।
काहू को मम न छेदौ, काहू को क्षेत्र न भेदौ ॥८३
काहू की कछु नहिं बस्ता, मति हरहु होय शुभ अस्ता।
इह व्रत धारौ वर वीरा, पावौ भव सागर तीरा ॥८४
जाकरि ह्वै कर्म विध्वस्ता, सो भाव धरौ परशस्ता।
तृण आदि रत्न परजता, पर धन त्यागौ बुधिवता ॥८५
हरिवौ रागादिक दोषा, करवौ कर्मन को सोषा।
हरि मर्म धर्म धरि भाई, हूजे त्रिभुवन के राई ॥८६
अपनो अर परको पापा, हरिये जिन वचन प्रतापा।
छाडै जु अदत्तादाना, करि अनुभव अमृत पाना ॥८७
चोरी त्यागें शिव होई चोरी लागे शठ सोई।
चोरी के दोय प्रकारा, निश्चै ब्यौहार विचारा ॥८८
निश्चै चोरी इह भाई तजि आतम जड लव लाई।
पर परणति प्रणमन चोरी, छाडें ते जिनमत धोरी ॥८९
तजिकै पर परणति जीवा, त्यागौ सब भाव अजीवा।
यह देह आदि पर वस्ता, तिनसो नहिं प्रीति प्रशस्ता ॥९०
बिन चेतन जे परपचा तिनमे सुख ज्ञान न रचा।
इनमे नहिं अपनो कोई, अपनो निज चेतन होई ॥९१
ताते सुनि के अध्यातम, छाडौ ममता सब आतम।
अपनो चेतन धन लेहो परकी आसा तजि देहो ॥९२
जे ममता पथ न लागे, निश्चै चोरी ते त्यागे।
जब निश्चै चोरी छूटै, तव काल भूपाल न कूटै ॥९३
इह निश्चै व्रत बखाना, या सम और न कोई जाना।
शिव पद दायक यह वृत्ता, करिये भवि जीव प्रवृत्ता ॥९४
जिन त्यागी परकी ममता, तिन पाई आतम-समता।
अब सुनि व्यवहार सरूपा, जा विधि जिनराज प्ररूपा ॥९५
इक देव जिनेसुर पूजौ, सेवौ मति जिन विन दूजौ।
विन गुरु निरग्रन्थ दयाला, सेवौ मति औरहि लाला ॥९६

सुनि श्री जिन जूके ग्रन्था, मति सुनहु और अघ-पथा।
मिथ्यात समान न चोरी, धारे तिनकी मति भोरी ॥९७
इह अतर बाहिज त्यागें, तब वृत्त विधान हि लागें।
सम्यक् ह्वै आतम भावा, मिथ्यात अशुद्ध विभावा ॥९८
सम्यक् निश्चय व्यवहारा, सो धारै तजि उरझारा।
वर व्रत्त अचौरज धारें, ते सर्व दोष को टारे ॥९९
या विन नहिं साधु गनिया, या विन नहि श्रावक भनिया।
श्रावक मुनि द्वय विध धर्मा, यह व्रत्त दुहुनि को मर्मा ॥१००
मुनि के सब ममता छूटी, समता तें दुरमति टूटी।
मुनि उपधि न एक धराही, कछु छाने नाहि कराही ॥१
देहादिक सो नहि नेहा, वरसै घट आनद मेहा।
मुनि के सब दोष जु नासें, तातें सु महाव्रत भाषे ॥२
मुनि के कछु हरनो नाही, चित लागै चेतन माही।
श्रावक के भोजन लेई, नहि स्वाद विषें चित देई ॥३
काम न क्रोध न छल माना, नहि लोभ महा बलवाना।
जे दोष छियालिस टार्लें, जिनवर की आज्ञा पाले ॥४
ते मुनिवर ज्ञान सरूपा, शुभ पच महाव्रत रूपा।
गृहपति के कछु इक धधा, कछु ममता मोह प्रवन्धा ॥५
छानें कछु करनो आवे, तातें अणुव्रत कहावै।
कूपादिक को जल हरिवौ, इह किंचित दोषहु धरिवो ॥६
मोटे सब त्यागें दोषा, काहू को हरिये न कोषा।
त्यागौ परधन को हरिवौ, छाडौ पापनि को करिवौ ॥७
सक्षेप कही यह बाता, आगे जु सुनहु अब भ्राता।
इह अणुव्रत को जु सरूपा, जिनश्रुत अनुसार प्ररूपा ॥८
अब अतीचार सुनि भाई, त्यागौ पचहि दुखदाई।
है चोरी को जु प्रयोगा, सो पहलो दोष अजोगा ॥९
चोरी को माल जु लेनो, इह दूजो अघ तजि देनो।
थोरे मोले वड वस्ता, लेवौ नहि कबहु प्रशस्ता ॥१०
राजा को हासिल गोपै, राजा की आणि जु लोपै।
इह तीजो दोष निरूपा, त्यागौ व्रत धारि अनूपा ॥११
देवे के तोला घाटे, लेवे के अधिका बाटे।
इह अतिचार है चौथो, त्यागौ शुभमति तें थोथो ॥१२
वधि मोल मे घटि मोला, मेले ह्वै पाप अतोला।
इह पचम है अतिचारा, त्यागें जिन मारग धारा ॥१३
ए अतीचार गुरु भाखे, जैनी जीवनिनें नाखे।
चोरी करि दुरगति होई, चोरी त्यागें शुभ सोई ॥१४

चोरी तजि अजन चोरा, तिरियो भव-सागर थोरा।
लहि महामत्र तप गहिया, ध्यानानल भववन दहिया ॥१५
अजन हूओ जु निरजन, इह कथा भव्य मनरजन।
वहुरि यो नृप श्रेणिक पुत्रा, है वारिषेण जगमित्रा ॥१६
कर परधन को परिहारा, पायौ भवसागर पारा।
चोरी करि तापस दुष्टा, पचागन साधनि पुष्टा ॥१७
लहि कोटपालकी त्रासा, मरि नरक गयौ दुख भाषा।
दलिद्दर का मूल जु चोरी, चोरी तजि अर तजि जोरी ॥१८
सब अघ तजि जिनसो जोरी, विनऊँ भैय्या कर जोरी।
चोरी तजियां शिव पावैं, यह महिमा श्री जिन गावें ॥१९
चोरी तें भव-भव भटकै, चोरी तें सब गुन सटकैं।
जो बुधजन चोरी त्यागें, सो परमारथ पथ लागें ॥२०

दोहा

परधन के परिहार विन, परम धाम नहि होय।
भये पार ते तीसरे, व्रत्त विना नहि कोय ॥२१
जे बूढे नर नरक म, गये निगोद अजान।
ते सब परधन-हरणतें, और न कोई वखान ॥२२
व्रत्त अचोरिज तीसरो, सब व्रतनि मे सार।
जो याको धारै व्रती, सो उतरै ससार ॥२३
याकी महिमा प्रभु कहे, जो केवल गुणरूप।
पर गुण रहित निरजना, निर्गुण निमलरूप ॥२४
कहे गणिद मुनिन्दवर, करें भव्य परमान।
जे धारें ते पावही, पूरण पद निर्वान ॥२५
अल्पमती हम सारिखे, कहे कौन विधि वीर।
नमस्कार या वृत्त को, धारे धर्मी धीर ॥२६
जे उरझे ते या विना, इह निश्चय उर धारि।
जे सुरझे ते या करी, यह व्रत है अघहारि ॥२७
दया सत्य सतोष अर, शीलरूप है एह।
उतरै भवसागर थकी, धरै या थकी नेह ॥२८
दया सत्य अस्तेयको, करि वन्दन मन लाय।
भाषो चौथो शीलव्रत, जो इन विगर न थाय ॥२९

इति अचौर्याणुव्रत वणन

प्रणमि परम रस शाति को, प्रणमि धरम गुरुदेव।
वरणो सुजस सुशील को, करि शारद की सेव ॥३०

शीलव्रत को नाम है, ब्रह्मचर्य सुखदाय ।
जाकरि चर्या ब्रह्म मे, भव वन भ्रमण नशाय ॥३१
ब्रह्म कहावें जीव सब, ब्रह्म कहावें सिद्ध ।
ब्रह्मरूप कैवल्य जो, ज्ञान महा परसिद्ध ॥३२
ब्रह्मचर्य सो वृत्त ना, न पर ब्रह्म सो कोय ।
व्रती न ब्रह्म-लवलीन सो, तिरै, भवोदधि सोय ॥३३
विद्या ब्रह्म-विज्ञान सी, नही दूसरी जान ।
विज्ञ नही ब्रह्मज्ञ सो, इह निश्चय उर आन ॥३४
ब्रह्म वासना सारिखी, और न रस की केलि ।
विषय वासना सारिखी, और न विष की वेलि ॥३५
आतम अनुभव सिद्ध सी, और न अमृत वेलि ।
नही ज्ञान सो वलवता, देहि मोह को ठेलि ॥३६
अव्रत नाहिं कुशील सो, नरक निगोद प्रदाय ।
नही सील सो सजमा भाषें श्री जिनराय ॥३७
धर्म न श्री जिनधर्म से, नहिं जिनवर से देव ।
गुरु नहिं मुनिवर सारिखे, रागी सो न कुदेव ॥३८
कुगुरु न परिग्रह धारिसे, हिंसा सो न अधर्म ।
मर्म न मिथ्या सूत्र सो, नहीं मोह सो कर्म ॥३९
द्रष्टा न कोई जीव सो, गुन न ज्ञान सो आन ।
ज्ञान न केवल ज्ञान सो, जीव न सिद्ध समान ॥४०
केवलदर्शन सारिखो, दर्शन और न कोई ।
यथाख्यात चारित्र सो, चारित और न होइ ॥४१
नहिं विभाव मिथ्यात सो सम्यक सो न स्वभाव ।
क्षयिक सो सम्यक नही, नही शुद्ध सो भाव ॥४२
साधु न क्षीण कषाय से, श्रेणि न क्षपक समान ।
नहिं चौदम गुण थान सो, और कोई गुणथान ॥४३
नहिं केवल प्रत्यक्ष सो, और कोई परमाण ।
सुकल ध्यान सो ध्यान नहि, जिनमतसो न वखाण ॥४४
अनुभव सो अमृत नही, नहि अमृत सो पान ।
इन्द्री रसनासी नही, रस न शाति सो आन ॥४५
मनोगुप्ति सी गुप्ति नहि, चचल मन सो नाहिं ।
निश्चल मुनि से और नहि, नही मौन मन माहिं ॥४६
मुनि से नहिं मतिवत नर, नहि चक्री से राव ।
हलधर अर हरि सारिखो, हेत न कहूँ लखाव ॥४७
प्रतिहरि से न हठी भए, हरि से और न सूर ।
हर से तासम धार नहि, वह विद्या भरपूर ॥४८

नारद से न भ्रमत नर, भ्रमे अढाई दीप।
कामदेव से सुन्दर न, नहिं जिनसे जगदीप ॥४९
जिन-जननी जिन-जनक से, और न गुरुजन जानि।
मिष्ट न जिनवानी समा, यह निश्चय परमान ॥५०
जिनमूरति सी मूरति न, परमानद सरूप।
जिनसूरति सी सूरति न, जासम और न रूप ॥५१
जिनमदिर से मदिर नही, जिन तन सो न सुगन्ध।
जिन विभूति सी भूति नहि, जिन श्रुति सो न प्रबध ॥५२
जिनवर से न महाबली, जिनवर से न उदार।
जिनवर से न मनोहरा, जिनसे और न सार ॥५३
चरचा जिन चरचा समा, और न जग मे कोइ।
अर्चा जिन अर्चा समा, नही दूसरी होइ ॥५४
राज न श्री जिनराज से, जिनके राग न रोस।
ईति भीति नहिं राज मे, नही एक भी दोस ॥५५
सेवें इन्द नरिन्द सब, भजहिं फणीस मुनीस।
रटें सूर ससि सुर सबै, जिनसम और न ईस ॥५६
अर्चें अहमिंद्रा महा, अरचें चतुर सुजान।
हरि हर प्रति हरि हलि मदन, पूजें चक्रि पुमान ॥५७
गुरु कुल कर नारद सबै, सेवें तन मन लाय।
जग मे श्री जिन राय सो, पूज्य न कोइ लखाव ॥५८
तीर्थंकर पर सारिखा, और न पद जग माहिं।
बज्र वृषभ नाराच सो, सहनन कोई नाहिं ॥५९
सम चतुस्र सठान सो, और नही सठाण।
पुरुष सलाका सारिखा, और न कोई जाण ॥६०
चक्रायुध हल-आयुधा, कुसुमायुध इत्यादि।
धर्मायुध के दास सब, वज्रायुध नृप आदि ॥६१
जे हैं चरम शरीर धर, तद भव मुक्ति मुनीश।
तिन सौ कोई न मानवा, नमे सुरासुर सीस ॥६२
नही सिद्ध पर्याय सी, और शुद्ध पर्याय।
नही केवली कायसी, और दूसरी काय ॥६३
अर्हंत सिध साधू सबै, केवल भाषित धर्म।
इन चउ सें नहिं मगला, उत्तम और न पर्म ॥६४
इन चउ शरणनि सारिखे, शरण नाहिं जग माहिं।
सघ न चउविधि सघ से, जिनके सशय नाहिं ॥६५
चोर न इन्द्री-चित से, मुसें धर्म धन भूरि।
चारित से नहिं तलवरा, डारे तिनको चूरि ॥६६

जैसें ए उपमा कही, तैसें शील समान ।
व्रत न कोई दूसरो, भाषें श्री भगवान ॥६७
वक्ता सर्वज्ञ से नही, श्रोता गणधर मे न ।
कथन न आतम ज्ञान सो, साधक साधु जिसे न ॥६८
बाधक नहिं रागादि से, तिनहिं तजें जोगिन्द ।
नहिं साधन समभाव से, धारें वीर मुनिन्द ॥६९
पाप नही परद्रोह सो, त्यागें सज्जन सत ।
पुण्य न पर उपकार सो, धारें नर मतिवत ॥७०
लेश्या शुक्ल समान नहिं, जामे उज्ज्वल भाव ।
उज्ज्वलता निकषाय सी, और न कोई लखाव ॥७१
दया प्रकाशक जगत मे, नही जैन सो कोइ ।
पर्म धर्म नहिं दूसरो, दया सारिखो होइ ॥७२
कारण निज कल्याण को, करुणा तुल्य न जानि ।
कारण जिन विश्वास को, नही सत्य सो मानि ॥७३
सत्यारथ जिन सूत्र सो, और न कोइ प्रवानि ।
सर्व सिद्धि को मूल है, सत्य हिये मे आनि ॥७४
नहिं अचौर्य व्रत सारिखो, भय हरि भ्राति निवार ।
नहिं जिनेन्द्रमत सारिखो, चोरी वरज उदार ॥७५
नही सील सो लोक मे, है दूजो अविकार ।
कारण शुद्ध स्वभाव को, भव-जल तारणहार ॥७६
नहिं जिनशासन सारिखो, शील प्रकाशन हार ।
या ससार असार मे, जा सम और न सार ॥७७
नहिं सतोष समान है, सुख को मूल अनूप ।
नही जिनेसुर धर्म सो, वर सतोष स्वरूप ॥७८
कोमल परिणामानि सो करुणाकरण नाहिं ।
नहिं कठोर भावानि सो, दयारहित जग माहि ॥७९
नहिं निरलोभ स्वभाव सो, सत्य मूल है कोइ ।
नही लोभ सो लोक मैं, कारण मिथ्या होइ ॥८०
मूल अचोरिज व्रत को, निस्पृहतासो नाहिं ।
चोरी मूल प्रपच सो, नहीं लोक के माहि ॥८१
राजवृद्धि को कारणा, नही नीति सो जानि ।
नाहिं अनीति प्रचार सो, राज विघन परवानि ॥८२
कारण सजम शील को, नहिं विवेक सो भान ।
नहिं अविवेक विकार सो, मूल कुशील वखान ॥८३
मूल परिग्रह त्याग को, नहिं वैराग समान ।
परिग्रह सग्रह कारणा, तृष्णा तुल्य न आन ॥८४

करुणा निधि न जिनेन्द्र सो, जगत मित्र है सोय।
नहिं क्रोधी सो निरदई सर्वनाश को होय ॥८५
सतवादी सर्वज्ञ से, नही लोक मे कोइ।
कामी लोभी से महा, लापर और न होइ ॥८६
सम्यक् दृष्टी जीव सो, और न मन मद मोर।
मिथ्या दृष्टी जीव सो, और न परधन चोर ॥८७
समताभाव न सत्य सो, सीलवत्त नहिं धीर।
लपट परिणामी जिसो, नाहिं कुशीली वीर ॥८८
निसप्रेही निरदुदसो, परिग्रह त्यागी नाहिं।
तृष्णावत असतसो, परिग्रह वत न काहिं ॥८९
दारिद-भजन, जस करण, कारण सपति कोइ।
नही दान सो दूसरो, सुरग मुक्ति दे सोइ ॥९०
चउ दाननि से दान नहिं, औषध और आहार।
अभयदान अर ज्ञान को, दान कहे गण-धार ॥९१
रागादिक परिहार सो, और न त्याग बखान।
त्याग समान न सूरता, इह निश्चय परवान ॥९२
तप समान नहिं और है द्वादश माहिं निधान।
नही ध्यान सो दूसरो भाषें श्री भगवान ॥९३
ध्यान नही निज ध्यान सो, जो कैवल्य स्वरूप।
जा प्रसाद भवरूप मिटि, जीव होय चिद्रूप ॥९४
क्षीण मोह से लोक मे, ध्यानी और न जानि।
कारण आतम ध्यान को मन निश्चलता मानि ॥९५
कारण मन वशि करण को, नही जोग सो और।
जोग न निज सजोग सो, है सबको सिर मौर ॥९६
भोग न निज रस भोग सो, जामे नाहिं विजोग।
रोग न इन्द्री भोग सो, इह भाषें भवि लोग ॥९७
शोक न चिन्ता सारिखौ, विकलपरूप बिडरूप।
नहिं संशय अज्ञान सो, लखै न चेतनरूप ॥९८
विकलपजाल-परित्याग सो, और नही वैराग।
वीतराग से जगत मे, और नही बडभाग ॥९९
छती सपदा चक्रि की, जो त्यागै मतिवत।
ता सम त्यागी और नहिं, भाषें श्री भगवत ॥१००
चाहै अछती भूमिकौं, करै कल्पना मूढ।
ता सम रागी और नहिं, सो शठ विषयारूढ ॥१
नव जौवन मे व्याह तजि वाल ब्रह्म व्रत लेय।
ता सम वैरागी नही, सो भवपार लहेय ॥२

कटक नहिं क्रोधादि से, चढ़ि जु रहे गिर मान ।
मुनिवर से जोधा नही, शस्त्र न शुकल समान ।।३
भाव समान न भेष है, भाव समान न सेव ।
भाव समान न लिंग है, भाव समान न देव ।।४
ममता-माया रहित सो, उत्तम और न भाव ।
सोइ शुद्ध कहिये महा, वर्जित सकल विभाव ।।५
कारण आतम ध्यान को, भगवत भक्ति समान ।
और नही ससार मे, इह धारौ मतिमान ।।६
विघन-हरण मगल-करन, जप सम और न जानि ।
जप नहिं अजप जाप सौ, इह श्रद्धा उर आनि ।।७
कारण रागविरोध को, भाव अशुद्ध जिसौ न ।
कारण समताभाव को, विरकित भाव तिसौ न ।।८
कारण भव वन-भ्रमण के, नहिं रागादि समान ।
कारण शिवपुर गमन को, नही ज्ञान सो आन ।।९
सम्यग्दर्शन ज्ञान व्रत, ए रतनत्रय जानि ।
इनसे रतन न लोक में, ए शिव दायक मानि ।।१०
निज अवलोकन दर्शना, निज जानें सो ज्ञान ।
निजस्वरूप को आचरण, सो चारित्र निधान ।।११
निजगुण निश्चय रतन ये, कहे अभेद स्वरूप ।
व्यवहारे नव तत्व की, सरधा अविचल रूप ।।१२
तत्त्वारथ श्रद्धान सो, सम्यग्दर्शन जानि ।
नव पदारथ को जानिवौ, सम्यग्ज्ञान वखानि ।।१३
विषय कषाय व्यतीत जो, सो व्यवहार चरित्र ।
ए रतनत्रय भेद हैं, इनसे और न मित्र ।।१४
देव जिनेसुर गुरु जती, धर्म अहिंसारूप ।
इह सम्यक व्यवहार है, निश्चय निज चिद्रूप ।।१५
नहिं निश्चय व्यवहार सी, सरधा जग मे कोइ ।
ज्ञान भक्ति दातार ए, जिन भाषित नय दोइ ।।१६
भक्ति न भगवत भक्ति सी, नहिं आतम सो बोध ।
रोध न चित्त निरोध सो, दुग्नयसो न विरोध ।।१७
दुर्मतिसी नहिं शाकिनी, हरै ज्ञान सो प्रान ।
नमोकार सो मन्त्र नहिं, दुरमति हरे निवान ।।१८
नहिं समाधि निरूपाधि सी, नहिं तृष्णा सी व्याधि ।
तन्त्र न परम समाधि सो, हरै सकल असमाधि ।।१९
भवयन्त्र जु भयदाय को, ता सम विघन न कोय ।
सिद्धयन्त्र सो सिद्धकर, और न जग मे होय ।।२०

सिद्धक्षेत्र सो क्षेत्र नहिं, सर्व लोक के सीस ।
यात्री जतिवर से नही पहुँचै तहा मुनीस ॥२१
षोडसकारण सारिखा, और न कारण कोय ।
तीर्थेश्वर पद सारिसा और न कारज होय ॥२२
नाही दर्शन शुद्धि सा, षोडश माही जान ।
केवल रिद्धि बराबरी, और न रिद्धि बखान ॥२३
नहि लक्षण उपयोग से, आतम तें जु अभेद ।
नाहि कुलक्षण कुबुधि से, करै धर्म को छेद ॥२४
धर्म अहिसारूप के, भेद अनेक बखान ।
नहि दशलक्षण धर्म से, जग मे और निधान ॥२५
क्षमा उत्तमा सारिखो और दूसरी नाहि ।
दशलक्षण मे मुख्य है, क्रोध-हरण जगमाहि ॥२६
नीर न शाति स्वभाव सो, अगनि न कोप समान ।
मान समान न नीचता, नहि कठोरता आन ॥२७
मानी को मन लोक मे, पाहन-तुल्य बखान ।
मान समान अज्ञान नहि भाखें श्री भगवान ॥२८
निगरबभाव समान सो, मृदु नहि जगमे और ।
हरै समस्त कठोरता, है सब कौ सिरमौर ॥२९
कीच न कपट समान को, वक्र न कपट समान ।
सरल भाव सो उज्जवल, न सूधौ कोइ न आन ॥३०
आपद लोभ समान नहि, लोभ समान न लाय ।
लोभ समान न खाड है, दुख औगुन समुदाय ॥३१
नहि सन्तोष समान धन, ता सम सुक्ख न कोय ।
नहि ता सम अमृत महा, निर्मल गुण है सोय ॥३२
श्रेष्ठ नहि निर्मल भाव सो, जहा न अशुभ सुभाव ।
नाहि मलिन परिणाम सो, दूजौ कोई कुभाव ॥३३
सन्देह न अयथाथ सो, जाकरि भ्रम न जाय ।
नहि यथार्थ सो लोक मे, निस्सन्देह कहाय ॥३४
नाहि कलक कषाय सो, भाखें श्री भगवन्त ।
नि कलंक न अकषाय से, करै कर्म को अन्त ॥३५
शुचि नहि मन-शुचि सारिखी, करै जीव को शुद्ध ।
अशुचि नही मन-अशुचिसी, इह भाखें प्रतिबुद्ध ॥३६
नही असजम सारिखौ, जगत डबोवनहार ।
नहि सचय सो लोक मे, ज्ञान वढावन हार ॥३७
वचक नहि परपच से, ठगें सकल को सोइ ।
विष-वाछना सारिखी, नाहि ठगौरी कोइ ॥३८

द्विधा धर्म कियो परकाश, द्रव्य पदारथ तत्त्व निवास ।
पट्द्रव्य पचासतिकाय, जुजूआ लक्षण गुण पर्याय ॥२९
लोकालोक तणु स्वरूप, त्रिकाल गोचर रूप अरूप ।
श्री जिनवाणी सूर्य समान, टाले मोह तिमिर अज्ञान ॥३०
धर्म हस्त अवलव आपिया, स्वर्ग मोक्ष पद भवि थापिया ।
महाव्रत अणुव्रत समकित सार, निजशक्ति मिलिया भवतार ॥३१
धर्म सुणी आणद्यो राय, वली प्रणमी श्री जिनवर पाय ।
गौतम गणधर वली वदिया, धम वृद्धि सहुने दिया ॥३२
कर-पद्म जोडी वीनवे ते भूप, गौतम स्वामी नु गुण-कूप ।
गृहस्थ धर्म तणो विस्तार, विधी सहित कहो श्रावक आचार ॥३३
मति श्रुत अवधि मन परियय ज्ञान, सप्त रिद्धि जाणो निधान ।
गणपति कहे सावधानें सुणो, सप्तम अगमाहे जिन भणो ॥३४
द्विविघ धर्म तणी न हि आदि, सदाकाल सास्वतो अनादि ।
भूत भावि छि अनें वर्तमान, त्रिलोक्य माहि दीपे जिम भान ॥३५
द्वादश अग कहीइ श्रुत ज्ञान, सातमो उपासकाध्ययन अभिधाम ।
उपासक व्रत तणो विचार, बहुविध कहु ते अगमझार ॥३६
श्रावक अग तणो सुणो मान, जे जिम कहीउ श्री वर्धमान ।
लक्ष एकादश पद परिमाण, सत्तरि सहस्र अधिक सू जाण ॥३७
तिन अक्षर पद एक ज तणा, सोलसे चौत्रीस कोडि तस भणा ।
असी लक्ष सप्त सहस्र कही, आठ सें अठयासी अक्षर सही ॥३८
बत्तीस अक्षर तणा सलोक, सख्या केती कहि कोविद लोक ।
कोडि एकावन अधिक अष्ट लक्ष, सहस्र चौरासी ते समक्ष ॥३९
छै से अधिका साढा एकवीस, श्लोक सख्या कहि जगदीश ।
धर्म धर्म सहु को जिन कहे, धम भेद ते विरला लहे ॥४०
कनक जेम चहुविध परखीय, छेद भेद कष ताप निरखीय ।
चहु गति माहि पामे जीव दुक्ख, धम विना कले न हिं काई सुक्ख ॥४१
अधोगति पडता जे उद्धरे, सार्थक नाम धर्म शिव करे ।
श्रावक ते जे समकित धरे, ज्ञान-सहित निज तप जे करे ॥४२
दया-सहित व्रत पाले सार, भावसहित दान दे चार ।
॥४३

नहिं त्रिलोक मे दूसरो, तप सो ताप-निवार ।
त्रिविध ताप से ताप नहिं, जरा जन्म मृति धार ॥३९
इच्छासी न अपूरणा, पूरी होइ न सोइ ।
नहिं इच्छा जु निरोध सी, तपस्या दूजो होइ ॥४०
त्याग समान न दूसरो, जग-जजाल निवार ।
नही भोग अनुराग सो, नरकादिक दातार ॥४१
नही अकिञ्चन सारिखौ, निरभय लोक मंझार ।
नर परिगरही सारिखौ, भय रूप न निरधार ॥४२
परिग्रह सो नहिं पापगृह, नहिं कुशील सो काद ।
ब्रह्मचर्य सो और नहिं ब्रह्मज्ञान को वाद ॥४३
नही विषय रस सारिखौ, नीरस त्रिभुवन माहिं ।
अनुभव रस आस्वाद सो, सरस लोक मे नाहिं ॥४४
अदयासी नहिं दुष्टता, अनृत सो न प्रपच ।
छल नहिं चोरी सारिखौ, चोर समान न टच ॥४५
हिंसक सो नहिं दुर्जन, हरै पराये प्राण ।
नहिं दयाल सो सज्जना, पीरा हरै सुजाण ॥४६
नहिं विश्वास-घाती अवर, झूठे नर सो कोय ।
नहिं व्यभिचारी सो अना-चारी जग मे होय ॥४७
विकथा सो न प्रलाप है, आरति सो न विलाप ।
पाप न द्वय नय थाप सो, जिनवर सो न प्रताप ॥४८
सन्ताप न कोई सोक सो, लोक न सिद्ध समान ।
धन प्राणन के नाश सो, और न शोक बखान ॥४९
जड जिय सो अभिलाष नहिं, गुण-मणि सो न मिलाप ।
श्री जिनवर गुणगान सो, और न कोई अलाप ॥५०
नहिं विकथा नारीनिसी, कथा न धर्म समान ।
नहिं आरति भोगार्त्तिसी, दुरगति दाई आन ॥५१
ॐकार समान नहिं सर्व शास्त्र की आदि ।
महा मङ्गलाचार है, यह उपचार अनादि ॥५२
नाद न सोऽहं सारिखौ, नही स्वरस सो स्वाद ।
स्यादवाद सिद्धान्त सो, और नही अविवाद ॥५३
एक एक नय पक्ष सो, और न कोई वाद ।
नाहिं विषाद विवाद सो, निद्रा सो न प्रमाद ॥५४
स्त्यान गृद्धि निद्रा जिसी, निद्रा निंद्य न और ।
परनिन्दा सो दोष नहिं, भाषें जिन जग-मौर ॥५५
निन्दा चउविधि सघ की, ता सम अघ नहिं कोय ।
नाहिं प्रससा जोगि कोउ जिन आगम सो होय ॥५६

सार न अध्यातम जिसौ, निज अनुभव को मूल ।
नहिं मुनि से अध्यातमी, सर्व विषय प्रतिकूल ।।५७
विषय कषाय बराबरी, वैरी जियके नाहिं ।
ज्ञान विराग विवेक से, हितू नाहिं जग माहिं ।।५८
अध्यात्म चरचा समा चरचा और न कोय ।
जिनपद अरचा सारिखी, अरचा और न होइ ।।५९
नाहिं गणाधिप से महा चरचा-कारक जानि ।
नाहिं सुरधिप सारिखे, अरचा-कारक मानि ।।६०
गमन न ऊरध गमन सो, नही मोक्ष सो धाम ।
रोधक नाही कम से, हरो कर्म तजि काम ।।६१
शत्रु न कोई अधर्म सो, मित्र न धम समान ।
धर्म न वस्तु स्वभाव सो हिंसा-रहित्त बखान ।।६२
निज स्वभाव को विस्मरण, नहिं ता सम अपराध ।
साधे केवलभाव को, ता सम और न साध ।।६३
नर देहा सम देह नहिं, लिङ्ग न पुरुष समान ।
वेद नही नर वेद सो, सुमन समो न सयान ।।६४
त्रस-काया सम काय नहिं, पचेन्द्री जा माहि ।
पचेन्द्री नहिं मनुष से, जे मुनिव्रत्त धराहिं ।।६५
मुनि नहिं तदभवमुक्ति से, जे केवल पद पाय ।
पहुँचे पचमगति महा, चहुगति भ्रमण नशाय ।।६६
गत्ति नहिं पचम गत्ति जिसी, जाहि कहैं निजधाम ।
अविनश्वर पुर नाम जा, जा सम नगर न राम ।।६७
नाहिं शुद्ध उपयोग सो मारग सूधौ होय ।
नाही मारग मुक्ति को, भव-विरक्ति सो कोय ।।६८
लोक शिखर सो ऊच नहिं, सबके शिरपर सोय ।
नही रसातल सारिखौ नीचो जग म जोय ।।६९
जित मन इन्द्री धीर से और न वद्य वखानि ।
विषयी विकलनि सारिखे, और न निंद्य प्रवानि ।।७०
नहिं अरिष्ट अघ कम से, शिष्ट न सुमग समान ।
नाहिं पञ्च परमेष्ठि से, और इष्ट परवान ।।७१
जिन-देवल से देवल न, नही जैन से विम्ब ।
केवल सो ज्ञायक नही, जामे सब प्रतिविंब ।।७२
नाहि अकृत्रिम सारिखे, देवल अतिसयरूप ।
चैत्य वृक्ष से वृक्ष नहिं, सुरतरु सें हु अनूप ।।७३
जोगी जिनवर से नही, जिनकी अचल समाधि ।
निजरस भोगी ते सही, वर्जित सकल उपाधि ।।७४

इन्द्रिय भोगी इन्द्र से, नाहिं दूसरे जानि।
इन्द्रा जीत मुनीन्द्र से, इन्द्र नरेन्द्र न मानि ॥७५
राग द्वेष परपच से, असुर और नहिं होय।
दर्शन-ज्ञान-चारित्र से, असुर-नाशक न कोय ॥७६
काम-क्रोध-लोभादि से, नाहिं पिशाच वखानि।
सम सतोष विवेक से, मत्राधीश न मानि ॥७७
माया मच्छर मान से, दुखकारी नहिं वीर।
निगरव निकपटभाव से, सुखकारी नहिं वीर ॥७८
मैल न कोई मिथ्यात सो, लग्यो अनादि विरूप।
सावुन भेद विज्ञान सो, और न उज्ज्वलरूप ॥७९
मदन दर्प सो सर्प नहिं, डसै देव नर नाग।
गरुड न कोई शील सो, मदन जीत वडभाग ॥८०
मैल न मोहासुर समो, सकल कर्म को राव।
महामल्ल नहिं वोध सो, हरै मोह-परभाव ॥८१
भर्म न कोई कर्म से, कारण सशय जानि।
भ्रमहारी सम्यक्त्व से, और न कोई मानि ॥८२
विष नहिं विपयानद से, देहि अनता मर्ण।
सुधा न ब्रह्मानद सो, अनुभवरूप अवर्ण ॥८३
क्रूर न क्रोधी सारिखे, नही क्षमी से शात।
नीच न मानी सारिखे, निगरवसे न महात ॥८४
मायावी सो मलिन नहिं, विमल न सरल समान।
चितातुर लोभीनसे, दीन न दुखी अयान ॥८५
दुष्ट न दोषी सारिखे, रागी से नहिं अध।
अहकार ममकार सो, और न कोई वध ॥८६
मोही से नहिं लोक मे, गहलरूप मतिहीन।
कामातुर से आतुर न, अविवेकी अघलीन ॥८७
ऋण नहिं आस्रव-वध से, राखे भव मे रोकि।
मुनिवर से मतिवत्त नहिं, छूटे ब्रह्म विलोकि ॥८८
सवर निर्जर सारिखे, रिण-मोचन नहिं कोइ।
दुर्जर कम हरें महा, मुक्तिदायक सोइ ॥८९
विपति न वाछा सारिखी, वाछा-रहित मुनीश।
मृगतृष्णा मिथ्या जिसो, और न कहे रिषीश ॥९०
समतासी ससार मे, साता कोइ न जानि।
सातासी न सुहावणी, इह निश्चय उर आनि ॥९१
ममतासी मानो भया, और असाता नाहिं।
नाहिं असाता सारिखी, है अनिष्ट जगमाहिं ॥९२

उदासीनता सारिखी, समता-करण न कोय ।
जग अनुराग समानता, समता मूल न जोय ॥९३

नाहि भोग-अभिलाप सी, भूख अपूरण वीर ।
नाहि भोग वैराग सी, पूरणता है वीर ॥९४

नाही विपयाशक्ति, सी त्रिसा त्रिलोकी माहि ।
विरकततासी विश्व मे, और तृषा-हर नाहि ॥९५

पराधीनता सारिखी, नही दीनता कोइ ।
नहि कोई स्वाधीनता, तुल्य उच्चता होइ ॥९६

नही समरसी भाव सी, समता त्रिभुवन माहि ।
पक्षपात बकवाद सी, और न विसमता नाहि ॥९७

जगतकोमना कल्पना,—तुल्य कालिमा नाहि ।
नही चेतना सारिखी ज्ञायक त्रिभुवन माहि ॥९८

ज्ञान चेतना सारिखी, नही चेतना शुद्ध ।
कर्म कर्मफल चेतना, ता सम नाहि अशुद्ध ॥९९

नर निरलोभी सारिखे, नाहि पवित्र बखान ।
सन्तोषी से नहि सुखी, इह निश्चय परवान ॥१००

निरमोही अर निरममत, ता सम सन्त न कोय ।
निरदोषी निरवैर से, साधु और न कोय ॥१

दोष समान न मोषहर राग समान न पासि ।
मोह समान न बोध हर, ए तीनू दुखरासि ॥२

व्रती न कोई निशल्य सो, माया तुल्य न शल्य ।
हीन न जाचिक सारिखौ त्यागी से न अतुल्य ॥३

कामी से न कलकघी, काम समान न दोष ।
परदारा परद्रव्य सो, और न अघ को कोष ॥४

शल्य समान न है सली, चुभी हिये के माहि ।
नहि निरदयी स्वभाव सो, मूढा और कहाहि ॥५

शोच न सग समान है, सग न अग समान ।
अग नही द्वय अग से, तिनहि तजै निरवान ॥६

कारमाण अर तैज सा, ए द्वय देह अनादि ।
लगे जीव के जगत मे, रोग महा रागादि ॥७

गेह समान न दूसरो, जानूँ कारागेह ।
देह समान न गेह है, त्यागौ देह-सनेह ॥८

ए काया नहि जीव की, सो है ज्ञान शरीर ।
मृत्यु न ज्ञान शरीर की, नही रोग को पीर ॥९

नाही इष्ट-वियोग सो, शोक मूल है कोइ ।
काया माया सारिखौ, इष्ट न जग के जोइ ॥१०

नहिं सकल्प विकल्प सो, जाल दूसरो जानि।
नहि निरविकलप ध्यान सो, छेदक जाल वखानि ॥११
नही एकता सारिखी, परम समाधि स्वरूप।
नही विषमतासी अवर, सठता रूप विरुप ॥१२
चिन्ता सी असमाधि नहिं, नहिं तृष्णा सी व्याधि।
नहिं ममता सी मोहनी, मायासी न उपाधि ॥१३
ज्ञानानन्दादिक महा, निजस्वभाव निरदाव।
तिनसो तन्मय भाव जो, सो एकत्व कहाव ॥१४
आशासी न पिशाचिनी, आसासी न असार।
नही जाचना सारिखी, लघुता जगत मझार ॥१५
दान कलासी दूसरी, दुख-हरणी नहिं कोइ।
ज्ञान कलासो जगत मे, सुखकारी नहिं कोइ॥ १६
नाहिं क्षुधासी वेदना, व्यापै सबको सोइ।
अन्न-पान दातार से, दाता और न होइ ॥१७
पर दुख हरणी सारिखी, गुरुता और न जानि।
पर पीडा करणी समा, खलता कोइ न मानि ॥१८
शुद्ध पारणामिक समा, और नाहिं परिणाम।
सकल कामना त्याग सो, और न उत्तम काम ॥१९
धर्म-सनेही सारिखा, नाहिं सनेही होइ।
विषय-सनेही सारिखा, और कुमित्र न कोइ ॥२०
सर्व वासना त्याग सी, और न थिरता वीर।
कष्ट न नरक निगोद से, नही मरणसी पीर ॥२१
राज-काज अभ्यास सो, और न दुरगति दाय।
जोगाभ्यास अभ्यास सो, और न सिद्धि उपाय ॥२२
नहिं विराधना सारखी, वाधाकरण कहांहि।
आराधन सी दूसरो, भव-बाधा-हर नाहिं। २३
निजसरूप आराधना, अचल समाधि स्वरूप।
ता सम शिव साधन नही, यह भावें जिनभूप ॥२४
निज सत्ता सी निश्चलता, और न मानो मित्त।
आधि-व्याधि तें रहित जो, ध्यावौ ताहि निचित ॥२५
निज सत्ता को भूलि जे, राचें माया माहिं।
धरि धरि काया मे भ्रमे यामे सशय नाहिं ॥२६
मुनिव्रत तजि भवभोग को, चाहें जे मति मद।
तिनसे मूढ न लोक मे, इह भाषें जिनचन्द ॥२७
वृद्ध भये हू गेह को, जो न तजे मतिहीन।
तिनसे मूढ न जगत मे, कापुरुषा न मलीन ॥२८

गेह तजें नव वर्ष के, धरें महाव्रत सार।
तिनसे पूज्य न लोक मे, ते गुण वृद्ध अपार ॥२९
नहि वैरागी जीव से, निरबधन निरुपाधि।
नही जु रागी सारिखे, धारक आधि रु व्याधि ॥३०
निजरस आस्वादन-विमुख, भुगतें इन्द्रीभोग।
नरकवासना ते लहैं, तिनसे नाहि अजोग ॥३१
अभविनि से न अभागिया, भव्यनि से न सभाग।
निकटभव्य से भव्य नहि, गहैं ज्ञान वैराग ॥३२
नहि दरिद्र दुरबुद्धि सो, दलिद्दर सो न दुकाल।
नहि सपति सन्मति जिसी, नही मोह सो जाल ॥३३
नही शमी से सयमी, व्रत सो नाहि विधान।
नहि प्रधान जिनबोध सो, निज निधि सो न निधान ॥३४
कोष न गुणभडार सो, सदा अटूट अपार।
औगुन सो नहि गुणहरा, भव-भव दुख-दातार ॥३५
खल स्वभाव सो औगुन न, गुण न सुजनता तुल्य।
सत्य पुरुष निरवैर से, जिनके एक न शल्य ॥३६
खलजन दुरजन सारिखे, और न दूसरे नाहि।
भववन सो वन नाहि कौ, भ्रमै मूढ जा माहि ॥३७
विषवृक्ष न वसुकर्म से, नानाफल दुखदाय।
बेलि न मायाजाल सी, जगजन जहाँ फँसाय ॥३८
दुरनय पक्षी सारिखे, नाहि कुपक्षी आन।
दैत्य न निरदय भाव से, तिमिर न मोह समान ॥३९
मन-उनमाद गयंद सो, और न वनगज कोइ।
क्रूरभाव सो सिंह नहि, ठग न मदन सो सोइ ॥४०
नहि अजगर अज्ञान सो, ग्रसै जगत को जोइ।
नहि रक्षक निज ध्यान सो, काल हरण है सोइ ॥४१
थिर चर से नहि वनचरा, बसे सदा भव माहि।
नहि कटक क्रोधादि से, दया तिनू महि नाहि ॥४२
विष-पहुप न विषयादि से, रहै कुवासनि पूरि।
नाहि कुपात्र कुसूत्रसे, ते या वन मे भूरि ॥४३
पथ न पावें जगत मे, मुकति तनो जग जत।
कोइक पावै ज्ञान निज, सोई लहै भव-अत ॥४४
नहि सेरो जिनवानि सी, दरसक गुरु से नाहि।
नगर नही निरवाण सो, जहा सत ही जाहि ॥४५
नहि समुद्र ससार सो, अति गभीर अपार।
लहर न विषय तरगसी, मच्छ न जमसो भार ॥४६

भ्रमण न चहुगति भ्रमण सो, भरमे जीव अपार ।
पोत न मुनिव्रत सो महा, करै भवोदधि पार ॥४७
द्वीप नही शिवद्वीप सो, गुन रतनन की रासि ।
तीरथनाथ जिनद से, सारथवाह न भासि ॥४८
अंधकूप नहि जगत सो, परै तहा तनधार ।
जिन विन काढै कौन जन, करिकै करुणा मार ॥४९
नाहि भवानल सारिखी, दावानल जग माहि ।
जगत चराचर भस्म कर, यामे सशय नाहि ॥५०
जिनगुण अवुधि शरण ले, ताहि न याको ताप ।
तातें सकल विलाप तजि सेवो आप निपाप ॥५१
नहि वायु जगवायु सी, जगत उडावै जोय ।
काय टापरी वापरी, याकै टिकै न कोय ॥५२
जिन पद परचित आसिरौ, जो नर पकरै आय ।
सोई यामे ऊवरै, और न कोइ उपाय ॥५३
नाहि अतिंद्री, सुख समो, पूरण परमानन्द ।
नाहि अफद मुनीन्द्र सो, आनदी निरद्वन्द ॥५४
नहि दीक्षा दुख-हारिणी, जिनदीक्षासी कोय ।
नहि शिक्षा सुख-कारिणी, जिनशिक्षा सी होय ॥५५

चाल जोगीरासा

फंद न कनककामिनी सरिसा, मृग नहि मूरख नरसा ।
नाहि अहेरी काम लोभसा, सूर न अघ सु नरसा ॥१
काटक फद न वोध वृत्त सा, मदमती न अभविसा ।
वुद्धिवत्त नहि भव्यजीव सा, भव्य न तद्भव शिवसा ॥५६
पुरुष शलाका महाभाग से, तथा चरम तन धर से ।
और न जानो पुरुष प्रवीना, गुरु नहि तीर्थंकरसे ॥
ते पहली भापें गुणवता, अव सुनि देवस्वरूपा ।
इन्द्र तथा अहमिंद्र न सरखे, और न देव अनूपा ॥५७
इन्द्र न षट इद्रनि से कोई, सौधर्म सनतकुमार ।
व्रह्मेन्द्र जु अर लातव इद्रा, आनत आरण सारा ॥
ए एका भवतारी भाई, नर ह्वै शिवपुर लेंवे ।
सम्यक्दृष्टी इद्र सवै ही, श्री जिनमारग सेवें ॥५८
लोकपालहु सम्यक्दृष्टी, इक भव धरि भव-पारा ।
इद्र सारिखे सुर ये सोहै, इनसे देव न सारा ॥
देवरिषी लौकातिक देवा, तिनसे इन्द्रहु नाही ।
व्रह्मचर्य धारत ए देवा इनसे भुवन न माही ॥५९

तप कल्याणक समये सेवा, करें जिनेसुर की ये।
नर ह्वै पावें पद निरबाना, राखे जिनमत हीये ॥
इद्राणी सी देवी नाही, इन्द्राणी न शचीसी।
इक भव धरि पावै सुखबासा, तीर्थंकर जननीसी ॥६०
सेवक देव जिनेसुरजू के, नाहिं सुरेसुर तुल्या।
शची सारिखी भक्त न कोई, घारे भाव अतुल्या ॥
कल्याणक ए पाचू पूजें, शची शक्र जिनदासा।
अहनिशि जिनवर चरचा इनके, धारे अतुल विलासा ॥६१

दोहा

अब सुनि अहमिंद्रा महा, स्वर्ग ऊपरै जेहि।
नव ग्रीवक नव अनुदिसा, पचानुत्तर लेहि ॥६२
तेईसौ शुभ थान ए, तिनमे चौदा सार।
नव अनुदिश पचोत्तरा, ये पावें भवपार ॥६३
सम्यक्दृष्टी देव ए, चौदहथान निवास।
चौदह मे नहि पच से, महा सुखनि की रास ॥६४
पचनि मे सरवारथी, सिद्ध नाम है थान।
सकल स्वर्ग को सीस जो, ता सम लोक न आन ॥६५
एका भवतारी महा, सरवारथसिधि बास।
तिनसे देव न इन्द्र कोउ, अहमिंद्रा न प्रकाश ॥६६
कहे देवमे सार ए, तैसे व्रत मे सार।
शील समान न गुरु कहैं, शील देय भवपार ॥६७
देव माहि जे समकिती, देव देव हैं जेहि।
देव माहि मिथ्या मती, पशु तें मूरख तेहि ॥
नारक मे जे समकिती, तिनसे देव न जानि।
तिरजचनि मे श्राविका, तिनसे मनुज न मानि ॥६९
मनुजनि मे जे अव्रती, अज्ञानी मतिमद।
तिनसे तिरजचा नही, सेवें विषय सुछद ॥७०
मनुजनि माहिं मुनन्द्रि जे, महाव्रती गुणवान।
तिनसे अहमिन्द्रा नही, ताको सुनहु बखान ॥७१
थावर नहिं कृमिकीट से, ते सकलिन्द्री से न।
पचेन्द्री नहि नरनि से, नर जु नरेन्द्र जिसे न ॥७२
महामडलिक से न नृप, ते अर्धचक्री से न।
अर्धचक्री नहि चक्री से, चक्री इन्द्र जिसे न ॥७३
इन्द्र नही अहमिन्द्र से, ते न मुनीन्द्र समान।
नाहि मुनीन्द्र गणीन्द्र से, ज्ञानवान गुणवान ॥७४

नाहि गणीन्द्र जिनेन्द्र से, जे सबके गुरुदेव।
इन्द्र फणिन्द्र नरेन्द्र मुनि, करे सुरासुर सेव ॥७५
ते जिनेन्द्र हू तप समय, करे सिद्ध को ध्यान।
सिद्धनि सो ससार मे, नाहि दूसरो आन ॥७६
सिद्धनि सो यह आत्मा, निश्चय नय करि होय।
सिद्धलोक दायक महा, नही शील सो कोय ॥७७
भूमि न अष्टम भूमि सी, सर्वभूमि के शीश।
कर्म भूमि ते पावही, अष्टम भूमि मुनीस ॥७८
द्वीप अढाई से नही, असख्यात ही द्वीप।
जहा ऊपजे जिनवरा, तीन भुवन के दीप ॥७९
नहि जिन प्रतिमा-सारिखी, कारण वर वैराग।
नही आन मूरति जिसी, कारण दोष रु राग ॥८०
नहि अनादि प्रतिमा समा, सुदर रूप अपार।
नाहि अकृत्रिम सारिखे, चैत्यालय विसतार ॥८१
क्षेत्र न आरिज सारिखे, सिद्धक्षेत्र है सोइ।
भरतैरावत दस सवै, नहि विदेह से कोइ ॥८२
गिरि नहि सुरगिरि सारिखे, तरु सुरतरु से नाहि।
नदी सुरनदी सी नही, सर्व नदी के माहि ॥८३
शिला न पाडुकशिला सम, जा परि न्हावै ईश।
सिद्ध सिलासी पाडु नहि, सा त्रिभुवन के शीश ॥८४
उदधि न क्षीरोदधि समा, द्रह पदमादि जिसे न।
मणि नहि चितामणि समा, कामधेनु सी धेनु ॥८५
निधि नहि नवनिधि सारिखी, सो निजनिधि सी नाहि।
नहि समुद्र गुणसिधु सो, है निज निधि जा माहि ॥८६
नन्दनादि से बन नही, ते निज वन से नाहि।
निज वन मे क्रीडा करे, ते आनन्द लहाहि ॥८७
केवल परिणति सारिखी, नदी कल्लेलनि कोइ।
निज गगा सोई गनो, ता सम और न होइ ॥८८
देव न आतम देव सो, गुण आतम सो, नाहि।
धर्म न आतम धर्म सो, गुण अनन्त जामाहि ॥८९
बाजा दुन्दुभि सारिखा, नही जगत मे और।
राजा जिनवर सो नही, तीन भुवन सिर-मौर ॥९०
नाहि अनाहत तूर से, देव दुन्दभी तूर।
सूर न तिनसे जे नरा, डारे मनमथ चूर ॥९१
वाहन नही विमान से, फिरें गगन के माहि।
नाहि विमान जु ज्ञान से, जा करि शिवपुर जाहि ॥९२

हीन दीन अति तुच्छ तन, नहिं निगोदिया तुल्य ।
सरवारथ सिधि देव से, भववासी नहिं कुल्य ॥९३
दीरघ देह न मच्छ से, सहसर जोजन देह ।
चौइन्द्री नहिं भ्रमर से, जोजन एक गनेह ॥९४
कान खजुरया से नही, ते इन्द्री त्रय कोस ।
बेइन्द्री नहिं सख से, तन अढतालीस कोश ॥९५
एकेन्द्री नहिं कमल से, सहसर जोजन एक ।
सब परि करुणा राखिवौ, इह जिनधर्म विवेक ॥९६
धातु न कनक समान सो, काई लगै न जाहि ।
सोहु न चेतन धातु सो, नहिं कबहू विनसाहि ॥९७
पारस से पाषाण नहिं, लोहा कनक कराय ।
पारसनाथ समान कोउ, पारस नाहिं कहाय ॥९८
करै जीव को आप सम, हरै सबै दुख दोय ।
धरै मोक्ष थानक विषैं, करै कर्म गण सोय ॥९९
ध्यावौ पारसप्रभु महा, बसै सदा सो पास ।
राशि सकल गुणरतन की, काटै कर्म जु पासि ॥१००
चातुर्मासिक सारखे, उतपत जीव न आन ।
व्रती जति से नाहिं कोउ, गमन तजें गुणवान ॥१
जिन कल्याणक क्षेत्र से और न तीरथ जान ।
तेहु न निज तीरथ जिसै, इह निश्चय कर मान ॥२
निज तीरथ निज क्षेत्र है, असख्यात परदेश ।
तहा विराजै आतमा, जानै भाव असेस ॥३
अष्टमि चउदसि सारिखी, परवी और न जानि ।
आष्टाह्निक से लोक मे, पर्व न कोइ प्रवानि ॥४
नदीसुर सो धाम नहि, जहा हरख अति होय ।
नदादिक वापनि सी, नही वापिका कोय ॥५
नारक से क्रोधी नही, शठ नर सो न गुमान ।
विकल न पशुगण सारिखे, लोभ न दभ न समान ॥६
नारक से न कुरूप कोउ, देवनि से न सुरूप ।
नर से धन्धाधर नही, नहिं पशु से वहुरूप ॥७
कारण भोग न दान सो, तप सो स्वर्ग न मूल ।
हिंसारम्भ समान नहिं, कारण नरक सथूल ॥८
पशुगति कारण कपट सो, और न कोइ वखान ।
सरल निगर्व सुभाष सो, नरभव मूल न आन ॥९
सुख कारण नहिं शुभ समो, अशुभ समा दुख मूल ।
नही शुद्ध सो लोक मे, मोक्ष-मूल अनुकूल ॥१०

अथ त्रेपन क्रिया वर्णन

दोहा

दया शील तप भावना, सुध समकित भवतार । सुर नर वर पदवी देइ, आये शिव-धर-बार ।।१
देव-कुदेव गुरु-कुगुरु, वली साहास्त्र विचार । धर्म-अधर्म गुणउ लखी, तत्त्व-कुतत्त्व भेदसार ।।२
चैत्य[1] एकादश ऊजली, उत्तम अष्ट मूल गुण मूल । नेम निशा भोजन तणो, जल-गालन निपूण ।।३
चतुर्विध दान समतापणो, द्वादश व्रत विशाल । तप द्वादश रत्नत्रय, त्रेपन क्रिया गुण माल ।।४
एणिपरि श्रावक क्रिया कही, सक्षेपे सविचार । जे नर नारी पालसी, ते तरसी ससार ।।५

अथ भास रासनी

गौतम स्वामी ऊचरे ए, सुनो श्रेणिक सावधान तू ।
मन वच काय निश्चल करीए परिहारि मोह अज्ञान तू ।।६
श्रावक धर्म तरु तणो ए, मूल ए समकित सार तो ।
दृढ पाइ थलहर थिर ए, प्रासाद पीठ उद्धार तो ।।७
समकित विण सोभा नही ए, जल विण जिम तलाब तो ।
दत विना दती जेम ए, केसरि दष्टरा त्याग तो ।।८
चन्द्र विना रजनी जेम ए, हस विना जेम काय तो ।
गध सुगध विना पुष्प जेम ए, राज विना जेम राय तो ।।९
धर्म विना जीव तेम ए, वृथा तस अवतार तो ।
मनुष्य वेषें पशू रूप ए, जेहवो नर आकार तो ।।१०
अनादि काल ए आतमा ए, ससार-सागर मझार तो ।
नाना विध दुख सहू ए, भमता दुर्गति च्यार तो ।।११
मिथ्यात पाप तणो फल ए, त्रस थावर जोनि माहे तो ।
नित्य-इतर निगोदे रही ए, कष्ट बहुविध चाहि तो ।।१२
मूल मिथ्यात एक भेद ए, उत्तर पच असार तो ।
उत्तरोत्तर अनेक भेद ए असख्य लोक प्रकार तो ।।१३
दशन मोह तणें उदये, जीवनें होइ मिथ्यात तो ।
तत्त्व श्रद्धा ते न वि करे ए, रुचि नही तस बात तो ।।१४
जिम मतवालो जीवडो ए, ते न लहे हेयाहेय तो ।
दुर्धर ज्वर जिम ऊपने ए, न वि रुचि औषध पीय तो ।।१५
भाव मिथ्यात अनादि काल ए, द्रव्यरूप तणी आदि तो ।
पाखडी भेद घणा ए, विरुद्ध करें वावाद तो ।।१६

१ प्रतिमा ।

पोसह पडिक्कमणादि सो, शुभाचरण नहि होइ ।
विषय कषाय कलंक सो, अशुभाचरण न कोइ ॥११
आतम अनुभव सारिखा, शुद्धभाव नही वीर ।
नही अनुभवी सारिखे, तीन भुवन मे धीर ॥१२
नारि समान न नागिनी, नारी सम न पिशाच ।
नारि समान न व्याधि है, रहे मूढजन राचि ॥१३
ब्रह्मज्ञान को विश्व मे, वैरी है व्यभिचार ।
ब्रह्मचर्य सो मित्र नहिं, इह निश्चै उर धारि ॥१४
कायर कृपण समान नहिं, सुभट न त्यागी तुल्य ।
रंक न आसादास से, लहै न भाव अतुल्य ॥१५
सत्त न आशा रहित से, आशा त्यागें साध ।
साध समान अबाध नहिं, करहि तत्त्व आराध ॥१६
निजगुण से नहिं भूषणा, भूख न चाहि समान ।
वस्त्र न दश दिश सारिखे, इह भाषें भगवान ॥१७
भोजन तृपति समान नहिं, भाजन गगन जिसी न ।
राज न शिवपुर राज सो, जामे काल धकी न ॥१८
राव न सिद्ध अनन्त से, साथ न भाव समान ।
भाव न ज्ञानानन्द से, इह निश्चय परवान ॥१९
चेतनता सत्ता महा, ता सम पटरानी न ।
शक्ति अनन्तानन्त सी, राजलोक जानी न ॥२०
नारक से दुखिया नही, विषयी देव जिसै न ।
चिन्तावान मनुष्य से, असहाई पशु से न ॥२१
सूक्षम अलप प्रजापता, जीव निगोद निवास ।
ता सम सूक्षम थावर न, इह जिन आज्ञा भास ॥२२
अलस्या से वेइन्द्रिया, और न अलप शरीर ।
नही कुथिया से अलप, ते इन्द्रिय तनवीर ॥२३
काणमच्छिकासे न तुच्छ, चौइन्द्रिय तन धार ।
तन्दुलमच्छ समान तुच्छ, पचेन्द्री न विचार ॥२४
चुगली-चोरी अति बुरी, जोरी जारी ताप ।
चोरी चमचोरी तथा, जुवा आमिष पाप ॥२५
मदिरा मृगया मागना, पर महिलासू प्रीति ।
परद्रोह परपच अर, पाखडादि प्रतीत ॥२६
तजो अभक्षण भक्ष्य अरु, तजो अगम्यागम्य ।
तजो विपर्यय भाव सहु, त्यागहु पाप अरम्य ॥२७
इनसी और न कुक्रिया, नरक निगोद प्रदाय ।
सकल कुक्रिया त्याग-सो और न ज्ञान उपाय ॥२८

उज्जल जल गल्यो उचित, सोध्यो अन्न अडक ।
ता सम भक्ष्य न लोक मे, भावें विबुध निशक ॥२९
मद्य मास मधु माखणा, ऊमरादि फल निंदि ।
इनसे अभख न लोक मे, निदे नर जगवदि ॥३०
वेश्या दासी परत्रिया, तितसी धारै प्रीति ।
एहि अगम्या गम्य है, या सम नाहि अनीति ॥३१
होय कलक को सारखे, नाहि अनीतो कोय ।
वज्र चक्री सारिखे, नीतिवान नहि जोय ॥३२
खग जग कोउ गजेन्द्र से, मग मृगेन्द्र से नाहिं ।
खग नहि कोउ खगेन्द्र सें, जे अति जोर धराहि ॥३३
वादित्र न कोइ बीन से, सुरपति से न प्रवीन ।
बाण न कोइ अमोघ से, हिसक से न मलीन ॥३४
अशन न पान पियूष से, व्यसन न द्यूत समान ।
वस्त्राभरण न लोक मे, देवलोक सम आन ॥३५
वाजित्री न महेन्द्र से, पच्च कल्याणक माहि ।
सदा वजावें राग धरि, गावैं सशय नाहि ॥३६
अश्व नही जात्यश्व से, कटक न चक्रि-समान ।
अलकार नहि मुकट से, अग न सीस समान ॥३७
पालें बाल जु ब्रह्मव्रत, ता सम पुरुष न नारि ।
खोवै वृद्धहि ब्रह्मव्रत, ता सम पशु न विचारि ॥३८
वज्र चक्र से लोक मे, आयुध और न वीर ।
वज्रायुध चक्रायुधी, तिनसे प्रबल न धीर ॥३९
हल मुसलायुध सारिखे, भद्रभाव नहि भूप ।
नहि धनुषायुध सारिखे, केलि कुतूहल रूप ॥४०
नाहि त्रिशूलायुध जिसै, ओर न भयकर कोइ ।
नहिं पुष्पायुध सारिखे, महा मनोहर होइ ॥४१
धर्मायुध से धर्मधर, सर्वोत्तम सब नाथ ।
और न जानो लोक मे, सकल जिनो के साथ ॥४२
नहि व्यभिचारी सारिखा, पापाचारी और ।
नाहि ब्रह्मचारी समा, आचारी सिरमौर ॥४३
मायासी कुलटा नही, लगी जगत के सग ।
विरचे क्षण मे पापिनी, परकीया वहु रग ॥४४
नहि चिद्रूपा सिद्धि सी, सुकिया जगत मझार ।
नहि नायक चिद्रूप सो, आनन्दो अविकार ॥४५
न्यारी होय न चेतना, है चेतन को रूप ।
रामरूप सी नहि रमा, रामस्वरूप अनूप ॥४६

कनक कामिनी रागतें, लखी जाय नहि सोइ।
सयम शील स्वभावतें, ताको दरसन होइ ॥४७
सील ओपमा वहुत है, कहै कहालौ कोय।
जानें श्री जिनराज जु, शीलशिरोमणि सोय ॥४८
दौलति और न ऋद्धि सी, ऋद्धि न वृद्धि समान।
वृद्धि न केवल सिद्धि सी, इह निश्चय परवान ॥४९

इति शील-उपमा वर्णन

अथ शील स्वरूप निरूपण

कह्यौ दोय विध शीलव्रत, निश्चय अर व्यवहार।
सो धारो उर मे सुधी, त्यागौ सकल विकार ॥५०
निश्चय परम समाधितें, खिसवौ नाहि कदाचि।
लखिवौ आतमभाव को, रहियौ निज मे राचि ॥५१
निज परिणति परगट जहा, पर परिणति परिहार।
निश्चय शील-निधान जो, वर्जित सकल विकार ॥५२
पर परिणति जे परिणमे, ते व्यभिचारी जानि।
मानि ब्रह्मचारी तिके, लेहि ब्रह्म पहिचान ॥५३
परम शुद्ध परिणति विषै, मगन रहै धरि ध्यान।
पावें निश्चय शील को, भावें आतमज्ञान ॥५४
निज परिणति निज चेतना, ज्ञान सरूपा होइ।
दरसन रूपा परम जो, चारितरूपा सोइ ॥५५
जडरूपा जगबुद्धि जो, आपापर न लखेह।
पर परिणति सो जानिए, तन-धन माहि फसेह ॥५६
पर परिणति के मूल ए, राग दोष मद मोह।
काम क्रोध छल लाभ खल, परनिंदा परद्रोह ॥५७
दभ प्रपच मिथ्यात मल, पाखडादि अनत।
इन करि जीव अनादि के, भव-भव मे भटकत ॥५८
जौ लग मिथ्या परिणती, सठजन के परकास।
तौ लग सम्यक् परिणती, होय न ब्रह्म-विकास ॥५९

जोगीरासा

तजि व्यभिचारी भाव, सबै ही भए ब्रह्मचारी जे।
ते शिवपुर मे जाय विरजे, भव्यनि भव तारीजै ॥६०
व्यभिचारी जे पापाचारी, ते भरमे भव-भवमे।
पर परिणति सी रचिया जौलो, तौलों जाय न शिव मे ॥६१

जग मे जड अनुरागे, लागे नाही निज मे।
कर्म कर्मफल रूप होय के, परे भवर भ्रम रज मे ॥६२
ज्ञान चेतना लखी न अबलो, तत्त्वस्वरूपा शुद्धा।
जामे कर्म न भर्मकलपना भाव न एक अशुद्धा ॥६३
मिथ्या परणति त्यागै कोई, सम्यक्दृष्टी होई।
अनुभव रस मे भीगै जोई, शीलवन्त है सोई ॥६४
निश्चय शील बखान्यू एई, अचल अखण्ड प्रभावा।
परम समाधि मई निजभावा, जहा न एक विभावा ॥६५

छन्द चाल

अब सुनि व्यवहार सुशीला, धारन मे करहु न ढीला।
दृढ व्रत आखडी धरिवौ नारिको सग न करिवौ ॥६६
नारी है नरक प्रतोली, नारिन मे कुमति अतोली।
ए महा मोह की टोली, सेवें जिनकी मति भोली ॥६७
नारी जग-जन-मन चोरे, नारी भवजल मे बोरे।
भव भव दुखदायक जानो, नारी सो प्रीति न ठानो ॥६८
त्यागें नारी को सगा, नहिं करें शीलव्रत भगा।
ते पावें मुक्ति निवासा, कबहु न करें भव-वासा ॥६९
इह मदन महा दुखदाई, याकू जीतें मुनिराई।
मुनिराय महा बलवन्ता, मनजीत मानजित सन्ता ॥७०
शीलहि सुरपति सिर नावे, शीलहिं शिवपुर जति जावे।
साधू हैं शील सरूपा यह शील सुव्रत्त अनूपा ॥७१
मुनि के कछुहू न विकारा, मन वच तन सर्व प्रकारा।
चित्तवौ व्रत चेतन माही, नारी को सण्रस नाही ॥७२
गृहपति के कछुक विकारा, तातें ए अणुव्रत धारा।
परदारा कबहु न सेवैं, परधन, कबहुँ नहिं लेवैं ॥७३
जेती जग मे परनारी, बेटी बहनी महतारी।
इह भाति गिनै जो भाई, सो श्रावक शुद्ध कहाई ॥७४
निजदारा पर सन्तोषा नहिं, काम राग अति पोषा।
विरकत भावै कोउ समये, सेवैं निज नारी कम ये ॥७५
दिनको न करै ए कामा, रात्री कबहुक परिणामा।
मैथुन के समये भवना, नहि राव करै रति रमना ॥७६
परवी सब ही प्रति पालै, व्रत शील धारि अघ टालै।
अष्टान्हिक तीनो धारै, भादव के मास हु सारै ॥७७
ये दिवस धर्म के मूला, इनमे मैथुन अघ थूला।
अवर हु जे व्रत के दिवसा, पालै इन्द्रिनि के न वसा ॥७८

अपने अर तियके व्रत्ता, सबही पाले निरवृत्ता।
या विधि जिन नारी सेवै, पर मनमे ऐसे वेवै ॥७९
कब तजि हौं काम-विकारा, इह कर्म महा दुख-भारा।
यामे हिंसा बहु होवै, या कर्म करें शुभ खोवै ॥८०
जैसे नाली तिल भरिये, रचहु खाली नहिं धरिये।
तातौ कीलौ ता माहे, लोहे को मसै नाहे ॥८१
घालें तिल भस्म जु होई, यह परतछि देखौ कोई।
तैसे ही लिंग करि जीवा, नासें भग माँहि अतीवा ॥८२
तातें यह मैथुन निंद्या, याको त्यागें जगवद्या।
घन धन्य भाग जाकौ है, जो मैथुनतें जु बच्यौ है ॥८३
जो बाल ब्रह्मव्रत धारें, आजनम न मैथुन कारे।
तिनके चरणनि की भक्ती, दे भव्य जीवकू मुक्ती ॥८४
हमहू ऐसे कब होहैं, तजि नारी व्रत करि सोहैं।
या मैथुन मे न भलाई, परतछ दीखे अघ भाई ॥८५
अपनीहू नारी त्यागे, जब जिनवर के मत लागे।
यह देहहु अपनी नाही, चेतन बैठो जा माही ॥८६
तौ नारी कैसे अपनी, यह गुरु आज्ञा उर खपनी।
या विधि चितवै मन माही, कब घर तजि वनकू जाही ॥८७
जबलो बलवान जु मोहा, तबलो इह मनमथ द्रोहा।
छाडे नहिं हमसो पापी, तातें व्याही त्रिय थापी ॥८८
जबलो बलवान जु होहै, मारे मनमथ अर मोहै।
असमर्था नारी राखे, समरथ आतम-रस चाखें ॥८९
यह भावन नित भावतौ, घर माँहि उदास रहतौ।
जैसें पर-घर पाहुणियो तैसें ये श्रावक गिणियो ॥९०
वह तौ घर पहुचौ चाहै, यह शिवपुर को जो उमाहै।
अति भाव उदासी जाको, निज चेतन मे चित ताको ॥९१
छाडे सब राग रु दोषा, धारै सामायिक पोषा।
कबहू न रक्त घरमे, ह्वै नगन त्रियासो न रमे ॥९२
मुख आदि विकारा जे हैं, छाडे नर ज्ञानी ते हैं।
इह त्रिय-सेवन विधि भाखी, विन पाणिग्रह नहिं राखी ॥९३
श्रावक व्रतधरि सुरपति ह्वै, सुरपति तें चय नरपति ह्वै।
पुनि मुनि ह्वै पावै मुक्ती, इह शील प्रभाव सु जुक्ती ॥९४
नहिं शील सारिखौ कोई दे सुरपुर शिवपुर होई।
जे बाल ब्रह्मचारी हैं सम्यग्दर्शन धारी हैं ॥९५
तिनके सम है नहिं दूजा, पावै त्रिभुवन करि पूजा।
जे जीव कुशीले पापा, पावैं भव-भव संतापा ॥९६

जग मे जड अनुरागे, लागे नाहीं निज मे ।
कर्म कर्मफल रूप होय कैं, परे भवर भ्रम रज मे ॥६२
ज्ञान चेतना लखी न अवलो, तत्त्वस्वरूपा शुद्धा ।
जामे कर्म न भर्मकलपना भाव न एक अशुद्धा ॥६३
मिथ्या परणति त्यागै कोई, सम्यक्दृष्टी होई ।
अनुभव रस मे भीगै जोई, शीलवन्त है सोई ॥६४
निश्चय शील बखान्यू एई, अचल अखण्ड प्रभावा ।
परम समाधि मई निजभावा, जहा न एक विभावा ॥६५

छन्द चाल

अब सुनि व्यवहार सुशीला, धारन मे करहु न ढीला ।
दृढ व्रत आखडी धरिवौ, नारिको सग न करिवौ ॥६६
नारी है नरक प्रतोली, नारिन मे कुमति अतोली ।
ए महा मोह की टोली, सेवें जिनकी मति भोली ॥६७
नारी जग-जन-मन चोरै, नारी भवजल मे बोरै ।
भव भव दुखदायक जानो, नारी सो प्रीति न ठानो ॥६८
त्यागें नारी को सगा, नहिं करें शीलव्रत भगा ।
ते पावे मुक्ति निवासा, कबहु न करें भव-वासा ॥६९
इह मदन महा दुखदाई, याकू जीतें मुनिराई ।
मुनिराय महा बलवन्ता, मनजीत मानजित सन्ता ॥७०
शीलहि सुरपति सिर नावै, शीलहिं शिवपुर जति जावै ।
साधू हैं शील सरूपा, यह शील सुव्रत्त अनूपा ॥७१
मुनि के कछुहू न विकारा, मन वच तन सव प्रकारा ।
चितवौ व्रत चेतन माही, नारी को सण्रस नाही ॥७२
गृहपति के कछुक विकारा, तातें ए अणुव्रत धारा ।
परदारा कबहु न सेवैं, परधन, कबहुं नहिं लेवैं ॥७३
जेती जग मे परनारी, बेटी बहनी महतारी ।
इह भाति गिनै जो भाई, सो श्रावक शुद्ध कहाई ॥७४
निजदारा पर सन्तोषा नहिं, काम राग अति पोपा ।
विरकत भावै कोउ समये, सेवैं निज नारी कम ये ॥७५
दिनको न करे ए कामा, रात्री कवहुक परिणामा ।
मैथुन के समये मवना, नहिं राव करै रति रमना ॥७६
परवी सब ही प्रति पालै, व्रत शील धारि अघ टालै ।
अष्टान्हिक तीनो धारै, भादव के मास हु सारै ॥७७
ये दिवस धर्म के मूला, इनमे मैथुन अघ थूला ।
अवर हु जे व्रत के दिवसा, पालै इन्द्रिनि के न वसा ॥७८

अपने अर तियके व्रत्ता, सवही पालै निरवृत्ता ।
या विधि जिन नारी सेवैं, पर मनमे ऐसे वेवैं ॥७९
कव तजि हौं काम-विकारा, इह कर्म महा दुख-भारा ।
यामे हिंसा वहु होवै, या कर्म करें शुभ खोवै ॥८०
जैसे नाली तिल भरिये, रचहु खाली नहि धरिये ।
तातौ कीलौ ता माहे, लोहे को सर्स नाहे ॥८१
घालें तिल भस्म जु होई, यह परतछि देखौ कोई ।
तैसे ही लिंग करि जीवा, नासैं भग माहि अतीवा ॥८२
तातैं यह मैथुन निंद्या, याको त्यागे जगवंद्या ।
धन धन्य भाग जाकौ है, जो मैथुनतें जु वच्यौ है ॥८३
जो वाल ब्रह्मव्रत धारें, आजनम न मैथुन कारें ।
तिनके चरणनि की भक्ती, दे भव्य जीवकू मुक्ती ॥८४
हमहू ऐसे कव होहैं, तजि नारी व्रत करि सोहैं ।
या मैथुन मे न भलाई, परतछ दीखै अघ भाई ॥८५
अपनीहू नारी त्यागै, जव जिनवर के मत लागै ।
यह देहहु अपनी नाही, चेतन वैठो जा माही ॥८६
तौ नारी कैसे अपनी, यह गुरु आज्ञा उर खपनी ।
या विधि चितवै मन माही, कव घर तजि वनकू जाही ॥८७
जबलो वलवान जु मोहा, तवलो इह मनमथ द्रोहा ।
छाडै नहि हमसो पापी, तातैं व्याही त्रिय थापी ॥८८
जबलो वलवान जु होहै, मारै मनमथ अर मोहै ।
असमर्था नारी राखै, समरथ आतम-रस चाखैं ॥८९
यह भावन नित भावतो, घर माहि उदास रहतौ ।
जैसें पर-घर पाहुणियो तैसें ये श्रावक गिणियो ॥९०
वह तौ घर पहुचौ चाहै, यह शिवपुर को जो उमाहै ।
अति भाव उदासी जाको, निज चेतन मे चित ताको ॥९१
छाडै सव राग रु दोपा, धारै सामायिक पोषा ।
कवहू न रक्त घरमे, ह्वै नगन त्रियासो न रमे ॥९२
मुख आदि विकारा जे हैं, छाडे नर ज्ञानी ते हैं ।
इह त्रिय-सेवन विधि भाखी, विन पाणिग्रह नहिं राखी ॥९३
श्रावक व्रतधरि सुरपति ह्वै, सुरपति तें चय नरपति ह्वै ।
पुनि मुनि ह्वै पावै मुक्ती, इह शील प्रभाव सु जुक्ती ॥९४
नहि शील सारिखौ कोई, दे सुरपुर शिवपुर होई ।
जे वाल ब्रह्मचारी हैं सम्यग्दर्शन धारी हैं ॥९५
तिनके सम है नहि दूजा, पावै त्रिभुवन करि पूजा ।
जे जीव कुशीले पापा, पावैं भव-भव सतापा ॥९६

व्यभिचारी तुल्य न होई, अपराधी जग मे कोई।
ह्वै नरक निगोद निवासा, पापनि का अति दुख भासा ॥९७
जेते जु अनाचारा हैं, व्यभिचार पिछै सारा हैं।
त्यागौ भविजन व्यभिचारा, पालौ श्रावक आचारा ॥९८

दोहा

मुख्य बारता यह भया, बाल ब्रह्मव्रत लेय।
जो यह व्रत धार न सके, तौ इक व्याह करेय ॥९९
दूजी नारी न जोग्य है, व्रतधारनि को वीर।
भोग समान न रोग है, इह धारै उर धीर ॥२००
जो अभिलाषा बहुत है, विषय-भोग की जाहि।
तौ विवाह औरहु करै, नहिं परदारा चाहि ॥१
परदारा सम पाप नहिं, तीन लोक मे और।
जे सेवे परनारि को, लहैं नरक मे ठौर ॥२
नरक माहि बहु काल लो, दुख देवे अधिकाय।
वज्रागनि पुतलीनिसो तिनको अग तपाय ॥३
जरि जरि तिनकी देह जो, जैसे को तैसो हि।
रहै सागरावधि तहा, दु ख सहता सोहि ॥४
कहिवे मे आवें नही, नरकवास के कष्ट।
ते पावें पापी महा, परदारा तें दुष्ट ॥५
नारक के बहु कष्ट लहि, खोटे नर तिर होय।
जन्म-जन्म दुरगति लहैं, दुख देखें अघ सोय ॥६
अर याही भव मे सठा, अपजस दु ख लहेय।
राजदण्ड परचण्ड अति, पावें पर-तिय सेय ॥७

वेसरी छन्द

जग मे धन वल्लभ है भाई, धनहृतें जीतव अधिकाई।
जीतवतें लज्जा है वल्लभ, लज्जातें नारी नर दुल्लभ ॥८
जे पापी परदारा सेवें, ते बहुतनि की लज्जा लेवें।
वैर वढै जु बहु सेती वीरा, परदारा सेवें नहिं धीरा ॥९
धन जीतव लज्जा जस माना, सर्व जाय या करि श्रत ज्ञाना।
कुलको लागे वडो कलका या अधको निंदे अकलका ॥१०
पर-नारी रत पापनि को, जे दस वेगा उपजें मनसो जे।
चिन्ता अर देखन अभिलाषा, पुनि निसास नाखन भय भाषा ॥११
काम-ज्वर होवै परकासा, उपजे दाह महादुख भासा।
भोजन की रुचि रहै न कोई, बहुरि महामूरछा होई ॥१२

तथा होय सो अति उनमन्ता, अथ महा अविवेक प्रभन्ता ।
जानों प्राण रहन को संसै, अथवा छूटै प्राण निमंस ॥१३
कहे वेग ए दश दुखदाई, व्यभचारी के उपजें भाई ।
कौ लग वर्णन कीजै मित्रा, परदारा सेवे न पवित्रा ॥१४
इही पाप है मेरु समाना, और पाप है सरस्यूं दाना ।
याके तुल्य कुकर्म न कोई, सर्व दोष मूल जु सोई ॥१५
नर ते ही पर-दारा त्यागें, नारी जे पर पुरुष न लागें ।
सर्वोत्तम वह नारि जु भाई, ब्रह्मचर्य्य आजन्म धराई ॥१६
व्याह करै नहिं जो गुणवन्ती, विषय-भाव त्यागै गुणवन्ती ।
ब्राह्मी सुन्दरि ऋषभ-सुता जे, रहित विकार सुधम-रता जे ॥१७
चेटक पुत्री चदनवाला, ब्रह्मचारिणी व्रत्त विशाला ।
वहुरि अनन्तमती अति शुद्धा वणिक-सुता व्रत शील प्रवुद्धा ॥१८
इत्यादिक की रीति चितारै, निरमल, निरदूषण व्रत पारै ।
महा सती जाकै न विकारा, विषयनि ऊपरि भाव न डारा ॥१९
आतम तत्त्व लख्यौ निरवेदा, काम कल्पना सर्व निषेदा ।
पुरुष लखे सहु सुत अरु भाई, पिता समाना रच न काई ॥२०
धारै बाल ब्रह्मव्रत शुद्धा, गुरु प्रसाद भई प्रति वुद्धा ।
ऐसी समरथ नाही पावे, तो पतिव्रत वृत्त धरावे ॥२१
मात्त पिता की आज्ञा लेती, एक पुरुष धारै विधि सेती ।
पाणिग्रहण कर सो कुलवन्ती, पतिकी सेव करे गुणवन्ती ॥२२
और पुरुष सहु पिता समाना, कै भाई पुत्रा करि माना ।
मेघेश्वर राजा की राणी, तथा राम की राणी जाणी ॥२३
श्रीपाल भूपति की नारी, इत्यादिक कीरति जु चितारी ।
जग सो विरकत्त भाव प्रवर्तै, औसर पाय सिलाव निवर्तै ॥२४
मैथुन को जाने पशुकर्मा, यह उत्तम नारिन को धर्मा ।
तजि परिवार जु सम्यकवत्ती, ह्वै आर्या तप सजमवन्ती ॥२५
ज्ञान विवेक विराग प्रभावे, स्त्रीपद छाडि स्वर्गपुर आवे ।
सुरग माहिं उतकिष्टा सुर ह्वै, वहुत काल सुख लहि पुनि नर ह्वै ॥२६
धारै महाव्रत निज ध्यावे, कर्म काटि शिवपुर को जावे ।
शिवपुर सिद्धक्षेत्रकू कहिये, और न दूजौ शिवपुर लहिये ॥२७
शिव है नाम सिद्ध भगवन्ता, अष्टकर्म-हर देव अनन्ता ।
भुक्ति मुक्तिदायक इह शीला, या धरवे मे ना कर ढीला ॥२८
शील सुधारस पान करै जो, अजरामर पद कोय धरे जो ।
शील बिना नारी धिग जन्मा, जन्म-जन्म पावे हि कुजन्मा ॥२९
रानी राव जशोधर केरी, शील बिना आपद बहुतेरी ।
लही नरक मे तातें त्यागो, कदे कुशीलपथ मत्ति लागो ॥३०

शील समान न धर्म जु होई, नाहिं कुशील समौ अघ कोई।
जे नर नारि शीलव्रत धारे, ते निश्चय परब्रह्म निहारें ॥३१
त्यागे दशो दोष व्रतवन्ता, ते मुनि एकचित्त करि सता।
अञ्जन मञ्जन बहु सिंगारा, करना नही व्रतिनको भारा ॥३२
तजिवो तिनको अशन गरिष्ठा, अर तजिवौ ससर्ग सपष्टा।
नरको नारीका ससर्गा, नारिन को उचित न नरवर्गा ॥३३
ह्वै ससर्ग थकी जु विकारा, अर तजिवौ तौयत्रिक सारा।
तौर्यत्रिक को अर्थ जु भाई गीत नृत्य बाजित्र बजाई ॥३४
मुनि को इनतें कछुहु न कामा, श्रावक के पूजा विश्रामा।
करे जिनेश्वर पद की पूजा, जिन प्रतिमा बिन और न दूजा ॥३५
अष्टद्रव्य से पूजा करई, तहाँ गीत वादित्र जु धरई।
नृत्य करै प्रभु जी के आगे, जिनगुन मे भविजन मन लागै ॥३६
और न सिंगारादिक गावै, केवल जिनपद सो उर लावै।
नारी-विषयनि को सकलपा, तजिवौ बुध को सव विकलपा ॥३७
अग-उपग निरखनो नाही, जो निरखै तो दोष धराही।
सतकारादिक नारी जनसो, करनो नाही मन-वच तनसो ॥३८
पूरव भोग-विलास न चितवौ, अर आगामी बाछा हरिवौ।
सुपनें हूँ नहिं मनमथ कर्मा, ए दश दोष तजै व्रत धर्मा ॥३९
व्रत नहिं शील बराबर कोई, जिनशासन की आज्ञा होई।
॥४०

उक्तच श्री ज्ञानार्णवमध्ये

आद्य शरीरसस्कारो द्वितीय वृष्यसेवनम्।
तौयत्रिक तृतीय स्यात्ससर्गस्तुर्यमिष्यते ॥१
योषिद्विषसकल्प पचम परिकीर्तितम्।
तदगवीक्षण षष्ठ सत्कार सप्तमो मत ॥२
पूर्वानुभूतसंभोग स्मरण स्यात्तदष्टमम्।
नवमे भावनी चिन्ता दशमे वस्तिमोक्षणम् ॥३

कवित्त

तिय-थल-वासि प्रेम रुचि निरखन, देखि रीझ भाषत मधु बैन,
पूरव भोग केलिरस चितवन, गुरु व अहार लेत चित चैन।
करि सुचि तन सिंगार बनावत, तिय परजक मध्य सुख सैन
मनमथ कथा उदर भरि भोजन, ए नव वाडि जानि मत जैन ॥४१

दोहा

अतीचार मुनि पाँच अब, सुनि करि तजि वर वीर।
जब चौथो व्रत शुद्ध ह्वै, इह भाषैं मुनि धीर ॥४२

एकान्त विपरीत संशयपणो ए, विनयमत अज्ञान तो।
द्रव्य भाव सहूउ लखी ए, टालो विष-समान तो ॥१७
असत्य वस्तु अहितकारी ए, स्थापना भाव एकान्त तो।
द्रव्य रूप बौद्ध मत ए, करूँ बोधकीर्ति असत्त तो ॥१८
श्री पार्श्वनाथ-तीर्थं समे ए, पलास नयर-नदी तीर तो।
पिहिताश्रव सूरी शिष्य ए, बुद्धि कीर्त्ति मुनि भीरु तो ॥१९
कर्म-वशें भामरि गयो ए, वेश्यातणे वली गेह तो।
अजाणपणे चोरी करी ए, अखादि भक्ष कीयो तेह तो ॥२०
निज गुरु ते साभर्यु ए, पछे कीयो तस निषेध तो।
छेदोपस्थापना ल्यो वञ्छ ए, न वि माने ते अवेदतो ॥२१
चारित्र-भ्रष्ट होइ वापडो ए, आदरयो वरया तिणें रक्त तो।
पात्र-पतित पवित्र कह्यो ए, खादि-अखादि असक्त तो ॥२२
तिलमात्र-मास जु भक्षि ए, जीव-हिंसा-पापवत्त तो।
॥२३
मद्य-बिन्दु जो जीव विस्तरी ए, सो माइ नहि त्रिलोक्य मझार तो।
कृत्य-अकृत्य ते न वि लहे ए, विह्वल करे जीव सघार तो ॥२४
मद्य मास दोष ण भक्ष ए, न वि माने ते पाप तो।
क्षणिक शून्य जीव कही ए, मोह मिथ्यात्वे व्यापतो ॥२५
कर्मंतणों कर्त्ता जुदू ए, तस फल भोग वे अन्य तो।
क्षिण जादू आवे क्षिण ए, जिम परिणामें मन्य तो ॥२६
बुद्ध देव नाम कहु ए, तस प्रतिमा सविकार तो।
ऊर्ध्वं कर जपमालिका ए, यज्ञोपवीत कठ धारतो ॥२७
ए आदेइ विकृत घणी ए, थापी मत एकान्त तो।
घोर नरकें ते वापडा ए, दुर्धर दु ख सहत्त तो ॥२८
सुगत मत जे आदरी ए, मिथ्या कदाग्रही जेह तो।
काल अनन्त ते जीवडा ए, भवि भवि दुक्ख सहत तो ॥२९
इम जाणि आसन्न भव्य ए, परिहरो मत एकात तो।
जिन वाणी हृदय धरो ए, स्याद्वाद जिनमत सत्य तो ॥३०
विपरीत मिथ्यात तम्हे सुणो, जेह करे जीव अहित तो।
कहिवु रे हवु जे जू जू तु ए, ते जाणो विपरीत तो ॥३१
वस्त्रापूत जल पीजिए, वली कहु वहि तिन ही दोष तो।
कन्दमूल दूषण कहियिए, वली खाइ ते मोख तो ॥३२
रयणी नीर दोष कह्यो ए, वली रयणी भोजन तो।
रुधिर मास समु जल अन्न ए, ए मार्कंड-वचन तो ॥३३
एह वो दोष जे उचरि ए, वली करे निस आहार तो।
माहरी माँ ने वाझणी ए, ए विपरीत अपार तो ॥३४

ब्याह सगाई पारको, किरिया अव्रत पोष ।
शीलवन्त नर नहिं करै, जिन त्यागे सहु दोष ॥४३
इत्वरिका कुलटा त्रिया, ताकी हैं द्वै जाति ।
परिग्रहीता एक है, जाके सामिल खाति ॥४४
अपरिग्रहीता दूसरी जाके, स्वामि न कोय ।
ए इत्वरिका द्वै विधा, पर पुरुषा-रत होय ॥४५
जिन सों रहनो दूर अति, तिनको संग तजेय ।
तिन सो संभाषण नहो, तबै जनम सुधरेय ॥४६
गमन करै नहि वा तरफ, विचरै तहाँ न नारि ।
डारि नारि को नेह नर, धरै व्रत्त अघ टारि ॥४७
तजि अनग क्रीडा सबै, क्रीडा अघ की एहि ।
मदन मारि मन जीति कर, ब्रह्मचर्य व्रत लेहि ॥४८
निज नारी हूतैं सुधी, करै न अधिकी प्रीति ।
भाव तीव्र नहिं काम के, धरै धर्म की रीति ॥४९
कहे अतिक्रम पच ए, इनमें भला न कोय ।
ए सब ही तजि या थका, शील निर्मला होय ॥५०
नीलो सेठ-सुता शुभा शील व्रत परसाद ।
देवनि करि पूजा लही, दूरि भयो अपवाद ॥५१
शील प्रभावै जय-प्रिया, शुभ सुलोचना नारि ।
लही प्रशसा सुरनि करि, सम्यग्दर्शन धारि ॥५२
शील-प्रमादे राम की, जनकसुता शुभ भाव ।
पूज्य सुरासुर नरनि करि, भये जगत की नाव ॥५३
सेठ विजय अर सेठनी, विजया शील प्रसाद ।
भई प्रशसा मुनिन करि, भये रहित परमाद ॥५४
शुक्ल पक्ष अर कृष्ण पक्ष, धारि शील व्रत तेहि ।
तीन लोक पूजित भये, जिन आज्ञा उर लेहि ॥५५
सेठ सुदर्शन आदि बहु, सीझे शील-प्रताप ।
नमस्कार या व्रत्त को, जो मेटै भव-ताप ॥५६
जे सीझे ते शील करि, और न मारग कोय ।
जनम जरा मरणादि को, नाशक यह व्रत होय ॥५७
धरि कुशील बहु पापिया, बडे नरक मंझार ।
तिनको को निरणय करै, कहत न आवै पार ॥५८
रावण खोटे भाव धरि, गये अधोगति माँहि ।
धवल सेठ नरकै गयो, यामे सशय नाहि ॥५९
कोटपाल जमदड शठ, करि कुशील अति पाप ।
गयो नरक की भूमि मे, लहि राजाते ताप ॥६०

बहुरि हुतौ जमदड इक, कोटपाल गुणवन्त ।
नीति धम परभाव तें, पायौं जस जयवन्त ॥६१
सर्व गुणा हैं शील मे, अरु कुशील मे दोष ।
नाहि कुशील समान कोउ, और पाप को पोष ॥६२
इन दोउनि के गुण अगुण, कहत न आवै थाह ।
जानै श्री जिनराय जू, केवल रूप अथाह ॥६३
महिमा शील महत्त को, कहैं महा गणधार ।
भाषै श्री जिन भारती, रटै साधु भव तार ॥६४
सरवारथसिधि के महा, अहमिन्द्रा परवीन ।
गावें गुण व्रत शील के, जे अनुभव रसलीन ॥६५
कर्पे कांति इन्द्रादि का, जपें सुजस जोगीन्द्र ।
लौकान्तिक वरणन करें, रटें नरिन्द्र फणीन्द्र ॥६६
चन्द्र सूर सुर असुर खग, महिमा शील करेय ।
सूरि सन्त अध्यापका, मन वच काय धरेय ॥६७
हम से अलपमती कहो, कैसें गुण वरणेह ।
नमो नमो व्रत शील को, रहैं ऋषि शरणेह ॥६८
दया सत्य अस्तेय अर, शीलै करि परणाम ।
भाषो पचम व्रत जो, परिग्रह त्याग सुनाम ॥६९

इति चतुर्थ व्रत निरूपण ।

इन चारनि विन ना हुवै, परिग्रह के परिहार ।
परिग्रह के परिहार बिन, नहिं पावे भव-पार ॥७०
मुनिको सर्वहि त्यागवौ, अत्तर वाहिज सग ।
धर्म अकिंचन धारिवौं, करिवौ तृष्णा-भग ॥७१
अपने आतमभाव विनु, जो पररूपा वस्त ।
सो परिग्रह भाषौ सुधी, ताको त्याग प्रशस्त ॥७२
सव भेद चउवीस हैं, चउदस अर दस भेलि ।
अतर वाहिज सग ये, दुरगति फलकी वेलि ॥७३
परिग्रह द्वै विध त्यागिये, तव लहिये निज भाव ।
ब्रह्मज्ञान के शत्रु ये, नरक निगोद उपाय ॥७४
अत्तरग परिग्रह तनें, भेद चतुदर्श जान ।
मिथ्यात्वादिक जो सवै, जिन आज्ञा उर आन ॥७५
राग द्वेप मिथ्यात अर, चउ कपाय क्रोधादि ।
षट हास्यादिक वेद पुनि, चउदस भेद अनादि ॥७६
राग कहावै प्रीति अरु, द्वेष होइ अप्रीति ।
राग दोप तज भव्य जन, वरै धर्म की रीति ॥७७

जहा तत्त्व श्रद्धा नही, सो मिथ्यात कहाय ।
जड चेतन को ज्ञान नही, भर्मरूप दरसाय ॥७८
क्रोध मान चउ लोभ ये, चउ कषाय बलवन्त ।
हतिये ज्ञान सुबानतें, लहिये भाव अनन्त ॥७९
हास्य अरति अरु शोक भय, बहुरि ग्लानि बखान ।
तजिये षट हास्यादि का, मोह प्रकृति दुखदानि ॥८०
वेद भेद हैं तीन पुनि, पुरुष नपु सक नारि ।
चेतन तें न्यारे लखौ, जिनवानी उर धारि ॥८१
एक समय इक जीव के, उदय होय इक वेद ।
तातें गनिये वेद इक, यह गावें निरवेद ॥८२
सख असख अनन्त हैं, इनि चउदह के भेद ।
अन्तरग ये सग तजि, करिये कर्म विछेद ॥८३
अन्तर सग तजे विना, होइ न सम्यक् ज्ञान ।
विना ज्ञान लोभ न मिटै, इह भाषें भगवान ॥८४
अब सुनि बाहर सग जे, दसधा हैं दुखदाय ।
मुनिनें त्यागे सर्वही, दीये दोष उडाय ॥८५
क्षेत्र वास्तु चौपद द्विपद, धान्य द्रव्य कुप्यादि ।
भाजन आसन सेज ये, दस परकार अनादि ॥८६
तजें संग चउबीस सहु, भजें नाथ चउवीस ।
सजें साज शिवलोक को, सबमे बडे मुनीस ॥८७
मूर्च्छा ममता सहु तजी, तृष्णा दई उडाय ।
नगन दिगम्बर भव तिरें, धरे न बहुरी काय ॥८८
श्रावक के ममता अलप, बहु तृष्णाको त्याग ।
राग नही पर द्रव्य सो, एक धर्म को राग ॥८९
धरम हेत खरचै दरब, गर्व नाहि मन माहि ।
सर्व जीवसो मित्रता, दुराचारता नाहि ॥९०
जीव दया के कारणो, तजो बहुत आरम्भ ।
परिग्रह को परिमाण करि, तजौ सकल ही दम्भ ॥९१
लोभ लहरि मेटी जिनौ, धरियो धर्म सतोष ।
ते श्रावक निरदोष हैं, नही पाप को पोष ॥९२
क्षेत्र आदि दस सग को, कियौ तिने परिमाण ।
राख्यौ परिग्रह अलप ही, तिन सम और न जाण ॥९३
कह्यौ परिग्रह दसविधा, बहिरगा जे वीर ।
तिनके भेद सु नू भया, भाखे मुनिवर धीर ॥९४

वहुरि हुतौ जमदड इक, कोटपाल गुणवन्त ।
नीति धर्म परभाव तें, पायौ जस जयवन्त ॥६१
सर्व गुणा हैं शील मे, अरु कुशील मे दोप ।
नाहिं कुशील समान कोउ, और पाप को पोप ॥६२
इन दोउनि के गुण अगुण, कहत न आवे थाह ।
जाने श्री जिनराय जू, केवल रूप अथाह ॥६३
महिमा शील महत को, कहै महा गणधार ।
भाषे श्री जिन भारती, रटैं साधु भव तार ॥६४
सरवारथसिधि के महा, अहमिन्द्रा परवीन ।
गावें गुण व्रत शील के, जे अनुभव रसलीन ॥६५
कर्पे काति इन्द्रादि का, जपे सुजस जोगीन्द्र ।
लौकान्तिक वरणन करें, रटैं नरिन्द्र फणीन्द्र ॥६६
चन्द्र सूर सुर असुर खग, महिमा शील करेय ।
सूरि सन्त अध्यापका, मन वच काय धरेय ॥६७
हम से अलपमती कहो, कैसें गुण वरणेह ।
नमो नमो व्रत शील को, रहैं ऋपि शरणेह ॥६८
दया सत्य अस्तेय अर, शीलै करि परणाम ।
भाषो पचम व्रत्त जो, परिग्रह त्याग सुनाम ॥६९

इति चतुर्थ व्रत निरूपण ।

इन चारनि विन ना हुवै, परिग्रह के परिहार ।
परिग्रह के परिहार विन, नहिं पावे भव-पार ॥७०
मुनिको सवहि त्यागवौ, अतर व्राहिज सग ।
धर्म अकिंचन धारिवौ, करिवौ तृष्णा-भग ॥७१
अपने आतमभाव विनु, जो पररूपा वस्त ।
सो परिग्रह भाषी सुधी, ताको त्याग प्रशस्त ॥७२
सर्व भेद चउवीस हैं, चउदस अर दस मेलि ।
अतर बाहिज सग ये, दुरगति फलकी बेलि ॥७३
परिग्रह द्वै विध त्यागिये, तव लहिये निज भाव ।
ब्रह्मज्ञान के शत्रु ये, नरक निगोद उपाय ॥७४
अतरग परिग्रह तनें, भेद चतुदर्श जान ।
मिथ्यात्वादिक जो सवै, जिन आज्ञा उर आन ॥७५
राग द्वेष मिथ्यात अर, चउ कषाय क्रोधादि ।
षट हास्यादिक वेद पुनि, चउदस भेद अनादि ॥७६
राग कहावे प्रीति अरु, द्वेष होइ अप्रीति ।
राग दोष तज भव्य जन, धरै धर्म की रीति ॥७७

जहां तत्त्व श्रद्धा नही, सो मिथ्यात्त कहाय ।
जड चेतन को ज्ञान नही, भर्मरूप दरसाय ॥७८

क्रोध मान चउ लोभ ये, चउ-कषाय वलवन्त ।
हतिये ज्ञान सुवानतें, लहिये भाव अनन्त ॥७९

हास्य अरति अरु शोक भय, वहुरि ग्लानि वखान ।
तजिये षट हास्यादि का, मोह प्रकृति दुखदानि ॥८०

वेद भेद हैं तीन पुनि, पुरुष नपुसक नारि ।
चेतन तें न्यारे लखौ, जिनवानी उर धारि ॥८१

एक समय इक जीव के, उदय होय इक वेद ।
तातें गनिये वेद इक, यह गावें निरवेद ॥८२

सख असख अनन्त हैं, इनि चउदह के भेद ।
अन्तरग ये सग तजि, करिये कर्म विछेद ॥८३

अन्तर सग तजे विना, होइ न सम्यक ज्ञान ।
विना ज्ञान लोभ न मिटै, इह भाषें भगवान ॥८४

अब सुनि वाहर सग जे, दसधा है दुखदाय ।
मुनिनें त्यागे सवही, दीये दोष उडाय ॥८५

क्षेत्र वास्तु चौपद द्विपद, धान्य द्रव्य कुप्यादि ।
भाजन आसन सेज ये, दस परकार अनादि ॥८६

तजें सग चउवीस सहु, भजें नाथ चउवीस ।
सजें साज शिवलोक को, सवमें वडे मुनीस ॥८७

मूर्च्छा ममता सहु तजी, तृष्णा दई उडाय ।
नगन दिगम्बर भव तिरें, धरें न वहुरी काय ॥८८

श्रावक के ममता अलप, वहु तृष्णाकों त्याग ।
राग नही पर द्रव्य सो, एक धर्म को राग ॥८९

धरम हेत खरचै दरव, गर्व नाहिं मन माहिं ।
सर्व जीवसो मित्रता, दुराचारता नाहिं ॥९०

जीव दया के कारणो, तजो बहुत आरम्भ ।
परिग्रह को परिमाण करि, तजौ सकल ही दम्भ ॥९१

लोभ लहरि मेटी जिनौ, धरियो धर्म सतोष ।
ते श्रावक निरदोष हैं, नही पाप को पोष ॥९२

क्षेत्र आदि दस सग को, कियौ तिने परिमाण ।
राख्यौ परिग्रह अलप ही, तिन सम और न जाण ॥९३

कह्यौ परिग्रह दसविधा, वहिरगा जे वीर ।
तिनके भेद सु नू भया, भाखे मुनिवर धीर ॥९४

चौपाई

क्षेत्र परिग्रह खेत वखान, जहाँ ऊपजे धान्य निधान।
वास्तु कहावै रहवा तना, मन्दिर हाट नोहरा बना ।।९५
हस्ती घोटक ऊँट रु आदि, गाय वलध महिषी इत्यादि।
होय राखणो जो तिरजंच, चौपद परिग्रह जानि प्रपंच ।।९६
द्विपद परिग्रह दासी दास, पुत्र कलत्रादिक परकास।
धान्य कहाव गेहूँ आदि, जीवन जनको अन्न अनादि ।।९७
धन कनकादिक सबही धात, चिन्तामणि आदिक मणि जात।
चौवा चन्दन अगर सुगन्ध, अतर अगरजा आदि प्रबन्ध ।।९८
तेल फुलेल घृतादिक जेह, बहुरि वस्त्र सब भाँति कहेह।
ये सब कुप्य परिग्रह कहे, मसारी जीवनिने गहे ।।९९
भाजन नाम जु बासन होय, धातु पषाणा काठके कोय।
माटी आदि कहाँ लग कहैं, साधन भाजन ए कहु गहे ।।३००
आसन वैसनके बहु जान, सिंघासन प्रमुखा परवान।
गद्दी गिलम आदि जेतेक, त्यागौ परिग्रह धारि विवेक ।।१
सज्या नाम सेजको कह्यौ, भूमि-शयन मुनिराजनि गह्यौ।
ए दसधा परिग्रह द्वय रूप, कैइक जड कैइक चिद्रूप ।।२
द्विपद चतुष्पद आदि सजीव, रतन धातु वस्त्रादि अजीव।
अपने आतमतें सब भिन्न, परिग्रहतें ह्वै खेद जु खिन्न ।।३
हैं परिग्रह चिन्ताके धाम, इनको त्याग लहैं शिवठाम।
जिनवर चक्री हलधर धीर, कामदेव आदिक वर वीर ।।४
तजि परिग्रह धारें मुनिरूप, मुनिसम और न धर्म अनूप।
मुनि होवे की शक्ति न होय, श्रावक व्रत धारै नर सोय ।।५
करै परिग्रहको परमाण, त्यागै तृष्णा सोहि सुजाण।
इह परिग्रह अति दुखको मूल, है सुखतै अतिही प्रतिकूल ।।६
जैसे बेगारी सिर भार, तैसे यह परिग्रह अधिकार।
जेतौ थोरौ तेतौ चैन, यह आज्ञा गावैं जिन बैन ।।७
तातैं अल्पारम्भी होय, अल्प परिग्रह धारे सोय।
ताहूको नित त्यागौ चहै, मन माही अति विरकत रहै ।।८
जैसे राहु केतु करि कान्ति, रवि शशिकी ह्वै और हि भाँति।
तैसें परणति होय मलीन, आतमकी परिग्रह करि दीन ।।९
ध्यान न उपजै या करि कवै, याहि तजें पावैं शिव तवै।
समताको यह वैरी होय, मित्र अधीरपनाको सोय ।।१०
मोह तनो विश्राम निवास, यातें भविजन रहहिं उदास।
नासै सुखको सुभतें दूर, असुभ भावतें है परिपूरि ।।११

खानि पाप की दुख की रासि, रह्यौ आपदा को पद भासि।
॥
आरति रुद प्रकाशइ कग, धर्म ध्यान का चरइ न सग।
गुण अनन्त धन धार्या चहै, सो परिग्रह तें दूरहि रहै ॥१२

दोहा

लोला वनि दुर्ध्यान को, वहु आरम्भ सरूप।
आकुलता की निधि महा, सशय रूप विरूप ॥१३
मद का मत्री काम घर, हेतु शोक को सोई।
कलह तनो क्रीडा ग्रह, जनक वैर को होय ॥१४
धन्य घरी वह होयगी, जव तजियेगो सग।
यामे वडपन नाहि कछु, महादोप को अग ॥१५
हिंसादिक अपराघ का, कारण मूल वखानि।
जनम जनम मे जीव को, दुखदाई सो जानि ॥१६
धिग धिग द्विविधा सग को, जो रोके शिव-सग।
चहुँ गति माहि भ्रमाय करि, करै सदा सुख भग ॥१७
जो यामे वडपन गिनै, सो मूरख मति-हीन।
परिग्रहवान समान नहि, और जगत मे दीन ॥१८
धन्य धन्य धरमज्ञ जे, याकू तुच्छ गिनेय।
माया ममता मूरछा, सर्वारम्भ तजेय ॥१९
यही भावना भाव तो, भविजन रहै उदास।
मन मे मुनिव्रत की लगन, सो श्रावक जिनदास ॥२०
वहुरि विचारै सो सुधी, अगनि धरै गुण शोत।
जो कदापि तौहू न कवै, परिग्रहवान अभीत ॥२१
काल कूट जो अमृता, होइ दैव सयोग।
नहि तथापि सुख होय ये, इन्द्रिन के रस भोग ॥२२
विषयनि मे जे राचिया, ते रुलिहै भव-माहि।
सुख है आतन ज्ञान मे, विषय माहि सुख नाहि ॥२३
थिर ह्वै तडित प्रकाश जो, तौहू देह थिर नाहि।
देह नेह करिवो वृथा, यह चितवै मन माहि ॥२४
इन्द्रजाल जो सत्य ह्वै, दैव जोग परवान।
तौ पनि ससारी जना नाहि कदे सुखवान ॥२५
चहुँ गति मे नहि रम्यता, रम्य आतमाराम।
जाके अनुभव तें महा, है पचमगति धाम ॥२६
इह विचार जाके भयो, देहहु अपनी नाहि।
सो कैसे परपच करि, वदै परिग्रह माहि ॥२७

सवैया तेईसा

हय गय पायक आदि परिग्रह पुण्य उदै गृह होय विभौ अति ।
पाय विभौ पुनि मोहित होत, सरूप विसारि करें परसौ रति ॥
नारहि पोपण काज, रच्यौ वहु आरम्भ बाँधत दुर्गति ।
ज्ञानि कहै हमकू कबहू मन, राम वहै पुनि देहहु द्यो मति ॥२८
नाहि सतोप समान जु आन है, श्रीभगवान प्रधान सुधर्मा ।
है सुखरूप अनूप इहै गुण, कारण ज्ञान हरैं सब कर्मा ॥
पापनिको यह बाप जुलोभ, करै अतिक्षोभ करै अति मर्मा ।
धारि सतोष लहै गुणकाष, तजै सब दोप लहै निज-मर्मा ॥२९
रक सबै जग राव रिषीसुर, जो हि धरै शुभ शील सतोपा ।
सो हि लहै निज आतम भेद, करै अघ छेद हरें दुख दोषा ॥
श्रावक धन्य तजे सहु अन्य, हुए जु अनन्य गहै गुण कोपा ।
काम न मोह न लोभ न लेश, गहै नहि भान दहै रति रोषा ॥३०
लोभ समान न औगुण आन, नही चुगली सम पाप अरूपा ।
सत्य हि वैन कहै मुखतें सुभ, तो सम व्रत्त न तथ्य निरूपा ॥
पावन चित्त समान न तीरथ, आतम तुल्य न देव अनूपा ।
सज्जनता सम और कहा गुण, भूषन और न कीरति रूपा ॥३१
ब्रह्म सुज्ञान समान कहा धन, औजस तुल्य न मृत्यु कहाई ।
देवनिको गुरु देव दयानिधि, ता सम कोई न है सुखदाई ॥
रोष समान न दोष कहैं वुध, मोक्ष समान न आनन्द भाई ।
तोष समान न कारण मोक्ष, कहे भगवन्त कृपा उर लाई ॥३२
अग प्रसग भये वहु सग, तिनौ महि नाहि अभग जु कोई ।
शुद्ध निजातम भाव अखडित, ता महि चित्त धरै बुध सोई ।
बँध-विदारण, दोप-निवारण, लोक-उधारण और न होई ।
जा सम कोई न जान महामति, टारइ राग विरोध जु दोई ॥३३

दोहा

धन्य-धन्य श्रावक व्रती, जो समकित धर धीर ।
तन धन आतम भावतें न्यारे देखै वीर ॥३४
तन धनको अनुराग नहि, एक धर्म को राग ।
सतोषी समता धरा, करै लोभ को त्याग ॥३५
मोह तनी ग्यारह प्रकृति शात होय जब वीर ।
तब धारै श्रावक व्रता, तृष्णा बर्जित धीर ॥३६
तीन मिथ्यात कषाय वसु, ये ग्यारह परवान ।
पचम ठानें श्रावका, इनतें रहित सुजान ॥३७
गई चौकरी द्वय प्रबल, जे दुरगति दुखदाय ।
रह्यो चौकरी द्वय अबै, तिनको नाश उपाय ॥३८

चितवै मनमे सासतौ, है जौलग अवसाय ।
तौलग तीजी चौकरी उदै वरै रहवाय ॥३९

अल्प परिग्रह धारई, जाके अल्पारम्भ । अवसर पाय मिताव ही, त्यागै सर्वारम्भ ॥४०
मुनिव्रतके परसाद शिव, ह्वै अथवा अहमिन्द्र । श्रावकव्रत प्रभावत सुरह्वै तथा सुरिन्द्र ॥४१
परिग्रहको परमाण करि जयकुमार गुणधार । सुर-नर कर पूजित भयो, लह्यो भवार्दाध पार ॥४२
परिग्रहकी तृष्णा करे, लुब्धदत्त गुणवीत । गयो दुरगता दुख लह ज्यो समश्रु नवनीत ॥४३
करै जु सख्या सगकी, हरै देहते नेह । अति न भ्रमावै नर पसू गिनै आप सम तेह ॥४४

बोझ वहुत नहि लादवौ, करनो वहुत न लोभ ।
अति सग्रह तजिवौ सदा करनो वहुत न क्षोभ ॥४५

अति विस्मय नहि धारिवो, रहनो नि सन्देह । झूठी माया जगतकी, धन्विग्ज नाहि गनेह ॥४६

परिग्रह सख्या वरत के, अतीचार हू पच ।
तिनकू त्यागे जे व्रती, तिनकै पाप न रच ॥४७
क्षेत्र वास्तु सख्या करो, ताको करै उलघ ।
अतीचार है प्रथम यह भाषै चउविधि सघ ॥४८
काहु प्रकारै भूलि करि, जोहि उलघे नेक ।
अतीचार ताको लगै, भाषै पडित एम ॥४९
द्विपद चतुष्पद सग को, करि प्रमाण जो वीर ।
अभिलाषा अधिकी धरै, सो न लहै भव तीर ॥५०
अतीचार दूजौ इहै, सुनि तीजो अघरास ।
धन धान्यादिक वस्तु को, करि प्रमाण गुरु पास ॥५१
चित्त सकोचि सकै नही, मन दौरावि मूढ ।
सो न लहै व्रत शुद्धता, होय न ध्यानारूढ ॥५२
हम राख्यौ परिग्रह अलप, सरै न एते माहि ।
ऐसे विकलप जो करै, वर्तमान सो नाहि ॥५३
कुप्य भाड परिग्रह तनौ, करि प्रमाण तन धारि ।
चित्त चाहि मेटै नही, सो चौथो अतिचार ॥५४
शयन नाम सेज्या तनो, आसन द्वय विधि होय ।
थिर आसन चर आसना, करै प्रमाण जु कोय ॥५५
पुनि अधिको अभिलाष धरि, लावै व्रत मे दोष ।
अतीचार सो पाचमो, रोकै मारग मोष ॥५६
थिर आसन सिंहासनो, ताहि आदि वहु जानि ।
त्यागै चक्री मडलो, जिन आज्ञा उर आनि ॥५७
स्यन्दन कहिये रथ प्रगट, शिविका है सुखपाल ।
ए थल के चर आसना, त्यागै भव्य भूपाल ॥५८
वहुरि विमानादिक जिके, चर आसन शुभ रूप ।
ते आकाश के जानिये, त्यागें खेचर भूप ॥५९

नाव जिहाजादिक गिनें, चर आसन जल माहिं ।
चर आसन को पडिता, यान कहैं सक नाहिं ॥६०
सकल परिग्रह त्यागिवो, सो मुनि मारग होय ।
किंचित मात्र जु राखिवो, व्रत श्रावक को सोय ॥६१
व्याधि न तृष्णा सारखी, तृष्णा सी न उपाधि ।
नहिं सन्तोष समान है, कारण परम समाधि ॥६२
तृष्णा करि भव वन भ्रमे, तृष्णा त्यागें सन्त ।
गृह परिग्रह वन्धन गिनें, ते निर्वाण लहन्त ॥६३
व्रत पाचमो इह कह्यो, सम सन्तोष स्वरूप ।
धन्य धन्य ते धीर हैं, त्यागें लोभ विरूप ॥६४
जे सीझे ते लोभ हरि, और न मारग होय ।
मोह प्रकृति मे लोभ सो, और न परबल कोय ॥६५
सर्व गुणनि को शत्रु है, लोभ नाम वलवन्त ।
ताहि निवारें व्रत्त ए करे कर्म को अन्त ॥६६
नमस्कार सतोष को, जाहि प्रशसें धीर ।
जाकी महिमा अगम है, जा सम और न वीर ॥६७
जानें श्री जिनराय जू, या व्रत के गुण जेह ।
और न पूरन ना लखें, गणधर आदि जिकेह ॥६८
हमसे अलपमती कहा, कैसें कहै वनाय ।
नमो नमो या व्रत्त को, जो भव पार कराय ॥६९
सन्तोषी जीवानिको, बार-बार परणाम ।
जिन पायौ सतोप धन, सर्व सुखनि को धाम ॥७०
नहिं सन्तोष समान गुरु, धन नहिं या सम और ।
निर विकलप नहिं या समा, इह सबको सिरमौर ॥७१

इति पचम व्रत निरूपण ।

दया सत्य असतेय अर, ब्रह्मचय सन्तोप ।
इन पाचनिको कर प्रणति, छट्ठम व्रत निरदोष ॥७२
भाषो दिसि परिमाण शुभ, लोभ नासिवे काज ।
जोवदयाके कारणो, उर धरि श्री जिनराज ॥७३
द्वादश व्रत मे पच व्रत, सप्त शील परवानि ।
सप्त शील मे तीन गुण, चउ शिक्षा व्रत जानि ॥७४
जैसे कोट जु नगरके, रक्षा कारण होय ।
तैसें व्रत रक्षा निमित, शील सप्त ये जोय ॥७५
वरत शील धारें सुधी, ते पावें सुखराशि ।
कहें व्रत अव शील के, भेद कहा परकाशि ॥७६

ब्रह्मचारी देवने कही ए, अर श्री लक्ष्मी नार तो ।
राधासूँ क्रीडा करि ए, सोल सहस्र स्त्री भरतार तो ॥३५
जीव दया धम कहे ए करे जीवनो घात तो ।
पुण्य कारण प्राणी हणे य, धम तणी कहे क्षात तो ॥३६
यागि अग्नि जीव होमो ए, नरक जवाजा बाग तो ।
मीढा महिष जे बावडा ए, पसुअ प्राण करे घात तो ॥३७
वेद माही दया कही ए, वेद मध्य हिंसा कर्म तो ।
जस कर्म जीव हणिए, ए विपरीत कुधर्म तो ॥३८
शौच काजि स्नान करिए, नवि हणि माहि चर्मपात्र तो ।
अशुचि अस्थि वली आदरीए, ते विपरीत कुशास्त्र तो ॥३९
जीव हणी स्वर्ग वाछीए ए, तो नरकें किम होइ तो ।
पाप करे जो सुख होइए तो पुण्य निष्फल जोइ तो ॥४०
जलता जीव जु सुख होइ ए, तो क्यो न दीइ माय बाप तो ।
विपरीत भाष्या मोटा जीव ए, ते वाहे पर आप तो ॥४१
दीन जीव तृण-भक्षक ए, त बोल्या बलि कर्म तो ।
बाघ सिंह क्यो न कह्या ए, ते दे बलि तो मर्म तो ॥४२
सहस्र अठ्यासी रिखि कह्या ए, जुदु जुदु भाष्यो तेण तो ।
विपरीत मत ते जाणीए, ते वर्णव्यो जाइ केणि तो ॥४३
श्रावस्ती नयरी पती ए, वसु नामि नरेन्द्र तो ।
क्षीर कदम्बा द्विज सूरी ए, तस पुत्र पर्वत भद्र तो ॥४४
निज पिताइ दीक्षा ग्रही ए, पवत रह्यो निज गेह तो ।
नारद सख्य-शिरोमणि ए, आसन्न भव्य जीव तेह तो ॥४५
वेद पढता पर्यंत कहू ए, अज सबदि छाग जाणि तो ।
अज त्रयो वरसतणा व्रीही ए, इम कहे नारद वाणि तो ॥४६
माहो माहे विवाद करिए मानें नहि पर्वत मूढ तो ।
गुरु-भ्राता जे वस्तु करथा ए, तेह वचन सत्य प्रौढ तो ॥४७
पर्वत-माता ए साभल्यु ए, पुत्र-वाणी असत्य तो ।
पृच्छनपणें वसु वीनव्यो ए, वर-दान मागि अनुमति तो ॥४८
मुझ पुत्र-वाणी थापज्यो ए, कृपा करी वसु भूपाल तो ।
मूढपणो तिण मानीउ ए, निज घर आवी ते वाल तो ॥४९
राजसभा सहु देखता ए, नारद पवत कहे वाणि तो ।
आपणे गुरू अर्थ कुण कह्यो, अज शब्द तणो जाणि तो ॥५०
पर्वत दोल ते थापीए तु ए, भूप होय वसु मिथ्यात तो ।
फटिक सिंहासन कापीओ ए, भूमिओ उ निपात तो ॥५१
कूटी साख जब भूप कह्यो ए, तब हुओ हा-हाकार तो ।
धरा विकसी अधो गति गयो ए, सातमी नरक मझार तो ॥५२

पहलो गुणव्रत, गुणमई, छट्ठा व्रत सो जानि ।
दसो दिशा परमाण करि, श्रीजिन आज्ञा मानि ।।७७
तीन गुणव्रत मे प्रथम, दिग्व्रत कह्यौ जिनेश ।
ताहि धरे श्रावक व्रती, त्यागे दोष असेस ।।७८
लोभादिक नाशन निमित परिग्रहको परिमाण ।
कीयो तैसें ही करो, दिशि परमाण सुजाण ।।७९

वेसरी छन्द

पूरब आदि दिशा चउ जानो, ईशानादि विदिशि चउ मानो ।
अध ऊरध मिलि दस दिशि होई, करे प्रमाण व्रती हु सोई ।।८०
शीलवान व्रत धारक भाई, जाके दरशनते अघ जाई ।
या दिशिको एतोही जाऊं, आगे कबहु न पांव धराऊं ।।८१
या विधिसो जु दिशाको नेमा, करे सुबुद्धि धरि व्रतसो प्रेमा ।
मरजादा न उलंघे जोई, दिग्व्रत धारक कहिये सोई ।।८२
दसो दिशा की सख्या धारे जिती दूरलौं गमन विचारे ।
आगे गये लाभ ह्वै भारी, तौ पनि जाय न दिग्व्रत धारी ।।८३
सतोषी समभावी होई, धनकू गिनै धूरि-सम सोई ।
गमनागमन तज्यो बहु जाने, दया धर्म धार्यो उर ताने ।।८४
लगे न हिंसा तिनको अधिकी, त्यागी जिन तृष्णा धन निधिकी ।
कारण हेत चालनो परई, तो प्रमाण माफिक पग धरई ।।८५
मेरु डिगै परि पैंड न एका, जाय सुबुद्धी परम विवेका ।
व्रत करि नाश करे अघ कर्मा, प्रगटे परम सरावक धर्मा ।।८६
विना प्रतिज्ञा फल नहिं कोई, रहै बात परगट अवलोई ।
अतीचार पांचो तजि वीरा, छट्ठो व्रत धारौ चित धीरा ।।८७
पहली ऊरध व्यतिक्रम होई, ताको त्याग करौ श्रुति जोई ।
गिरि परि अथवा मन्दिर ऊपरि, चढनो परई ऊरध भूपरि ।।८८
ऊरध की सख्या ह्वै जेती, ऊँची भूमि चढै बुध तेती ।
आगैं चढिवो कौं जो भावा, अतीचार पहलो सु कहावा ।।८९
दूजो अध-व्यतिक्रम तजि मित्रा, जा तजिये व्रत होय पवित्रा ।
वापी कूप खानि अर खाई, नीची भूमि माहि उतराई ।।९०
तौ परमाण उलघि न उतरौ, अधिको भू उतर्यां व्रत खतरौ ।
अधिक उतरने को जो भावा, अतीचार दूजो सु कहावा ।।९१
तीजो तिर्यग व्यतिक्रम त्यागौ, तव छट्ठे व्रत माही लागौ ।
अष्ट दिशा जे दिशि विदिशा है, तिरछे गमने माहि गिना हैं ।।९२
वहुरि सुरगादिक मे जावो, सोऊ तिरछे गमन गिनावौ ।
चउदिशि चउविदिशा परमाणा, ताको नाहिं उलघ बखाणा ।।९३

जो अधिक जावेको भावा, अतीचार तीजो सु कहावा।
चौथो क्षेत्रवृद्धि है दूपन, ताको त्याग करे व्रत भूपन ॥९४
जेती दूर जानका नेमा सो स्वक्षेत्र भाषें श्रुति-प्रेमा।
जो स्वक्षेत्रतें वाहिर ठौरा, सो परक्षेत्र कहावे औरा ॥९५
जो परक्षेत्र थको इह सवा, राखें सठमति हिरदे अधा।
ह्वातें क्रय विक्रय जो राखें, क्षेत्रवृद्धि दूषण गुरु भाखें ॥९६
पचम अतीचारको नामा, स्मृत्यतर भासें श्रीरामा।
ताको अथ सुनो मनलाई, करि परमाण भूलि जो जाई ॥९७
जानत और अजानत मूढा, सो नहिं होई व्रत आरूढा।
ए पाँचू दोषा जे टारें, ते व्रत निर्मल निश्चल धारें ॥९८
श्री कहिये निजज्ञान विभूती, शुद्ध चेतना निज अनुभूती।
केवल सत्ता शुद्ध स्वभावा, आतमपरिणति-रहित विभावा ॥९९
ता परिणतिसो रमिया जोई, कर्म-रहित श्रीराम जु होई।
तिनकी आज्ञारूप जु धर्मा, धारें ते नाशें सव भर्मा ॥८००
अव सुनि व्रत सातमो भाई, जो दूजो गुणव्रत कहाई।
दिशा तणो कीयौ परिमाणा, तामे देश प्रमाण वखाणा ॥१
देश नगर अर गाँव इत्यादी, अथवा पाटक हाट जु आदी।
पाटक कहिये अर्ध जु ग्रामा, करै प्रमाण व्रती गुण-धामा ॥२
जिन देशनि मे धम जु नाही, जाय नही तिन देशनि माही।
जव वह वहु देशनितें छूटे, तव यासो अति लोभ जु टूटें ॥३
वहु हिंसा आरभ निवर्त्या, जीवदया मन माहिं प्रवर्त्या।
दिश अरु देशनिको जु प्रमाणा, लोभ नाशने निमित्त वखाना ॥४
जिनवर मुनिवर अर जिन धामा, जिनप्रतिमा अर तीरथ ठामा।
यात्राकाज गमन निरदोष, द्वीप अढाई लौ व्रत पोसा ॥५
अतीचार पाँचो तजि धीरा, जाकरि देश व्रत ह्वै धीरा।
चित पसरन-रोकन के कारन, मन वच तन मरजादा धारन ॥६
कवहू नाहिं उलघि सु जाई, अर ह्वातें आसा न धराई।
प्रेष्य नाम है सेवक को जी, ताहि पठावौ जो अधिको जी ॥७
वस्तु भेजिवौ लोभ निमित्ता, प्रेष्य प्रयोग दोष है मित्ता।
तातें जेतौ देश जु राख्यौ, भृत्य भेजिवौ ह्वा तक भाख्यौ ॥८
आगे वस्तु पठैवौ नाही, इह वार्ते धारौ उर माही।
दूजो दोष आनयन त्यागे, तव हि व्रत विधानहिं लागे ॥९
परक्षेत्र जु तें वस्तु मँगावें सा गुणव्रतको दूषण लावे।
जो परमाण वाहिरा ठौरा, सो परक्षेत्र कहैं वृषमौरा ॥१०
तीजो दोष शव्दविनिपाता, ताको भेद सुनो तुम भ्राता।
जाय नही परि शव्द सुनावे, सो निरदूषण व्रत न पावे ॥११

चौथा दूषण रूपनिपाता, रूप दिखावण जोगि न वाता।
पचम पुद्गलक्षेप कहावै, ककर आदिक जोहि वगावै ॥१२

भावार्थ—दिशा और देशको जावजीव नियम कियो छै, ताहूमे वर्ष छमासी दुमासी मासी पाखी नेम धार्यो छै, तीमे भी निति नेम करै छै। सो निति नेम मरजादामे क्षेत्र निपट थोडा राख्यो सो गमन तो मरजादा बाहिर क्षेत्रमे न करै। परि हेलौ मारि सबद सुनावै, अथवा जिह तरफ जिह प्रानीसो प्रयोजन होय तिह तरफ झाकि झरोकादिकमे बैठि करि तिह प्राणीनें आपना रूप दिखाय प्रयोजन जणावें, अथवा ककर इत्यादि वगाय पैलाने मतलब जतावै सो अतीचार लगाय व्रतने मलीन करै।

तेसरी छन्द

अब सुनि वरत आठमो भाई तीजौ गुणव्रत अति सुखदाई।
अनरथदण्ड पापको त्यागा, यह व्रत धारै ते वडभागा ॥१३
पच भेद है अनरथदोपा, महापापके जानहु पोपा।
पहला दुर्ध्यान जु दुखदाई, ताको भेद सुनो मन लाई ॥१४
पर औगुण गहना उग्माही, परलक्ष्मी अभिलाष धराही।
परनारी अवलोवन इच्छा, इन दोषनितें सुबी अनिच्छा ॥१५
कलह करावन करन जु चाहै, वहुरि अहेरा करन उमाहे।
हारि जीति चित्तवै काहूका, करै नही भक्ति जु साहूकी ॥१६
चौर्यादिक चित्तवे मनमाही, सो दुरगति पावै शक नाही।
दूजौ पापतनो उपदेशा, सो अनरथ तजि भजौ जिनेशा ॥१७
कृषि पशु धन्धा वणिज इत्यादी, पुरुष नारि सजोग करा दी।
मत्र यत्र तन्त्रादिक सर्वा, तजौ पापकर वचन सगर्वा ॥१८
सिंगारादिक लिखन लिखावन, राज-काज उपदेश वतावन।
सिलपि करम आदिक उपदेशा, तजो पाप कारिज आदेशा ॥१९
तजहू अनरथ विफला चर्या, सो त्यागौ श्री गुरुने वर्ज्या।
भूमि-खनन अरु पानी ढारन, अगनि-प्रजालन पवन-विलोरन ॥२०
वनसपत्ती छेदन जो करनो, सो विफला चर्याको धरनो।
हरित तृणाकुर दल फल फूला, इनको छेदन अघको मूला ॥२१
अव सुनि चौथी अनरथदण्डा, जा करि पावौ कुगति प्रचण्डा।
हिंसादान नाम है जाको, त्याग करो तुम बुधजन ताको ॥२२
दयादान करिवा जु निरन्तर, इह वार्ता धारौ उर अन्तर।
छुरी कटारी खड्ग रु भाला, जूती आदिक देहि न लाला ॥२३
विष नहिं देवौ अगनि न देनी, हल फाल्यादिक दे नहिं जैनी।
धनुष वान नहिं देनो काको, जो दे अघ लागै अति ताको ॥२४
हिंसाकारक जेती वस्तु, सो देवौ तो नाहिं प्रसस्तू।
वध वन्धन छेदन उपकरणा, तिनको दान दयाको हरणा ॥२५

पापवस्तु मागी नहिं देवै, जो देवे सो शुभ नहिं लेवै।
जामे जीवनिको उपकारी, सो देवौ सवकौ हितकारी ॥२६
अन्न वस्त्र जल औषध आदी, देवौ श्रुतमें कह्यौ अनादी।
दान समान न आन जु कोई, दयादान सवके सिर होई ॥२७
मजारादिक दुष्ट सुभावा, मास अहारी मलिन कुभावा।
तिनको धारन कबहु न करनो, जीवनिकी हिंसातें डरनो ॥२८
नखिया पखिया हिंसक जेही, धमवन्त पालै नहिं तेही।
आयुधको व्यापार न कोई, जाकरि जीवनिकौ वध होई ॥२९
सीसा लौह लाख सावुन ए, वनिज जाग नहिं अघकारन ए।
जेती वस्तु सदोष वताई, तिनको वनिज त्यागवौ भाई ॥३०
धान पान मिष्टादि रसादिक, लवण हीग घृत तेल इत्यादिक।
दल फल तृण पहुपादिक कदा, मघु मादिक विणिजै मतिमन्दा ॥३१
अतर फुलेल सुगन्घ समस्ता, इनको विणज न होइ प्रशस्ता।
तथा अजोग्य मोम हरतारें, हिंसाकारन उद्यम टारै ॥३२
वध वन्धनके कारिज जेते, त्यागहु पाप विणज तुम तेते।
पशु पखी नर नारी भाई, इनके विणज महा दुखदाई ॥३३
काष्ठादिकको विणज न करै, धम अहिंसा उरमें धरै।
ए सब कुविणज छाडे जोई, धरम सरावक धारै सोई ॥३४
मूलगुणनिमे निंदे एई, अष्टम व्रतमे निंदे तेई।
वार-वार यह विणज जु निंद्या, इनकू त्यागें ते नर वद्या ॥३५
सुवरण रूपा रतन प्रसस्ता, रूई कपरा आदि सुवस्ता।
विणज करै तो ए करि मित्रा, सवै तजौ अति ही अपवित्रा ॥३६
सुनो पाचवो और अनर्था, जे शठ सुनहिं मिथ्यामत अर्था।
इह कुसूत्र सुणवौ अघ मोटा, और पाप सब यातें छोटा ॥३७
पाप सकल उपजें या सेता, उपजै कुवुधि जगतमे तेती।
भष्टिम बात सुनो मति भाई, वशीकरण आदिक दुखदाई ॥३८
वशीकरण मनको करि सता, मन जीत्यौ है ज्ञान अनन्ता।
कामकथा सुनिवौ नहिं कवहू, भूलै घनें चेत परि अवहू ॥३९
परनिंदा सुनिया अति पापा, निंदक लहै नरक सन्तापा।
कवहु न करिवौ राग अलापा, दोप त्यागिवौ होय निपापा ॥४०
विकथा करिवो जोगि न वीरा, घर्मकथा सुनिवौ शुभ धीरा।
आलवाल वकिवौ नहिं जोग्या, गालि काढिवौ महा अजोग्या ॥४१
बिना जैनवानी सुखदानी, और चित्त धरिवौ नहिं प्रानी।
केवलिश्रुत केवलिकी आणा, ताको लागै परम सुजाणा ॥४२
ते पावे निर्वाण मुनीशा, अजरा होवें जोगीशा।
सीख श्रवण रचना कुकथाको, नही करौ जु कदापि वृथाकौ ॥४३

जीवदयामय जिनवर-पन्था, धारै श्रावक अर निरग्रन्था।
काम क्रोध मद छल लोभादी, टारै जैनी जन रागादी ॥४४
आगम अध्यातम जिन वानी, जाहि निरूपै केवलज्ञानी।
ताकी श्रद्धा दृढ धरि धीरा, करणगोचरी कर वर वीरा ॥४५
जाकरि छूटे सर्व अनर्था, लहिये केवल आतम अर्था।
धर्म धारणा धारि अखण्डा, तजौ सर्व ही अनरथदण्डा ॥४६
इन पचनिके भेद अनेका, त्यागौ सुबुधी धारि विवेका।
वडो अनर्थदण्ड है जूवो, यातैं सर्व पाप महि दूवो ॥४७
या सम और न अनरथ कोई, सकल वरतको नाशक होई।
द्यूत कर्म के विसन न लागे, तब सब पाप पन्यते भागे ॥४८
द्यूत कर्ममे माहि बडाई, जाकरि बूडे भवमे भाई।
अनरथ तजिवो अष्टम व्रत्ता, तीजो गुणव्रत्त पाप निवृत्ता ॥४९
ताके अतीचार तजि पचा, तिन तजिया अघ रहै न रचा।
पहलो अतीचार कन्दर्पा, ताको भेद सुनो तजि दर्पा ॥५०
कामोद्दीपक कुकथा जोई, ताहि तजै बुधजन है सोई।
कौतकुच्य है दोष द्वितीया, ताको त्याग व्रतिनिने कीया ॥५१
बदन मोरिवौ वाको करिवौ, भौह नचैवो मच्छर धरिवौ।
नयनादिकको जो हि चलावो, विषयादिकमे मन भटकावौ ॥५२
इत्यादिक जे भडिम वार्ते, तजौ व्रती जे सुव्रत धार्ते।
कौतकुच्यको अर्थ बखानो, पुनि सुनि तीजा दोष प्रवानो ॥५३
भोगानर्थक है अति पापा, जाकरि पइये दुर्गति तापा।
ताको सदा सर्वदा त्यागौ, श्री जिनवरके मारग लागौ ॥५४
वहुत मोल दे भोगुपभोगा, सेवै सो पावे दुख रोगा।
भोगुपभोग-थकी यह प्रीती, सो जानो अधिकी विपरीती ॥५५
वहुरि भूखतें अधिको भोजन, जल पीवौ जो विनहि प्रयोजन।
शक्ति नहीं अरु नारी सेवौ, करि उपाय मैथुन उपजैवो ॥५६
वृथा फूल फल पानादिक जे, बाधा करै लहै शठ अघ जे।
इत्यादिक जे भोगे अर्था, जो सेवौ सो लहै अनर्था ॥५७
है मौखर्य चतुर्था दोषा, ताहि तजै श्रावक व्रत-पोषा।
जो वाचालपनाको भावा, सो मौखर्य कहैं मुनिरावा ॥५८
विना विचार्यो अधिको बकिवौ, झूठे वाग्-जालमे छकिवौ।
असमीक्षित अधिकरण जु बीरा, अतीचार पचम तजि धीरा ॥५९
बिन देख्यो बिन पूछ्यो कोई, घट्टी मूसल उखली जोई।
कछु भी उपकरणा विन देख्या, विन पूछ्या गृहिवौ न असेखा ॥६०
सब हिंसा टरिहै परवीना, हिंसा-तुल्य अनर्थ न लीना।
ए सब अष्टम व्रत के दोषा, करे जु पापी व्रतको सोखा ॥६१

इन तजिसी व्रत निर्मल होई, तातें तजै धन्य हैं सोई।
गुणव्रत काहेतें जु कहाये, ताको अर्थ सुनो मनलाये ॥६२
पंच अणुव्रतको गुणकारी, तातें गुणव्रत नाम जु धारी।
जैसें नगर तनें ह्वै कोटा, तैसें व्रत-रक्षक ए मोटा ॥६३
क्षेत्रनि होय बाडि जो जैसे, पचनिके ए तीनू तैसें।
अब सुनि चउ शिक्षाव्रत मित्रा, जिन करि होवें अष्ट पवित्रा ॥६४
अष्टनिको शिक्षा-दायक ए, ज्ञानमूल तप व्रत नायक ए।
नवमो व्रत पहिलो शिक्षाव्रत, चित्त धीर धर धारहु अणुव्रत ॥६५
सामायिक है नाम जु ताको, धारन करत सुधीजन याका।
सामायिक शिवदायक होई, या सम नाहिं क्रिया निधि कोई ॥६६

दोहा

प्रथम हि सातो शुद्धता भासो श्रुत अनुसार।
जिन करि सामायिक विमल, होय महा अविकार ॥६७
क्षेत्र काल आसन विनय, मन वच काय गनेहु।
सामायिककी शुद्धता, सात चित्त धरि लेहु ॥६८
जहा शव्द कलकल नही, बहु जनको न मिलाप।
दसादिक प्राणी नही, ता क्षेत्रे करि जाप ॥६९
क्षेत्र-शुद्धता इह कही, अब सुनि काल-विशुद्धि।
प्रात दुपहरा साझको, करै सदा सद्‌वुद्धि ॥७०
षट षट घटिका जो करैं, सो उतकृष्टी रीति।
चउ चउ घटिका मध्य है, करै शुद्धि धरि प्रीति ॥७१
द्वै द्वै घटिका जघनि है जेती थिरता होइ।
तेती बेला योग्य है, या सम और न होइ ॥७२
धरै सुधी एकाग्रता, मन लावै जिन-माहिं।
यहै शुद्धता कालको, समय उलघै नाहिं ॥७३
तीजी आसन-शुद्धता, ताको सुनहु विचार।
पल्यकासन धारिकै, ध्यावै त्रिभुवन सारि ॥७४
अथवा कायोत्सर्ग करि, सामायिक करतव्य।
तजि इद्रिय-व्यापार सहु, ह्वै निश्चल जन भव्य ॥७५
विनय शुद्धता है भया, चौथी जिनश्रुति माहिं।
जिनवचनें एकाग्रता, और विकल्पा नाहिं ॥७६
हाथ जोडि आधीन ह्वै, शिर नवाय दे ढोक।
तन मन करि दासा भयो, सुमरै प्रभु तजि शोक ॥७७
विनय समान न धम कोउ, सामायिकको मूल।
अब सुन मनकी शुद्धता, ह्वै व्रतसो अनुकूल ॥७८

मन लावै जिन-रूपसो, अथवा जिन-पद माहिं ।
सो मन-शुद्धि जु पचमो, याम सशय नाहिं ॥७९
छट्ठी वचन-विशुद्धता, विन सामायिक और ।
वचन कदापि न वोलिये, यह भापे जगमौर ॥८०
काय-शुद्धता सातमी, ताको सुनहु विचार ।
काय कुचेष्टा नहिं करै, हस्त-पदादिक सार ॥८१
क्षेत्र-प्रमाण कियौ जितौ, तजे पापके जोग ।
मुनि मम निश्चल होयकै, करै जाप भविलोक ॥८२
राग द्वेष के त्यागतें, समता सव परि होइ ।
ममताको परिहार जो, सामायिक है सोइ ॥८३
सामायिक अहनिशि करैं, ते पावें भव-पार ।
सामायिक सम दूसरो, और न जगमे सार ॥८४
राति दिवस करनो उचित, वहु थिरता नहिं होय ।
तौहू त्रिकाल न टारिवौ, यह धारै वुध सोय ॥८५
जो सामायिकके समय, थिरता गहै सुजान ।
अणुव्रत धारै सो सुधी, तौ पनि साधु समान ॥८६

चाल छन्द

सामायिक सो नहिं मित्रा, दूजो व्रत सोई पवित्रा ।
गृहपतिको जतिपति तुल्या, करई इह व्रत जु अतुल्या ॥८७
तसु अतीचार तजि पचा, जव होइ सामायिक सचा ।
मन वच तन दु प्राणिधाना, तिनको सुनि भेद वखाना ॥८८
जो पाप काज चिंतवना, सो मनको दूषण गिनना ।
पुनि पाप वचनको कहिवौ, सो वचन व्यतिक्रम लहिवौ ॥८९
सामायिक समये भाई, जो कर चरणादि चलाई ।
सो तनको दोष वतायो, सतगुरु ने ज्ञान दिखायो ॥९०
चौथो जु अनादर नामा, है अतीचार अघ-धामा ।
आदर नहिं सामायिकको, निश्चय नहिं जिन-नायकको ॥९१
समरण अनुपस्थाना है, इह पचम दोप गिना है ।
ताको सुनि अर्थ विचारा, सुमरणमे भूलि प्रचारा ॥९२
नहिं पूरो पाठ पढै जो, परिपूरण नाहिं जपै जो ।
कछुको कछु वोलै वाल, सो सामायिक नहिं काल ॥९३
ए पच अतीचारा हैं, सामायिक मे टारा है ।
समता सव जीवन सेती, सयम शुभ भावनि लेती ॥९४
आरति अरु रौद्र जु त्यागा, सो सामायिक वडभागा ।
सामायिक धारौ भाई, जाकरि भव-पार लहाई ॥९५

बेसरी छन्द

क्षमा करो हमसो सब जीवा, सबसो हमरी क्षमा सदोवा।
सब भूत हैं मित्र हमारे, वैर-भाव सबहीसो टारे ॥९६
सदा अकेलो मैं अविनाशी, ज्ञान-सुदर्शनरूप प्रकाशी।
और सकल हैं जो परभावा, ते सब मोते भिन्न लखावा ॥९७
शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध अखडा, गुण अनन्तरूपी परचडा।
कर्मबन्धते रुलै अनादि, भटको भव-वन माहिं जु वादि ॥९८
जब देखै अपनो निजरूपा, तब होवो निर्वाण-सरूपा।
या ससार असार मझारे, एक न सुखकी ठौर करारे ॥९९
यहै भावना नित भावतो, लहैं आपनो भाव अनतो।
अब सुनि पोसहकी विधि भाई, जो दसमो व्रत है सुखदाई ॥१००
दूजा शिक्षाव्रत अति उत्तम, याहि धरे तेई जु नरोत्तम।
न्हावन लेपन भूषन नारी,—सगति गंध धूप नहिं कारी ॥१
दीपादिक उद्योत न होई, जानहु पोसहकी विधि सोई।
एक मासमे चउ उपवासा, द्वै अष्टमि द्वै चउदसि भासा ॥२
षोडश पहर धारनो पोसा, विधि पर्वके निर्मल निर्दोषा।
सामायिककी सो जु अवस्था, षोडश पहर धारनी स्वस्था ॥३
पोसह करि निश्चल सामायिक, होवै यह भासे जगनायक।
पोसह सामायिकको जोई पोसह नाम कहावै सोई ॥४
जे शठ चउ उपवास न धारें, ते पशु-तुल्य मनुष-भव हारें।
बहुत करै तो बहुत भला है, पोसा तुल्य न और कला है ॥५
चउ टारै चउगतिके माही, भरमे यामे सशय नाही।
द्वै उपवासा पखवारेमे, इह आज्ञा जिनमत भारेमे ॥६
व्रतकी रीति सुनो मन लाये, जाकरि चेतन तत्त्व लखाये।
सप्तमि तेरसि धारन धारै, करि जिनपूजा पातक टारै ॥७
एकभुक्ति करि दो पहराते, तजि आरम्भ रहै एकाते।
नहिं ममता देहादिक सेती, धरि समता बहु गुणहि समेती ॥८
चउ अहार चउ विकथा टारै, चउ कषाय तजि समता धारै।
धरमो ध्यानारूढमती सो, जगत उदास शुद्धवरती सो ॥९
स्त्री पशु षढ वालकी सगति, तजि करि उरमे धारै सन्मति।
जिनमन्दिर अथवा वन उपवन, तथा मसानभूमिमे इक तन ॥१०
अथवा और ठौर एकान्ता, भजै एक चिद्रूप महता।
सब पाप जोगनिते न्यारा, सर्व भोग तजि पोसह धारा ॥११
मन वच काय गुप्ति धरि ज्ञानी, परमातम सुमरे निरमानी।
या विधि धारण दिन करि पूरा, सध्या करै सांझकी सूरा ॥१२

सुचि सथारे रात्रि गुमावे, निद्राको लवलेश न आवे।
कै अपनो निजरूप चितारै, कै जिनवर चरणा चित धारै ॥१३
कै जिनविम्ब निरखई मनमे, भूल न ममता धरई तनमे।
अथवा ओंकार अपारा, जपै निरन्तर धीरज धारा ॥१४
नमोकार ध्यावै वर मित्रा, भयो भर्मतें रहित स्वतन्त्रा।
जग-विरक्त जिनमत आसक्तो, सकल-मित्र जिनपति अनुरक्तो ॥१५
कर्म शुभाशुभको जु विपाका ताहि विचारै नाथ क्षमाका।
निजको जानै सबतें भिन्ना, गुण-गुणिको मानै जु अभिन्ना ॥१६
इम चितवनतें परम सुखी जो, भववासिन सो नाहिं दुखी जो।
पंच परमपदको अति दासा, इन्द्रादिक पदतें हू उदासा ॥१७
रात्रि धारनाकी या विधिसो, पूरी करै भयो व्रतनिधिसो।
पुनि प्रभात सध्या करि वीरा, दिन उपवास ध्यान धरि धीरा ॥१८
पूरो करै धर्मसो जोई, सध्या करै साझको सोई।
निशि उपवासतणी व्रतधारी, पूरी करै ध्यानसो सारी ॥१९
करि प्रभात सामायिक सुबुधी, जाके घटमे रच न कुबुधी,
पारण दिवस करै जिनपूजा, प्रासुक द्रव्य और नहिं दूजा ॥२०
अष्ट द्रव्य ले प्रासुक भाई, श्री जिनवरकी पूज रचाई।
पात्र-दान करि दो पहरा जे, करै पारणू आप घरा जे ॥२१
ता दिन हू यह रीति बताई, ठौर अहार अल्प जल पाई।
धारन पारन अर उपवासा, तीन दिवसलो वरत निवासा ॥२२
भूमि-शयन शीलव्रत धारै, मन वच तन करि तजै विकारै।
इह उतकृष्टी पोसह विधि है, या पोसह सम और न निधि है ॥२३
मध्य जु पोसह बारह पहरा, जघनि आठ पहरा गुण गहरा।
अतीचार याके तजि पचा, जाकरि छूटे सर्व प्रपचा ॥२४
विन देखी विन पूछे वस्तू, ताको ग्रहिवौ नाहिं प्रशस्तू।
ग्रहिवौ अतीचार पहलो है, ताको त्यागसु अति हि भलो है ॥२५
विन देखे बिन पूछे भाई, सथारे नहिं शयन कराई।
अतीचार छूटे तव दूजो, इह आज्ञा धरि जिनवर पूजो ॥२६
बिन देखो बिन पूछो जागा, मल मूत्रादि न कर वडभागा।
करिवौ अतीचार है तीजो, सर्व पाप तजि पोसह लीजो ॥२७
पर्व दिनाको भूलन चौथो, अतीचार यह गुणतें चौथो।
बहुरि अनादर पचम दोषा पोसहको नहिं आदर पोषा ॥२८
ये पाँचो तजियाँ ह्वै पोषा, निरमल निश्चल अति निरदोषा।
सामायिक पोषह जयवन्ता, जिनकर पइये श्रीभगवन्ता ॥२९
मुनि होनेको एहि अभ्यासा, इन सम और न कोइ अभ्यासा।
भुक्ति मुक्ति दायक ये व्रता, धन्य धन्य जे करहिं प्रवृत्ता ॥३०

अब सुनि व्रत ग्यारमो मित्रा, तीजो शिक्षाव्रत पवित्रा।
जे भोगोपभोग है जगके, ते सहु व्रटमारे जिनमगके ॥३१
त्याग राग हैं सकल विनासी, जो शठ इनको होय विलासी।
सो रुलिहै भवसागर माही, यामे कछु संदेहा नाही ॥३२
एक अनंतो नित्य निजातम, रहित भोग उपभोग महातम।
भोजन तांबूलादिक भोगा, वनिता वस्त्र आदि उपभोगा ३३
एक वार भोगनमे आवे, ते सहु भोगा नाम कहावे।
वार वार जे भोगे जाई, ते उपभोगा जानहु भाई ॥३४
भोगुपभोग तनो यह अर्था, इन सम और न कोइ अनर्था।
भोगुपभोग तनो परमाणा, सो तीजो शिक्षाव्रत जाणा ॥३५
छता भोग त्यागे वडभागा, तिनके इन्द्रादिक पद लागा।
अछताहू न तजें जे मूढा, ते नहि होय व्रत आरूढा ॥३६
करि प्रमाण आजन्म इनू का, बहुरि नित्य नियमादि तिनू का।
गृहपतिके थावरको हिंसा, इन करि ह्वै पुनि तज्या अहिंसा ॥३७
त्याग बराबर धर्म न कोई, हिंसाको नाशक यह होई।
अंग विषें नहि जिनके रंगा, तिनके कैसे होय अनंगा ॥३८
मुख्य वारता त्याग जु भाई, त्याग समान न और वडाई।
त्याग बनै नहि तोहु प्रमाणा, तामें इह आज्ञा परवाणा ॥३९
भोग अजुक्त न करनें कोई, तजने मन वच तन करि सोई।
जुक्त भोगको करि परिमाणा, ताहूमे नित नियम वखाणा ॥४०
नियम करौ जु घरी हि घरीको, त्याग करौ सवही जु हरीको।
जे अनंतकाया दुखदाया, ते साधारण त्याग कराया ॥४१
पत्र जाति अर कन्द समूला, तजने फूलजाति अघ थूला।
तजनें मद्य मांस नवनीता, सहत त्यागिवौ कहै अजीता ॥४२
तजनें कांजी आदि सबैही, अत्थाणा सधाण तजैही।
तजनें परदारादिक पापा, तजिवौ परधन पर संतापा ॥४३
इत्यादिक जे वस्तु विरुद्धा, तिनको त्यागै सो प्रतिबुद्धा।
सवही तजिवो महा अशुद्धा, अर जे भोगा हैं अविरुद्धा ॥४४
भोग भावमे नाहि भलाई, भोग त्यागि हूजै शिवराई।
अपने गुण पर-जाय स्वरूपा, तिनमे राचै रहित विरूपा ॥४५
वस्त्राभरण ब्याहिता नारी, खान पान निरदूषण कारी।
इत्यादिक जे अविरुध भोगा, तिनहूको जाने ए रोगा ॥४६
जो न सर्वथा तजिया जाई तौ परमाण करौ वहु भाई।
सर्व त्यागवो कहे विवेकी, गृहपति के कछु इक अविवेकी ॥४७
तौ लगि भोगुपभोगहि अल्पा, विविरूपा धारै अविकल्पा।
मुनि के खान-पान इकवारा, सोहू दोष छियालिस टारा ॥४८
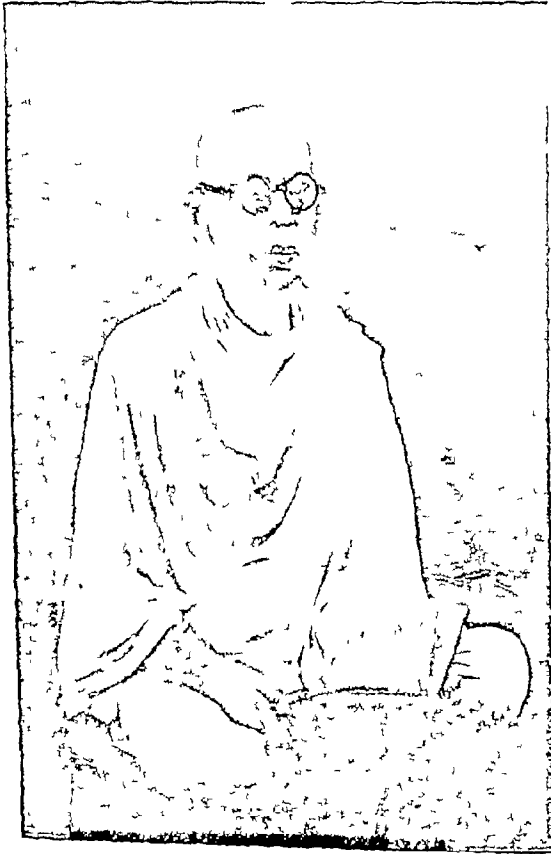
स्व ब्र जीवराज गौतमचद दोशी
स्व रो ता १६-१-५७ (पौष शु १५)

सुर-नर खग धिक्कार करी ए, कीयु पर्वत नि सार तो ।
नारद वाणी सत्य सही ए, जिन-शासन जयकार तो ॥५३
पर्वत वन जाय चिंतवि ए, मुझ वचन कर्‍यु विस्तार तो ।
कर्मयोगे कालासुर साहाज ए, मधुपिंगल जीव गमार तो ॥५३
यजुर्वेद याग रच्यो ए जीवतणा बहुघात तो ।
याजक जन स्वर्ग लहे ए, एहवी कहे खोटी वात तो ॥५४
भोला लोक भ्रमे पड्या ए, न लहि धम-विचार तो ।
पर्वत मरि नरकें गया ए, दुक्ख सहे पच प्रकार तो ॥५५
ए मिथ्यात जिणे कर्‍यो ए, करै छै करसी जेह हो ।
तेहना दुक्ख नो पार नहि ए ये घणु सू वर्णवू तेह तो ॥५६
मुनिसुव्रत तीर्थ समिए ए, उपज्यो मिथ्यात्व विपरीत तो ।
पचम काल घणु विस्तर्‍यो ए, दुर्द्धर दीसे कलि रीत तो ॥५७
जे जिन शासन थी जुओ ए तेह मिथ्यात नु जाण तो ।
सक्षेपे कवि कथा हु कह्यु ए, विस्तार महापुराण तो ॥५८
विनय मिथ्यात्व मरीचि यथा ए, भरत चक्री तणु पुत्र तो ।
दर्शन रूप पाखड घणा ए, कर्म वशि विचित्र तो ॥५९
एक दड त्रिदड धरिए, शिखा शिर एक मुड तो ।
नग्न वेष जटा धरिए ए, काने मुद्रा करि-दड तो ॥६०
चरम कवल कौपीन धारिए, शीगी वाइ गीत ग्यान तो ।
शख बजावे भस्म लगाइ ए, पवनपुरे चलि रीत तो ॥६१
विनय करी, गुणि निर्गुणी ए, दडरूपे नमस्कार तो ।
बाल वृद्ध सहु नें नमें ए, न वि लहे तत्त्व विचार तो ॥६२
कदमूल वावरिए ए, अणगल जल करि स्नान तो ।
अपेय अभक्ष ते आदरे ए, न वि जाणें विज्ञान तो ॥६३
शिला धरि ऊभो रह्यो ए, अघो शिर ऊँचा चरण तो ।
पचाग्नि साधे तप ए, कष्ट करे वली मरण तो ॥६४
नैयायिक साख्य मत ए, चारवाक मत कीध तो ।
सोल पचवीस तत्त्व कह्यो ए निज निज कल्पे वुद्धि तो ॥ ५
आत्म स्वरूप ते न वि लहे ए, एक कडु चन्द्र आकाश तो ।
जल कुम्भ-प्रतिबिम्व जिम ए जू जूआ शरीर निवास तो ॥६६
आदीश्वर आदि करीए, आज लगे उतपन्न तो ।
हित-अहित ते न वि लहे ए, न वि लहे कृत्य-अकृत्य तो ॥६७
कुदर्शन कुज्ञान तप ए, कुत्सित ते आचार तो ।
तिसहु कम विडम्बणा ए, विनय मिथ्यात विकार तो ॥६८
जिनवाणी हृदय धरो ए, जुओ तत्त्व विचार तो ।
विनय मिथ्यात सहु परिहरो ए, अनुसरो जिनधर्म सार तो ॥६७

और न एको है जु विकारा, तातैं महाव्रती अणगारा।
तजै भोग-उपभोग सबैही, मुनिवरका शुभ विरद फबैही ॥४९
शक्ति प्रमाण गृही हू त्यागै, त्याग विना व्रतमें नहि लागै।
राति दिवसके नेम विचारै, यम-नियमादि धरै अघ टारै ॥५०
यम कहिये आजन्म जु त्यागा नियम नाम मरजादा लागा।
यम नियमादि विना नर देही पसुहूते मूरख गनि एही ॥५१
खान पान दिनहीको करनो, रात्रि चतुर्विध हार हि तजनो।
नारी सेवे रैनि विषें ही, दिनमे मैथुन नाहिं फबै ही ॥५२
निसि ही नितप्रति करनो नाही, त्याग विराग विवेक धराही।
नियम माहिं करनो नित नेमा, सीम माहिं सीमाको प्रेमा ॥५३
करि प्रमाण भोगनिको भाई, इन्द्रिनको नहिं प्रवल कराई।
जैसे फणिकू दूध जु प्यावौ, गुणकारी नहिं विष उपजावौ ॥५४
जो तजि भोग भाव अधिकाई, अलप भोग सन्तोष धराई।
सो बहुती हिंसातैं छूटयौ, मोहवटैं नहिं जाय जु लूटयौ ॥५५
दया भाव उपजौ घट ताके, भोगभावकी प्रीति न जाके।
भोगुपभोग पापके मूला, इनकू सेवैं ते भ्रम मूला ॥५६

दोहा

हिंसाके कारण कहे, सर्व भोग उपभोग।
इनको त्याग करै सुधी, दयावन्त भवि लोग ॥५७
सो श्रावक मुनि सारिखा, भोग अरुचि परणाम।
समता धरि सब जीव परि, जिनके क्रोध न काम ॥५८
भोगुपभोग प्रमाण सम, नही दूसरो और।
तृष्णाको क्षयकार जो, है व्रत्तनि सिरमौर ॥५९
अतीचार या व्रत्तको, तजो पच दुखदाय।
तिन तजिया व्रत्त बिमल ह्वै, लहिये श्री जिनराय ॥६०
नियम कियौ जु सचित्तको, भूलिर करै अहार।
सो पहलो दूषण भयो, तजि हूजे अविकार ॥६१
प्रासुक वस्तु सचित्त सो, मिश्रित कबहूँ होय।
उष्ण जले जु सीतल उदक, मिल्यो न लेव होय ॥६२
गृहे दोष दूजो लगे, अव सुनि तीजो दोष।
जो सचित्त सम्बन्ध ह्वै, तजो पापको पोष ॥६३
पातल दूना आदि जे, वस्तु सचित्त अनेक।
तिनसौं ढक्यौ अहार जो, जीमे सो अविवेक ॥६४
सुनि चौथो दूषण सुधी, नाम जु अभिषव जास।
याको अर्थ अयोग्य है, ते न भखै जिनदास ॥६५

अथवा काम-उद्दीपका, भोजन अति हि अजोगि ।
ते कबहूँ करनें नही, बरजें देव अरोगि ॥६६
बहुरि तजौ बुध पचमो, अतीचार अघरूप ।
दु पक्वो आहार जो, अव्रतको जु स्वरूप ॥६७
अति दुर्जर आहार जो, वस्तु गरिष्ठ सु होय ।
नही योग्य जिनवर कहे, तजें धन्य हैं सोय ॥ ६८
कछु पक्मो कछु अपक ही, दुखसो पचे जु कोय ।
सो नहिं लेवो व्रतनिको, यह जिन आज्ञा होय ॥६९
अतीचार पाँचौ तज्या, व्रत निर्मल ह्वै वीर ।
निर्मल व्रत्त प्रभावतैं, लहै ज्ञान गम्भीर ॥७०

चाल छन्द

धरि वरत बारमो मित्रा, जो अतिथि-विभाग पवित्रा ।
इह चौथो शिक्षाव्रत्ता, जे याको करें प्रवृत्ता ॥७१
ते पावें सुर शिव भूती, वा भोगभूमि परसूती ।
सुनि या व्रतको विधि भाई, जा विधि जिनसूत्र बताई ॥७२
त्रिविधा हि सुपात्रा जगमे, जगको नौका जिन-मगमे ।
महाव्रत अणुव्रत समदृष्टी, जिनके घट अमृतवृष्टि ॥७३
तिनको नवधा भक्ती तें, श्रद्धादि गुणनि जुक्ती तें ।
देवौ चउदान सदा जो, सो है व्रत द्वादशमो जो ॥७४
चउ दान सबोमे सारा, इनसे नहिं दान अपारा ।
भोजन औषध अरु ज्ञाना, पुनि दान अभय परवाना ॥७५
भोजन-दानहिं धन पावै, औषधि करि रोग न आवै ।
श्रुत-दान बोध जु लहाई, इह आज्ञा श्रीजिन गाई ॥७६
अभया है अभय प्रदाता, भाषें प्रभु केवल ज्ञाता ।
इक भोजन दानें माही, चउ दान सधैं शक नाही ॥७७
नहिं भूख समान न व्याधी, भव माही बडी उपाधी ।
तातें भोजन सो अन्या, नहिं दूजी औषध धन्या ॥७८
पुनि भोजन-बल करि साधू, करई जिन-सूत्र अराधू ।
भोजनतें प्राण अधारा, भोजनतें थिरता धारा ॥७९
तातें चउ दान सधे हैं, दानें करि पुण्य बधे हैं ।
सो सहु वाछा तजि ज्ञानी, होवै दानी गुण-खानी ॥८०
इह भव पर भवको भोगा, चाहैं नहि जानहिं रोगा ।
दे भक्ती करि सुपात्रनिको, निजरूप ज्ञानमात्रनिको ॥८१
तिह रतनत्रयमे सधो, थाप्यौ चउविधिको नर सधो ।
सो पावै भुक्ति विमुक्ती, इह केवलि भाषित उक्ती ॥८२

नहिं दान समान जु कोई, सब व्रतको मूल जु कोई।
यामे भविजन चित धारो, ससारपार जो चाहो ॥८३
जो भाषे त्रिविधा पात्रा, तिनिमे मुनि उत्तम पात्रा।
हैं मध्यम पात्र अणुव्रती, समदृष्टो जघन्य अव्रती ॥८४
इन तीननिके नव भेदा, भाषें गुरु पाप-उछेदा।
उत्तममे तीन प्रकारा, उतकृष्ट मध्य लघु धारा ॥८५
उत्तम तीर्थंकर साधू, मध्य सु गणधर आराधू।
तिनतें लघु मुनिवर सर्वे, जे तप व्रतसू नहिं गर्वे ॥८६
ए त्रिविध उत्तमा पात्रा, तप सजम शील सुमात्रा।
तिनकी करि भक्ति सु वीरा, उतरै जा करि भव-नीरा ॥८७
मुनिवर होवै निरग्रथा, चालै जिनवरके पथा।
जे विरकत भव-भोगनितैं, राग न द्वेष न लोगनितैं ॥८८
विश्राम आपमे पायौ, काहूमे चित्त न लायौ।
रहनो नहिं एकै ठौरा, करनो नहिं कारिज औरा ॥८९
धरनू निज-आतम-ध्यान, हरनू रागादि अज्ञान।
नहिं मुनिसे जगमे कोई उतरैं भव-सागर सोई ॥९०

दोहा

मोह कर्मकी प्रकृति सहु, होय जु अट्ठाईस।
तिनमे पन्द्रह उपशमे, तब होवै जोगीस ॥९१
पन्द्रा रोकें मुनिव्रतें, ग्यारा अणुव्रति रोव।
सात जु रोकैं पापिनी, सम्यग्दरसन बोध ॥९२
क्रोध मान छल लोभ ए, जीवोको दुखदाय।
सो चडाल जु चौकरी, वरजें श्रीजिनराय ॥९३
अनतानुबन्धी प्रथम, द्वितीय अप्रत्याख्यान।
प्रत्याख्यान जु तीसरी, अर चौथी सजुलान ॥९४
तिनमे तीन जु चौकरी, अर तीन मिथ्यात।
ए पदरा प्रकृत्तिया, तजि व्रत होइ विख्यात ॥९५
पहली दूजी चौकरी, बहुरि मिथ्यात जु तीन।
ए ग्यारा प्रकृती गया, श्रावकव्रत लवलीन ॥९६
प्रथम चौकरी दूर ह्वै, टरैं तीन मिथ्यात।
ए सातों प्रकृति टर्यों उपजे समकित भ्रात ॥९७
तीन चौकरी मुनिव्रतें, द्वै अणुव्रत विधान।
पहली रोकें समकिती, चौथी केवलज्ञान ॥९८
तीन मिथ्यात हतें महा, मुनिव्रत अर अणुव्रत।
अव्रत सम्यकक्रू हतें, करहिं अधर्म प्रवृत्त ॥९९

प्रथम मिथ्यात अबोध अति, जहा न निज-परबोध।
अघ अधर्म विचार नहि, तीव्र लोभ अर क्रोध ॥१०००
दूजी मिश्र मिथ्यात है, कछु इक बोध प्रबोध।
तीजी सम्यक प्रकृति जो, वेदक सम्यक बोध ॥१
कछु चचल कछु मलिन जो सर्वघाति नहि होइ।
तीन माहि इह शुभ तहूँ, वरजनीक है सोइ ॥२
ए मिथ्यात जु तीन विधि, कहे सूत्र अनुसार।
सुनो चौकरी बात अब, चारि चारि परकार ॥३
क्रोध जु पाहन-रेख सो, पाहन-थभ जु मान।
माया बास जु जड-समा, अति परपच बखान ॥४
लोभ जु लाखा रग सो, नरक-योनि दातार।
भरमावे जु अनत भव, प्रथम चौकरी मार ॥५
हलरेखा सम क्रोध है, अस्थि-थभसम मान।
माया मीढा सीगसी, तिथि षट मास प्रमान ॥६
रग आलके सारखो, लोभ पशुगति दाय।
इह दूजी है चौकरी, अप्रत्याख्यान कहाय ॥७
रथरेखा सम क्रोध है, काठथभ-सो मान।
गोमूत्रकी जु वक्रता, ता सम माया जान ॥८
लोभ कसूमा रगसो, नरभव-दायक होय।
दिन पदरा लग वासना, तृतीय चौकरी सोइ ॥९
जलरेखा सो रोस है, बेंतलता सो मान।
माया सुरभी चमरसी, लोभ पतग समान ॥१०
तथा हरिद्रारग सो, सुरगति-दायक जेह।
एक मुहूरत वासना, अन्त चौकरी लेह ॥११
कही चौकरी चारि ये, च्यार हि गतिको मूल।
चारि चौकरी परिहरै, करै करम निरमूल ॥१२
मुनिनें तीन जु परिहरी, धरी शातता सार।
चौथी हूको नाश करि, पावै भवजल पार ॥१३
सकल कर्मको प्रकृति सौ, अर ऊपरि अडताल।
मुनिवर सब खपावही, जीवनिके रिछपाल ॥१४
मुनिपद बिन नहि मोक्ष पद, यह निश्चय उर-धारि।
मुनिराजनिकी भक्ति करि, अपनो जन्म सुधारि ॥१५

चाल छन्द

मुनि हैं निर्भय वनवासी, एकान्त वास सुखरासी।
निज ध्यानी आतमरामा, जगकी संगति नहि कामा ॥१६

जे मुनि रहनेको थाना, वनम कारहिं मतिवाना।
ते पावे शिव सुर थाना, यह सूत्र प्रमाण वखाना ॥१७
मुनि लेइ अहारइ मित्रा, लघु एक वार कर-पात्रा।
जे मुनिको भोजन देही, ते सुरपुर शिवपुर लेही ॥१८
जौ लग नहिं केवलभावा, तौ लग आहार वतावा।
केवल उपजें न अहारा भागे भव-दूपण सारा ॥१९
नहिं भूख तृषादि सवै ही, जव केवल ज्ञान फवैही।
केवल पायें जिनराजा, केवल पद ले मुनिराजा ॥२०
मुनिकी सेवा सुखकारी, वडभाग करें उरधारी।
पुस्तक मुनिपै ले जावें, मुनि सूत्र अर्थ ते आवें ॥२१
ते पावें आतमज्ञाना, ज्ञानहिं करि ह्वै निरवाना।
भेपज भोजनमे युक्ता, मुनिको लखि रोग प्रव्यक्ता ॥२२
देवें ते रोग नसावें कर्मादिक फेरि न आवे।
मुनिके उपसर्ग निवारे, ते आतम भवदधि तारे ॥२३
मुनिराज समान न दूजा, मुनि पद त्रिभुवन करि पूजा।
मुनिराज त्रिवर्णी होवै, शूद्र नहिं मुनिपद जोवै ॥२४
मुनि आर्या एल महा ए, ह्वै क्षत्री द्विज वणिजा ए।
अव मध्यपात्रके भेदा, त्रिविधा सुनि पाप उछेदा ॥२५
उतकृष्ट रु मध्य जघन्या, जिनसे नहिं जगमे अन्या।
पहली पडिमासो लेई, छट्ठी तक श्रावक जेई ॥२६
मध्यनिमे जघन कहावे, गुरु धम देव उर लावै।
जे पचम ठाणें माई, अणुवृत्ती नाम धराई ॥२७
पहली पडिमा धर बुद्धा, सम्यक् दरसन गुण शुद्धा।
त्यागें जे सातो विसना, छाडें विषयनिकी तृष्णा ॥२८
जे अष्ट मूल गुण धारें, तजि अभख जीव न सघारें।
दूजी पडिमा धर धीरा, व्रतधारक कहिये वीरा ॥२९
वारा व्रत पालै जोई, सेवै जिनमारग सोई।
जे धारें पच अणुव्रत, त्रय अणुव्रत चउ शिक्षाव्रत ॥३०

चौपाई

तीजी पडिमा धरि मतिवत, सामायिकमे मुनिसे सत।
पोसामें आरूढ विशाल, सो चौथी पडिमा प्रतिपाल ॥३१
पचम पडिमा धर नर धीर, त्याग सचित्त वस्तु वर वीर।
पत्र फूल फल कूपल आदि, छालि मूल अकुर वीजादि ॥३२
मन वच तन कर नीली हरी, त्यागै उरमे दृढ व्रत धरो।
जीवदयाको रूप निधान, षट कायाको पीहर जान ॥३३

पाल्यौ जैन वचन जिन वीर, सर्व जीवकी मेटी पीर।
छट्टी प्रतिमा धारक सोई, दिवस नारिको परस न होई ॥३४
रात्रि विषै अनसन व्रत धरै, चउ अहारको है परिहरै।
गमनागमन तजे निशि माहिं मन वच तन दिन शील धाराहिं ॥३५
ए पहलीसो छट्टी लगे, जघन्य श्रावकके व्रत जगें।
पतिव्रता व्रतवन्ती नारी, मध्यम पात्र जघन्य विचारी ॥३६
श्रावक और श्राविका जेह, घरवारी व्रतधारी तेह।
मध्यम पात्तर कहे जघन्य, इनकी सेव करे सो अन्य ॥३७
वस्त्राभरण अन्न जल आदि, थान मान औषध धानादि।
देने श्रुत सिद्धांत जु वीर, हरनी तिनकी सवही पीर ॥३८
अभय दान देवो गुणवान, करनी भगति कहैं भगवान।
भवजल के द्रोहण ए पात्र, पार उतारें दरसन मात्र ॥३९

दोहा

सप्तम प्रतिमा धारका, ब्रह्मचय व्रत धार।
नारीको नागिनि गिनें, लख्यौ तत्त्व अविकार ॥४०
मन वच तन करि शीलधर, कृत कारित अनुमोद।
निज नारीहूकू तजै, पावै परम प्रमोद ॥४१
जैसे ग्यारम दशम नव, अष्टम पडिमाधार।
मन वच तन करि शील धरि, तैसे ए अविकार ॥४२
तिनतें एतो आतरो, ते आरभ वितीत।
इनके अलपारभ है, क्रोध लोभ छल जीत ४३
लख्यौ आपनो तत्व जिन, नाहिं मायासो मोह।
तजै राग दोषादि सव काम क्रोध पर द्रोह ॥४४
कछु इक धनको लेस हैं, तातें घरमे वास।
जे इनकी सेवा करे, ते पावे सुखरास ॥४५

चाल छन्द

अव सुनि अष्टम पडिमा ए, त्रस थावर जीवदया ए।
कछु हि धधा नहिं करनो, आरभ सबै परिहरनो ॥४६
भजनो जिनकों जगदीसा, तजनो जगजाल गरीसा।
तनसो नहिं स्वामित धरनो, हिंसासो अतिही डरनो ॥४७
श्रावकके भोजन करई, नवमी सम चेष्टा धरई।
नवमीतें एतो अतर, ए हैं कछुयक परिग्रह-धर ॥४८
वन माही थोरो रहनो, शीतोष्ण जु थोरो सहनो।
जे नवमी पडिमावता, जगके त्यागी विकसता ॥४९
जिन धातु मात्र सव नाखे, कपड़ा कछुयक ही राखे।
श्रावकके भोजन भाई, नहिं माया मोह वराई ॥५०

आवे जु बुलायें जीवा, जिनको नहि माया छीवा ।
है दशमीतें कछु नूना, परिकीय कर्म अघ चूना ॥५१
एतौ ही अन्तर उनतें, कबहूंक लौकिक वच जनतें ।
बोलें परि विरकतभावा, धनको नहि लेश धरावा ॥५२
आतेको आरुकारा, जाते सो हल भल धारा ।
दसमीते अतिहि उदासा, नहि लौकिक वचन प्रकाशा ॥५३
सप्तम अष्टम अर नवमा, ए मध्य सरावग पडिमा ।
मध्यनिमे मध्य जु पात्रा, व्रत शील ज्ञान गुण गात्रा ॥५४
अथवा ही श्राविका शुद्धा, व्रत धारक शील प्रवृद्धा ।
जो ब्रह्मचारिणी बाला, आजनम शील गुण माला ॥५५
सो मध्यम पात्रा मध्या, जानो व्रत शील अवध्या ।
अथवा निजपतिको त्यागें, सो ब्रह्मचर्य अनुरागें ॥५६
सो परम श्राविका भाई, मध्यनिमे मध्य कहाई ।
इनको जो देय अहारा, सो ह्वै भवसागर पारा ॥५७

दोहा

अन्न वस्त्र जल औषधी, पुस्तक उपकरणादि ।
थान ज्ञान दान जु करें, ते भव तिरें अनादि ॥५८
हरें सकल उपसर्ग जे, ते निरुपद्रव होंहि ।
सुर-नर पति ह्वै मोक्षमें, राजे अति सुखसो हि ॥५९

चालछन्द

जो दशमी पडिमा धारा, श्रावक सु विवेकी चारा ।
जग धधाको नहि लेशा, नहि धधाको उपदेशा ॥६०
वनमे हु रहै वर धीरा, ग्रामे हु रहै गुणधीरा ।
आवे श्रावक घरि जीवा, नहि कनकादिक कछु छीवा ॥६१
एकादशमीतें छोटे, परि और सकलतें मोटे ।
जिनवानी बिन नहि बोलें, जे कितहूं चित न डोलें ॥६२
मुनिवरके तुल्य महानर, दशमी एकादशमी धर ।
एकादशमी द्वै भेदा, एलिक छुल्लक अघछेदा ॥६३
इनसे नहि श्रावक कोई, सबमे उत्कृष्टे होई ।
त्यागौ जिन जगत असारा, लाग्यो जिन रग अपारा ॥६४
पायौ जिनराज सुधर्मा, छाडे मिथ्यात अधर्मा ।
जिनके पचम गुणठाणा, पूरणतारूप विधाना ॥६५
द्वय माहि महत्त जु ऐला, निश्चलता करि सुरशैला ।
जिनके परिग्रह कोपीना, अर कमण्डल पीछी तीना ॥६६

जिनशासनको अभ्यासा, भव-भोगनिसु जु उदासा ।
श्रावक के घर अविकारा, ले आप उदड अहारा ॥६७

गुणवान साध सारीसा, लुचितकेसा बिन रीसा ।
ए ऐलि त्रिवर्णी होई, शूद्रा नहिं ऐलि जु कोई ॥६८

इनतें छुल्लक कछु छोटे, परि और सकलतें मोटे ।
इक खडित कपरा राखें, तिनको छुल्लक जिन भाखें ॥६९

कमडलु पीछी कोपीना, इन बिन परिग्रह तजि दीना ।
जिनश्रुत-अभ्यास निरतर, जान्यू है निज पर अतर ॥७०

जे हैं जु उदड विहारा, ले भाजनमाहिं अहारा ।
कातरिका केस करावे, ते छुल्लक नाम कहावे ॥७१

चारो हे वर्ण जु छुल्लक, राखें नहिं जगसू तल्लुक ।
आनन्दो आतमरामा, सम्यग्दृष्टी अभिरामा ॥७२

ए द्वै है भेद बड भाई, ग्यारम पडिमा जु कहाई ।
वन-माहिं रहैं वर वीरा, निरभय निरव्याकुल धीरा ॥७३

तिनकी करि सेव जु भाया, जो जीवनिको सुखदाया ।
तिनके रहनेको थाना, वनमे करने मतिवाना ॥७४

भोजन भेषज जिनग्रन्था, इनको दे सो निजपथा ।
पावे अर दे उपकरणा, सो हरै जनम जर मरणा ॥७५

उपसर्ग उपद्रव टारै, ते निरभय थान निहारै ।
दसमी अर ग्यारस दोऊ, मध्यम उतकृष्टे होऊ ॥७६

अथवा आर्या व्रतधारी, अणुव्रतमे श्रेष्ठ अपारी ।
आर्या घर-बार जु त्यागै, श्रीजिनवरके मत लागै ॥७७

राखै इक वस्त्र हि मात्रा, तप करि है क्षीण जु गात्रा ।
कमडलु पीछी अर पोथी, ले भूति तजी सहु थोथी ॥७८

थावर जगम तनवाना, जानें सब आप समाना ।
जे मुनि कर-पात्र अहारा, सिर लोच करें तप धारा ॥७९

तिनकी सो रीति जु धारै, जगसो ममता नहिं कारै ।
द्विज क्षत्री बणिक कुला ही, ह्वै आर्या अति विमला ही ॥८०

अणुव्रत परि महाव्रत्त तुल्या, नारिनमे एहि अतुल्या ।
माता त्रिभुवनकी भाई, परमेसुरसो लवलाई ॥८१
आर्याको वस्त्र जु भोजन, देनें भक्ती करि भो जन ।
पुस्तक औषधि उपकरणा, देनें सहु पाप जु हरणा ॥८२
उपसर्ग हरै बुधिवाना, रहनेको उत्तम थाना ।
देवे पुन अविनासी, लेवै अति आनदरासी ॥८३

दोहा

छै पडिमा जानो जघनि मध्य जु नवमी ताइ ।
दस एकादशमी उभय, उतकृष्टी कहवाइ ॥८४
पतिव्रता जो श्राविका, मध्यम माहिं जघन्य ।
ब्रह्मचारिणी मध्य है, आर्या उत्तम वन्य ॥८५
पचम गुण ठाणें व्रती, श्रावक मध्य जु पात्र ।
छठें सातवें ठाण मुनि, महापात्र गुणगात्र ॥८६
कहे मध्यके भेद त्रय, अर उतकिष्टे तीन ।
सुनो जघन्य जु पात्रके, तीन भेद गुणलीन ॥८७
चौथे गुणठाणे महा, क्षायिक सम्यकवन्त ।
सो उतकृष्टे जघनिमे, भाषे श्रीभगवत ॥८८
क्रोध मान छल लोभ खल, प्रथम चौकरी जानि ।
मिथ्या अर मिश्रहि तथा, सम्यक् प्रकृति पर वानि ॥८९
सात प्रकृति ए खय गई, रह्यौ अलप ससार ।
जीवनमुक्त दशा धरै, सो क्षायिकसम वार ॥९०
सातो जाके उपसमे, रमैं आपमें धीर ।
सो उपसम-सम्यक धनी, जघनि माहिं मधि वीर ॥९१
सात माहिं षट उपसमे, एक तृतीय मिथ्यात ।
उदै होय है जा समे, सो वेदक विख्यात ॥९२
वेदक सम्यकवन्त जो, जघनि जघनिमे जानि ।
कहे तीन विधि जघनि ए, जिन आज्ञा उर आनि ॥९३
जघनि पात्रकू अन्न जल, औषध पुस्तक आदि ।
वस्त्राभूषण आदि शुभ, थान मान दानादि ॥९४
देवो गुरु भाषें मया, करनो बहु उपगार ।
हरनी पीरा कष्ट सहु, धरनो नेह अपार ॥९५
सब ही सम्यकधारका, सदा शात रसलीन ।
निकट भव्य जिनधर्मके, धोरी परम प्रवीन ॥९६
नव भेदा सम्यक्तके, तामे उत्तम एक ।
सात भेद गनि मध्यके, जघनि एक सुविवेक ॥९७
वेदक एक जघन्य है, उत्तम क्षायिक एक ।
और सबे गनि मध्य ए, इह धारी जु विवेक ॥९८
क्षयोपसम वरते त्रिविध, वेदक चारि प्रकार ।
क्षायिक उपसम जुगल जुत, नवधा समकित धर ॥९९
वेदक कछुयक चचला, तौ पनि मर्म-उछेद ।
लखैं आपको शुद्धता जानें निज पर भेद ॥११००

सेवा जोग्य सुपात्र ए, कहे जिनागम माहिं ।
भक्ति सहित जे दान दें, ते भवभ्रांति नसाहिं ॥१
त्रिविध पात्रके भेद नव, कहे सूत्र-परवान ।
मुनिको नवधा भक्ति करि, देहि दान बुधिमान ॥२
विधिपूर्वक शुभ वस्तुको, स्वपर अनुग्रह हेत ।
पात्रको दान जु कर, सो शिवपुरको लेत ॥३
नवधा भक्ति जु कौनसी, सो सुनि सूत्र-प्रवानि
मिथ्या मारग छाडि करि, निज श्रद्धा उर आनि ॥४
आवौ आवौ शब्द कहि, तिष्ठ तिष्ठ भासेहि ।
सो संग्रह जानो बुधा अघ-संग्रह टारेहि ॥५
ऊँचौ आसन देय शुभ, पात्रनिको परवीन ।
पग धोवै अरचै बहुरि, होय बहुत आधीन ॥६
करै प्रणाम बिनय करी, त्रिकरण शुद्धि धरेहि ।
खान-पानकी शुद्धता, ये नव भक्ति करेहि ॥७
सुनो सात गुण पडिता, दातारनिके जेह ।
धारै धरमी धीर नर, उधरै भव-जल तेह ॥८
इह भव फल चाहै नही, क्रियावान अति होय ।
कपट-रहित ईर्षा-रहित, धरै विषाद न सोय ॥९
हुइ उदारता गुण सहित, अहंकार नहि जानि ।
ए दाताके सप्त गुण, कहे सूत्र-परवानि ॥१०
श्रद्धा धरि निज शक्तिजुत लोभ रहित ह्वै धीर ।
दया क्षमा दृढ चित्त करि, देय अन्न अर नीर ॥११
राग द्वेष मद भोग भय, निद्रा मन्मथपीर ।
उपजावै जु असंजमा, सो देवौ नहिं वीर ॥१२
यह आज्ञा जिनराजकी, तप स्वाध्याय सु ध्यान ।
वृद्धि-करण देवौ सदा, जाकरि लहिये ज्ञान ॥१३
मोक्ष कारणा जे गुणा, पात्र गुणनिके धीर ।
तातै पात्र पुनीत ए, भाषै श्रीजिनवीर ॥१४
संविभाग अतिथीनको, व्रत्त बारमो सोइ ।
दया तनो कारण इहै, हिंसा नाशक होइ ॥१५
हिंसाके कारण महा, लोभ अजसकी खानि ।
दान करै नासै भया, इह निश्चय उर आनि ॥१६
भोग-रहित निज जोग धरि, परमेश्वर के लोग ।
जिनके दर्शन मात्र ही, मिटै सकल दुख सोग ॥१७
मधुकर वृति धारैं मुनी, पर पीडा न करेय ।
पुण्यजोग आवे घरे, जिन आज्ञा जु धरेय ॥१८

तिनकौं जो सु अहार दे, ता सम और न कोइ।
दानधर्मतें रहित जे, किरपण कहिये सोइ ॥१९
कियौ आपने अर्थ जो सो ही भोजन भ्रात।
मुनिको अरति विषाद तजि, दे भवपार लहात ॥२०
शिथिल कियौ जिह लोभको, परम पथके हेत।
तेई पात्रनिको सदा, विधि करि दान जु देत ॥२१
सम्यग्दृष्टी दान करि, पावै पुर निरवान।
अथवा भव धरनो परै, तौ पावै सुरथान ॥२२
विन सम्यक्त जु दान दे, त्रिविधि पात्रको जोहि।
पावै इन्द्री भोग सुख, भोगभूमि मे सोहि ॥२३
उत्तम पात्र सु दानतें, भोगभूमि उतकृष्ट।
पावै दशधा कल्पतरु, जहाँ न एक अनिष्ट ॥२४
मध्य पात्रके दान करि, मध्य भोगभू माहिं।
जघनि पात्रके दानकरि, जघनि भोगभू जाहिं ॥२५
पात्रदानको फल इहै, भाखें गणधरदेव।
धन्य धन्य जे जगतमे, करें पात्रकी सेव ॥२६

चाल छन्द

देने औषध सु अहारा, देने श्रुत पाप प्रहारा।
रहने को देनी ठौरा, करने अति ही जु निहौरा ॥२७
हरने उपसर्ग तिन्होंकें, धरनें गुण चित्त जिन्होंके।
सुख साता देनी भाई, सेवा करनी मन लाई ॥२८
ए नवविधि पात्र जु भाखे, आगम अध्यातम साखे।
वहुरी त्रय भेद कुपात्रा, धारें वाहिज व्रतमात्रा ॥२९
जे शुभ किरिया करि युक्ता, जिनके नहिं रीति अयुक्ता।
सम्यग्दर्शन विन साधू, तप सजम शील अराधू ॥३०
पावें नहिं भवजल पारा, जावें सुरलोक विचारा।
पहुचे नव ग्रीव लगै भी, जिनतें अघकर्म भगै भी ॥३१
पण भावलिंग विनु भाई, मिथ्यादृष्टी हि कहाई।
द्रव्यलिंग धारक जति जेई, उतकृष्ट कुपात्रा तेई ॥३२
जे सम्यक बिन अणुव्रत्ती, द्रव्य-श्रावकव्रत प्रवृत्ती।
ते मध्य कुपात्र वखानें, गुरुने नहिं श्रावक मानें ॥३३
आपा पर परचें नाही, गनिये वहिरातम माही।
षोडश सुरगलो जावें, आतम अनुभव नहिं पावें ॥३४

दोहा

जघनि कुपात्रा अव्रती, बाहिर धर्मप्रतीति।
दीखें समदृष्टी समा, नहिं सम्यककी रीति ॥३५

शुभगति पावै तौ कहा, लहै न केवल भाव।
ये ससारी जानिये, भाषैं श्रीजिनराव ॥३६
इनको जानि सुपात्र जा, धारैं भक्ति विधान।
सो कुभोगभूमी लहै, अल्पभोग परवान ॥३७
पर उपगार दया निमित्त, सदा सकलको देय।
पात्रनिकी सेवा करै, सो शिवपुर सुख लेय ॥३८
नहिं श्रावक नहिं व्रत जती, नहिं श्रावक व्रत जानि।
नहिं प्रतीति जिनधर्मकी, ते अपात्र परवानि ॥३९
विनै न करनो तिनतनो, दया सकल परि जोग।
करनी भक्ति सु पात्रकी, भक्ति अपात्र अजोगि ॥४०
करनी करुणा सकल परि, हरनी सबकी पीर।
धरनी सेवा सन्तकी, इह भाषैं श्रीवीर ॥४१
पात्रापात्र द्विभेद ए, कहे सूत्र अनुसार।
अब सुनि करुणादानको, भेद विविधि परकार ॥४२
सबै आतमा आपसे, चेतनगुण भरपूर।
निज परकी पहिचान विन, भ्रमे जगतमे कूर ॥४३
उदय कर्मके हैं दुखी, आधि व्याधिके रूप।
परे पिंडमे मूढधी, लखैं नही चिद्रूप ॥४४
तिन सब पर धरिके दया, करै सदा उपगार।
नर तिर सब ही जीवको, हरै कष्ट व्रतधार ॥४५
अपनी शक्ति प्रमाण जो, मेटै परकी पीर।
तन मन धन करि सर्वको, साता दे वर वीर ॥४६
अन्न वस्त्र जल औषधी, त्रण आदिक जे देय।
जाने अपने मित्र सहु, करुणाभाव धरेय ॥४७
बाल वृद्ध रोगीनिको, अति ही जतन कराय।
अन्ध पगु कुष्टीनि परि, करै दया अधिकाय ॥४८
बन्दि छुडावै द्रव्य दे, जीव बचावै सर्वं।
अभयदान दे सर्वको, धरै न धनको गव ॥४९
काल दुकालै माहिं जो, अन्नदान बहु देय।
रकनिकी पीहर जिकौ, नरभवको फल लेय ॥५०
जाको जगमे कोउ नही, ताको भीरी सोइ।
दुरबलको वल शुभमती, प्रभुको दासा होइ ॥५१
शीतकालमे शीतहर, दे वस्त्रादिक वीर।
उष्णकालमे तापहर, वस्तु प्रदायक धीर ॥५२
वर्षाकालै धर्मधी, दे आश्रय सुखदाय।
जल बाधाहर वस्तु दे, कोमल भाव धराय ॥५३

भाँति भाँतिकी औषधी, भाँति भाँतिके चीर।
भाँति भाँतिकी वस्तु दे, सो जैनो जगवीर ॥५४
दान विधी जु अनन्त है, को लग करे वखान।
जाने श्रीजिनरायजू, किह दाता बुधिवान ॥५५
भक्ति दया द्वै विधि कही, दानधर्मकी रीति।
ते नर अगीकृत करें, जिनके जैन प्रतीति ॥५६
लक्ष्मी दासी दानकी, दान मुकतिको मूल।
दान समान न आन कोउ, जिन मारग अनूकूल ॥५७
अतीचार या व्रतके, तजं पच परकार।
तव पावै व्रतशुद्धता, लहै धम अविकार ॥५८
भोजनको मुनि आवही, तव जो मूढ कदागि।
मनमे ऐसी चितवै, दान करता ववागि ॥५९
लगि है वेला चूकिहो जगतकाजतें आज।
तातें काहूको कहै, जाय करें जगकाज ॥६०
मो विन काम न होइगो, तातें जानो मोहि।
दान करेंगे भातृ-सुत, इहहू कारिज होहि ॥६१
धनको जाने सार जो, धर्म न जाने रच।
सो मूढनि सिरमौर है, घटमे वहुत प्रपच ॥६२
कहै भ्रात पुत्रादिको, दानतनो शुभ काम।
आप सिधारै जडमती, जग धधाके ठाम ॥६३
परदात्री उपदेश यह, दूषण पहलो जानि।
पराधीन ह्वै या थकी, यह निश्चै उर आनि ॥६४
मुनि सम ह्वैगो धन कहा, इह धारै उर धीर।
मुक्ति-मुक्ति दाता मुनि, षटकायनिके वीर ॥६५
पुनि सचित्तनिक्षेप है, दूजो दोष अजोगि।
ताहि तजें तेई भया, दानव्रतको जोगि ॥६६
सचित्त वस्तु कदली दला, ढाक पत्र इत्यादि।
तिनमे मेली वस्तु जो, मुनिको देवो वादि ॥६७
दोष लगै जु सचित्तको, मुनिके अचित्त अहार।
तातै सचितनिक्षेपको, त्याग करै व्रत धारा ॥६८
तीजो सचित्तपिधान है, ताहि तजो गुणवान।
कमलपत्र आदिक सचित, तिन करि ढाक्यौ धान ॥६९
नहिं देनो मुनिरायको, लगै सचितको दोष।
प्रासुक आहारी मुनी, व्रत तप सजम कोष ॥७०
काल उलघन दानको, योग्य होत नहिं दान।
सो चौथो दूपण भया त्यागें ते मतिवान ॥७१

है मत्सरता पचमो, दूषण दुखकी खानि ।
कर अनादर दानको, ता सम मूढ़ न आनि ॥७२
देखि न सकै विभूति पर, पर-गुण देखि सकै न ।
सहि न सकै पर उच्चता, सो भव-वास तजे न ॥७३
नहि मात्सर्य समान कोउ, दूषण जगमे आन ।
जाहि निषेधें सूत्रमे, तीथकर भगवान ॥७४
अतीचार ए दानके कहे जु श्रुत अनुसार ।
इनके त्याग किये शुभा, होवै व्रत अविकार ॥७५
नमो नमो चउ दानको , जे द्वादश व्रत-मूल ।
भोजन भेषज भय-हरण, ज्ञानदान हर भूल ॥७६
भोजन दानें ऋद्धि ह्वै, औषध रोग निवार ।
अभयदानते निभया, श्रुति दाने श्रुत-पार ॥७७
कहे व्रत द्वादश सबै, दया आदि सुखदाय ।
दान पयन्त शुभकरा, जिन करि सब दुख जाय ॥७८
एक एक व्रत्तके कहे पच पच अतिचार ।
पालें निरतीचार व्रत्त, ते पावें भव पार ॥७९
सम्यक विन नहि व्रत ह्वै, व्रत विन नहि वैराग ।
बिन वैराग न ज्ञान ह्वै, राग तजे बडभाग ॥८०

चाल छन्द

अब सुनि सव व्रतको कोटा, देशावकाशिव्रत मोटा ।
ताकी सुनि रीति जु भाई, जैसी जिनराज बताई ॥८१
पहले जु करौ परमाणा, दिसि विदिशाको विधि जाणा ।
इन्द्री विषयनिका नेमा, कीयौ धरि व्रतसो प्रेमा ॥८२
धन धान्य अन्न वस्त्रादी, भोजन पानाभरणादी ।
मरजादा सबकी धारी, जीवितलो धर्म सम्हारी ॥८३
जामे मरजादा बरसी, तामे छै मासी दरसी ।
करनी चउमासो तामे, बहुरि द्वै मासी जामे ॥८४
ताहूमे मासी नेमा, मासीमे पाखी प्रेमा ।
पाखीमे आधी पाखी, ताहूमे दिन-दिन भाखी ॥८५
दिन माही पहरा धारै, पहरनिमे घरी विचारै ।
पल पलके धारै नेमा, जाके जिनमतसो प्रेमा ॥८६
भोगनिसो घटतो जाई, व्रतहै चढतो अधिकाई ।
सीमामे सीमा कारै, जिन-मारग जतनें धारै ॥८७
ह्वै वाढि फले क्षेत्रनिके, जैसें कोट जु नगरीके ।
तैसे यह द्वादश व्रतके, देशावकाशि व्रत सबके ॥८४

देसावकाशि व्रत माही, सतरा नेम जु सक नाही।
तिनकी मुनि रीति जु मित्रा, जिन करि ह्वै व्रत पवित्रा ।।८९

दोहा

नियम किये व्रत शोभ ही, नियम विना नहिं शोभ।
तातें व्रत धरि नेमको, धारै तजि मद लोभ ।।९०

सतरा नेमके नाम उक्त च श्रावकाचारे

भोजने षटरसे पाने कुंकुमादिविलेपने।
पुष्पताम्बूलगीतेषु, नृत्यादौ ब्रह्मचर्यके ।।१
स्नानभूषण वस्त्रादौ, वाहने शयनाशने।
सचित्तवस्तुसख्यादौ, प्रमाण भज प्रत्यहम् ।।२

चौपाई

भोजनकी मरजादा गहै, वारवार न भोजन लहै।
पर घर भोजन तौहि जु करै, प्रात समै जो सख्या धरै ।।९१
अन्न मिठाई मेवा आदि, भोजन माहिं गिने जु अनादि।
बहुरि चवीणी अर पकवान, भोजन जाति कहे भगवान ।।९२
सब मरजादा माफिक गहै, वार-वार ना लीयो चहै।
षट रसमे राखे जो रसा, सोई लेय नेममे बसा ।।९३
और न रस चाखौ बुधिवन्त, इह आज्ञा भाषे भगवन्त।
काम-उदीपक हैं रसजाति, रस परित्याग महातप भाति ।।९४
जो रसजाति तजी नहिं जाय, करि प्रमाण जियमे ठहराय।
पानी सरबत दूध रु मही, इत्यादिक पीवेके सही ।।९५
तिनमे लेवौ राखै जोहि, ता माफिक लेवौ बुध सोहि।
चोवा चन्दन तेल फुलेल, कुंकुम और अरगजा मेल ।।९६
औषधि आदि लेप हैं जेह, सख्या बिन न लगावै तेह।
जाने येह देह दुरगन्ध, याके कहा लगावै सुगन्ध ।।९७
जो न सर्वथा त्यागै वीर, तौहु प्रमाण ग्रहै नर धीर।
पहुपजातिसो छाडै प्रेम, अति दोषीक कहे गुरु एम ।।९८
भोग उदय जो त्यागि न सकै, थोरे लेप पापतें सकै।
पान सुपारी डोडा आदि, लौंगादिक मुखसोध अनादि ।।९९
दालचिनी जाविश्री जानि, जातीफल इत्यादि बखानि।
सबमे पान महा दोषीक, जैसे पापत्ति माहिं अलीक ।।१२००
पान त्यागिवौ जावो जीव, पाननिमे प्राणी जु अतीव।
जो अतिभोगी छाडि न सकै, थोरे खाय दोषतें सकै ।।१

गीत नृत्य वादित्र जु सर्व, उपजावै अति मनमथ गर्व।
ए कौतूहल अधिके बन्ध, इनमे जो राचै सो अन्ध ॥२
जो न सर्वथा छाडे जाय, तोहु न अधिक न राग धराय।
मरजादा माफिक ही भजै, औसर पाय सकल ही तजै ॥३
एक भेद या माही, और, आपुन बैठौ अपनी ठौर।
गावत गीतत्रिया नीकली, सुनिकर हरषै चित्तधरि रली ॥४
तामे दोष लगै अधिकाय, भाव सराग महा दुखदाय।
पातरि नृत्य अखारे माहिं, नट नटवा अथ नृत्य कराहिं ॥५
बादीगर आदिक बहु ख्याल, विनु परमाण न देखौ लाल।
अब सुनि ब्रह्मचर्यकी बात, याहि जु पाले तेहि उदात ॥६
परनारीको है परिहार, निजनारी मे इह निरधार।
जावो जीव दिवसको त्याग, रात्रि विषै हूं अलपहि राग ॥७
पाँचू परवी शील गहेय, अर सब व्रतके दिवस धरेय।
कबहुक मैथुन सेवन परै सो मरजादा माफिक करै ॥८
महा दोषको मूल कुशील, या तजिवेमे ना करि ढील।
सेवत मनमथ जीव-विघात, इहै काम है अति उतपात ॥९
जो न सर्वथा त्यागयौ जाहि, तौहू अलप सेववौ ताहि।
नदी तलाव वापिका कूप, तहाँ जाय न्हावौ जु विरूप ॥१०
जो न्हावै बिनछाणें जले, ते सब धर्म-कमतैं टलैं।
जैसौ रुधिरथकी ह्वै स्नान, तैसौ अनगाले जल जान ॥११
अचित जले न्हावौ है भया, प्रासुक निर्मल विधिकरि लया।
ताहूकी मरजादा धरै, बिना नेम कारिज नहिं करै ॥१२
रात्री न्हावौ नाहिं कदापि, जीव न सूझै मित्र कदापि।
हिंसा सम नहिं पाप जु और दया सकल धर्मनि सिर मौर ॥१३
आभूषण पहिरे हैं जित्ते, धरमै और धरे हैं तिते।
नियम बिना नहिं भूषण धरै, सकल वस्तुको नियम जु करै ॥१४
परके दीये पहरै जे हि, नियम माहिं राखे हैं तेहि।
रत्नत्रय भूषण बिनु आन, पाहन सम जाने मतिवान ॥१५
वस्त्रनिकी जेती मरजाद, ता माफिक पहरै अविवाद।
अथवा नये ऊजरे और, नियमरूप पहरै सुभतौर ॥१६
सुसरादिकके दीने भया, अथवा मित्रादिकतैं लया।
राजादिकने की बकसीस, अदभुत अवर मोल गरीस ॥१७
नित्य नेममे राखे होइ, तौ पहिरै नातर नहिं कोइ।
पावनिकी पनही हैं जेहि, तेऊ वस्त्रनि माहिं गिनेहि ॥१८
नई पुरानी निज परतणी, राखै सो पहिरै इम भणी।
पनही तजै पहरवौ भया, तौ उपजै प्राणिनिकी दया ॥१९

रथ वाहन सुखपाल इत्यादि, हस्ती ऊट रु घोटक आदि ।
एहै थलके वाहन सवै, पुनि विमान आदिक नभ फबै ॥२०
नाव जिहाज आदि जलकेह, इनमे ममता नाहि धरेह ।
कोइक जावो जावं तजे, कोइक राखे नियमा भजे ॥२१
तिनहूंमे निति नेम करेइ, बहु अभिलाषा छाडि जु देइ ।
मुनि ह्वो चाहे मन माहि, जगमाही जाका चित नाहि ॥२२
वाहन चढै होइ नहि दया, तातैं तजैं धन्य ते भया ।
मुनि आर्या अर श्रावक बडे, हैं जु निरारभी अति छडे ॥२३
ते वाहनको नाम न धरैं, जीवदया मारग अनुसरैं ।
आरम्भी श्रावक राजादि, तिनके वाहन है जु अनादि ॥२४
तेऊ करैं प्रमाण सुवीर, नित्यनेम धारैं जगवीर ।
तीर्थकर चक्री अरु काम, मुनि ह्वै फिरैं पयादे राम ॥२५
तातैं पगा चालिवौ भला, पर सिर चलिवौ है अघमिला ।
इहै भावना भावत रहै, सो वेगा शिवकारन लहै ॥२६
रत्नत्रय शिवकारण कहे दरसन ज्ञान चरण जिन लहे ।
अब सुनि शयनासनको नेम, धारै श्रावक व्रतसों प्रेम ॥२७
जोहि पलगपरि सोवो तनो, सोहू शयन परिग्रह गनो ।
सौड दुलाई तकिया आदि, ए सब सज्जा माहि अनादि ॥२८
इनको नेम धरै व्रतवान, भूमि-शयन चाहै मतिवान ।
भूमि-शयन जोगीश्वर करैं, उत्तम श्रावक हू अनुसरै ॥२९
आरभी गृहपतिके सेज, तेहू नियम सहित अधिकेज ।
जापरि परनारी सोवेहि, सो सज्ज्या बुध नहि जोवेहि ॥३०
निज सज्जा राखी है भया, ताहूमे परमित अति लया ।
व्रतके दिन भू-सज्जा करै, भोग भावतें प्रेम न धरै ॥३१
गादी गाऊ तकिया आदि, चौकी चौका पाट इत्यादि ।
सिहासन प्रमुखा जेतेक, आसन माहि गिनौ जु अनेक ॥३२
गिलम गलीचा सतरजादि, जाजम चादर आदि अनादि ।
इन चीजोसे मोह निवार, जासें होय पार ससार ॥३३
जेती जाति बिछौनाकी हि, सो सब आसन माहि गनीहि ।
निज घरके अथवा परठाम, जेते मुकते राखे धाम ॥३४
तिनपरि बैसे और जु त्याग, है जाको व्रतसू अनुराग ।
सचित्त वस्तुको भोजन निंद, जाहि निषेधै त्रिभुवनचद ॥३५
मुनि आर्या त्यागैंहि सचित्त, उत्तम श्रावक लें हि अचित्त ।
पचम पडिमा आदि सुधीर, एकादस पडिमा लो वीर ॥३६
कबहु न लेइ सचित्त अहार, गहै अचित्त वस्तु अविकार ।
पहलो पडिमा आदि चतुर्थ, पडिमा लो ले सचितहि अर्थ ॥३७

पै मनमे कम्पै सु विवेक, तजै सचित्त जु वस्तु अनेक।
केइक राखी तामे नेम, नितप्रति धारै व्रतसो प्रेम ॥३८
कहा कहावै वस्तु सचित्त, सो धारो भाई निज चित्त।
पत्र फूल फल छालि इत्यादि, कूपल मूल कन्द बीजादि ॥३९
पृथिवी पाणी अग्नि जु वाय, ए सहु सचित कहे जिनराय।
जीव-सहित जो पुदगल पिंड, सो सब सचित तजे गुणपिंड ॥४०
ये सहु भांति सचित्त तजेय, सो निह्चै जिनराज भजेय।
जो न सर्वथा त्यागी जाय, तो कैयक ले नेम धराय ॥४१
सख्या सचित्त वस्तुकी करै, सकल वस्तुको नियम जु धरै।
गिनती करि राखै सब वस्तु तबहि जानिये व्रत्त प्रशस्त ॥४२
लाडू पेडा पाक इत्यादि, औषधि रस अर चूरण आदि।
बहुत वस्तु करि जे निपजेह, एक द्रव्य जानो बुध तेह ॥४३
वस्तु गरिष्ठ न खावे जोग, ए सब काम तने उपयोग।
जो कदापि ये खाने पर, अलप-थकी अलपजु आहरै ॥४४
सत्रह नेम चितारै नित्य, जानो ए सहु ठाठ अनित्य।
प्रातथकी सध्यालो करे, पुनि सध्या समये बुध धरै ॥४५
इती वस्तु तो त्यागै वीर, राति परै नहिं सेवै वीर।
भोजन षटरस पान समस्त, चदनलेप आदि परसस्त ॥४६
तजे राति तंबोल सुवीर, दया धम उर धारै धीर।
गीत श्रवण जो होय कदापि, राखै नेम माहिं सो क्वापि ॥४७
नृत्यहुसो नहिं जाको भाव, पै न सर्वथा छाड्यो चाव।
जो लग गृहपति कबहुँक लखै, सोहू नेममाहिं जो रखै ॥४८
ब्रह्मचर्यसो जाको हेत, परनारीसो वीर सचेत।
निज नारीहीमे सतोष, दिनको कबहु न मनमथ पोष ॥४९
रात्रिहुमे पहले पहरो न, चौथी पहरो मनमथको न।
दूजी तीजो पहर कदापि, परै सेवनी मैथुन क्वापि ॥५०
सोहू अलप-थको अति अल्प, नित प्रति नहिं याको सकल्प।
राखै नेम माहिं सहु बात, बिना नेम नहिं पाव धरात ॥५१
स्नान रातिको कबहु न करै, दिनको स्नान तनी विधि वरै।
भूषण वस्त्रादिकको नेम, राखै जाविधि धारै प्रेम ॥५२
वाहन शयनासनकी रीत, नेम माहिं धारै सहु नीति।
वस्तु सचित नहिं निशिको भखै, रजनीमे जलमात्र न चखै ॥५३
खान पानकी वस्तु समस्त, रात्रिविषैं कोई न प्रशस्त।
याविधि सतरा नेम जु धरै, सो व्रत धारि परम गति वरै ॥५४
नियम बिना धिग धिग नर जन्म, नियमवान होवेहि अजन्म।
यमनियमासन प्राणायाम, प्रत्याहार धारना राम ॥५५

ध्यान समाधि अष्ट ए अग, योगतनें भाषे जु असग ।
सबमे श्रेष्ट कही सुसमाधि, नियमथकी उपजे निरुपाधि ।।५६
राग-द्वेषको त्याग समाधि, जाकरि टरै आधि अरु व्याधि ।
परम शातता उपजै जहा, लहिए आतम भाव जु तहा ।।५७
मरण-काल उपजै जु समाधि आय प्राप्त ह्वै आधि न व्याधि ।
नित्य अभ्यासी होय समाधि, तौ न नीपजै एक उपाधि ।।५८
जो समाधितै छाडै प्राण, तौ सदगति पावैहि सुजाण ।
नाहि समाधिसमान जु और, है समाधि व्रत्तनि सिरमोर ।।५९

छन्द चाल

अब सुनि सल्लेखण भाई, जाकरि सहु व्रत सुखराई ।
उत्तम जन याकौ भावें, याकरि भवभ्राति नसावें ।।६०
जे द्वादस व्रत सजुक्ता, सल्लेखण कारई युक्ता ।
होवें जु महा उपशाता, पावें सुरसौख्य सुकाता ।।६१
अनुक्रम पहुचै थिर थानै, परकी सहु परणति भानै ।
यह एकहु निर्मलवत्ता, समदृष्टी जो दृढचित्ता ।।६२
करई सौ सुरपति होवै, पुनि नरपति ह्वै शिव जोवै ।
इह भुक्ति मुक्तिदायक है, सब व्रत्तनिकौ नायक है ।।६३

सोरठा

मेरौ जो निजधर्म, ज्ञान सुदर्शन आचरण ।
सो नाशक वसु कर्म, भासक अमित सुभावको ।।६४
मैं भूल्यौ निज धर्म, भयौ अधर्मा जगविषै ।
तातैं बाधे कर्म, किये कुमरण अनत मैं ।।६५
मरि-मरि चहुगति माहि, जनम्यौ मैं शठ भ्राति धर ।
सो पद पायौ नाहि, जहा जन्म मरण न ह्वै ।।६६
विना समाधि जु मर्ण, मर्ण मिटै नहि हमतनो ।
यह एकैव जु सण, है सल्लेखण अति गुणौ ।।६७
निज परणतिसो मोहि, एकत्व करिवे सक इहै ।
देख्यौ श्रुतिमे टोहि, ठौर ठौर याको जसा ।।६८
धरे निरंतर याहि, अतिम सल्लेखण वरत ।
उपजै उत्तम ताहि, मरणकाल निस्सकता ।।६९
करिहो पडित मर्ण, किये वाल मर्णा अमित ।
लै जिनवरको सर्णै तजिहों काया कालिमा ।।७०
जिन आज्ञा अनुसार, अवश्य करूगो अनसन ।
सल्लेखणव्रत धार, इहै भावना नित धरै ।।७१

बेसरी छन्द

मरण काल धरियेगो भाई, परि याको नित्त प्रति चितराइ।
व्रत्त अनागत या विधि पाले, या व्रत करि सहु दूषण टाले ॥७२
मरणो नाही आतमताके, तातैं निरभय होय रह्या मैं।
पर सबध ऊपनी काया, ताका नाशा अवश्य बताया ॥७३
इनका ज्ञान हुए यह जीव, पावे निश्चय सुगति सदीव।
मै अनादि सिद्धो अविनाशी, सिद्धसमानो अति सुखरासी ॥७४
सो अनादि कालहुतैं भूल्यौ, परपरिणतिके रसमे फूल्यौ।
परपरिणति करि भयौ सदोपी, कर्म-कलंक उपाजक रोपी ॥७५
जातैं देह अनन्ती धारी, किये कुमर्णं अनन्ता भारी।
मैं नहिं कबहू उपज्यो मूवौ, मैं चेतन मायाते दूवौ ॥७६
मोतैं भिन्न सकल परभावा, मैं चिद्रूप अनन्त प्रभावा।
भयो कषाय-कलंकित चित्ता, मै पापी अति ही अपवित्ता ॥७७
बहु तन धरि धरि डारे भाई, तन तजिवौ इह मरण कहाई।
तातैं कुमरण मूल कषाया, क्षीण करै ध्याऊ जिनराया ॥७८
रागादिक तजि करौं सुमरणा, बहुरि न मेरे होइ कुमरणा।
इहै धारना धरि व्रत धारी, दुबल करै कषाय जु सारी ॥७९
कै गुरुके उपदेशथकी जो, कै असाध्य लखि रोग अती जो।
मरणकाल जानै जब नीरे, तब कायरता धरइ न तीरे ॥८०
चउ अहार तजि चारि कषाया, तजि करि त्यागै त्यागी काया।
तन-सम्बन्ध उदय मति आवौ, तनमे हमरौ नाहिं सुभावौ ॥८१

सोरठा

कर्मं सजोगे देह, उपज्यौ सो न रहायगो।
तातें यासौं नेह, करनौ सो अति कुमति है ॥८२

चौपाई

इहै भावना धारि विरागी, तजै कारिमा काय सभागी।
सो श्रावक पावै शुभ लोका, षोडश स्वर्ग लगै सुखथोका ॥८३
नर ह्वै फिर मुनिके व्रत धारै, सिद्ध लोकको शीघ्र निहारै।
सल्लेखण सम व्रत नहिं दूजा, इह सल्लेखण त्रिभुवन पूजा ॥८४
तजि कषाय त्यागै बुध काया, सो सन्यास महा फलदाया।
सल्लेखण सन्यास समाधी, अनसन एक अर्थं निरुपाधी ॥८५
पडित मरणा वीरियमरणा, ये सब नाम कहे जु सुमरणा।
सुमरणते कुमरण सब नासे, अविनासी पद शीघ्र प्रकासे ॥८६
यह सन्यास न आतम-घाता, कर्म-विघाता है सुख-दाता।
अर जो शठ करि तीव्र कषाया, जलमे डूबि मरै भरमाया ॥८७

आछण अथाणा आदरि ए, रसाईया जीव तणु भक्ष तो ।
अतराय पाले नहिं ए, अन्न वासी लेई रक्ष तो ॥८८
ए आदि बहु दूषण ए, आगम तत्त्व विरुद्ध तो ।
थापना करि अछेरा कहो ए, सशय ज्ञान अमुद्ध तो ॥८९
प्रथम चौरासी गच्छ कही या ए, बहु हुआ अधिकने टोल तो ।
आप आपणी वृद्धि कल्पिए ए, जुजूआ माने बोल तो ॥९०
कूहित दृष्टान्त देई करी ए थापे सशय कुमत्त तो ।
मूढजीव मानें घणा ए, न वि लहे सत्य-असत्य तो ॥९१
इणी परि श्वेतपट्ट मत करी ए, जिनचन्द्र पामी मरण तो ।
प्रथम नरकि ते ऊपज्यो ए, दु ख सहे नहि कोई सरण तो ॥९२
माया मानें मूढनी ए देई ए, धूत्त बाहि पर आप तो ।
ते पापी ससार मा ए, भवि भवि सहे सताप तो ॥९३
पारसनाथ तणो गणधर ए तेह तणो शिष्य अज्ञान तो ।
मशक पूरण नामे मुनी ए, वश थई मिथ्या मान तो ॥९४
श्री वर्धमान तीर्थ समै ए, अवगणना पामी दुष्ट तो ।
जिनशासन गुण परिहरी ए, हुओ आचारतें भ्रष्ट तो ॥९०
पश्चिम दिश जइने रह्यो ए, खोटा शास्त्र तेणे क्षुद्र तो ।
अज्ञानी लोक वश कीया ए, बोली जिनशासन छाइ तो ॥९६
अज्ञान पणे मुक्ति कह्यो ए, मुक्ति जीव नहि ज्ञान तो ।
गमनागमन नहि वली ए, अवर कहे बहु भ्राति तो ॥९७
हजह जीरा थापीया ए, माने शून्य आकार तो ।
हिंसा कम ते बहु करि ए, पसुतणा सधार तो ॥९८
जे जे जिनतत्त्व हुता ए, ते मानें विपरीत तो ।
अणाचार अति आदर्यो ए, अवली देखा डेरीत तो ॥९९
जिन शासन सू रोस करि ए, सूरज दखी जिम घूक तो ।
चैत्यालय भजन करे ए, रजक अग्यानी लोक तो ॥१००
अग्यान मिथ्यात नरक हुआ ए, जाणें नही कृत्य अकृत्य तो ।
निगोद माहे ते दुख सहे ए, पापी पामी ते मृत्यु तो ॥१०१
जे अज्ञान पणु आचरि ए, तेहनो होइ बहु पाप तो ।
जनमि जनमि ते जे जीवडा ए, सहि ससार सताप तो ॥१०२

दोहा

मूल मिथ्यात्व ते एक कह्यो, उत्तर भेद ते पाच ।
अवर असख्य लोक भेद, किम कही जाय ते वाच ॥१०३
मिथ्यात्व घणु स्यू वणवु , माहे दीसे नही काई सार ।
धूल ऊपर जिम लीपणो, जाता न लागे वार ॥१०४

जीवत गडे भूमिमे कुमती, सो पावै दुरगति अति विमती ।
अगनि दाह ले अथवा विष करि, तजे मूढधी काया दुख करि ॥८८
शस्त्र प्रहारि जो त्यागै प्राणा, अथवा झपापात बखाणा ।
ए सब आतम-घात बतावे, इनकरि बड भव-भव भरमाये ॥८९
हिंसाके कारण ये पापा, है जु कषाय प्रदायक तापा ।
तिनको क्षीण पारिवो भाई, सौ सन्यास कहे जिनराई ॥९०
जीव-दयाको हेतु समाधी, बिना समाधि मिटै न उपाधी ।
दया उपाधि मिटै बिन नाही, तातै दया समाधि ही माही ॥९१
व्रत शीलनिकौ सर्वस एही, इह सन्यास महा सुख देही ।
मुनिको अनशन शिवसुख देई, अथवा सुर अहमिन्द्र करेई ॥९२
श्रावकको सुर उत्तम कारै, नर करि मुनि करि भवदधि तारै ।
उभय धर्मको मूल समाधी, मेटे सकल आधि अर व्याधी ॥९३
कायर मरणे बहुतहिं मूवा, अब धरि वीर मरण जगदूवा ।
बहुत भेद है अनशनके जी, सबमे आराधन चउ ल जी ॥९४
दरसन ज्ञान चरन तप शुद्धा, ए चारो ध्यावैं प्रतिबुद्धा ।
निश्चय अर व्यवहार नयनि करि, चउ आराधन सेवैं चितकरि ॥९५
ताकौ सुनहु विचारि पवित्रा, जा करि छूटै भव भ्रम मित्रा ।
देव जिनेसर गुरु निरग्रन्था, सूत्र दयामय जैन सुपन्था ॥९६
नव तत्त्वनिकी श्रद्धा करिवो, सो व्यवहार सुदर्शन धरिवो ।
निश्चय अपनो आतमरामा जिनवर सो अविनस्वर वामा ॥९७
गुण-पर्याय स्वभाव अनन्ता, द्रव्य थकी न्यारे नहि सन्ता ।
गुण-गुणिको एकत्व सुलखिवो, आतमरुचि श्रद्धाको धरिवौ ॥९८
करि प्रतीति जे तत्त्वतनी जो, हनै कर्मकी प्रकृति घनी जो ।
सो सम्यकदर्शन तुम जानो, केवल आतम भाव प्रवानो ॥९९
अब सुनि ज्ञान अराधन भाई, सम्यकज्ञानमयी सुखदाई ।
नव पदार्थको जानै भेदा, जिनवानी परमान सुवेदा ॥१३००
पच परम पदको प्रभु जानै, भयो जु दासा बोध प्रवानै ।
इह व्यवहाररतनो हि स्वरूपा, निश्चय जानै हूँ जु अरूपा ॥१
शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध प्रबुद्धा, अतुल शक्तिरूपी अनुरुद्धा ।
॥२
चेतन अनन्त गुणातम ज्ञानी, सिद्ध सरीखौ लोक प्रमानी ।
अपनो भाव भायवौ भाई, सो निश्चय ज्ञान जु शिवदाई ॥३
पुनि मुनि सम्यकचारित रतना, त्रस-थावरको अति ही जतना ।
आचरिवौ भक्ति जिन मुनिकी, आदरिवौ विधि जोहि सु पुनकी ॥४
पच महाव्रत पच सु समिती, तीन गुपति धारे हि जु सुजती ।
अथवा द्वादस व्रत्त सुधरिवौ, श्रावक सयमको अनुसरिवौ ॥५

ए सब हैं व्यवहार चरित्रा, निम्चय आतम अनुभव मित्रा ।
जो सु स्वरूपाचरण चवित्रा थिरता निजमे सो सु पवित्रा ॥६
ए रतनत्रय भाषे भाई चौथो सम्यक तप सुखदाई ।
व्यवहारैं द्वादस तप मन्ता, अनसन आदि ध्यान परजन्ता ॥७
निश्चय इच्छाको जु निरोधा, पर परिणति तजि आतम शोधा ।
अपनो आतम तेजकरी जो, सो तप भापहि कर्महरी जो ॥८

ए चउ आराधन आराधै, सो सन्यास धरै शिव साधै ।
अरहन्ता सिद्धा साधू जे, केवलि कथित सुधर्म दया जे ॥९
ए चउ शरणा लेइ सु ज्ञानी, ध्यावै परम ब्रह्मपद ध्यानी ।
णमोकार मन्तर जपतो जो, ओंकार प्रणवे रटतौ जो ॥१०
सोहं अजपा अनादहू सुनतौ, श्रीजिन बिम्ब चित्तमो मुनतौ ।
धर्मध्यान धरन्तौ धोरी, लगो जिनेसुर पदसो डोरी ॥११
ध्यावन्तौ जिनवर गुन धीरा, निजरस रातौ विरकत वीरा ।
दुर्बल देह अनेह जगतसो, करि कषाय दुबल निज धृतिसो ॥१२
क्षमा करै सब प्राणी गणसो, त्यागै प्राण लाय लव जिनसो ।
सो पण्डितमरणा जु कहावै, ताकौ जस श्रुतिकेवलि गावै ॥१३
सल्लेखणके बहुते भेदा, भाषे जिनमत पाप उछेदा ।
है प्रायोपगमन सब माहैं, उत्तमसो उत्तम सक नाहैं ॥१४

ताकौ अथ सुनौ मनलाये, जाकरि अपनो तत्त्व लखाये ।
प्राय कहिये मित्र सवथा, उप कहिये स्वसमीप निर्ग्रंथा ॥१५
गमन जु कहिये जाग्रत होवौ, रात दिवस कबहू नहिं सोवौ ।
सो प्रायोपगमन सन्यासा, सर्व गुणाकरि धम अभ्यासा ॥१६
जिनको बारम्बार चितारै, क्षण-क्षण चेतन तत्त्व निहारै ।
जग सन्तति तजि होइ इकाकी, कीरति गावैं श्रीगुरु ताकी ॥१७
तजै आहार विहार समस्ता, भजै विचार समस्त प्रशस्ता ।
इह भव पर भवकी अभिलाषा, जिन करि होइ निरोह अभासा ॥१८
या जड तनका सेवा आपु न, करै न करावे विधि सो थापु न ।
अति वैराग्य परायण सोई, तजै अनातम भाव सवोई ॥१९
गहन वनें भू सज्जा धारी, निसप्रह जगतजोगथो भारी ।
चित्त दयाल सहनशीलो जो, सहै परिसह नहिं ढीलो जो ॥२०
जो उपसग थको नहि कपै, जाको कायरता नहि चपै ।
भागौ लोक प्रपच-थकी जो, परपरिणति जातैं दिसिकी जो ॥२१
या सन्यास थकी जो प्राणा, त्यागै सो नहिं मुवौ सुजाणा ।
सुर-शिवदायक है यह व्रता, यामें बुधजन करै प्रवृत्ता ॥२२
पञ्च अतिचारा जो त्यागै, तब सन्यास-पथको लागै ।
सो तजि पाचो ही अतिचारा, ये तो सल्लेखण व्रत धारा ॥२३

जीवित-अभिलाषा अघ पहिला, ताको धारइ सो गिनि गहिला ।
देखि प्रतिष्ठा जीयौ चाहै, सो सल्लेखण नहिं अवगाहै ॥२४
दूजौ मरण तनौं अभिलाषा, जो धारे निज रस नहिं चाखा ।
रोग कष्ट करि पीड्यो अति गति, मरिबौ चाहै सो है शठमति ॥२५
ताजौ सुहृदनुराग सुगनिये मित्रथकी अनुराग सु धरिये ।
मरिबौ आनि बन्धू परि मित्रा, मिल्यौ न हमसौ जाहु पवित्रा ॥२६
दूरि जु सज्जन तामैं भावा, मिलिवेको अति करहि अपावा ।
अथवा मित्र कनारे जो है, ताके मोह-थको मन मोहै ॥२७
यो अज्ञानथको भव भरमैं, पावै नहिं सल्लेखण धरमैं ।
पुनि सुखानुबधो है चौथो, सुख ससार तनो सहु थोथौ ॥२८
या तनमे भुगते सुख भोगा, सो सब यादि करैं शठ लोगा ।
यो नहिं जानें भव सुख दुख ए तीन कालमैं नाही सुख ए ॥२९
इनको सुख जानें जो भाई, भोदू इनसो चित्त लगाई ।
सो दुख लहै अनता जगके, पावै नहिं गुण जे जिन-मगके ॥३०
पचम दोष निदान प्रबधा, जो धारइ सो जानहु अधा ।
परभवमैं चाहे सुख भोगा, यो नहिं जाने ए सहु रोगा ॥३१
इन्द्र चन्द्र नागेन्द्र नरेन्द्रा, हूवौ चाहे पुनि अहमिन्द्रा ।
व्रतको बेचै विषयनि साटे, सो जड कर्मबध नहिं काटे ॥३२
ए पाचौं तजि धरहि समाधी, सो पावै सद्गति निरुपाधी ।
या व्रत सम नहिं दूजो कोई, सबमैं सार जु इह व्रत होई ॥३३
याकौ जस सुर नर मुनि गावें, धीर चित्त यासो लव लावैं ।
नमो नमो या सुमरणको है, जो काटै जलदी कुमरणको है ॥३४

दोहा

उदय होउ सल्लेखणा, जोहि निवारै भ्राति ।
आवै बोध जु घटिविषैं, पइये परम प्रशाति ॥३५
कहे बरत द्वादश सबै, अर सल्लेखण सार ।
अब सुनि तप द्वादश तनो, भेद निर्जराकार ॥३६
प्रथमहि बारह तपविषै, है अनशन अविकार ।
जाहि कहैं उपवास गुरु, ताको सुनहु विचार ॥३७
इन्द्रिनिकी उपसातता, सो कहिये उपवास ।
भोजन करते हू मुनी, उपवासे जिनदास ॥३८
जो इन्द्रिनिके दास है, अज्ञानि अविवेक ।
करै उपासा तउ शठा, नहिं व्रत धार अनेक ॥३९
मुनि श्रावक दोऊनिको, अनशन अति गुणदाय ।
जाकरि पाप विनाश ह्वै, भाषै श्रीजिनराय ॥४०

इन्द्रिनिको उपशात करि, करै चित्तको रोध।
ते उपवासे उत्तमा, लहैं आपको बोध ॥४१
गनि उपवासे ते नरा, मन इन्द्रिनिको जीति।
करैं वास चेतनविषै, शुद्धभावसो प्रीति ॥४२
इस भव परभव भोगकी, तजि आशा ते धीर।
करम-निर्जरा कारणें करैं उपास सु वीर ॥४३
आतम ध्यान धरै बुधा, कै जिन श्रुत अभ्यास।
तब अनसनको फल लहै, केवल तत्त्व अध्यास ॥४४
चऊ अहार विकथा चऊ, तजिवौ चारि कषाय।
इन्द्री विषया त्यागिवौ, सो उपवास कहाय ॥४५
द्वै विधि अनसनकी कहैं, महामुनी श्रुतिमाहिं।
सावधि निरवधि गुण धरी, जाकरि कर्म नशाहिं ॥४६
एक दिवस द्वै तीन दिन, च्यारि पाच पखवार।
मासा द्वय त्रय च्यारि हू, मास छमास विचार ॥४७
वर्षावधि उपवास करि, करै पारनो जोहि।
सावधि अनसन तप भया, भाखै श्री गुरु सोहि ॥४८
आयु-कर्म थोरौ रहै, तब ज्ञानी व्रत धीर।
जावौजीव तजैं सवे, असन पान जगवीर ॥४९
मरणावधि अनसन करैं, सो निरवधि उपवास।
जे धारैं उपवासको, ते जु करैं अघ नाश ॥५०
करते थके उपासको, जे न तजै आरम्भ।
जग धधेमे चित्त धरैं, तजैं न शठमति दभ ॥५१
मोहगहल चचल दशा, लहै न फल उपवास।
कछुयक काय-कलेशका, फल पावे जगवास ॥५२
कम-निर्जरा फल सही, सो नहिं तिनको होइ।
इह निश्चय सतगुरु कहैं, धारै, बुधजन सोइ ॥५३
धन्य धन्य उपवास हैं, देइ सासतो वास।
अब सुनि अवमोदर्य जो, दूजौ तप सुखरास ॥५४
जो मुनि करै अनोदरी, तजि अहारकी वृद्धि।
प्रासुक योग सु अलप अति, ले अहार तप-बृद्धि ॥५५
करै सु अवमौदर्यको, करै निर्जरा हेत।
नहिं कीरतिको लोभ है, सो मुनिजिन पद लेत ॥५६
श्रावक होइ जु व्रत करे, लेइ अलप आहार।
जब स्वाध्याय सु ध्यान ह्वै, मिटैं अनेक विकार ॥५७
सध्या पोसह पडिकमण, तासो सधै अदोष।
जो अहार वहुत न करे, धरै महागुण कोष ॥५८

कै अनसन अघ नाश कर, कै यह अवमोदर्य।
इन सम और न जगविर्ष, ए तप अति सौदर्य ॥५९
इन विन कदे न जो रहे, सो पावै व्रतशुद्धि।
ध्यान कारणें जो करै, सो होवै प्रतिबुद्ध ॥६०
अरु जो मायावी अधम, धरि कीरतिको लोभ।
करै सु अलप अहारको, सो नहि होइ अक्षोभ ॥६१
अथवा जो शठ अवधो, यह विचार जियमांहि।
करै सु अलप अहार जो, सोहू व्रतधरि नाहिं ॥६२
जो करिहो जु अहार अति, तौ जैसो तैसो हि।
मिलि है मोदक स्वादकरि, तातै इह न भलौ हि ॥६३
अलप अहार जु खाहुगो, वहुत रसीली वस्तु।
इहै भाव धरि जो करै, सो नहि व्रत प्रशस्त ॥६४
मिष्ट भोज्य अथवा सुजस, कारण अल्प अहार।
करै न फल तपको प्रवल, कर्म निर्जराकार ॥६५
केवल आतमध्यानके, अर्थ करै व्रत धार।
कै स्वाध्याय सु व्रतके, कारण अल्प आहार ॥६६
अल्प अहार-थकी वुधा, रोग न उपजे क्वापि।
निद्रा मनमथ आदि सहु, नहि पीरै जु कदापि ॥६७
वहु अहार सम दोष नहि, महा रोगकी खानि।
निद्रा मनमथ प्रमुख जो, उपजै पाप निदान ॥६८
लोकमांहि कहवत इहै, मरै मूढ अति खाय।
कै विन वुद्धि जु बोझको, मोढ्र मरै उचाय ॥६९
तातैं घनो न खाइवौ, करिवो अलप अहार।
याहि करै सतगुरु सदा, व्रतको वीज अपार ॥७०
व्रतपरिसख्या तीसरो तप ताको सु विचार।
सुनो सुगुरु भाषै भया, परम निर्जराकार ॥७१
मुनि उत्तरै आहारको, करि ऐसी परतिज्ञ।
मनमे तौऊ छाटको (?) सो धारो तुम विज्ञ ॥७२
एक घरें नहि पाय हो, तौ न आन घर जाहुं।
और कछू नहि खाय हो, यह मिलि है तौ खाहु ॥७३
अथवा ऐसी मन धरै, या विधिके तन चीर।
पहिरे होगी श्राविका, तौ लेहूं अन नीर ॥७४
तथा विचारै सो सुधी, कारो वलधा जोहि।
धरें सींग परि गुड-डला, मिलै पथमें मोहि ॥७५
जाऊं भोजन कारनें, नातरि नही अहार।
इत्यादिक जे अटपटी, करै प्रतिज्ञा सार ॥७६

व्रतपरिसख्या तप लहैं, जे मुनिराय महंत ।
श्रावक हू इह तप करें, कौन रीति सुन सत ।।७७
प्रातहि सध्या विधि करें, धारहि सतरा नेम ।
तासम कबहू व्रत करें, परिसख्यासो प्रेम ।।७८
धारि गुप्ति चितवै सुधी, अपने चित्त मझारि ।
साखि जिनेश्वर देव हैं, ज्ञायक ज्ञेय अपार ।।७९
और न जानें बात इह, जो धारें बुध नेम ।
नही प्रेम भव-भावसो, जप तप व्रतसो प्रेम ।।८०
अनायास भोजन समय, मिलि हैं मोहि कदापि ।
रूखी रोटी मू गकी, लेहूँ और न क्वापि ।।८१
इत्यादिक जे अटपटी, धरै प्रतिज्ञा धीर ।
व्रतपरिसख्या व्रत लहैं, ते श्रावक गभीर ।।८२
अव सुनि चौथा तप महा, रस परित्याग प्रवीन ।
मुनि श्रावक दोऊनिको, भाषें आतमलीन ।।८३
अति दुखको सागर जगत, तामे सुख नहि लेश ।
चहुगति भ्रमण जु कब मिटै, कटै कलक अशेष ।।८४
जगके झूंठे रस सवै, एक सरस अतिसार ।
इहै धारना धर सुधा, होइ महा अविकार ।।८५
भवतै अति भयभीत जो, डर्यो भ्रमणतैं धीर ।
निर्वानी निर्वान जो, चाखैं निजरस वीर ।।८६
विषहूतें अति विषम जे, विषया दुख की खानि ।
भव-भव मोकू दुख दियौ, सुख परिणतिको मानि ।।८७
तातें इनको त्याग करि, धरौ ज्ञानको मित्र ।
तप जो भव आतप हरै, करण पुनीत पवित्र ।।८८
इह चितवतौ धीर जो, रसपरित्याग करेय ।
नीरस भोजन लेयकै, ध्यावै आतम ध्येय ।।८९
दूध दही घृत तेल अर, मीठो लवण इत्यादि ।
रस तजि नीरस अन्न के, काटै कर्म अनादि ।।९०
अथवा मिष्ट कषायलो, खारो खाटो जानि ।
कडवौ और जु चिरपरौ, यह षटरस परवानि ।।९१
तजि रस नीरस जो भखै, सो आतम-रस पाय ।
देय जलाजलि भ्रमणको, सूधो शिवपुर जाय ।।९२
भव वाकी ह्वै जो भया, तो पावै सुर लोक ।
सुरथी नर ह्वै मुनिदशा, धारि लहै शिव-थोक ।।९३
अथवा सिंगारादिका, नव रस जगत विख्यात ।
तिनमे शान्ति सुरस गहै, जो सव रसको तात ।।९४

पर रस तजि जिनरस गहै, जाकै राग न रोष।
सो पावै समभावको, दूरि करै सहु दोष ॥९५
रसपरित्याग समान नहिं, दूजो तप जगमाहिं।
जहां जीभके स्वाद सहु, त्यागै संशय नाहिं ॥९६
अब विविक्तशय्यासना, पंचम तप मुनि वीर।
राग द्वेषके हेतु जे, आसन सज्जा चीर ॥९७
तजि मुनिवर निरग्रन्थ ह्वै, वसैं आश्रमैं धीर।
तन खीणा मन उनमना, जगतरूढ गंभीर ॥९८
पूजा हमरी होयगी, बहुत भजेंगे लोक।
इह वांछा नहिं चित्तमें, नहीं हरष अर शोक ॥९९
सकल कामना-रहित जे, ते साधू शिवमूल।
पापपंथको प्रतिकूल ह्वै, भये ब्रह्म अनुकूल ॥१४००
ते संसार शरीर अरु, भोगथकी जु उदास।
अभ्यंतर निज बोध वर, तप कुशला जिनदास ॥१
उपशमशीला शांतधी, महासत्त्व परवीन।
निवसैं निर्जन वनविषैं, ध्यान लीन तन खीन ॥२
गिरिसिर गुफा मझार जे, अथवा वसैं मसान।
भूमिमांहि निरव्याकुला, धीर वीर बहु जान ॥३
तरुकोटर सूना घरी, नदी-तीर निवसंत।
कर्म-क्षपावन उद्यमी, ते जैनी मतिवंत ॥४
कंकरीली धरतीविषैं, विषम भूमिमें साध।
तिष्ठैं ध्यावैं तत्त्वको, आराधन आराधि ॥५
जगवासिनकी संगती, ध्यान-विघनकौ मूल।
तातैं तजि जड संगतौ, भये ज्ञान अनुकूल ॥६
स्त्री-पशु-बाल-विमूढकी, संगति अति दुखदाय।
कायरकी संगति थकी, सूरापन विनसाय ॥७
जे एकांत वसैं सुधी, अनेकांत धरि चित्त।
ते पावैं परमेसुरो, लहि रत्नत्रय वित्त ॥८
मुनिकी रीति कही भया, सुनि श्रावककी रीति।
जा विधि पंचम तप करै, धरि जिन वचन प्रतीत ॥९
निज नारीहूतैं विरत, परनारीका वीर।
शीलवान शांतिक अती, तप धारै अति धीर ॥१०
परनारीकी सेज अर, आसन चीर इत्यादि।
कबहु न भीटै भव्य जो, तजै काम रागादि ॥११
निज नारीहूको तजे, जौलग त्याग न होय।
तौलग कबहुक सेवही, बहुत राग नहिं कोय ॥१२

एक सेज सोवे नही, जुदो जु सोवै जोहि।
जब विविक्तशय्यासना, पावै तप अति सोहि ॥१३
करै परोस न दुष्टको, तजे दुष्टको सग।
व्यसनीतैं दूरी रहै, पाले व्रत्त अभग ॥१४
जे मिथ्यामत्त धारका, अलगो तिनसो होइ।
जिनधरमीकी सगती, धारै उत्तम सोइ ॥१५
कुगुरु कुदेव कुघर्मका, करै न जो विश्वास।
है विश्वासी जैनको, जिनदासनिको दास ॥१६
सामायिक पोषा समै, गहै इकत सुथान।
सो विविक्तशय्यासना, भाषै श्रीभगवान ॥१७
करनो पचम तप भया, अब छद्ठो तप धार।
कायकलेस जु नाम है कहू सूत्र अनुसार ॥१८
अति उपसर्ग उदय भयो, ताकरि मन न डिगाय।
क्षमावान शातिक महा, मेरु समान रहाय ॥१९
देव मनुज तिरजच कृत, अथवा स्वत्त स्वभाव।
उपजौ जो उपसर्ग है, तामे निर्मल भाव ॥२०
खेद न आने चित्तमे, कायकलेस सहेय।
सो कलेस नहि पावई, ज्ञान शरीर लहेय ॥२१
गिरि-सिर ग्रीषममैं रहै, शीतकाल जल-तीर।
वर्षाऋतु तरु-तल वसइ, सो पावै अशरीर ॥२२
आतापन जोग जु धरे, कष्ट सहै जु अशेष।
अति उपवास करै सुधी, सो तप कायकलेश ॥२३
कायकलेसें सहु मिटै, तन मनके जु कलेस।
महापाप कर्म जु कटै, गुण उपजेंहि अशेष ॥२४
मुनि श्रावक दोऊनिको, करिवा कायकलेश।
सकलेसता भाव तजि, इह आज्ञा जगतेश ॥२५
वनवासीके अति तपा, घरवासीके अल्प।
अपनी शक्ति प्रमाण तप, करिवा त्याग विकल्प ॥२६
ए षट वाहिज तप कहै, अब अभ्यन्तर धारि।
इह भाषैं श्रुतकेवली, जिनवाणी अनुसार ॥२७

दोष न करई आप जो, करवावे न कदापि।
दोषतनो अनुमोदना, करै नही बुध कापि ॥२८
मन वच तन करि गुणमई, निरदोषो निरुपाधि।
आनन्दी आनद मय, धारै परम समाधि ॥२९
अथवा कदे प्रमादतै, किंचित लागै दोप।
तौ अपने औगुण सुधी, नहि गोपै व्रतपोष ॥३०

श्रीगुरु पास प्रकाशई, सरल चित्तकरि धीर ।
स्वामी लाग्यो दोष मुझ दण्ड देहु जगवीर ॥३१
तब जो श्रीगुरु दण्ड दे, व्रत तप दान सुयोग ।
सो सब श्रद्धा तें करै, पावै पथ निरोग ॥३२
ऐसी मनमे ना धरै, अलप हुतो यह दोप ।
दियौ दण्ड गुरुने महा, जाकरि तनको शोष ॥३३
सबै त्यागि शका सुधी, सकल विकलपा डारि ।
प्रायश्चित्त करै तपा, गुरु आज्ञा अनुसारि ॥३४
बहुरि इच्छै दोषको, त्यागै मन बच काय ।
देहतनें सौ टूक ह्वै, तोहु न दोष उपाय ॥३५
या विधिके निश्चय सहित, वरतै ज्ञानी जीव ।
ताकै तप ह्वै सातमो, भाषे त्रिभुवन-पीव ॥३६
जो चितवै निजरूपको, ज्ञानस्वरूप अनूप ।
चेतनता मडित विमल, सकल लोकको भूप ॥३७
बार बार ही निज लखै, जानैं बारम्बार ।
बार बार अनुभव करै, सो ज्ञानी अविकार ॥३८
विकथा विषय कषायतें, न्यारो वरतै सन्त ।
ता विरकतके दोष कहु, कैसे उपजे मित ॥३९
निरदोषी बहुगुण धरै, गुणी महाचिद्रूप ।
तासो परचै पाइयो, सो तप धारि अनूप ॥४०
दोषतनो परिहार जो, कहिये प्रायश्चित्त ।
धारै सो निजपुर लहै, गहै सासतो वित्त ॥४१
अब सुनि भाई आठमो, विनय नाम तप धार ।
विनय मूल जिनधर्म है, विनय सु पच प्रकार ॥४२
दरसन ज्ञान चरित्र तप, ए चउ उत्तम होइ ।
अर इन चउके धारका, उत्तम कहिये सोइ ॥४३
इन पाचनिको अति विनय, सो तप विनय प्रधान ।
ताके भेद सुनू भया, जाकरि पद निरवान ॥४४
दरसन कहिये तत्त्वकी, श्रद्धा अति दृढरूप ।
ज्ञान जानिबौ तत्त्वको, सशय रहित अनूप ॥४५
चारित थिरता तत्त्वमे, अति गलतानी होइ ।
तप इच्छाको रोकिवौ, तन मन दण्डन सोइ ॥४६
ए है चउ आराधना, इन बिन सिद्ध न कोय ।
इनको अति आराधिवौ, विनयरूप तप सोय ॥४७
रतनत्रय-धारक जना, तप द्वादश विधि धार ।
तिनकी अति सेवा करै, तन मन करि अविकार ॥४८

सो उपचार कह्यौ विनय, ताके बहुत विभेद ।
जिनवर जिन प्रतिमा बहुरि, जिनमन्दिर हर खेद ॥४९
जिनवानी जिन तीरथा मुनि आर्याव्रत धार ।
श्रावक और सु श्राविका समदृष्टी अविकार ॥५०
इनको विनय जु धारिवौ, गुण अनुरागी होइ ।
सो तप विनय कहावई, धारैं उत्तम सोइ ॥५१
जैसे सेवक लोग अति, सेवें नरपति-द्वार ।
तैसे चउविधि सघको, सेवै सौ तप धार ॥५२
आप थकी जो उत्तमा, तिनको दासा होइ ।
सबसो समता भावई, विनयरूप तप सोइ ॥५३
व्रत बिन छोटे आपतैं, जे सम्यक्त निवास ।
जिनधर्मी जिनदास हैं, तिनहूं सो हित पास ॥५४
धमराग जाके भयो, सो इह विनय धरेय ।
पच प्रकार विनय करि, भव-सागर उतरेय ॥५५
अब सुनि वैयावृत्त जो नवमो तप सुखदाय ।
जो उपचार करै सुधी, पर दुखहर अधिकाय ॥५६
हरै सकल उपसग जो, ज्ञानिनिके तप धार ।
सुधी वृद्ध रोगीनिको, करै सदा उपगार ॥५७
महिमादिक चाहै नही, निरापेक्ष व्रतधार ।
वैयावृत्त करै भया, जिनवाणी अनुसार ॥५८
मुनिको उचित मुनी करैं, टहल मुनिनिकी धीर ।
मुनि सेवासम नाहिं कोउ, त्रिभुवनमे गभीर ॥५९
श्रावक भोजन पथ्य द, औषधि आश्रय आदि ।
करै भक्ति साधूनिकी, इह विधि है जु अनादि ॥६०
जो ध्यावे निजरूपको, सर्व विकलपा टारि ।
सम दम भाव हि दृढ धरै, वैयावृत्त सो धारि ॥६१
सम कहिये समदृष्टिता, सकल जीवको तुल्य ।
देखैं ज्ञान विचारतैं, इह दृष्टी जु अतुल्य ॥६२
दम कहिये मन इन्द्रिया, दमै महा तप धारि ।
चित्त लगावे आपसो, सहै लोककी गारि ॥६३
तजै लोक व्यवहारको, धरै अलौकिक वृत्ति ।
सो चउगतिको दे जला, पावै महानिवृत्ति ॥६४
सुनो सुबुद्धी कान धरि दसमो तप स्वाध्याय ।
सर्व तपनिमैं है सिरै, भाषैं त्रिभुवनराय ॥६५
नहिं चाहै जु महतता, करवावे नहिं सेव ।
चाह नही परभावकी, सेवै श्रीजिनदेव ॥६६

पच मिथ्यात्व सदा सहि, भावरूपें बहु होइ । ते हुण्डावसर्पिणी माहे, द्रव्य रूपइ लिंग जोइ ॥१०५
षट्‌दर्शन छन्नु पाखण्ड, जैनाभास वली पच । सशय विभ्रम उपजावीनें, मूढ करे परपच ॥१०६
शुद्ध दर्शन श्री जिनतणो, द्रव्य भावें अनादि । अवर डम्भक दीसे घणा, ते सघला उपाधि ॥१०७

जिन शासन थी बाहिरा, भिन्न भिन्न दीसे जेह ।
पचम काले पाखण्ड घणा, मिथ्या जाणो सहु तेह ॥१०८
मिथ्यात्व समो शत्रु नही, नारक गति दातार ।
अनन्तकाल दुखदायक, भमे भवोदधि मझार ॥१०९

मिथ्याती सगथी भलो, वाघ सिंघ विसवास । जल अग्नि भृगुपात भलो, मिथ्यातें दुखरास ॥११०

मिथ्यात्व समो कोइ पाप नही, भारे वज्रसमान ।
आगे हुउ होसे नही, लोकमाहे नहिं वर्तमान ॥१११
इम जाणि निश्चै करी, जो जिन तत्त्व विचार ।
जीव-हित होइ ते आचगे, धणु स्यु कहु बार बार ॥११२

ढाल मालतडानी

सम्यक्त्व भेद हवे कहु ए, सुणे सुन्दरे, सक्षेपे विचार । मालतडारे सक्षेपे सविचार ।
गुरु उपदेशे पामीउ ए, सुणे सुन्दरे, श्रावक धुरि अधिकार । मा० ॥१
मूल भेद एक कह्यो ए, सुणे सुन्दरे, अथवा द्विविध जाण । मा०
त्रिहु भेदे जे निरमलो ए, सुणे सुन्दरे, इम कही जिन वाण । मा० ॥२
समकित विना ए आतमा ए, सुणे सुन्दरे, लक्ष चौरासी जोनि माहि । मा०
द्रव्य क्षेत्र काल भाव ए, सुणे सुन्दरे, पचविध दुखतें चाहि । मा० ॥३
आसन्न भव्य पचेन्द्री पणु ए, सुणे सुन्दरे, गर्भ सज्ञी जेह । मा०
चतुर्गतिक पर्यायनो ए, सुणे सुन्दरें, कठिण कर्म तणी छेह । मा० ॥४
पच सामग्री दुर्लभ ए, सुणे सुन्दरे, भव-सायर जे नाव । मा०
अनन्त भव दुख छदक ए, सुणे सुन्दरे, भेदक कर्म कुग्राव । मा० ॥५
क्षय उपशम पहिली लब्धि ए, सुणे सुन्दरे, मन विशुद्धि बीजी होय । मा०
देशन, प्रायोग्यता लब्धि ए, सुणे सुन्दरे, करण लब्धि पचम जोय । मा० ॥६
च्यारि लबधि सहु जीव लहि ए, सुणे सुन्दरे, करण लब्धि भव्य जाणि । मा०
अध करण अपूरव करण ए, सुण सुन्दरे, अनिवृत्ति करण मनि आणि । मा० ॥७
काल लब्धि आवा जव ए, सुणे सुन्दरे, तव ते करे त्रण करण । मा०
समकित रत्न सुधू ग्रहि ए, सुणे सुन्दरे, ससार माहि जे सरण । मा० ॥८
तत्त्वतणी रुचि जव करि ए, सुणे सुन्दरे, तव ते लहे समकित । मा०
तत्त्व-भेद हवे कहु ए, सुणे सुन्दरे, जिण होइ निज-पर हित । मा० ॥९
जीव अजीव आस्रव वध ए, सुणे सुन्दरे, सँवर निर्जरा मोक्ष । मा०
चेतन अचेतन भेद ए, सुणे सुन्दरे, सप्त तत्त्व कहि दक्ष । मा० ॥१०
पुण्य पाप दुहु मलीए, सुणे सुन्दरे, नव ए पदारथ जाण । मा०
द्रव्य उत्पत्ति व्ययात्मक ए, सुणे सुदरे, द्रव्य गुण पर्याय वखाण । मा० ॥११

दुष्ट विकलपनिको भया, जो नामन ममग्रन्थ ।
सो पावै स्वाध्यायको, फल केवल परमत्थ ॥६७
तत्त्व सुनिश्चय कारने, करैं शुद्ध स्वाध्याय ।
सिद्धि करैं निज ऋद्धिको, सो आतम लवलाय ॥६८
आगम अध्यातममई जिनवरको सिद्धान्त ।
ताहि भक्ति करि जो पढै मो स्वाध्याय सुकान्त ॥६९
केवल आतम अर्थ जो, करै सूत्र अभ्यास ।
अपनी पूजा नहि चहै, पावै तत्त्व अध्यास ॥७०
अपने कर्म कलकके, काटनको श्रुतपाठ ।
करैं निरन्तर धर्मधी, नासै कर्म जु आठ ॥७१
भेद पच स्वाध्यायके, उपाध्याय भाषेहि ।
जे धारैं ते शातधी, आतम रस चाखेहि ॥७२
कही वाचना पृच्छना, अनुप्रेक्षा गुरु देव ।
आमनाय पुनि धर्मको, उपदेशौ वहुभेव ॥७३
ग्रन्थ वाचवौ वाचना, पूछना पूछनरीति ।
बारवार विचारिवौ, अनुप्रेक्षो परतीति ॥७४
आमनायको जानिवौ, जिनमारगकी वीर ।
धर्म-कथन करिवौ सदा, कहै धर्मधर धीर ७५
निसप्रेही भवभावतैं, जो स्वाध्याय करेय ।
पावै निजज्ञानको, भवसागर उतरेय ॥७६
जो सेवैं जिनसूत्रको, जग अभिलाप धरेय ।
गर्व धरै विद्यातनो, सो चउगति भरमेय ॥७७
हम पडित वहुश्रुत महा, जानैं सकल जु अथ ।
हमहि न सेवे मूढधी, देखो बडो अनर्थ ॥७८
इहै वासना जो धरै, सो नहि पडित कोइ ।
आतम भावे जो रमैं, सो वुध पडित होइ ॥७९
मान वढाइ कारनैं, जे श्रुति सेवैं अध ।
ते नहि पावैं तत्त्वको, करै कर्मको बन्ध ॥८०
जैनसूत्र मद मान हर, ताकरि गर्वित होय ।
ताहि उपाय न दूसरो, भ्रमैं जगतमैं सोय ॥८१
अमृत विपरूपो भयौ, जाकौ और इलाज ।
कहो, कहा जु वताइये, भापै पडितराज ॥८२
जो प्रतिकूल विमूढधी, सार्वमिनितैं होइ ।
पढिवौ गुनिवौ तासके, हालाहल सम जाइ ॥८३
रागद्वेष करि परिणम्यू, करै असूत्र अभ्यास ।
सो पावै नहि धर्मको, करै न कर्म विनास ॥८४

युद्ध कथा कामादिका, कुकथा चावै मूढ।
लोक-रिझावन कारणें, सो पद लहै न गूढ ॥८५
जो जानै निजरूपकूं, अशुचि देहतें भिन्न।
सो निकसै भवकूपतें, भटकै भाव अभिन्न ॥८६
जानैं निज पर भेद जो, आतमज्ञान प्रवीन।
सो स्वामी सब लोककौ, सदा सात-रस लीन ॥८७
बिना निजातम जानिवें, ह्वै न कर्म को रोध।
आगम पाठ करै तऊ, नाहिं नाहिं कछु बोध ॥८८
लखिवौ आतमभावको, सो स्वाध्याय बखानि।
मुनि श्रावक दोऊनिकौ, यह परमारथ जानि ॥८९
अब सुनि ग्यारम तप महा, कायोत्सर्ग शिवदाय।
कायाकौ उतसर्ग जो, निर्ममता ठहराय ॥९०
त्याग्या बैठ्यो देहको, नही देहसो नेह।
लग्यौ रग निजरूपसो, बरसै आनद मेह ॥९१
छिदौ भिदौ ले जाहु कोउ, प्रलय होउ निजसग।
यह काया हमरी नही, हम चेतन चिद अग ॥९२
इहै भावना उर धरै, जल-मल-लिप्त शरीर।
महारोग पीडै तऊ, भजै न औषध धीर ॥९३
व्याधितनो न उपायको, शिवकौ करै उपाय।
इन्दी विषय न सेवई, सेवै चेतनराय ॥९४
भयौ विरक्त जु भोगतैं, भोजन सज्जा आदि।
काहूकी परवा नही, मेटौ ब्रह्म अनादि ॥९५
निजस्वरूप चितवन जग्यौ, भग्यौ भोगकौ भाव।
लग्यौ चित्त चेतनयकी प्रकट्यो परम प्रभाव ॥९६
शत्रु मित्र सहु सम गिनै, तजै राग अरु दोष।
बध-मोक्षतें रहित निज, रूप लख्यो गुण कोष ॥९७

बेसरी छन्द

है विरकत पुरुषनिको भाई, इह कायोतसर्ग सुख-दाई।
अरु जे तन पाषनहै लागा, ते पावै नहिं भाव विरागा ॥९८
उपकरणादिकमे मन राखें, ते नहिं ज्ञान सुधारस चाखें।
जग व्यवहार तजे नहि जौलो, नहिं कायोत्सग तप तौलो ॥९९
नाम त्यागकौ है उतसर्गा, कर्पै नहिं जा है उपसर्गा।
तब कायोत्सर्ग तप पावै, निज चेतनसो चित्त लगावे ॥१५००
एक दिवस द्वै दिवसा भाई, पाख मास ऊभौ हि रहाई।
चउमासी छहमासी वर्षा, रहै जु ऊभौ चितमें हरषा ॥१

लहि निज ज्ञान भयौ अति पुष्टा, जाहि न घेरै विकलप दुष्टा।
सो कायोत्सर्ग तपधारी, पावै शिवपुर आनन्दकारी ॥२
मुनिके यह तप पूरण होई, श्रावकके किंचित तप जोई।
श्रावक हू नहि देह-सनेही, जानो आतम तत्त्व विदेही ॥३
मरणतनो भय तिनके नाही, ते कायोत्सर्ग तपमाही।
अब सुनि बारम तप है ध्याना, जा परसाद लहे निज ज्ञाना ॥४
अन्तर एक मुहूरत काला ह्वै एकाग्रचित्त व्रत पाला।
ताकौ नाम ध्यान है भाई, च्यारि भेद भाषै जिनराई ॥५
द्वै प्रशस्त द्वै निंद्य बखानें, श्रुत अनुसार मुनिनने जानें।
आरति रौद्र अशुभ ए दोई, धम सुकल अति उत्तम होई ॥६
आरत्ति तीब्र कषायें होई, महा तीव्रतै रौद्र जु सोई।
मन्द कषायें धर्म सु ध्याना जाहि न पावे जीव अज्ञाना ॥७
धमध्यानतैं सुकल सु ध्यान, सुकलध्यानतैं केवल ज्ञान।
रहित कषाय सुकल है सूधा, जा सम और न ध्यान प्रवूधा ॥८
चार ध्यान ए भाषैं भाई, तिनके सोला भेद कहाई।
ते तुम सुनहु चित्त धरि मित्रा, त्यागौ आरति रौद्र विचित्रा ॥९
आरतिके चउ भेद जु खोटे, पशुगति दायक औगुण मोटे।
इष्टवियोग अनिष्टसजोगा, पीरा चिंतन होई अजोगा ॥१०
चौथो बधनिदान कहावे, जो जीवनिको भव भरमावै।
वस्तु मनोहरको जु वियोगा, होय तवै धारे शठ सोगा ॥११
इष्ट वियागारत्त सो जानो, दुखतरुवरको मूल बखानो।
दूजौ भेद अनिष्ट सजोगा, ताकौ भाव सुनौ भविलोगा ॥१२
वस्तु अनिष्ट मिलै जव आई, शोच करे तब भोदू भाई।
भववनमे भरमैं शठमति सो, पाप बाधि पावै दुरगति सो ॥१३
रोगनिकरि पीडया अति शठजन, आरति धार जो अपने मन।
सो पीरा चितवन है तीजौ, आरतध्यान सदा तजि दीजौ ॥१४
चौथौ आरति त्यागौ भाई, बधनिदान महा दुखदाई।
जप तप व्रत करि चाहै भोगा, ते जगमाहि महाशठ लोगा ॥१५
ए चारो आरत्ति दुखदाई, भव-कारण भाषैं जिनराई।
रौद्रध्यानके चारि विभेदा, अब सुनि जे दायक अतिखेदा १६
हिंसाकरि आनन्द जु मानै, हिंसानन्दी धर्म न जानै।
मृषावाद करि धरै अनदा, मृषानन्द सो जियको फन्दा ॥१७
चोरीतैं आनद उपजावै, सो अघ चौर्यानन्द कहावै।
परिग्रह बढें होय आनन्दा, सो जानो जु परिग्रहानन्दा ॥१८
ए चउ भेद हरैं सुख साता, दुरमतिरूप उग्र दुखदाता।
पर विभूतिकी घटतौ चाहै, अपनी सपत्ति देखि उमाहै ॥१९

रौद्रध्यानके लक्षण एई, त्यागें धन्य धन्य हैं तेई।
आरत्ति रुद्र ध्यान ए खोटा, इनकरि उपजें पाप जु मोटा ॥२०
दुखके मूल सुखनिके खोवा, ए पापी है जगत डबोवा।
चउ आरत्तिके पाये भाई, तिर्यग्गतिकारण दुखदाई ॥२१
रौद्रध्यानके चार ए पाये, अधोलोकके दायक गाये।
अशुभध्यान ये दोय विरूपा, लगे जीवके विकलप रूपा ॥२२
नरक निगोद प्रदायक तेई, वसैं मिथ्यात धरामें एई।
कबहु कदाचित अणुव्रत ताई, काहूके रौद्र जु उपजाई ॥२३
महावृत्तलो आरतध्याना, कबहूंक छट्ठे परमित थाना।
काहूके उपजे त्रय पाये, सप्तम ठाणे सर्व नसाये ॥२४
भोगारति उपजै नहि भाई, जो उपजै तो मुनि न कहाई।
अब सुन धर्मध्यानकी बातें जे सहु पाप पथको घातें ॥२५
धर्म जु स्वतै स्वभाव कहावै, पण्डितजन तासो लव लावै।
क्षमा आदि दशलक्षण धर्मा, जीवदया विनु कटइ न कर्मा ॥२६
इत्यादिक जिन-भाषित जेई, धारैं धर्म धीर हैं तेई।
धर्मविषै एकाग्र सुचित्ता, विषय-भोगसे अतिहि विरत्ता ॥२७
जे वैराग्यपरायण ज्ञानी, धर्मध्यानके होहि सु ध्यानी।
जो विशुद्धभावनिमे लागा, जिनतें रागदोष सहु भागा ॥२८
एक अवस्था अंतर बाहिर, निरविकल्प निज निधिके माहिर।
ध्यावै आतमभाव सुवीरा, ह्वै एकाग्रमना वर वीरा ॥२९
जे निजरूपा हैं समभावा, ममत वितीता जग निरदावा।
इन्द्री जीति भये जु जितिन्द्री, तिनका ध्यानी कहैं अतिन्द्री ॥३०
चितवन्ता चेतन गुण-धामा, ध्यानहि लीना आतमरामा।
निरमोहा निरद्वन्द सदा ही, चितमे कालिम नाहि कदा ही ॥३१
जेहि अनुभवै निज चितधनको रोकै मनको सोखें तनको।
आनन्दी निज ज्ञानस्वरूपा, तिनके धर्म रु ध्यान निरूपा ॥३२
मैत्री मुदिता करुणा भाई, अर मध्यस्थ महासुखदाई।
एहि भावना भावै जोई, धर्मध्यानकौ ध्याता सोई ॥३३
सबजीवसो मैत्रीभावा, गुणी देखि चितमैं हरषावा।
दुखी देखि करुणा उर आनैं, लखि विपरीत राग नहि ठानैं ॥३४
द्वेष जु नाहि धरै जु महन्ता, है मध्यस्थ महा गुणवन्ता।
बहुरि धर्मके चारि जु पाया, ते सम्यकदृष्टिनिको भाया ॥३५
आज्ञाविचय कहावै जोई, श्रीजिनवरने भाष्यौ सोई।
ताकी दृढ परतीति करै जो, सशय विभ्रम मोह हरै जो ॥३६
कर्म नाशकौ उद्यम ठानै, रागद्वेषकी परणति भानै।
सो अपायविचयो है दूजौ, तिरै जगतथी धारै तू जौ ॥३७

करै उपाय शुद्ध भावनिको, अर निरवाणपुरी पावनिको।
तीजौ नाम विपाकविचय है, भव-भावनितैं भिन्न रहै है ॥३८
शुभके उदय सपदा आवे, अशुभ उदय आपद बहु पावे।
दोऊ जानैं तुल्य सदाही, हर्ष विषाद धरै न कदा ही ॥३९
पुनि सठाणविचय है चौथो, सवं जगतको जानै थोथो।
तीन लोकको जानि सरूपा, जिनमारग अनुसार अनूपा ॥४०
सबको भूषण चेतनराया, चेतनसो नहि दूजो भाया।
सवं लोकसू छाडि जु प्रीती, चेतनको धारै परतीती ॥४१
चेतन भावनिमें लौ लावं, अपनो रूप आपमे ध्यावं।
ए हैं धरमध्यानके भेदा, सुकल-प्रदायक पाप-उछेदा ॥४२
चौथे गुण ठाणें होइ धर्मा, सपूरण गुण ठार्णे परमा।
धर्मध्यानके चउ गुणठाणा, तें देवाधिदेवने जाणा ॥४३
अहमिन्द्रादिक पद फल ताकौ, वरणे जाहि न अति गुण जाकी।
कारण सुकल ध्यानकौ एही, धर्मध्यानतै सुकल जु लेही ॥४४
मुनि श्रावक दोऊके गाया, धर्मध्यान सो नही उपाया।
मुनिको पूरणरूप प्रवानो, श्रावकके कछु नून वखानो ॥४५
मुनिके अति ही निश्चलताई, श्रावकके किंचित थिरताई।
परिग्रह चचलताको मूला, जातैं धर्म न होय सथूला ॥४६
पै तृष्णा छाडी बहुतेरी, करि मरजादा परिग्रहकेरी।
तातै धर्मध्यानके पात्रा, श्रावक हू जाणो गुणगात्रा ॥४७
धर्मध्यानके च्यारि स्वरूपा, और हु श्रीगुरु कहे अनूपा।
इक पिंडस्थ पदस्थ द्वितीया, रूपस्था तीजो गनि लीया ॥४८
रूपातीत चतुर्थम भेदा, इह धर्मको पाप-उछेदा।
इनके भेद सुनो मन लाये, जाकरि सुकलध्यानकू पाये ॥४९
पिंडमाहि सब लोक विभूती, चितवे ज्ञानी निज अनुभूती।
पिंडलोककौ राजा चेतन, जाहि स्पर्श सकै न अचेतन ॥५०
ताको ध्यान करै जो ध्यानी, सो होवे केवल निज ज्ञानी।
बहुरि पदस्थ ध्यान बुध धारै, जिनभाषित पद मन्त्र विचारै ॥५१
पच परमगुरुमत्र अनादी, ध्यावै धीर त्याग क्रोधादी।
नमोकारके अक्षर भाई, पै तीसौ पूरण सुख दाई ॥५२
षोडश अक्षर मत्र महता, पच परमगुरु नाम कहन्ता।
मन्त्र षडाक्षर अ र ह त सि द्धा, अ सि आ उ सा पच प्रबुद्धा ॥५३
नमोकारके पैतिस अक्षर, प्रसिद्ध छै अरु षोडस अक्षर।
अरहत सिध आयरिय उवझाया, साहू जपेंते अक गिनाया ॥५४
चउ अक्षर अ र ह त जपौ जू, सिद्ध नाम उरमाहि थपौ जू।
द्वे अक्षर मूलौ मति भाई, सिद्ध-सिद्ध यह जाप कराई ॥५५

रौद्रध्यानके लक्षण एई, त्यागैं धन्य धन्य है तेई।
आरति रुद्र ध्यान ए खोटा, इनकरि उपजै पाप जु मोटा ॥२०
दुखके मूल सुखनिके खोवा, ए पापी है जगत डबोवा।
चउ आरतिके पाये भाई, तिर्यग्गतिकारण दुखदाई ॥२१
रौद्रध्यानके चार ए पाये, अधोलोकके दायक गाये।
अशुभध्यान ये दोय विरूपा, लगे जीवके विकल्प रूपा ॥२२
नरक निगोद प्रदायक तेई, वसैं मिथ्यात धरामें एई।
कवहु कदाचित अणुव्रत ताई, काहूके रौद्र जु उपजाई ॥२३
महावृत्तलो आरतध्याना, कबहूंक छट्ठे परमित थाना।
काहूके उपजें त्रय पाये, सप्तम ठाणे सर्व नसाये ॥२४
भोगारति उपजै नहिं भाई, जो उपजै तो मुनि न कहाई।
अब सुन धर्मध्यानकी वातें जे सहु पाप पथको घातें ॥२५
धर्म जु स्वतै स्वभाव कहावे, पण्डितजन तासो लव लावै।
क्षमा आदि दशलक्षण धर्मा, जीवदया विनु कटइ न कर्मा ॥२६
इत्यादिक जिन-भाषित जेई, धारै धर्म धीर है तेई।
धर्मविषै एकाग्र सुचित्ता, विषय-भोगसे अतिहि विरत्ता ॥२७
जे वैराग्यपरायण ज्ञानी, धर्मध्यानके होहिं सु ध्यानी।
जो विशुद्धभावनिमें लागा, जिनतें रागदोष सहु भागा ॥२८
एक अवस्था अंतर बाहिर, निरविकल्प निज निधिके माहिर।
ध्यावे आतमभाव सुधीरा, ह्वै एकाग्रमना वर वीरा ॥२९
जे निजरूपा हैं समभावा, ममत वितीता जग निरदावा।
इन्द्री जीति भये जु जितिन्द्री, तिनको ध्यानी कहैं अतिन्द्री ॥३०
चितवन्ता चेतन गुण-धामा, ध्यानहि लीना आतमरामा।
निरमोहा निरदुन्द सदा ही, चितमें कालिम नाहिं कदा ही ॥३१
जेहि अनुभवै निज चितधनको रोकै मनको सोखें तनको।
आनन्दी निज ज्ञानस्वरूपा, तिनके धर्म रु ध्यान निरूपा ॥३२
मैत्री मुदिता करुणा भाई, अर मध्यस्थ महासुखदाई।
एहि भावना भावै जोई, धर्मध्यानको ध्याता सोई ॥३३
सर्वजीवसो मैत्रीभावा, गुणी देखि चितमैं हरषावा।
दुखी देखि करुणा उर आनै, लखि विपरीत राग नहिं ठानै ॥३४
द्वेष जु नाहिं धरै जु महन्ता, है मध्यस्थ महा गुणवन्ता।
वहुरि धर्मके चारि जु पाया, ते सम्यक्दृष्टिनिको भाया ॥३५
आज्ञाविचय कहावे जोई, श्रीजिनवरने भाष्यौ सोई।
ताकी दृढ परतीति करै जो, सशय विभ्रम मोह हरै जो ॥३६
कर्म नाशको उद्यम ठानै, रागद्वेषकी परणति भानै।
सो अपायविचयो है दूजौ, तिरै जगतथी धारै तू जौ ॥३७

करे उपाय शुद्ध भावनिको, अर निरवाणपुरी पावनिको ।
तीजो नाम विपाकविचय है, भव-भावनितै भिन्न रहै हैं ॥३८
शुभके उदय सपदा आवै, अशुभ उदय आपद बहु पावै ।
दोऊ जानै तुल्य सदाही, हर्ष विषाद धरै न कदा ही ॥३९
पुनि सठाणविचय है चौथौ, सवं जगतको जानै थोथौ ।
तीन लोकको जानि सरूपा, जिनमारग अनुसार अनूपा ॥४०
सबको भूषण चेतनराया, चेतनसो नहिं दूजौ भाया ।
सवं लोकसू छाडि जु प्रीती, चेतनकी धारै परतीती ॥४१
चेतन भावनिमें लौ लावै, अपनो रूप आपमे ध्यावै ।
ए हैं धरमध्यानके भेदा, सुकल-प्रदायक पाप-उछेदा ॥४२
चौथे गुण ठाणें होइ धर्मा, सपूरण गुण ठाणें परमा ।
धर्मध्यानके चउ गुणठाणा, ते देवाधिदेवने जाणा ॥४३
अहमिन्द्रादिक पद फल ताको, वरणे जाहिं न अति गुण जाको ।
कारण सुकल ध्यानको एही, धर्मध्यानतें सुकल जु लेही ॥४४
मुनि श्रावक दोऊके गाया, धर्मध्यान सो नही उपाया ।
मुनिको पूरणरूप प्रवानो, श्रावकके कछु नून बखानो ॥४५
मुनिके अति ही निश्चलताई, श्रावकके किंचित थिरताई ।
परिग्रह चचलताको मूला, जातैं धर्म न होय सथूला ॥४६
पै तृष्णा छाडी बहुतेरी, करि मरजादा परिग्रहकेरी ।
तातैं धर्मध्यानके पात्रा, श्रावक हू जाणो गुणगात्रा ॥४७
धर्मध्यानके च्यारि स्वरूपा, और हु श्रीगुरु कहे अनूपा ।
इक पिडस्थ पदस्थ द्वितीया, रूपस्था तीजौ गनि लीया ॥४८
रूपातीत चतुर्थम भेदा, हृद धर्मकी पाप-उछेदा ।
इनके भेद सुनौ मन लाये, जाकरि सुकलध्यानकू पाये ॥४९
पिडमाहिं सब लोक विभूती, चितवै ज्ञानी निज अनुभूती ।
पिडलोकको राजा चेतन, जाहि स्पर्शं सकै न अचेतन ॥५०
ताको ध्यान करे जो ध्यानी, सो होवै केवल निज ज्ञानी ।
बहुरि पदस्थ ध्यान बुध धारै, जिनभाषित पद मन्त्र विचारै ॥५१
पच परमगुरुमत्र अनादी, ध्यावै धीर त्याग क्रोधादी ।
नमोकारके अक्षर भाई, पै तीसौ पूरण सुख दाई ॥५२
षोडश अक्षर मत्र महंता, पच परमगुरु नाम कहन्ता ।
मन्त्र षडाक्षर अ र ह त सि द्धा, अ सि आ उ सा पच प्रबुद्धा ॥५३
नमोकारके पैंतिस अक्षर, प्रसिद्ध छै अरु षोडस अक्षर ।
अरहत सिध आयरिय उवझाया, साहू जपैंते अक गिनाया ॥५४
चउ अक्षर अ र ह त जपौ जू, सिद्ध नाम उरमाहि थपौ जू ।
द्वै अक्षर भूलौ मति भाई, सिद्ध-सिद्ध यह जाप कराई ॥५५

मन्त्र इकाक्षर है ओंकारा, ब्रह्मबीज इह प्रणव अपारा।
पंच परमपद या अक्षरसे, याहि ध्याय जगमें नहिं भरमें ॥५६
शुक्लरूप अति उज्ज्वल सजला, ध्यावे प्रणवातें हैं विमला।
सोऽहं सोऽहं अजपाजापा, हरै सन्तके सब सन्तापा ॥५७
इह सुर सबही प्राणीगणके, होवै श्वास उश्वास सबनिके।
पै नहिं याको भेद जु पावै, तातै भोदू भव भरमावै ॥५८
जो यह नाद सुनें वरवीरा, पावै शुक्लध्यान गुणधीरा।
उज्जलरूप दाय ए अका, ध्यावै सो नासै अघ-पंका ॥५९
जिनवर सो नहिं देव जु कोई, अजपा सो नहिं जाप सु होई।
मन्त्र अनेक जिनागम गाये, ते ध्यानी पुरुषनिने ध्याये ॥६०
सबमे पंच परम गुरु नामा, पंच इष्ट बिन मंत्र निकामा।
मन्त्राक्षरमाला जो ध्यावै, नाम पदस्थ ध्यान सो पावै ॥६१
अब सुनि तीजो भेद सु भाई, है रूपस्थ महासुखदाई।
कृत्रिम और अकृत्रिम मूरति, जिनवरको ध्यावै शुभ सूरति ॥६२
जिनवरको साकार स्वरूपा, तेरम गुणठाणें जु अनूपा।
अतिशय प्रातिहार्यधर स्वामी, धरै अनंत चतुष्टय नामी ॥६३
समवसरण शोभित जिनदेवा, ताहि चितारै उर धरि सेवा।
पुनि तजि रूप रंग गुणवाना, ध्यावै चौथो भेद सुजाना ॥६४
रूपातीत समान न कोई, धर्मध्यानको भेद जु होई।
ध्यावै सिद्धरूप अतिशुद्धा, निराकार निरलेप प्रबुद्धा ॥६५
पुरुषाकार अरूप गुसाई, निरविकार निरदूषण साईं।
वसु गुण आदि अनंत गुणाकर, अवगुण-रहित अनंत प्रभाधर ॥६६
लोकशिखर परमेसुर राजे, केवलरूप अनूप विराजे।
जिनको उर-अन्तर जे ध्यावै, रूपातीत ध्यान ते पावै ॥६७
सिद्ध समान आपको देखै, निश्चयनय कछु भेद न पेखै।
व्यवहारे प्रभुके हम दासा, निश्चय शुद्ध बुद्ध अविनाशा ॥६८
ए चारू ध्यावै जो धर्मा, ते हि पिछानै श्रुतको मर्मा।
धर्मध्यान चहु गतिमैं होई, सम्यक बिन पावै नहिं कोई ॥६९
छट्टम सप्तम मुनिके ठाणा, पंचम ठाणें श्रावक जाणा।
चौथे अव्रत सम्यकज्ञानी, तेऊ धर्मध्यानके ध्यानी ॥७०
चौथेसो ते सप्तमताई, धर्मध्यानको कहैं गुसाई।
धर्मध्यान परभाव सुज्ञानो, नासै दस प्रकृती निजध्यानो ॥७१
प्रथम चौकरी तीन मिथ्याता, सुर नारक अर आयु विख्याता।
अष्टमसो चौदमलो सुकला, सुकल समान न कोई विमला ॥७२
शुकलध्यान मुनिराज हि ध्यावै, शुकलकरी केवलपद पावै।
शुकल नसावैं प्रकृति समस्ता, करै शुकल रागादि विध्वस्ता ॥७३

जे जिन आतमसो लव लावैं शुकल तिनोके श्रीगुरु गावैं ।
शुकलध्यानके चारि जु पाये, ते सर्वज्ञदेवने गाये ॥७४
द्वै सुकला द्वै सुकल जु पर्मा, जानैं श्रीजिनवर सहु मर्मा ।
प्रथम पृथक्क वितर्कविचारा, पृथक नाम है भिन्न प्रचारा ॥७५
भिन्न भिन्न निज भाव विचारै, गुण पर्याय स्वभाव निहारै ।
नाम वितर्क सूत्रकौ होई, श्रुति अनुसार लखै निज सोई ॥७६
भावथकी भावातर भावै, पहलो शुकल नाम सो पावै ।
दूजौ है एकत्ववितर्का, अवीचार अगणित दुति अर्का ॥७७
भयो एकतामे लवलीना, एकीभाव प्रकट जिन कीना ।
श्रुत अनुसार भयौ अविचारी, भेदभाव परिणति सब टारी ॥७८
तीजौ सूक्षम किरियाधारी, सूक्षम जोग करै अविकारी ।
चौथो जोगरहित निहकिरिया, जाहि ध्याय साधू भव तिरिया ॥७९
अष्टम ठाणें पहलो पायो, बारमठाणें दूजो गायो ।
तीजो तेरमठाणे जानो, चौथो चौदमठाणे मानो ॥८०
इनके भेद सुनो धरि, भावा, जिनकरि नासै सकल विभावा ।
होंहि पवित्र भाव अविकाई, जे अब तक हुए नहिं भाई ॥८१
भाव अनन्त ज्ञान सुख आदी, तिनको धारक वस्तु अनादी ।
लिये अनन्ता शक्ति महन्ती, धरै विभूति अनन्तानन्ती ॥८२
अपनी आप माहिं अनुभूती, अति अनतता अतुल प्रभूती ।
अपने भाव तेहि निज अर्था, और सबै रागादि अनर्था ॥८३
अपनो अर्थ आपमे जानै, आतम सत्ता आप पिछानै ।
इक गुणतैं दूजौ गुण जावे, ज्ञानथकी आनन्द बढावै ॥८४
गुण अनन्तमे लीलाधारी, सो पृथक्त वीतर्क विचारी ।
अर्थथकी अर्थान्तर जावे, निज गुण सत्ता माहिं रमावै ॥८५
योगथकी योगान्तर गमना, राग द्वेष मोहादिक वमना ।
शब्दथकी शब्दान्तर सोई, ध्यावै शब्द-रहित ह्वै सोई ॥८६
व्यजन नाम शुद्ध परजाया, जाकौ नाश न कबहुं बताया ।
वस्तुशक्ति गुणशक्ति अनन्ती, तेई पर्यय जानि महन्ती ॥८७
व्यजनतैं व्यजन परि आवे, निज स्वभाव तजि कितहु न जावैं ।
श्रुति अनुसार लखै निजरूपा, चिनमूरति चैतन्य स्वरूपा ॥८८
जैनसूत्रमे भाव श्रुती जो, प्रगटै अनुभव ज्ञानमती जो ।
सो पृथक्कवितर्क विचारा, ध्यावै साधू ब्रह्म विहारा ॥८९

दोहा

जानि पृथक्क अनन्तता, नाम वितर्क सिद्धत ।
है विचार अविचार निज, इह जानो विरतन्त ॥९०

बेसरी छन्द

लश्या सुकल भाव अति शुद्धा, मन वच-काय सबै जु निरुद्धा।
यामें एक और है भेदा, सो तुम धारहु टारहु खेदा ॥९१
उपशमश्रेणी क्षपक जु श्रेणी, तिनमे क्षायक मुक्ति निसैनी।
पहलो शुक्ल जु दोऊ धारै, दूजो क्षपकविना न निहारै ॥९२
उपशम वारे ग्यारम ठाणा, परम्परै उतरै गुणठाणा।
जो कदाचि भवहूतैं जाई, तौ अहमिन्द्रलोकको जाई ॥९३
नर ह्वै करि धारे फिर धर्मा, चढ़ै क्षपकश्रेणी जु अमर्मा।
क्षपक श्रेणिधर धीर मुनिन्द्रा, होवे केवलरूपजिनिन्द्रा ॥९४
बारम ठाणें दूजो सुकला, प्रकटै जा सम और न विमला।
द्वैमे क्षपकश्रेणि अधिकाई, कही जाय नहिं क्षपक बढाई ॥९५
अष्टम ठाणे प्रगटै श्रेणी, सप्तमलो श्रेणी नहिं लेणी।
क्षपक श्रेणिधर सुकल निवासा, प्रकृति छतीस नवें गुण नासा ॥९६
दशमे सूक्षम लोभ खिपावै, दशमाथी बारमको जावैं।
ग्यारमको पैंडो नहिं लेवे, दूजो सुकलध्यान सुख वेवे ॥९७
साधकताकी हद्द बताई, बारमठाण महा सुखदाई।
जहा षोडशा प्रकृति खिपावै, शुद्ध एकतामे लव लावे ॥९८

सोरठा

मार्यो मोह पिशाच, पहले पायेसे श्रीमुनी।
तजो जगतको नाच, पायो ध्यायो दूसरो ॥९९
है एकत्ववितर्क, अवीचार दूजो महा।
कोटि अनन्ता अर्क, जाको सो तेज न लहै ॥१६००
ज्ञानावरणीकम, दर्शनावरणी हू हते।
रह्यो नाहि कछु मम, अन्तराय अन्त जु भयो ॥१
निरविकल्प रस माहि, लीन भयो मुनिराज सो।
जहाँ भेद कछु नाहिं, निजगुण पर्ययभावतें ॥२
द्रव्य सूत्र परताप, भावसूत्र दरस्यो तहाँ।
गयो सकल सन्ताप, पाप पुण्य दोऊ मिटे ॥३
एक भावमे भाव, लखै अनन्तानन्त ही।
भागे सकल विभाव, प्रगटे ज्ञानादिक गुणा ॥४
अपनो रूप निहार, केवलके सन्मुख भयो।
कर्म गये सब हारि, लरि न सकै जासें न को ॥५
एकहि अर्थ लीन, एकहि शब्दे माहि जो।
एकहि योग प्रवीन, एकहि व्यंजन धारियो ॥६

जीव तत्त्व हवे सुणो ए, सुणे सुन्दरे, चेतना लक्षण जीव । मा०
जीव्यो जीवसे जीवसी ए, सुणे सुन्दरे, सदाकाल ते शिव । मा० ॥१२
सुख सत्ता चैतन्य ए, सुणे सुन्दरे, निश्चयरूपें प्राण चार । मा०
आउ इन्द्री बल उस्वास सुणे सुन्दरे, ए प्राण विवहार । मा० ॥१३
ससारी मुक्त भेद विन्यू ए सुणे सुन्दरे, मुक्त ए कर्म-रहित । मा०
ससारी जीव बहु विध ए, सुणे सुन्दरे, कम आठ सहित । मा० ॥१४
ससारी तणा वे भेद ए, सुणे सुन्दरे, थावर तरस वखाणि । मा०
थावर नाम उदयहू वसिए, सुणे सुन्दरे, पण एकेन्द्री जाणि । मा० ॥१५
त्रस नाम कम उदय ए सुणे सुन्दरे, वे इन्द्री ते इन्द्री चौइन्द्री जात । मा०
नामकर्म विपाक ए, सुणे सुन्दरे, असज्ञी मज्ञी पचेन्द्री विख्यात । मा० ॥१६
पर्याप्त अपर्याप्त प्रकार ए, सुणे सुन्दरे, भेद जाणो सात-सात । मा०
चौद समास जीवतणा ए, सुणे सुन्दरे, कर्म करे भाँति भाँत । मा० ॥१७
गुण पर्याय सहित द्रव्य ए, सुणे सुन्दरे, गुण सुख दर्शन ज्ञान । मा०
चहुँ गति काय पर्याय ए, सुणे सुन्दरे, कर्म तणो सतान । मा० ॥१८
कनक द्रव्य सदा सोही ए, सुणे सुन्दरे, पीत वरण सत गुण । मा०
हेम परीर्या मुद्रिकादिक ए, सुणे सुन्दरे, तेम जीव द्रव्य निपुण । मा० ॥१९
द्रव्य रूपे सदा सास्वतो ए, सुणे सुन्दरे, पर्यायरूपे अनित्य । मा०
पूर्व पर्याय विणसी सही ए, सुणे सुन्दरे, नूतन तणो उत्पत्ति । मा० ॥२०
गति चार, इन्द्री पाँच ए, सुणे सुन्दरे, छ काय, पन्नर योग । मा०
वेद त्रण पचवीस कषाय ए, सुण सुन्दरे, अष्टें ज्ञान जीव भोग । मा० ॥२१
सयम सात, दर्शन चार ए, सुणे सुन्दरे, पट्लेश्या भव्य अभव्य । मा०
वे सज्ञी असज्ञी ए, सुणे सुन्दरे, आहारक अनाहारक दिव्य । मा० ॥२२
चौदे गुणस्थाने जीव जोइ ए, सुणे सुन्दरे, अट्ठाणु जीव समास । मा०
पर्याप्ति छ, प्राण दस, सज्ञा चार ए, सुणि सुन्दरे, उपयोगते द्वादश । मा० ॥२३
ध्यान सोल, प्रत्यय सत्तावन ए, सुणे सुन्दरे, चौरासी लक्ष जीव जाति । मा०
एक सौ साढी नवाणु लाख ए, सुणे सुन्दरे, कुलकोडि जीव विख्यात । मा० ॥२४
चौवीस स्थानें जीव लखो ए, सुणे सुन्दरे, जो इए ते तत्त्व विचार । मा०
जीवतत्त्व सक्षेपे कह्यो ए, सुणे सुन्दरे, आगम जाणो विस्तार । मा० ॥२५
अजीव तत्त्व भेद पच ए, सुणे सुन्दरे, धर्म अधर्म आकाश । मा०
काल ए पुद्गल जाणीइ ए, सुणे सुन्दरे, द्रव्य गुण पर्याय वास । मा० ॥२६
अमूरत धरम गमन गुण ए, सुणे सुन्दरे, असख्य प्रदेश पर्याय । मा०
पुद्गल जीव ने लोक माहे ए, सुणे सुन्दरे, मच्छ ने जिम जल सहाय । मा० ॥२७
ठहरता पुद्गल जीव ने ए, सुणे सुन्दरे, सहाय अमूत अधर्म । मा०
असख्य प्रदेश लोक मात्र ए, सुणे सुन्दरे पथी ने जिम छाया धर्म । मा० ॥२८
द्रव्य सहुँ जिहाँ अवकाश गुण ए, सुणे सुन्दरे, तेतलु लोकाकाश । मा०
तेथी अवर अलोक नभ ए, सुणे सुन्दरे, अनन्त प्रदेश प्रकाश । मा० ॥२९

एकत्व नाम अभेद, नाम वितर्क सिद्धतको।
निरविचार निरवेद, दूजौ पायो इह कह्यौ ॥७
जहाँ विचार न कोय, भागे विकलप जाल सहु।
क्षीणकषायी होइ, ध्यानारूढ भयौ मुनी ॥८
दूजौ पायो येह, गायौ गुरु आज्ञा थकी।
करै कर्मको छेह, अब सुनि तीजौ शुकल तू ॥९
सूक्षमकिरिया नाम, प्रगटै तेरम ठाण जो।
जो निज केवल धाम, श्रुतज्ञानीके है परे ॥१०
लोकालोक समस्त, भासै केवल बोधमें।
केवल सो न प्रशस्त, सर्वलोकमें और कोउ ॥११
जे अघातिया नाम, गोत्र वेदनी आयु हैं।
तिनको नाशै राम, परम शुकल केवल थकी ॥१२
पिच्यासी प्रकृती जु, जिनके ठाणें तेरमे।
जरी जेवरी सी जु, तिनकू नाशै सो प्रभू ॥१३
सूक्षमक्रिया प्रवृत्ति, ध्यावै तीजो शुकल सो।
बादरजोग निवृत्ति, कायजोग सक्षम रहै ॥१४
करै जु सूक्षम जोग, तेरम गुणके छेहु रे।
पावै लवै अजोग, चौदम गुणठाणें प्रभू ॥१५
तहा सु चौथो ध्यान, है जु समुच्छिन्नक्रिया।
ताकरि श्रीभगवान, बेहत्तरि तेरा हतै ॥१६
गई प्रकृति समस्त, सौ ऊपरि अडताल जे।
भये भाव जड अस्त, चेतन गुण प्रगटे सबै ॥१७
करनी सकल उठाय, कृत्यकृत्य हूवौ प्रभू।
सो चौथो शिवदाय, परम शुकल जानो भया ॥१८
पञ्च लघुक्षर काल, चौदम ठाणे थिति करै।
रहित जगत जजाल, जगत-शिखर राजै सदा ॥१९
बहुरि न आवै सोय, लोकशिखामणि जगततैं।
त्रिभुवनको प्रभु होय, निराकार निमल महा ॥२०
सबकी करनी सोइ, जानै अतरगत प्रभू।
सर्व-व्यापको होइ, साखीभूत अव्यापको ॥२१
ध्यान समान न कोइ, ध्यान ज्ञानको मित्र है।
सो निज ध्यानी होइ, ताको मेरी वदना ॥२२
धर्ममूल ए दोय, ध्यान प्रशसा योग्य है।
आरत्ति रुद्र न होय, सा उपाय करि जीव तू ॥२३
धर्म अगनिकौ दीप, शुकल रतनकौ दीप है।
निज गुण आप समीप, तिनको ध्यावौ लोक तजि ॥२४

ध्यान तनू विस्तार, कहि न सकै गणधर मुनी।
कैसे पावैं पार, हमसे अलपमती भया ॥२५
तप जप ध्यान निमित्त, ध्यान समान न दूसरौ।
ध्यान धरौ निज चित्त, जाकरि भवसागर तिरौ ॥२६
तपकूं हमरी ढोक, जामैं ध्यान जु पाइये।
मेटै जगकौ शोक करै कर्मकी निर्जरा ॥२७
अनशन आदि पवित्र, ध्यान लगै तप गाइया।
बारा भेद विचित्र, सुनौं अबै समभाव जो ॥२८
इति द्वादश तप निरूपणम्।

अथ सम भाव वर्णन

छप्पय चाल

राग द्वेष अर मोह, एहि रोकै समभावैं।
जिनकरि जगके जीव, नहिं शिवथानक पावै।
तेरा प्रकृति राग, द्वेषकी बारा जानो।
मोहतनी हैं तीन, ए अट्ठाईस वखानो॥
एक मोहके भेद दो, दर्शन चारित्र ए।
दर्शन मोह मिथ्यात भव, जहा न सम्यक सोहए ॥२९
राग द्वेष ए दोय, जानि चारित्र जु मोहा।
इनकरि तप नही व्रत, एह पापो पर द्रोहा॥
इनकी प्रकृति पचीस, तेहि तजि आतमरामा।
छाडौ तीन मिथ्यात, यही दोषनिके धामा॥
स्वपर विवेक विचार विना, धर्म अधर्म न जो लखै।
सौ मिथ्यात अनादि प्रथम, ताहि त्यागि निजरस चखैं ॥३०
दूजौ मिश्र मिथ्यात, होय तीजे गुण ठाणें।
जहा न एक स्वभाव, शुद्ध आतम नहिं जाणें॥
सत्य असत्य प्रतीति, होय दुविधामय भावें।
ताहि त्यागि गुणखानि, शुद्ध निजभाव लखावे॥
तीजी सम्यक् प्रकृति मिथ्यात, समकितमैं उदवेग कर।
भलौ दोयतें तीसरौ, तौ पन चंचलभाव धर ॥३१

दोहा

कहे तीन मिथ्यात ए, दरशन मोह विकार।
अव चारित्र जु मोहकौ, भेद सुनौ निरधार ॥३२
कही कषाय जु षोडसो, नो-कषाय नव मेलि।
ए पच्चीसो जानिये, राग द्वेषकी वेलि ॥३३

चउ माया चउ लोभ अर, हासि रती त्रय वेद।
ए तेरा हैं रागकी, देहिं प्रकृति अति खेद ॥३४
चार क्रोध अर मान चउ, अरति शोक भय जानि।
दुरगंधा ये द्वादशा, प्रकृति द्वेषकी मानि ॥३५
लगी अनादि जु कालकी, भरमावै जु अनंत।
विनसैं भव्यनिके भया, ह्वै न अभविके अन्त ॥३६
रोकै सम्यक्दृष्टिको, कोकै सकल विभाव।
ढोकै मिथ्यादृष्टिको, नहिं जामे समभाव ॥३७
अनतानुबन्धी इहै, प्रथम चौकरी जानि।
त्यागै तीन मिथ्यात जुत, सो समदृष्टी मानि ॥३८

छप्पय छन्द

समकित बिनु नहिं होत, शातिरूपी समभावा।
चौथे गुण ठाणें जु कछुक, समभाव लखावा।
द्वितिय चौकरी बहुरि, सोहु अव्रतमय भाई।
नाम अप्रत्याख्यान, जा छतैं व्रत न पाई ॥
दोय चौकरी तीन मिथ्या, त्याग होय श्रावकव्रती।
प्रगटै गुणठाण जु पचमें, पापनिकी परिणति हती ॥३९
चढै तहा समभाव, होय रागादिक नूना।
अव्रततैं गनि ऊच, साधुव्रततितैं ऊना ॥
तृतिय चौकरी जानि, नाम है प्रत्याख्यानी।
रोकै मुनिव्रत एह, ठाण छट्ठो शुभध्यानी ॥
तीन चौकरी तीन मिथ्या, छाडि साधु ह्वै सजमी।
वृद्धि होय समभावई, मन इन्द्री सब ही दमी ॥४०

दोहा

चौथी सजुलना सही, रोकै केवलज्ञान।
जाके तीव्र उदय-थकी, होय न निश्चल ध्यान ॥४१

छप्पय छन्द

चौथी चौकरि टारैं, नाम सजुलन जबै ही।
नौ-कषाय नव भेद, नाशि जावै जु सबै ही ॥
यथाख्यात चारित्र, ऊपजै बारम ठाणें।
पूरण तब समभाव, होय जिनसूत्र प्रमाणे ॥
क्रोध मान छल लोभ, चारू एक एक चउ भेद ए।
ह्वै षोडश नव युक्त ये, मोह प्रकृति अति खेद ए ॥४२

दोहा

अनतानुबधी प्रथम, द्वितीय अप्रत्याख्यान ।
तीजी प्रत्याख्यान है, चउथी है सजुलान ॥४३
कही चौकरी चारि ए, चारो गतिको मूल ।
चार-तनी सोला भई, भेद मोक्ष प्रतिकूल ॥४४
हास्य अरति रति शोक भय, दुरगधा दुखदाय ।
नो-कषाय ए नव कही, पचवीस समुदाय ॥४५
राग द्वेषकी प्रकृति ए, कही पचीस प्रमान ।
तीन मिथ्यात समेत ए, अट्ठाईस बखान ॥४६
जाय जबै सब ही भया, तब पूरण समभाव ।
यथाख्यातचारित्र ह्वै, क्षीणकषाय प्रभाव ॥४७
मुनिके जातें अलप हैं, छठें सातमे ठाण ।
पन्द्रा प्रकृति अभावतैं, ता माफिक सम जाण ॥४८
श्रावकके यातें अलप, पचम ठाणें जाण ।
ग्यारा प्रकृति गया थकी, ता माफिक परवाण ॥४९
श्रावकके अणुवृत्त है, इह जानो निरधार ।
मुनिके पच महाव्रता, समिति गुपति अविकार ॥५०
श्रावकके चौथे अलप, चौथो अव्रत ठाण ।
तहा सात प्रकृति गई, ता माफिक ही जाण ॥५१
गुणठाणा समभावके, ह्वै ग्यारा तहकीक ।
चौथे सू ले चौदमा-तक नहिं बात अलीक ॥५२
चौथे जघन जु जानिये, मध्य पचमे ठाण ।
छटठासू दसमा लगे, वढतो वढतो जाण ॥५३
बारम तेरम चौदवें, है पूरण समभाव ।
जिन शासनको सार यह, भव-सागरकी नाव ॥५४

छप्पय

छट्ठमसो ले जुगल मुनीके जाणा ।
तिनको सुनहु विचार, जैनशासन परवाणा ॥
छट्टम सप्तम ठाण, प्रकृति पद्रा जब त्यागी ।
तीन मिथ्यात विख्यात, चौकरी इक तीन उ भागी ॥
तब उपजै समभावई, श्रावकके अधिको महा ।
पै तथापि तेरा रही, तातें पूरण नहिं कहा ॥५५
रह्यो चौकरी एक, और गनि नो-कषाय नव ।
तिनको नाश करेय, सो न पावै कोई भव ॥

छट्टे तीव्र जु उदै, सातवें मद जु इनको।
इनमें षट हास्यादि, आठवें अन्त जु तिनको॥
क्रोध मान अर कपट नो वेद तीनहो नहि या।
चौथे चौकरि लोभ सूक्षम दश वेंठाण विनाशिया॥५६

चाल छन्द

एकादशमा द्वादशमा, पुनि तेरम अर चौदशमा।
समभावतने गुणथाना, ए चार कहे भगवाना॥५७
ग्यारम है पतन स्वभावा, डिगि जाय तहाँ समभावा।
बारहमें परम पुनीता, जासम नहि कोइ अजीता॥५८
तेरम चौदम गुणठाणा, परमातरूप वखाना।
समभाव तहाँ है पूरा, कीये रागादिक चूरा॥५९
नहि यथाख्यात सौ कोई, समभाव-सरूपी सोई॥
इह सम उतपत्ति बताई, रागादिक नाश कराई॥६०
अब सुनि सम लक्षण संता, जा विधि भाषैं भगवंता।
जीवौ-मरिवौ सम जानै, अरि-मित्र समान वखाने॥६१
सुख-दुख अर पुण्य जु पापा, जानै सम ज्ञान-प्रतापा।
सब जीव समान विचारै, अपने से सर्व निहारै॥६२
चिंतामणि-पाहन तुल्या, जिसके समभाव अतुल्या।
सुरगति अर नरक समाना, सब राव रंक सम जाना॥६३
जिनके घरमें नहि ममता, उपजी सुखसागर समता।
वन-नगर समान पिछानैं, सेवक साहिव सम जानैं॥६४
समसान-महल सम भावै, जिनके न विषमता आवै।
है लाभ-अलभ समाना, अपमान-मान सम जाना॥६५
गिरि-ग्राम समान जिनूंके, सुर-कीट समान तिनूंके।
सुरतरु-विषतरु सम दोऊ, चन्दन-कर्दम सम होऊ॥६६
गुरु-शिष्य न भेद विचारैं, समता परिपूरण धारैं।
जानै सम सिंह-सियाला, जिनके समभाव विशाला॥६७
संपति-विपदा द्वै सरिखी, लघुता-गुरुता सम परखी।
कंचन लोहा सम जाके, रंच न है विभ्रम ताके॥६८
रति-अरति हानि अर वृद्धी, रज सम जानैं सब ऋद्धी।
खर-कुंजर तुल्य पिछानै, अहि फूलमाल सम जानैं॥६९
नारी नागिन सम देखै, गृह कारागृह सम पेखै।
सम जानैं इष्ट-अनिष्टा, सम मानैं अवलि-वलिष्टा॥७०
जे भोग रोग सम जानैं, सव हर्ष रोग सम मानैं।
रस नीरस रंग कुरंगा, सूसवद कुसवद सम अंगा॥७१

शीतल अर उष्ण समाना, दुरगध सुगध प्रमाना।
नहिं रूप कुरूप जु भेदा, जिनके समभाव निवेदा ॥७२
चक्री अर निरधन दोई, कछु भेदभाव नहिं होई।
चक्राणी अर इन्द्राणी, अति दीन नारि सम जाणी ॥७३
इन्द्र नागेन्द्र नरेन्द्रा, पुनि सर्वोत्तम अहमिन्द्रा।
सूक्षम जीवनि सम देखै, कछु भेद भाव नहिं पेखें ॥७४
थुति निंदा तुल्य गिनैं जो, पापनिके पुंज हनैं जो।
कृमि कुन्थुकृष्ण सम तुल्या, पायौ समभाव अतुल्या ॥७५
सेवा उपसर्ग समाना, वैरी बांधव सम माना।
जिनके द्विज शूद्र सरीखा, सीखी सदगुरुकी सीखा ॥७६
वन्दै निन्दै सो सरिखौ, समभावनि तन जिन परिखौ।
समतारस पूरण प्रगटयौ, मिथ्यात महाभ्रम विघटयौ ॥७७
तिनकी लखि शात सु मुद्रा, रौद्र जु त्यागै अति रुद्रा।
चीता मृगवर्ग न मारै, अति प्रीति परस्पर धारै ॥७८
गरुडा नहिं नाग विनासै, नागा नहिं दादर नासै।
उन्दर मारै न विडाला, पखिनिसौं प्रीति विशाला ॥७९
तिर विद्याधर नर कोई, सुर असुर न वाधक होई।
काहूकूं राव न दडे, दुरजन दुरजनता छडे ॥८०
काहूके चोर न पैसे, चोरी होवै कहु कैसे।
लखि समता-धारक मुनिको, त्यागै पापी पापनिको ॥८१
डाकिनिको जोर न चालै, हिंसक हिंसा सब टालै।
भूता नहिं लागन पावै, राक्षस व्यतर भजि जावैं ॥८२
मतर न चलैं जु किसीके, ये हैं परभाव रिषीके।
कोहू काहू नहिं मारै, सब जीव मित्रता धारै ॥८३
हरिनी मृगपतिके छावा, देखै निज-सुत समभावा।
बाघनिकूं गाय चुखावै, मार्जारो हस खिलावै ॥८४
ल्याही अर मीढा इकठे, नाहर अर वकरा वइठे।
काहूको जोर न चालै, समभाव दुखनिको टालै ॥८५
रोगिनि के रोग नसावे, सोगिनि सोग त्रिलावै।
कारागृह तें सब छूटैं, कोउ काहू कोनहिं लूटैं ॥८६
इह ब्रह्म सुविद्यारूपा, निरदोष विराग अनूपा।
अति शातिभावको मूला, समसो नहिं शिव अनुकूला ॥८७
नहिं समता पर छै कोऊ, सब श्रुतिकौ सार जु होऊ।
जो ममताकौ परित्यागी, सो कहिये सम वडभागी ॥८८
मन इन्द्रीकौ जु निरोधा, सो दम कहिये प्रतिवोधा।
समतें क्रोधादि नशाया, दमतें भोगादि भगाया ॥८९

सम दम निरवाण प्रदाया, काहे धारो नहिं भाया ।
सब जैनसूत्र समरूपा, समरूप जिनेश्वर भूपा ॥९०
समताधर चउविधि संघा, समभाव भवोदधि लंघा ।
पूरण सम प्रभुके पइये, तिनतैं लघु मुनिके लइये ॥९१
तिनतैं श्रावकके नूना, सम करै कर्मगण चूना ।
श्रावकतैं चौथे ठाणें, कछुइक घटता परमाणें ॥९२
सम्यक बिन समता नाही, सम नांहि मिथ्यामत माही ।
ममता है मोह सरूपा, समता है ज्ञान प्ररूपा ॥९३
सब छांडि विषमता भाई, ध्यावो समता शिवदाई ।
समकी महिमा मुनि गावै, समको सुरपति शिर नावै ॥९४
समसौं नहिं दूजो जगमें, इह सम केवल जिनमगमें ।
सम अर्थ सकल तप वृत्ता, सम है मारग निरवृत्ता ॥९५
जो प्राणी समरस भावै, सो जनम मरण नहिं पावै ।
यम नियमादिक जे जोगा, सबमें समभाव अलोगा ॥९६
समको जस कहत न आवै, जो सहस जीभ करि गावै ।
अनुभव अमृतरस चाखै, सोई समता दिढ़ राखै ॥९७

इति समभाव निरूपण ।

अथ सम्यक्त्व वर्णन

सवैया इकतीसा ।

अष्ट मूलगुण कहे, बारह बरत कहे, कहे तप द्वादश जु समभाव साधका ।
सम सा न कोऊ और सर्वको जु सिरमोर, याही करि पावै ठौर आतम आराधका ।
विषमता त्यागि अर समताके पथ लागि, छाडो सब पाप जेहि धर्मके विराधका ।
ग्यारै पडिमा जु भेद दोषनिको करे छेद, धारे नर धीर धरि सकै नांहि बाधका ॥९८

दोहा

पडिमा नाम जु तुल्यको, मुनिमारगकी तुल्य ।
मारग श्रावकको महा, भाषैं देव अतुल्य ॥९९
बहुरि प्रतिज्ञाको कहैं, पडिमा श्रीभगवान ।
होहिं प्रतिज्ञा धारका, श्रावक समतावान ॥१७००
मुनिके लहुरे वीर हैं, श्रावक पडिमाधार ।
मुनि श्रावकके धर्मको, मूल जु समकित सार ॥१
सम्यक चउ गतिके लहैं, कहै कहालो कोइ ।
पै तथापि वरणन करूं, सवेगादिक सोइ ॥२

सम्यकके गुण अतुल हैं, श्रावक तिरि नर होय ।
मुनिव्रत मनुजहि धारही, द्विज छत वाणिज होय ॥३
संवेगो निरवेद अर, निंदन गरुहा जानि ।
समता भक्ति दयालुता, वात्सल्यादिक मानि ॥४
धम जिनेसुर कथित जो, जीवदयामय सार ।
तासौं अधिक सनेह है, सो सवेग विचार ॥५

भव तन भोग समस्ततें, विरकत भाव अखेद ।
सो दूजौ निरवेद गुण, करै कमकौ छेद ॥६
तीजौ निंदन गुण कह्यौ, निजको निंदै जोइ ।
मनमै पछितावौ करैं, भव भरमणकौ सोइ ॥७
चौथौ गरहा गुन महा, गुरुपै भापै वीर ।
अपने औगुन समकिती, नही छिपावैं वीर ॥८

पचम उपशम गुण महा, उपशमता अधिकाय ।
प्राण हरै ताहू थकी, बैर न चित्त धराय ॥९
छट्टौ गुण भक्ती धरैं, सम्यकदृष्टी सत ।
पच परमपदकी महा, धारै सेव महत ॥१०
सप्तम गुण वात्सल्य जो, जिन धर्मिनिसो राग ।
अष्टम अनुकपा गुणो, जीवदया व्रत लाग ॥११

उक्त च गाथा—

सवेओ णिव्वेओ, णिदण गरुहा य उवसमो भत्ती ।
वच्छल्ल अणुकपा, अट्ट गुणा हुति सम्मत्ते ॥१२

चौपाई

भव्यजीव चहुँगतिके माही, पावैं समकित सशय नाही ।
पचेन्द्री सैनी बिनु कोय, और न सम्यकदृष्टी होय ॥१३
जब ससार अलप ही रहै तब सम्यक दरशनको गहै ।
प्रथम चौकरी तीन मिथ्यात, ए सातो प्रकृती विख्यात ॥१४
इनके उपशमतैं जो होय, उपशम नाम कहावै सोय ।
इनके क्षयतैं क्षायिक नाम, पावै मनुष महागुण धाम ॥१५
क्षायिक मनुप बिना नहि लहै, क्षायिक तुरत ही भव-वन दहै ।
केवल आदि मूल इह होय, क्षायिक सो नहि सम्यक कोय ॥१६
अब सुनि क्षय-उपसमको रूप, तीन प्रकार कह्यौ जिनभूप ।
प्रथम चौकरी क्षय है जहा, तीन मिथ्यात उपसमैं तहा ॥१७
पहलो क्षय-उपशम सो जानि, जिनवानी उरमैं परवानि ।
प्रथम चौकरी पहल मिथ्यात, ए पाचौं क्षय ह्वै दुखदात ॥१८

द्वै मिथ्यात उपशमे जहा दूजौ क्षय-उपशम है तहा।
प्रथम चौकरी द्वै मिथ्यात, ए षट क्षय होवैं जडतात ॥१९
तृतिय मिथ्यात उपशमैं भया, तीजौ क्षय-उपशम सो लया।
वेदकसम्यक चार प्रकार, ताके भेद सुनो निरधार ॥२०
प्रथम चौकरी क्षय है जहा, दोय मिथ्यात उपशमैं तहाँ।
तृतिय मिथ्यात उदय जब होय, पहलौ वेदक जानौ सोय ॥२१
प्रथम चौकरी प्रथम मिथ्यात, ए पाचौ क्षय होय विख्यात।
द्वितिय मिथ्यात उपशमैं जहा, उदय होय तीजेकौ तहा ॥२२
भेद दूसरौ वेदकतणो, जिनमारग अनुसारें भणो।
प्रथम चौकरी दो मिथ्यात, ए षट प्रकृति होय जब घात ॥२३
उदय तीसरौ मिथ्या होय, तीजौ वेदक कहिये सोय।
प्रथम चौकरी मिथ्या दोय, इन छहूँको उपशम जब होय ॥२४
उदय होय तीजौ मिथ्यात, सो चौथौ वेदक विख्यात।
ए नव भेद सु सम्यक कहे, निकट भव्य जीवनिनें गहे ॥२५

दोहा

क्षय-उपशम वरतै त्रिविध, वेदक च्यारि प्रकार।
क्षायिक उपशम भेलि करि, नवधा समकित धार ॥२६
नवमे क्षायिक सारिखौ, समकित होय न और।
अविनाशी आनदमय, सो सबकौ सिर मौर ॥२७
पहली उपशम ऊपजे, पहली और न कोय।
उपशमके परसादतें पाछे क्षायिक होय ॥२८
क्षायिक बिनु नहिं कर्मक्षय, इह निश्चय परवानि।
क्षायिक दायक सर्व ए, सम्यकदर्शन मानि ॥२९
उपशमादि सम्यक्त सर्व, आदि अन्त जुत जानि।
क्षायिककौ नहिं अन्त है, सादि अनन्त बखानि ॥३०
सम्यकदृष्टी सर्व ही, जिनमारगके दास।
देव धर्म गुरु तत्त्वको, श्रद्धा अविचल भास ॥३१
अनेकात सरधा लिया, शातभाव धर धीर।
सप्तभग वाणी रुचै, जिनवरकी गभीर ॥३२
जीव अजीवादिक सबै, जिन आज्ञा परवान।
जानै सशय रहित जो, धारै दृढ़ सरधान ॥३३
सप्त तत्त्व षट द्रव्य अर, नव पदार्थ परतक्ष।
अस्तिकाय हैं पच ही, तिनकौ धारे पक्ष ॥३४
इष्ट पच परमेष्ठिकौ, और इष्ट नहिं कोय।
मिष्ट वचन बोलें सदा, मनमें कपट न होय ॥३५

तजै अष्ट ही गर्व जो, है निगर्व गुणवान।
पुत्र-कलत्रादिक उपरि, ममता नाहिं बखान ॥३६
तृण सम मानै देहको, निजसम जानै जीव।
धरै महा उपशातता, त्यागै भाव अजीव ॥३७
सेवै विषयनिको तऊ, नही विषयसू राग।
वरतै गृह आरम्भमैं, धारि भाव वैराग ॥३८
कबै दशा वह होयगी, धरियेगा मुनिवृत्त।
अथवा श्रावक वृत्त ही, करियेगो जु प्रवृत्त ॥३९
धिग धिग अव्रतभावको, या सम और न पाप।
क्षणभगुर विषया सबै, देहिं कुगति दुख ताप ॥४०
इहै भावना भावतो, भोगनितै जु उदास।
सो सम्यकदरसी भया पावै तत्त्वविलास ॥४१
सप्तम गुणके ग्रहणको, रागी होय अपार।
साधुनिकी सेवा करै, सो सम्यक गुण धार ॥४२
साधर्मिनसौ नेह अति, नहिं कुटुम्बसौं नेह।
मन नहिं मोह-विलासमैं, गिनैं न अपनी देह ॥४३
जीव अनादि जु कालको, बसै देहमे एह।
बध्यौ कर्म प्रपचसो, भवमैं भ्रमौ अच्छेह ॥४४
त्याग जोग जगजाल सब, लैन जोग निजभाव।
इह जाके निश्चय भयो, सो सम्यक परभाव ॥४५
भिन्न भिन्न जानै सुधी, जड-चेतनको रूप।
त्यागै देह सनेह जो, भावै भाव अनूप ॥४६
क्षीर नीरकी भाति ये, मिलैं जीव अर कर्म।
नाहिं तथापि मिलैं कदै, भिन्न भिन्न हैं धर्म ॥४७
यथा सपकी कचुकी, यथा खडगको म्यान।
तथा लखै बुध देहको, पायौ आतमज्ञान ॥४८
दोष समस्त वितीत जो, वीतराग भगवान।
ता बिन दूजौ देव नहिं, इह धारै सरधान ॥४९
सर्व जीवकी जो दया, ताहि सरदहै धर्म।
गुरु मानै निरग्रन्थको, जाके रच न भर्म ॥५०
जपै देव अरहतको दास भाव धरि धीर।
रागी दोषी देवकी, सेव तजै वर वीर ॥५१
रागी दोषी देवको, जो मानै मतिहीन।
धर्म गिनै हिंसा विषैं, सो मिथ्या मत लीन ॥५२
परिग्रह धारकको गुरु, जो जानैं जग माहिं।
सो मिथ्यादृष्टी महा, यामैं सशय नाहिं ॥५३

काल प्रदेश एक ए सुणे सुन्दरे, नव-जीर्ण-कारी गुण। मा०
जुजुआ अणुत्तर रासि जिम ए सुणे सुन्दरे, रहि लोक माँहि निपुण। मा० ॥३०
पुद्गल भेद छ हुइ ए, सुणे सुन्दरे, मूर्त्त रूपी गुणवत्त। मा०
स्परस रस गध वण वीस ए, सुणे सुन्दरे, सख असख अनत। मा० ॥३१
सूक्ष्म सूक्ष्म परमाणु ए सुणे सुन्दरे, पुद्गल तणा पर जाय। मा०
[1]स्कन्ध देश प्रदेश अणु ए, सुणे सुन्दरे, लोक माहे अवि जाय। मा० ॥३२
आस्रव तत्त्व हवे साभलो, सुणे सुन्दरे, भावि द्रव्य ते होइ। मा०
मन परमाणे भावास्रव ए, सुणे सुन्दरे, कर्म अणु द्रव्ये जोई। मा० ॥३३
मूळ आस्रव पच भेद ए, सुणे सुन्दरे मिथ्यात्त अविरत कषाय। मा०
योग प्रसाद भेदे कही ए सुणे सुन्दरे, अबर अनेक ते थाय। मा० ॥३४
मिथ्यात्त पच पेहले कह्यो ए, सुणे सुन्दरे, अविरत तणा बार भेद। मा०
पच इन्द्री मन मोकला ए, सुणे सुन्दरे, छ काय जीव करे छेद। मा० ॥३५
अनन्तानुबन्धी अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान ए, सुणे सुन्दरे, सज्वलन कसाय असार। मा०
क्रोध मान माया लोभ ए, सुणे सुन्दरे, चौकडो भेद च्यार च्यार। मा० ॥३६
हास रति अरति सोक ए, सुणे सुन्दरे, भय जुगुप्सा स्त्री वेद। मा०
पुरुष नपुसक नो कपाय नव ए, सुणे सुन्दरे, कषाय ते पचवीस भेद। मा० ॥३७
सत्य असत्य उभय अनुभय ए, सुणे सुन्दरे, मन वचन च्यार च्यार।
औदारिक औदारिकमिश्र काय ए, सुणे सुन्दरे, आहारकमिश्र ते आहार। मा० ॥३८
वैक्रियिककाय वैक्रियिकमिश्र ए, सुणे सुन्दरे, कार्मण कर्म तणो भोग। मा०
आठ सात भेदे करी ए, सुणे सुन्दरे, इणि पूरे पन्नर योग। मा० ॥३९
विकथा कथा च्यार भेद ए, सुणे सुन्दरे, पच इन्द्री निद्रा स्नेह। मा०
पन्नर प्रमाद इणि परि ए, सुणे सुन्दरे, आस्रव तणा कारण एह। मा० ॥४०
बहुत्तरि आस्रवइ इमउ लखो ए, सुणे सुन्दरे, अवर जाणो असख्यात्त। मा०
घड नाले जिम नीर आव ए सुणे सुन्दरे, तिम आवे कर्म सघात्त। मा० ॥४१
कर्मास्रव ए आत्मा ए, सुणे सुन्दरे, चहूगति भ्रमे अपार। मा०
नानाविध कष्ट ते सहे ए, सुणे सुन्दरे, भव-सागर मझार। मा० ॥४२
बन्ध तत्त्व चतुर्विध ए, सुणे सुन्दरे, प्रकृति स्थिति अनुभाग। मा०
प्रदेश भेद कमबन्ध ए, सुणे सुन्दरे, जेहवो होइ रोस राग। मा० ॥४३
मूल प्रकृति अष्टविध ए, सुणे सुन्दरे, उत्तर एक सौ अडताल। मा०
अवर असख्य लोकमात्र ए, सुणे सुन्दरे, प्रकृति बन्ध विशाल। मा० ॥४४
ज्ञानावरणी पचविध ए सुणे सुन्दरे, दरसणावरणी नव होय। मा०
द्विविध वेदनी मोहनो अट्ठावीस ए, सुणे सुन्दरे, आयुकम चतुर्विध जोय। मा० ॥४५
नामकम त्राणु भेद ए, सुणे सुन्दरे, गोत्र तणा भेद दोय। मा०
अन्तरायकम पचविध ए, सुणे सुन्दरे, एक सौ अडतालीस इम होय। मा० ॥४६

---

१ यहाँ सूक्ष्म सूक्ष्म-स्थूल आदिका वणन छूट गया है।

कुगुरु कुदेव कुधर्मको, जो ध्यावै हिय अघ।
सो पावै दुरगति दुखा, करै पापको वध ॥५४
सम्यकदृष्टी चिंतवे, या ससार मझार।
सुखको लेश न पाइये, दीखै दु ख अपार ॥५५
लक्ष्मी-दाता और नहि, जीवनिको जग माहिं।
लक्ष्मी दासी धर्मकी, पापथकी विनसाहि ॥५६
जैसौ उदय जु आवही, पूरव बाध्यौ कर्म।
तैसौ भुगतैं जीव सब, यामैं होय न भर्म ॥५७
पुण्य भलाई कार है, पाप बुराई कार।
सुख-दुखदाता होय यह, और न कोइ विचार ॥५८
निमितमात्र पर जीव हैं, इह निहचै निरधार।
अपने कीये आप ही, फल भुगते ससार ॥५९
पुण्यथकी सुर नर हुवै, पापथकी भरमाय।
तिर नारक दुरगति विषै, भव-भव अति दुख पाय ॥६०
पाप समान न शत्रु है, धर्म समान न मित्र।
पाप महा अपवित्र है, पुण्य कछुक पवित्र ॥६१
पुण्य-पापतैं रहित जो, केवल आतमभाव।
सो उपाय निरवाणको, जामैं नहीं विभाव ॥६२
झूठी माया जगतकी, झूठौ सब ससार।
सत्य जिनेसुर धर्म है, जा करि ह्वै भव-पार ॥६३
व्यतर देवादिकनिको, जे शठ लक्ष्मीहेत।
पूजैं ते आपद लहैं, लक्ष्मी देय न प्रेत ॥६४
भक्ति किये पूजे थके, जो व्यन्तर धन देय।
तौ सब ही धनवन्त ह्वै, जगजन तिनको सेय ॥६५
क्षेत्रपाल चडी प्रमुख, पुत्र कलत्र धनादि।
देन समर्थ न कोइकों, पूजैं शठ जन बादि ॥६६
जो भवितव्यता जीवको, जा विधान करि होय।
जाहि क्षेत्र जा कालमैं, नि सदेह ह्वै सोय ॥६७
जान्यौ जिनवर देवने, केवलज्ञान मझार।
होनहार ससारको, ता विधि ह्वै निरधार ॥६८
इह निश्चय जाके भयौ, सो नर सम्यकवन्त।
लखै भेद षट द्रव्य के, भावै भाव अनन्त ॥६९
शका भागी चित्ततैं, भयो निशकित वीर।
गुण परजाय स्वभाव निज, लखैं आप मैं धीर ॥७०
दृढ प्रतीत जिनवैन की, सम्यकदृष्टी सोय।
जाकै सशय जीव मे, सो मिथ्याती होय ॥७१

सोरठा

जो नहिं समझी जाय, जिनवाणी अति सूक्षमा।
तो ऐसे उर लाय, सदेह न मन आनै सुधी ॥७२
बुद्धि हमारी मन्द, कछु समझैं कछु नाहिं।
जो भाष्यौ जिनचन्द, सो सब सत्य स्वरूप है ॥७४
उदय होयगो ज्ञान, जब आवरणु नसाइगौ।
प्रगटेगौ निज ध्यान, तब सब जानी जायगी ॥७४
जिनवानी सम और, अमृत नाहिं ससार मे।
तीन भुवन सिरमौर, हरै जन्म जर-मरण जो ॥७५
जिनधर्मिनि सो नेह लग्यौ नेह जिनधमसू।
बरसै आनन्द मेह, भक्त भयो जिनराज को ॥७६
सो सम्यक धरि धीर, लहै निजातम भावना।
पावै भवजल तोर, दरसन ज्ञान चरित्त तैं ॥७७
ऋद्धिनि मे वड ऋद्धि, रतननि मे रतन जु महा।
या सम और न सिद्धि, इह निश्चय धारौ भया ॥७८
योगिनि मे निज योग, सम्यक दरसन जानि तू।
हनै सदा सब शोक, है आनन्दमयी महा ॥७९

जोगीरासा

वन्दनीक है सम्यकदृष्टी, यद्यपि व्रत न कोई।
निन्दनीक है मिथ्यादृष्टी, जो तपसी हू होई॥
मुक्ति न मिथ्यादृष्टी पावै, तपसी पावै स्वर्गा।
ज्ञानी व्रत विना सुरपुर ले, तपधरि ले अपवर्गा ॥८०
दुरगति बन्ध करै नहिं ज्ञानी, सम्यकभावनि माही।
मिथ्याभावनि मे दुरगति को, वन्ध होय बुधि नाही॥
समकित विन नहिं श्रावकवृत्ती, अर मुनिव्रत हू नाही।
मोक्ष हु सम्यक बाहिर नाही, सम्यक आपहि माही ॥८१
अग निशकित आदि जु अष्टा, धारै सम्यक सोई।
शका आदि दोष मल रहिता, निरमल दरशन होई॥
जिनमारग भाषै जु अहिंसा, हिंसा परमत भापै।
हिंसा मारगकी तजि सरधा, दयाधर्म दृढ राखै ॥८२
सदेह न जाके जिय माही, स्यादवादकौ पथा।
पकरै त्यागि एक नयवादी सुनै जिनागम ग्र था॥
पहली अग निसै सोई, दूजौ काक्षा रहिता।
जामैं जगकी वाछा नाही, आतम अनुभव सहिता ॥८३

शुभ करणी करि फल नहिं चाहे, इह भव परभवके जो।
करे कामना-रहित जु धर्मा, ज्ञानामृत फल ले जो॥
इह भाष्यौ नि कांक्षित अंगा अव सुनि तीजे भेदा।
निरविचिकित्सा अंग है भाई, जा करि भव-भ्रम छेदा॥८४
जे दश लक्षण धर्म धरैया, साधु शांतरस लीना।
तिनकौं लखि रोगादिक युक्ता, सेव करे परवीना॥
सूग न आने मनमें क्यू ही, हरे मुनिनिकी पीरा।
सो सम्यकदृष्टी जिनधर्मा, तिरै तुरत भवनीरा॥८५
चौथो अंग अमूढ स्वभावा, नहीं मूढता जाके।
जीवघातमें धर्म न जाने, संशयमोह न ताके।
अति अवगाढ गाढ परतीती, कुगुरु कुदेव न पूजे।
जिन शासनकौ शरणो ले करि, जाय न मारग दूजे॥८६
जानें जीवदयामें धर्मा, दया जैन ही माही।
आन धर्ममें करुणा नाही, परतछ जीव हताई॥
जो शठ लज्जा लोभ तथा, भय करिके हिंसा माही।
मानै धर्म सो हि मिथ्याती, जामें समकित नाही॥८७
पंचम अंग नाम उपगूहन, ताकौ सुनहु विवेका।
पर जीवनिकें आखिनि देखै, ढाकै दोष अनेका॥
आप जु दोष करे नहिं, ज्ञानी सुकृत रूप सदा ही।
अपने सुकृत नाहिं प्रकाशै, धरे न एक मदा ही॥८८

दोहा

ढाके अपने शुभ गुणा, ढाके परके दोष।
गावै गुण परजीवके, रहै सदा निरदोष॥८९
जो कदाचि दूषण लगै, मन वच काय करेय।
तौ गुरु पै परकाशिकै, ताकौ दंड जु लेय॥९०
जप तप व्रत दानादि कर, दूषण सर्व हरेय।
करै जु निंदा आपकी, परनिंदा न करेय॥९१
जे परकासै पारके, औगुन तेहि अयान।
जे परकासै आपके, औगुण ते हि सयान॥९२
जे गावैं गुन आपने, ते मिथ्याती आनि।
जे गावैं गुन गुरुनिके, ते समदृष्टी जानि॥९३
छट्ठो अंग कहो अबै, थिरकरणा गुणवान।
धर्मथकी विचलेनिकूं प्रतिबोधै मतिवान॥९४
थापै धर्म मझार जो, करै धर्मकी पक्ष।
आप डिगै नहिं धमतै, भावे भाव अलक्ष॥९५

थिरता गुण सम्यक्तको, प्रगट बात है एक ।
चित्त अथिरता रूप जो, तौ मिथ्यात गिनेह ॥९६
सुनो सातमू अग अब, जिन मारगसो नेह ।
जिनधर्मीकू देखि करि, वरसे आनद मेह ॥९७
तुरत जात बछरानि परि, नेह धरै ज्य गाय ।
त्यू यह साधर्मी उपरि, नेह करै अधिकाय ॥९८
जे ज्ञानी धरमातमा, मुनि श्रावक व्रतवत ।
आर्या और सुश्राविका, चउविधि सघ महत ॥९९
तथा अव्रती समकिती, जिनधर्मी जग माहि ।
तिनसो राखे प्रीति जो, यामें सशय नाहि ॥१८००
तन मन धन जिनधर्म परि, जो नर वारै डारि ।
सो वात्सल्य जु अग है, भाख्यौ सूत्र विचारि ॥१
अष्टम अग प्रभावना, कह्यौ सुनो धरि कान ।
जा विधि सिद्धान्तनि विषै, भाख्यौ श्रीभगवान ॥२
भाँति-भाँति करि भासई, जिनमारगको जो हि ।
करै प्रतिष्ठा जैनकी, अग आठमो होहि ॥३
जिनमदिर जिनतीरथा, जिनप्रतिमा जिनधम ।
जिनधर्मी जिनसूत्रकी, करै सेव विन भर्म ॥४
जो अति श्रद्धा करि करै, जिनशासनकी सेव ।
बोलै प्रिय वाणी महा, ताहि प्रशसै देव ॥५
जो दशलक्षण धमकी, महिमा करै सुजान ।
इन्द्रिनके सुखको गिनै, नरक निगोद निसान ॥६
कथनी करै न पारकी, पुनि-पुनि ध्यावै तत्त्व ।
भावै आतमभाव जो, त्यागै सब ममत्व ॥७
कहे अग ये प्रथम ही, मूलगुणनिके माहि ।
अब हू पडिमा मैं कहै, इन सम और जु नाहि ॥८
वार-वार श्रुति जोग ये, सम्यकदरसन अग ।
इनको धारै सो सुधी, करै कर्मको भग ॥९
अष्ट अगको धारिवौ, अष्ट मदनिको त्याग ।
षट अनायतन त्यागिवौ, अतीचार नहि लाग ॥१०
ते भाषे गुरु पचविधि, वहुरि मूढता तीन ।
तजिवौ सातो व्यसनको, भय सातौ नहि कीन ॥११
ए सब पहले हू कहै, अब हू भाषे वीर ।
वार-वार सम्यक्त्व की, महिमा गावैं धीर ॥१२
अग निशकित आदि वहु, अठ गुण सब गादि ।
अष्ट मदनिको त्याग पुनि, अर वसु मूलगुणादि ॥१३

सात व्यसनकौ त्यागिवौ, अर तजिवौ भय सात।
तीन मूढता त्यागिवौ, तीन शल्य पुनि भ्रात ॥१४
षट अनायतन त्यागिवौ, अर पाँचो अतिचार।
ए त्रेसठ त्यागै जु कोउ, सो समदृष्टी सार ॥१५
चौथे गुणठाणे तनी, कही वात ए भ्रात।
है अव्रत परि जगत तें, विरकित रूप रहात ॥१६
नहिं चाहै अव्रत दशा, चाहै व्रत-विधान।
मन मे मुनिव्रत की लगन, सो नर सम्यकवान ॥१७
जैसे पकरयो चोरकू, दे तलवर दुख घोर।
परवश वध वन्धन सहै, नही चोरकौ जोर ॥१८
त्यू हि अप्रत्याख्याननें, पकरयो सम्यकवन्त।
परवश अव्रत मे रहै, चाहै व्रत महन्त ॥१९
चाहै चोर जु छूटिवौं, यथा वन्दवर्ते वीर।
चाहै गृहतै छूटिवौं, त्यो सम्यक धर धीर ॥२०
सात प्रकृतिके त्यागतें, जेती थिरता जोय।
तेती चौथे ठाणि है, इह जिन आज्ञा होय ॥२१

अथ ग्यारा व्रत वर्णन। दोहा

ग्यारा प्रकृति वियोगतै, होय पचमो ठाण।
तव पडिमा धारै सुधी, एकादश परिमाण ॥२२
तिनके नाम सुनो सुधी, जा विधि कहै जिनद।
धारै श्रावक धीर जे, तिन सम नाहि नरिंद ॥२३
दरसन प्रतिमा प्रथम है, दूजी व्रत अधिकार।
तीजी सामायिक महा, चौथो पोसह धार ॥२४
सचितत्याग है पचमो, छट्ठी दिन-तिय-त्याग।
तथा रात्रि-अनसन व्रती, धारै तपसो राग ॥२५
जानो पडिमा सातवी, ब्रह्मचयव्रत धार।
तजी नारि नागिन गिनै, तजे मोह जजार ॥२६
निरारभ ह्वै अष्टमी, नवमी परिग्रह त्याग।
लौकिक वचन न बोलिवौ, सो दशमी वडभाग ॥२७
एकादशमी दोय विधि, क्षुल्लक ऐलि विवेक।
है उदडाहार द्वै, तिनमै मुनिव्रत एक ॥२८
ऐलि महा उतकृष्ट है, ऐलि समान न कोय।
मुनि आर्या अर ऐलि ए, लिग तीन शुभ होय ॥२९
भाषी एकादश सवे, प्रतिमा नाम जु मात्र।
अव इनको विस्तार सुनि, ए सव मध्य सुपात्र ॥३०

चौपाई

प्रथम हि दरशन प्रतिमा सुणो, आतमरूप अनूप जु मुणो।
दरशन मोक्ष-बीज है सही, दरशन करि शिव परसन लही ॥३१
दरशन सहित मूलगुण धरै, सात व्यसन मन बच तन हरै।
बिन अरहत देव नहिं कोय, गुरु निरग्रन्थ बिना नहिं होय ॥३२
जीवदया बिन और न धम, इह निहचै करि टारै भर्म।
सजम बिन तप होय न कदा, इह प्रतीति धारै बुध सदा ॥३३
पहली प्रतिमाकौ सो धनी, दरशनवन्त कुमति सब हनी।
आठ मूल गुण व्यसन जु सात, भाषे प्रथम कथनमे भ्रात ॥३४
तातै कथन कियौ अब नाहि, श्रावक बहु आरम्भ तजाहि।
है स्वारथमैं साचौ सदा, कूट कपट धारै नहिं कदा ॥३५
धरै शुद्ध व्यवहार सुधीर, परपीडाहर है जगवीर।
सम्यक् दरशन दृढ करि धरै, पापकर्मकी परणति हरै ॥३६
क्रय विक्रयमैं कसर न कोय, लेन देनमैं कपट न होय।
कियौ करार न लोपै जोहि, सा पहिली पडिमा गुण होहि ॥३७
जाके उर कालिम नहिं रच, जाके घटमै नाहिं प्रपच।
जिनपूजा जप तप व्रत दान, धमध्यान धारे हि सुजान ॥३८
गुण इकतीस प्रथम जे कहै, ते पहली पडिमामैं लहै।
अब सुनि दूजी पडिमाधार, द्वादश व्रत पालै अविकार ॥३९
पच अणुव्रत गुणव्रत तीन, शिक्षाव्रत धारै परवीन।
निरतीचार महामतिवान, जिनकौ पहली कियौ बखान ॥४०
अब तीजी पडिमा सुनि सत, सामायिक धारी गुणवन्त।
मुनिसम सामायिककी वार, थिरताभाव अतुल्य अपार ॥४१
करि तनकौ मनतै परित्याग, भव भोगिनतै होइ विराग।
धरि कायोत्सर्ग वर वीर, अथवा पदमासन धरि धीर ॥४२
षट षट घटिका तीनू काल, ध्यावै केवलरूप विशाल।
सब जीवनिसू समता भाव, पच परम पद सेवै पाव ॥४३
सो सब वर्णन पहली कियौ, बारा वरत कथनमैं लियौ।
चौथी प्रतिमा पोसह जानि, पोसहमै थिरता परवानि ॥४४
सो पोसहकौ सर्व सरूप, आगे गायौ अब न प्ररूप।
पोसा समये साधु समान, होवै चौथी प्रतिमावान ॥४५
दूजी पडिमा धारक जेहि, सामायिक पोसह विधि तेहि।
धारै परि इनकी सम नाहिं, नहिं ऐसी थिरता तिन माहिं ॥४६
तीजी सामायिक निरदोष, चौथी पडिमा पोसह पोष।
पचम पडिमा धरि बडभाग, करै सचित्त वस्तुनिकौ त्याग ॥४७

काचौ जल अर कोरो धान, दल फल फूल तजै वुधिवान।
छाल मूल कन्दादि न चखै, कूपल वीज अकूर न भखै ॥४८
हरितकायको त्यागी होय, जीवदयाको पालक सोय।
सूको फल फोड्या विन नाहिं, लेवौ जोगि न ग्रन्थनि माहिं ॥४९
लोन न ऊपरसे लै धीर, लोन हु सचित्त गिनै वर वीर।
माटी हाथ धोयवे काज, लेय अचित्त दयाके काज ॥५०
खार तथा माटी जो जली, सोई लेय न काची डली।
पृथ्वीकाय विराधै नाहिं जीव असख कहे ता माहिं ॥५१
जलकायाकी पालै दया, सर्व जीवको भाई भया।
अगनिकायसो नाहिं विरोध, दयावन्त पावै निज वोध ॥५२
पवन करै न करावे सोय, षट कायाको पीहर होय।
नाहिं वनस्पति करै विराध, जिनशासनकी धरै अगाध ॥५३
विकलत्रय अर नर तिर्यंच, सवको मित्र रहित परपच।
जो सचित्तको त्यागी होय, दयावान कहिये नर सोय ॥५४
आप भखै नहिं सचित्त कदेय, भोजन सचित्त न औरहिं देय।
जिह्व सचित्तको कीयौ त्याग, जीती जीभ तज्यौ रस-राग ॥५५
दयाधर्म धारयौ तिह वीर, पाल्यौ जैन वचन गम्भीर।
अव सुनि छट्ठी प्रतिमा सन्त, जा विधि भाषी वीर महन्त ॥५६
द्वै मुहूर्त जव वाकी रहै, दिवस तहाते अनशन गहै।
द्वै मुहूर्त जव चढिहै भान, तो लग अनशनरूप वखान ॥५७
दिनमे शील धरै जो कोय, सो छट्ठी प्रतिमाधर होय।
खान पान नहिं रैनि मझार, दिवस नारिको है परिहार ॥५८
पूछै प्रश्न यहाँ भवि लोग, निशिभोजन अर दिनको भोग।
ज्ञानी जीव न कोई करै, छट्ठी कहा विशेष जु धरै ॥५९
ताकौ उत्तर धारौ एह, औरनिको व्रत न्यून गिनेह।
मन वच तन कृत कारित त्याग, करै न अनुमोदन वडभाग ॥६०
तव त्यागी कहिते श्रुति माहि, या माही कछु सशय नाहिं।
गमनागमन सकल आरम्भ, तजै रैनिमे नाहिं अचभ ॥६१
महाधीर वर वीर विशाल, दिनको ब्रह्मचर्य प्रतिपाल।
निरतीचार विचार विशेष, त्यागै पापारम्भ अशेष ॥६२
जैनी जिनदासनि को दास, जिनशासनको करे प्रकाश।
जो निशिभोजन त्यागी होय, छ मासा उपवासी सोय ॥६३
वर्ष एकमें इहै विचार, जावौ जीव लगै विस्तार।
ह्वै उपवासनिको सुनि वीर, तातैं निशिभोजन तजि धीर ॥६४
जो निशिको त्यागै आरम्भ, दिनहू जाके अलपारम्भ।
अव सुनि सप्तम पडिमा धनी, नारिनकू नागिन सम गिनी ॥६५

धारयौ ब्रह्मचर्य व्रत शुद्ध, जिनमारगमें भयो प्रबुद्ध।
निशि वासर नारीको त्याग, तज्यौ सकल जाने अनुराग ॥६६
मन वच काय तजी सव नारि, कृत कारित अनुमोद विचारि।
योनिरध्र नारीको महा, दुरगति-द्वार इहै उर लहा ॥६७
इन्द्राणी चक्राणी देखि, निंद्य वस्तु सम गिनै विशेष।
विषय-वासनामे नहिं राग, जाने भोग जु काले नाग ॥६८
विषय-मगनता अति हि मलीन, विपयी जगमे दीखै दोन।
विषय समान न वैरी कोय, जीवनिकूं भरमावै सोय ॥६९
शील समान न सार न कोय, भवसागर तारक है सोय।
अब सुनि अष्टम पडिमा भेद, सर्वारम्भ तजै निरखेद ॥७०
आप करै नहिं कछु आरम्भ, तजै लोभ छल त्यागै दभ।
करवावै न करै अनुमोद साधुनिको लखि धरै प्रमोद ॥७१
मन वच काय शुद्ध करि सत, जग धधा धारै न महत।
जीव घाततें काप्यौ जोहि, सो अष्टम पडिमाधर होहि ॥७२
असि मसि कृषि वाणिज इत्यादि, तजै जगत कारज गति वादि।
जाय पराये जीमै सोइ, गृह आरम्भ कछू नहिं होइ ॥७३
कहि करवावै नाही वीर, सहज मिलै तो जीमे धीर।
ले जावै कुल किरियावन्त, ताके भोजन ले बुधिवन्त ॥७४
जगत काज तजि आतम काज, करै सदा ध्यावै जिनराज।
दया नही आरम्भ मँझार, करि आरम्भ भ्रमै ससार ॥७५
तातें तजै गृहस्थारभ, जीवदयाकौ रोप्यौ थभ।
करि कुटुम्बको त्याग सुजान, हिंसारम्भ तजै मतिवान ॥७६
दया समान न जगमे कोइ, दया हेत त्यागै जग सोइ।
अब नवमी प्रतिमा कौ रूप, धारौ भवि तजि जगत विरूप ॥७७
नवमी पडिमा धारक धीर, तजै परिग्रहका वर वीर।
अन्तरगके त्यागै सग, रागादिकको नाहिं प्रसग ॥७८
वाहिरके परिग्रह घर आदि, त्यागै सर्व धातु रतनादि।
वस्त्र मात्र राखै बुधिवन्त, कनकादिक भेटै न महत ॥७९
वस्त्र हु वहु मोले नहिं गहै, अलप वस्त्र ले आनन्द लहै।
परिग्रहको जानै दु खरूप, इह परिग्रह है पापस्वरूप ॥८०
जहा परिग्रह लोभ तहा हि, या करि दया सत्य विनशाहि।
हिंसारम्भ उपावे एह, या सम और न शत्रु गिनेह ॥८१
तजै परिग्रह सो हि सुजान, तृष्णा त्याग करै बुधिवान।
जाकी चाह गई सो सुखी, चाह करै ते दोखैं दुखी ॥८२
वाहिज ग्रन्थ-रहित जग माहि, दारिद्री मानव शक नाहिं।
ते नहिं परिग्रह-त्यागी कहैं, चाह करते अति दुख लहैं ॥८३

जे अभ्यन्तर त्यागै संग, मूर्च्छा रहित लहैं निजरंग।
ते परिग्रहत्यागी हैं राम, वांछा-रहित सदा सुखधाम ॥८४
ज्ञानी बिन भीतरको संग, और न त्यागि सकैं दुख अंग।
राग-द्वेष मिथ्यात विभाव, ए भीतरके संग कहाव ॥८५
तजि भीतरके बाहिर तजै, सो बुध नवमी पडिमा भजै।
वस्त्र मात्र है परिग्रह जहाँ, धातुमात्रको लेश न तहाँ ॥८६
नर्म पूजणी धारै धीर, षट कायनिको टारै पीर।
जल-भाजन राखे शुचि-काज त्यागै धन धान्यादि समाज ॥८७
काठ तथा माटीको जोय, और पात्र राखै नहिं कोय।
जाय बुलायो जीमे जोय, श्रावकके घर भोजन होय ॥८८
दशमी प्रतिमा-धर बडभाग, लौकिक वचनथको नहि राग।
बिना जैनबानी कछु बोल, जो नहिं बोलै चित्त अडोल ॥८९
जगत काज सब ही दुखरूप, पापमूल परपञ्च स्वरूप।
तातैं लौकिक वचन न कहै, जिनमारगकी सरधा गहै ॥९०
मौन गहै जगसेती सोय, सो दशमी पडिमाधर होय।
श्रुति अनुसार धर्मकी कथा करै जिनेश्वर भाषी यथा ॥९१
जगतकाजको नहिं उपदेश, ध्यावै धीरज धारि जिनेश।
बोलै अमृत बानी बीर, षट कायनिकी टारै पीर ॥९२
तजै शुभाशुभ जगके काम, भयो कामना-रहित अकाम।
जे नर करै शुभाशुभ काज, ते नहिं लहैं देश जिनराज ॥९३
राग-द्वेष कलहके धाम, दीसैं सकल जगतके काम।
जगतरीतिमें जे नर बसा, सो नहिं पावै उत्तम दसा ॥९४
दशमी पडिमा धारक सन्त, ज्ञानी ध्यानी अति मतिवन्त।
गिनैं रतन-पाहन सम जेह, तृण-कंचन सम जाने तेह ॥९५
शत्रु-मित्र सम राजा-रंक, तुल्य गिनैं मनमें नहिं संक।
बांधव-पुत्र कुटुम्ब धनादि, तिनकूं भूलि गये गनि वादि ॥९६
जानैं सकल जीव समरूप, गई विषमता भागि विरूप।
पर घर भोजन करैं सुजान, श्रावककुल जो किरियावान ॥९७
अल्प अहार तहा लें धीर, नहिं चिन्ता धारैं वर वीर।
कोमल पीछी कमडल एक, बिना धातुको परम विवेक ॥९८
इक कोपिन कणगती लया, छह हस्ता इक वस्त्र हु भया।
इक तह एक पाटको जोय, यही रीति दशमीकी होय ॥९९
जिन शासनको है अभ्यास, आगम अध्यातम अध्यास।
अब सुनि एकादशमी धार, सबमें उत्कृष्टे निरधार ॥१००
वनवासी निरदोष अहार, कृत कारित अनुमोदन कार।
मन वच काय शुद्ध अविकार, सो एकादश पडिमा धार ॥१

ताके दोय भेद हैं भया, क्षुल्लक ऐलिक श्रावक लया।
क्षुल्लक खण्डित कपडा धरै, अरु कमण्डल पीछी आदरै ॥२
इक कोपीन कणगतो गहै, और कछू नहिं परिग्रह चहै।
जिनशासनकौ दासा होय, क्षुल्लक ब्रह्मचारि है सोय ॥३
ऐलि धरें कोपीन हि मात्र अर इक शौचतनू है पात्र।
कोमल पीछी दया निमित्त, जिनवानीकौ पाठ पवित्त ॥४
पत्र धरनिमे एक धरेंहिं, भोजन मुनिकी भाँति करेंहिं।
ये है चिदानन्दमैं लीन, धर्मध्यानके पात्र प्रवीन ॥५
क्षुल्लक जीमैं पात्र मँझार, ऐलि करैं करपात्र अहार।
मुनिवर ऊभा लेय अहार, ऐलि अर्यिका वैठा सार ॥६
क्षुल्लक कतरावै निज केश, ऐलि करें शिरलोच अशेष।
पहली पडिमा आदि जु लेय, क्षुल्लकलो व्रत सबकू देय ॥७
श्रीगुरु तीन वर्ण विन कदे, नहिं मुनि ऐलितनें व्रत दे।
पहलीसौं छट्ठीलो जेहि, जघन्य श्रावक जानो तेहि ॥८
सप्तमि अष्टमि नवमी धार, मध्य सरावक है अविकार।
दशमी एकादशमीवन्त, उतकृष्टे भाषें भगवन्त ॥९
तिनहूमे ऐलि जु निरधार, ऐलिथकी मुनि बडे विचार।
मुनिगणमे गणधर हैं वडे, ते जिनवरके सनमुख खडे ॥१०
जिनपति शुद्धरूप हैं भया, सिद्ध परें नहिं दूजो लया।
सिद्ध मनुज विन और न होय, चहुगतिमें नहिं नर सम कोय ॥११
नरमें सम्यकदृष्टी नरा, तिनतें वर श्रावक व्रत धरा।
षोडश स्वर्गलोकलो जाहिं, अनुक्रम मोक्षपुरी पहुचाहिं ॥१२
पचमठाणे ग्यारा भेद, धारें तेहि करें अघछेद।
इह श्रावककी रीत्ति जु कही, निकट भव्य जीवनिनें गही ॥१३
ऊपरि ऊपरि चढते भाव, विरकतभाव अधिक ठहराव।
नीव होय मन्दिरके यथा, सर्व व्रतनिके सम्यक तथा ॥१४

अथ दान वर्णन। दोहा

प्रतिमा ग्याराकौ कथन, जिन आज्ञा परवान।
परिपूरण कीनूं भया, अब मुनि दान वखान ॥१५
कियौ दान वरणन प्रथम, अतिथिविभाग के माहिं।
अबहू दान प्रवन्ध कछु, कहिहा दूषण नाहिं ॥१६

मनोहर छन्द

ए मूढ अचेता कछु इक चेतौ, आखिर जगमैं मरना है।
धन रह ही इहा हो मग न जाही, तातैं दान सु करना है ॥१७

आवरण विघन वेदनी स्थिति ए, सुणे सुन्दरे, सागर कोडाकोडि तेत्रीस । मा०
सत्तरि मोहनी वीस नाम गोत्र ए, सुणे सुन्दरे, आयु सागर तेत्रीस ॥४७
अनुभाग उदयरसरूप ए, सुन्दरे, सुख देई प्रकृति प्रशस्त । मा०
गुड खाड साकर अमृत समए, सुणे सुन्दरे, फल सुख देई समस्त । मा० ॥४८
अप्रशस्त विपाक वसि ए, सुणे सुन्दरे, जीव लहे असुक्ख । मा०
नीव काजीर, विष हालाहल ए, सुणे सुन्दरे, अशुभकर्म वहुदुक्ख । मा० ॥४९
असखप्रदेशी आतमा ए मुणे सुन्दरे प्रदेश प्रति कर्म अनन्त । मा०
परस्पर मिलि रहिए, सुणे सुन्दरे, प्रदेशवन्ध दुरन्त । मा० ॥५०
बँधनें बन्ध्यो जिम चोर ए, सुणे सुन्दरे, परवसि पामे कष्ट । मा०
तिम ए जीव कर्मबन्धी ए, सुणे सुन्दरे, दुःख देखे निकृष्ट । मा० ॥५१
प्रकृत्ति प्रदेश वन्ध विधि ए, सुणे सुन्दरे, योग विशेषी होय । मा०
स्थिति अनुभाग कषाय वसें ए, सुणे सुन्दरे, इण परिवन्धनु जोय । मा० ॥५२
कर्मास्रव जे रुधिइ ए, सुणे सुन्दरे, ते सवर वखाणि । मा०
घडनाला जिम रुधीइ ए, सुणे सुन्दरे, आवे नही नव पाणि । मा० ॥५३
नाव छिद्र जिम रुधीइ ए, सुणे सुन्दरे, आवे न नीर लगार । मा०
मण वय काया तिम रुधीइ ए, सुणे सुन्दरे, न वि होइ कम पसार । मा० ॥५४
सूको तुबू जिम जल तिरे ए, सुणे सुन्दरे, ज्यो नही गर्वनो भार । मा०
तिम कमसहु सोखीइ ए, सुणे सुन्दरे, जीव तिरे ससार । मा० ॥५५
सविपाक अविपाक निर्जरा ए, सुणे सुन्दरे, सहजि सविपाक जोइ । मा०
ससारी सहु प्राणी ते ए, सुणे सुन्दरे, कम जाइ वली होइ । मा० ॥५६
यती व्रती ध्यान वली ए, सुणे सुन्दरे, जे करे कर्मनी हाणि । मा०
तीव्र तप जे कम गलिए, सुणे सुन्दरे, ते अविपाक मन आणि । मा० ॥५७
जिम जिम जीव कर्म निजरि ए, सुणे सुन्दरे, तिम तिम ऊर्ध्व स्वभाव । मा०
भार विना जिम नीरमाहे ए, सुणे सुन्दरे, ऊँची दीसे नाव । मा० ॥५८
कमरुधि सवर हुई ए, सुणे सुन्दरे, कर्मक्षये निर्जरा जोय । मा०
सवर निर्जरा मोक्ष हेत ए, सुणे सुन्दरे, काललब्धि भव्ये होय । मा० ॥५९
सव कर्मक्षय जे हेतु ए, सुणे सुन्दरे, परिणाम भावे मोक्ष । मा०
जीवथी पृथक् कम जे कीजिए, सुणे सुन्दरे, ते द्रव्ये सिद्धि सोक्ख । मा० ॥६०
शुक्लध्यान अव ध्यायता ए, सुणे सुन्दरे, जे होइ कमविनाश । मा०
केवलज्ञान तव ऊपजे ए, सुणे सुन्दरे, लोकालोक प्रकाश । मा० ॥६१
अगघात सहु परिहरो ए, सुणे सुन्दरे, जे पामे शाश्वत ठाम । मा०
क्षायिक पच परम भाव ए, सुणे सुन्दरे, ते मोक्ष कहीए उद्दाम । मा० ॥६२
इन्द्र आदि जे भोगवे ए, सुणे सुन्दरे, हुव होइ छे हसे जेह । मा०
तेहना सुक्ख थी अनन्तगुणु ए, सुणे सुन्दरे, एकसमय लहे ते सिद्धगेह । मा० ॥६३
तत्त्व सात इमउ लखो ए, सुणें सुन्दरे, निज द्रव्य गुण पर जाय । मा०
जिन वाणीमे जिम कह्यो ए, सुणे सुन्दरे, ते तिम निश्चल ध्याय । मा० ॥६४

विन दान न सिद्धी ह्वै अघवृद्धी, दुरगति दुख अनुसरना है।
करपणता धारी शठमति भारी, तिनहिं न सुभ गति वरना है ।।१८
यामैं नहिं ससा नृप श्रेयसा, कियउ दान दुख हरना है।
सो ऋषभ प्रतापें त्याग त्रितापे, पायौ धाम अमरना है ।।१९
श्रीषेण सुराजा दान प्रभावा, गहि जिनशासन सरना है।
लहि सुख बहु भाती ह्वै जिन शाती, पायो वर्ण अवर्णा है ।।२०
इक अकृतपुण्या कियउ सुपुण्या, लहिउ तुरत जिय मरना है।
ह्वै धन्यकुमारा चारित धारा, सरवारथ सिधि धरना है ।।२१
सूकर अर नाहर नकुल रु वानरु, नमि चारन मुनि चरना है।
करि दान प्रशसा लहि शुभ वशा, हरै जनम जर मरना है ।।२२

दोहा

वज्रजघ अर श्रीमती, दानतनैं परभाव।
नर सुर सुख लहि उत्तमा, भये जगत की नाव ।।२३
वज्रजघ आदीश्वरा, भए जगतके ईश।
भये दानपति श्रीमती, कुल कर माँहि अधीश ।।२४
अन्नदान मुनिराजको, देत हुते श्रीराम।
करि अनुमोदन गीध इक, पछी अति अभिराम ।।२५
भयौ धर्मथी अणुव्रती, कियौ रामकौ सग।
राममुखे जिन नाम सुनि लह्यो स्वर्ग अतिरग ।।२६
अनुक्रम पहुँचैगो भया, राम सुरग वह जीव।
धारैगौ निजभाव सहु, तजिकै भाव अजीव ।।२७
दानकारका अमित ही, सीझे भवथी भ्रात।
बहुरि दान अनुमोदका, को लग नाम गिनात ।।२८
पात्रदान सम दान अर, करुणादान बखान।
सकल दान है अन्तिमो, जिन आज्ञा वरवान ।।२९
आपथकी गुण अधिक जो, ताहि चतुरविधि दान।
देवौ है अति भक्ति करि, पात्रदान सो जान ।।३०
जो पुनि सम गुन आपतैं, ताको दैनो दान।
सो समदान कहैं बुधा, करिकै बहु सनमान ।।३१
दुखी देखि करुणा करै, देवै विविध प्रकार।
सो है करुणादान शुभ, भाखै मुनिगणधार ।।३२
सकल त्यागि ऋषिव्रत धरै, अथवा अनशन लेइ।
सो है सकल प्रदानवर, जाकरि भव उतरेइ ।।३३
दान अनेक प्रकारके, तिनमैं मुखिया चार।
भोजन औषधि शास्त्र अर, अभयदान अविकार ।।३४

तिनकौ वर्णन प्रथम ही, अतिथि विभाग मझार।
कियौ अवै पुनरुक्तके, कारण नहिं विसतार ॥३५

सप्तक्षेत्र वर्णन

जो करवावै जिनभवन, धन खरचै अधिकाय।
सो सुर नर सुख पायकै, लहै धाम जिनराय ॥३६
जो करवावै विधिथकी, जिनप्रतिमा बुधिवन्त।
मन्दिरमें पधरावई, सो सुख लहै अनन्त ॥३७
यव-समान जिनराजकी, प्रतिमा जो पधराय।
किंदूरीसम देहुरो, सोहू धन्य कहाय ॥३८
शिखर बध करवावई, जिन चैत्यालय कोय।
प्रतिमा उच्च करावई, पावै, शिवपुर सोइ ॥३९
जल चदन अक्षत पहुप, अर नैवेद्य सुदीप।
धूप फलनि जिन पूजई, सो ह्वै जग अवनीप ॥४०
जो देवल करि विधिथकी, करै प्रतिष्ठा धीर।
सुर नर पतिके भोग लहि, सो उतरै भवतीर ॥४१
जो जिन तीरथको महा, यात्रा करै सुजान।
सफल जनम ताही तनो, भाषै पुरुष प्रधान ॥४२
चउ अनुयोगमई महा, द्वादशाग अविकार।
सो जिनवाणी है भया, करै जगतथी पार ॥४३
ताके पुस्तक बोधकर, लिखै लिखावै शुद्ध।
धन खरचै या वस्तु मे, सो होवै प्रतिवुद्ध ॥४४
ग्रन्थनिकू पूठे करै, करवावै धरि चित्त।
भले भले वस्त्रनि विषैं, राखै महा पवित्त ॥४५
जीरणि ग्रन्थनिके महा, जतन करै बुधिवान।
ज्ञानदान देवै सदा, सो पावै निरवान ॥४६
जीरण जिनमदिरतणी, मरमत जो मतिवान।
करवावै अति भक्ति सो, सो सुख लहै निदान ॥४७
शिखर चढावै देहुरा, धन खरचै या भाति।
कलश धरै जिनमदिरा, पावै पूरण शाति ॥४८
छत्र चमर घटादिका, बहु उपकरणा कोय।
पधरावै चैत्यालये, पावै शिवपुर सोय ॥४९
दीप करावै द्रव्य दे, धवलावै जिनगेह।
धुजा चढ़ावै देवलो, पावै धाम विदेह ॥५०

जो जिनमदिर कारनें, धरती देय सु वीर।
सो पावै अष्टम धरा, मोक्ष काम गभीर ॥५१
चउविधि सघनिकी भया, मन वच तनकरि भक्ति।
करे हरे पीरा सबै, सो पावै निजशक्ति ॥५२
सप्त क्षेत्र ये धर्मके, कहे जिनागमरूप।
इनमैं धन खरचे बुधा, पावै वित्त अनूप ॥५३

अथ वचनिका

प्रतिमा करावैं, देवल करावै, पूजा तथा प्रतिष्ठा करै, जिन तीरथकी यात्रा करै शास्त्र लिखावै, चउविधि सघकी भक्ति करै ए सप्त क्षेत्र जानि। यहा कोई प्रश्न करै, प्रतिमाजी अचेतन छै, निग्रह अनुग्रह करवा समर्थ नाही, सो प्रतिमाका सेवनथकी स्वर्गमुक्ति फलप्राप्ति किसी भाँति होय ? ताका समाधान। प्रतिमाजी शात स्वरूपने धार्या छै ध्यानकी रीतिने दिखावे छै। दृढ आसन, नासाग्र दृष्टी, नगन, निराभरण, निर्विकार जिसी भगवानको साक्षात् स्वरूप छै तिस्यो प्रतिमाजीने देख्या यादि आवै छै। परिणाम ऐते निर्मल होइ छै। अर श्रीप्रतिमाजीने सागोपाग अपना चितमैं ध्यावै तो वीतराग भावने पावैं। यथा स्त्रीको मूरति चित्रामकी, पाषाणकी काष्ठादिककी देखि विकारभाव उपजे छै, तथा वीतरागकी प्रतिमाका दर्शनथकी ध्यानथकी निर्विकार चित्त होइ छै। अर आन देवकी मूरति रागी द्वेषी छै। उन्मादने धारै छै। सो वाका दरशन ध्यान करि राग द्वेष उन्माद वधै छै। तीसौं आराधवा जोग्य, दरसन जोग्य, ध्यान जोग्य जिन प्रतिमा ही छै। जीवाने भुक्ति, मुक्तिदाता छै। यथा कलपवृक्ष, चितामणि औषधि मन्त्रादिक सर्व अचेतन छै, पणि फलदाता छै, तथा भगवतकी प्रतिमा अचेतन छै, परन्तु फलदाता छै। ज्ञानी तो एक शातभावका अभिलाषी छै। सो शातभावने जिनप्रतिमा मूर्तवन्त दिखावे छै। तीसू ज्ञानी जनाने सदा वन्दिवा ध्यावा जोग्य छे। अर जगतका प्राणी ससारीक भोग चावै छै। सो जिनप्रतिमाका पूजनथकी सर्व प्राप्ति होय छै। ऐसो जानि, हित मानि, सशय भानि जिनप्रतिमाकी सेवा जोग्य छै।

कवित्त

श्रीजिनदेवतनी अरचा अर साधु दिगम्बरकी अतिसेव।
श्रीजिनसूत्र सुनैं गुरु सन्मुख, त्यागैं कुगुरु कुधर्म कुदेव ॥५४
धारै दान शील तप उत्तम, ध्यावै आतमभाव अछेव।
सो सब जीव लखै आपन सम, जाके सहज दयाकी टेव ॥५५
दानतनी विधि है जु अनन्त, तामैं महि मुख्य किमिच्छक दाना।
ताके अथ सुनू मनवांछित, दान करै भवि सूत्र प्रवाना ॥५६
तीरथकारक चक्र जु धारक, देहि सकैं इह दान निधाना।
और सबै निज शक्ति प्रमाण, करैं शुभ दान महा मतिवाना ॥५७

सोरठा

कोउ कुबुद्धी कूर, चितवै चितमें इह भया।
लहिहौं धन अतिपूर, तब करिहूं दानहि विधी ॥५८

अब तो धन कछु नाहिं, पास हमारे दानको ।
किस विधि दान कराहिं, इन मनमे धरि कृपण ह्वै ॥५९
यो न विचारै मूढ, शक्ति प्रमाणें त्याग है ।
होय धम आरूढ, करे दान जिनवैन सुनि ॥६०
कछु हू नाहिं जुरै जु, तौहू रोटी एक ही ।
ज्ञानी दान करै जु, दान विना घृग जनम है ॥६१
रोटी एक हु माहिं, तोहू रोटी आध ही ।
जिनमारगके माहिं, दान विना भोजन नहीं ॥६२
एक ग्रास ही मात्र, देवै अतिहि अशक्त जो ।
अर्ध ग्रासही मात्र, देवै, परि नहि कृपण ह्वै ॥६३
गेह मसान समान, भाषै किरपणको श्रुति ।
मृतक समान वखान, जीवत ही कृपणा नरा ॥६४
जानौ गृद्ध समान, ताके सुत दारादिका ।
जो नहि करै सुदान, ताको धन आमिष समा ॥६५
जैसे आमिष खाय, गिरध मसाणा मृतकको ।
तैसे धन विनशाहिं, कृपणतनो सुत-दारका ॥६६
सबको देनौ दान, नाकारौ नहि कोइसू ।
करुणाभाव प्रधान, सब ही आतमराम हैं ॥६७
सब ही प्राणिनको जु, अन्न वस्त्र जल औषधी ।
सूखे तृण विधिसो जु, देनें तिरजचानिको ॥६८
गुनी देखि अति भक्ति, भावथकी देनौ महा ।
दान भुक्ति अरु मुक्ति, कारण मूल कहैं गुरु ॥६९
पर परिणतिकौ त्याग, ता सम आन न दान कोउ ।
देहादिकको राग, त्यागें ते दाता बडे ॥७०
कह्यौ दान परभाव, अब सुनि जलगालण विधी ।
छाडौ मुगध स्वभाव, जलगालण विधि आदरौ ॥७१

जलगालण विधि । अडिल्ल छन्द

अब जल गालन रीति सुनौ बुध कान दे,
जीव असखिनिको हि प्राणको दान दे ।
जो जल बरतै छाणि सोहि किरिया धनी,
जलगालणकी रीति धर्ममे मुख भनी ॥७२
नूतन गाढौ वस्त्र गुडी बिनु जो भया,
ताको गलनो करै चित्त धरिके दया ।
डेढ हाथ लम्बो जु हाथ चौरो गहै,
ताहि दुपडतो करै छाणि जल सुख लहै ॥७३

वस्त्र पुरानो अवर रगको नातिना,
राखै तिनतैं ज्ञानवन्तकी पाति ना ।
छाणन एक हु बूद महीपरि जो परै,
भाषैं श्रीगुरुदेव जीव अगणित मरैं ॥७४

वरतैं मूरख लोग अगाल्यौ नीर जे, तिनको केतौ पाप सुनो नर धीर जे ।
असी बरसलो पाप करै धीवर महा, अवर पारधी मील वागुरादिक लहा ॥७५
तेतो पाप लहैं जु एक ही वार जे, अणछाण्यू वरतें हि वारि तनधार जे ।
ऐसौ जानि कदापि अगाल्यौ तोय जी, वरतौ मति ता माहि महा अघहोय जी ॥७६

मकरीके मुखथकी तन्तु निकसैं जिसौ, अति सूक्षम जो वीर नीर कृमि है तिसी ।
तामे जीव असखि उडैं ह्वै भ्रमर ही जम्बूद्वीप न माय जिनेश्वर यो कही ॥७७
शुद्ध नातणे छाणि पान जलको करै, छाण्या जलथी धोय नातणो जो धरै ।
जतनथकी मतिवन्त जिवाण्यू जलविषैं, पहुँचावै सो धन्य श्रुतविषै यू लिखैं ॥७८
जा निर्वाणको होय नीर ताही महै, पधरावैं बुधिवान परम गुरु यो कहे ।
ओछैं कपडे तीर गालही जे नरा, पावैं ओछी योनि कहे मुनि श्रुतधरा ॥७९
जलगालन सम किरिया और नाही कही, जलगालणमें निपुण सोहि श्रावक सही ।
चउथी पडिमा लगें लेई काचौ जला, आगे काचौ नाहि प्रासुको निर्मला ॥८०
जाण्यू काचौ नीर इकेन्द्रो जानिये, द्वै घटिका असजीव रहित सो मानिये ।
प्रासुक मिरच लवग कपूरादिक मिला, बहुरि कसेला आदि वस्तुतें जो मिला ॥८१
सों लेनो दोय पहर पहली ही जैनमे, आगें त्रस निपजन्त कह्यौ जिनवैनमे ।
तातौ भात उकालि वारि वसु पहर ही, आगे जगम जीवहु उपजै सहज ही ॥८२

चौपाई

जे नर जिन आज्ञा नहिं जानैं, चित्तमे आवैं सो ही ठानैं ।
भात उकाल करैं नहिं पानी, कछू इक उष्ण करैं मनमानी ॥८३
ताहि जु वरतै अष्टहि पहरा, ते व्रत वर्जित अर श्रुति वहरा ।
मरजादा माफिक नहिं सोई, ऐसें वरतो भवि मति कोई ॥८४
जो जन जैनधर्म प्रतिपाला, ता घरि जलकी है इह चाला ।
काचौ प्राशुक तातौ नीरा, मरजादामे वरतै वीरा ॥८५
प्रथमहि श्रावकको आचारा, जलगालण विधि है निरधारा ।
जे अणछाण्यो पीवैं पाणी, ते धीवर वागुर सम जाणी ॥८६
विन गाल्यो औरै नहिं प्याजे, अभख न खाजे और न ख्वाजे ।
तजि आलस अर सब परमादा, गालै जल चित धरि अहलादा ॥८७
जलगालण नहिं चित करै जो, जल छाननमैं चित धरै जो ।
अणछाण्याकी बूद हु धरती, नाखै नही कदाचित वरती ॥८८
वून्द परैं तौ ले प्रायश्चित्ता, जाके घटमैं दया पवित्ता ।
यह जलगालणकी विधि भाई, गुरु आज्ञा अनुसार वताई ॥८९

निशि-भोजनका दोष । दोहा

अब सुनि रात्रि अहारका, दोष महा दुखदाय ।
द्वै मुहुरत दिन जब रहै, तबतैं त्याग कराय ॥९०
दिवस मुहूरत द्वै चढे, तबलो अनसन होय ।
निशि अहार परिहार सो, व्रत न दूजौ कोय ॥९१
निशिभोजनके त्यागतैं, पावै उत्तम लोक ।
सुर नर विद्या धरनके, लहै महासुख थोक ॥९२
जे निशि भोजन कारका, तेहि निशाचर जानि ।
पावै नित्य निगोदके, जनम महा दुखखानि ॥९३
निशि वासरको भेद नहि, खात तृप्ति नहि होय ।
सो काहेके मानवा, पशुहूतै अधिकोय ॥९४
नाम निशाचर चारको, चोर समाना ते हि ।
चरै निशाको पापिया, हरै धर्ममति जे हि ॥९५
बहुरि निशाचर नाम है, राक्षसको श्रुतिमाहि ।
राक्षस सम जो नर कुधी, रात्रि अहार कराहि ॥९६
दिन भोजन तजि रैनिमैं, भोजन करै विमूढ ।
ते उलूक सम जानिये, महापाप आरूढ ॥९७
मास अहारी सारिखे, निशिभोजी मतिहीन ।
जनम जनम या पापतै, लहैं कुगति दुखदीन ॥९८

नाराच छन्द

उलूक काक औ विलाव श्वान गर्दभादिका,
गहै कुजन्म पापिया जु ग्राम शूकरादिका ।
कुछारछोवि १ माहि कीट होय रात्रिभोजका,
तजै निशा अहारको विमुक्ति पथ खोजका ॥९९
निशा महैं करें अहार ते हि मूढधी नरा,
लहैं अनेक दोषकू सुधर्महीन पामरा ।
जु कीट माछरादिका भखै अहार माहि ते,
महा अधर्म धारिके जु नर्क माहि जाहि ते ॥२००॥

छन्द चाल

निशिमाही भोजन करही, ते पिंडु अभखते मरही ।
भोजनमैं कीडा खाये, ताते बुधि मूल नशाये ॥१
जो जूका उदरें जाये, तौ रोग जलोदर पाये ।
माखी भोजनमैं आवै, ततखिन सो वमन उपावै ॥२
मकरी आवै भोजनमैं, तौ कुष्ट रोग होय तनमे ।
कटक अरु काठजु खडा, फसि है जा गलें परचडा ॥३

तौ कठविथा विस्तारे, इत्यादिक दोष निहारै।
भोजनमें आवै वाला, सुर भग होय ततकाला ॥४
निशिभोजन करके जीवा, पावै दुख कष्ट सदीवा।
होवै अति ही जु विरूपा, मनुजा अति विकल कुरूपा ॥५
अति रोगी आयुस थोरा, ह्वै भागहीन निरजोग।
आदर-रहिता सुख-रहिता, अति ऊँच-नीचता सहिता ॥६
इक बात सुनो मन लाई, हथनापुर पुर है भाई।
तामें इक हूतौ विप्रा, मिथ्यामत धारक लिप्रा ॥७
रुद्रदत्त नाम है जाकौ, हिंसामारग मत ताकौ।
सो रात्रि-अहारी मूढा, कुगुरुनिके मत आरूढा ॥८
इक निशिको भोदू भाई, रोटीमें चीटी खाई।
वै गनमें मीडक खायौ, उत्तम कुल तिह विनशायौ ॥९
कालान्तर तजि निज प्राणा, सो घूघू भयौ अयाणा।
पुनि मरि करि गयौ जु नर्का, पायौ अति दुख सम्पर्का ॥१०
नीसरि नरकजुतैं कागा, वह भयौ पाप-पथ लागा।
वहुरैं नर्कजुके कष्टा, पायौ ताने जु सपष्टा ॥११
पुनि भयौ विडाल सु पापी, जीवनिकू अति संतापी।
सो गयौ नर्कमें दुष्टा, हिंसा करिके वो पुष्टा ॥१२
तहातैं जु भयौ वह गृद्धा, पुनि गयौ नर्क अघवृद्धा।
नर्कजुतैं नीसरि पापी, हूवो पसु पाप-प्रतापी ॥१३
वहुरैं जु गयौ शठ कुगती, घोर जु नर्क अति विमती।
नीसरिकै तिरजंच हूवौ, वहु पाप करी पशु मूवौ ॥१४
पुनि गयौ नर्कमे कुमती, नारकतैं अजगर अमती।
अजगरतैं वहुरी नर्का, पायौ अति दुख सम्पर्का ॥१५
नर्कजुतैं भयौ वघेरा, तहा किये पाप वहुतेरा।
वहुरैं नारकगति पाई, तहातैं गोवा पशु जाई ॥१६
गोवातैं नर्क निवासा, नारकतैं मच्छ विभासा।
सो मच्छ नरकमें जायौ, नारकमैं वहु दुख पायौ ॥१७
नारकतें नीसरि सोई, वहुरी द्विजकुलमे होई।
लोमस प्रोहितको पुत्रा, सो धर्मकर्मके शत्रा ॥१८
जो महीदत्त है नामा, सातो विसनजुसो कामा।
नग्रजुतैं लह्यौ निकासा, मामाके गयौ निरासा ॥१९
मामे हू राख्यौ नाही, तब काशीके वनमाही।
मुनिवर भेटे निरग्रन्था, जे देहि मुकतिको पन्था ॥२०
ज्ञानी ध्यानी निजरत्ता, भव-भोग-शरीर-विरत्ता।
जानैं जनमान्तर वातें, जिनके जियमे नहि घातें ॥२१

तिनको लखि द्विज शिर नायौ, सब पापकर्म विनशायौ।
पूछी जनमान्तर बाता, जा विधि पाई बहु घाता ॥२२
सो मुनिने सारी भाखी, कछु बात चीच नहिं राखी।
निशिभोजन सम नहिं पापा, जाकरि पायौ दुखतापा ॥२३
सुनि करि मुनिवरके बैना, ब्राह्मण धार्यो मत जैना।
सम्यक्त अणुव्रत धारी, श्रावक हूवौ अविकारी ॥२४

दोहा

मात पिता अति हित कियौ, दियौ भूप अति मान।
पुण्य उदय लक्ष्मी अतुल, पाप किये बहु हान ॥२५

चौपाई

पूजा करै जपै अरहन्त, महीदत्त हूवौ अतिमन्त।
जिनमन्दिर जिनबिम्ब रचाय, करी प्रतिष्ठा पुण्य उपाय ॥२६
सिद्धक्षेत्र वन्दै अधिकाय, जिनसिद्धात सुनै अधिकाय।
केतौ काल गयौ इह भांति, समय पाय धारी उपशांति ॥२७
शुभ भावनितैं छाडै प्रान, पायो षोडश स्वर्ग विमान।
ऋद्धि महा अणिमादिक लई, आयु बीस द्वै सागर भई ॥२८
चयौ स्वर्ग थी सो परवीन, राजपुत्र हूवौ शुभ लीन।
देश अवन्ती उत्तम बसै, नगर उजैणी अति ही लसै ॥२९
तहा नरपती पृथ्वीमल्ल, जिनधर्मी सम्यक्ति अचल्ल।
प्रेमकारिणी रानी महा, ताके उदर जन्म सो लहा ॥३०
नाम सुधारस ताकौ भयौ, मात पिता अति आनन्द लयौ।
अनुक्रम वर्ष सातको जबै, विद्या पढने सोप्यौ तबै ॥३१
शस्त्र शास्त्रमे बहु परवीण, भयौ अणुव्रती समकित लीन।
जोवनवत भयौ सुकुमार, व्याह कियौ नहिं धर्म सम्हार ॥३२
एक दिवस वनक्रीडा गयौ, वडतरु विजुरीतै क्षय भयौ।
ताको लखि उपनो वैराग, अनुप्रेक्षा चितई वडभाग ॥३३
चन्द्रकीर्ति मुनिके ढिग जाय, जिनदाक्षा लीनी शिर नाय।
अभ्यन्तर बाहिर चौबीस, ग्रन्थ तजे मुनिकू नमि शीश ॥३४
पच महाव्रत गुप्ति जु तीन, पच समिति धारी परवीन।
सुकल घ्यान करि कर्म विनाशि, केवल पायौ अति सुखराशि ॥३५
वहुत भव्य उपदेशे जिनें, आयुकर्म पूरण करि तिनें।
शेष अघातियको करि नाश, पायौ मोक्षपुरी सुखवास ॥३६
निशि भोजनतैं जे दुख लये, अर त्यागेतैं सुख अनुभये।
तिनके फलको वणन करी, कथा अणणमी पूरण करी ॥३७

छप्पय

इक चडालो सुरझि व्रत सेठनिपैं लीयौ।
मन वच तन दृढ़ होय त्यागि निशिभोजन कीयौ॥
व्रततनो परभाव त्याग तन अतिज जाया।
वाही सेठनिके जु उदर उपनी वर काया।
गहि जैनधर्म धरि शीलव्रत, पापकर्म सब ही दहा।
लहि सुरगलोक नरलोक सुख, लोकसिखरकौ पथ गहा॥३८
एक हुतौ जु श्रृगाल कर सुदरशन मुनिराया।
त्यागौ निशि को खान पान जिनधर्म सुहाया।
मरि करि हूवौ सेठ नाम प्रीतकर जाकौ।
अदभुत रूपनिधान धर्ममैं अति चित ताकौ।
भयौ मुनीश्वर सब त्यागिकै, केवल लहि शिवपुर गयौ।
नहिं रात्रिभुक्ति परित्याग सम, और दूसरो व्रत लयौ॥३९

सोरठा

निशि भोजन करि जीव, हिंसक ह्वै चहुगति भ्रमैं।
जे त्यागैं जु सदीव, निशिभोजन ते शिव लहैं॥४०
अर्ध उमरि उपवास, माही बीतै तिन तनी।
जे जन है जिनदास, निशिभोजन त्यागैं सुधी॥४१
दिवस नारिकौ त्याग, निशिकौं भोजन त्यागई।
निशिदिन जिनमत राग, सदा व्रतमूरति बुधा॥४२
एक मासमैं भ्रात, पाख उपास फलैं फला।
जे निशि माहिं न खात, चारि अहारा धीधना॥४३
निशि भोजन सम दोष, भयौ न ह्वै है होयगौ।
महा पापकौ कोष, मद्य मास आहार सम॥४४
त्यागै निशिकौ खान, तिन्हे हमारी वदना।
देही अभय प्रदान, जीवगणनिको ते नरा॥४५
कौलग कहैं सुबीर, निशि भोजनके अवगुणा।
जानैं श्रीमहावीर, केवलज्ञान महत सब॥४६

रत्नत्रय वर्णन

सोरठा

अब सुनि दरसन ज्ञान, चरण मोक्षके मूल हैं।
रतनत्रय निज ध्यान, तिन विन मोक्ष न ह्वै भया॥४७
सम्यकदर्शन सो हि, आतम रुचि श्रद्धा महा।
करनौ निश्चय जो हि, अपने शुद्ध स्वभावको॥४८

निजको जानपनो हि, सम्यकज्ञान कहैं जिना ।
थिरता भाव घनो हि, सो सम्यकचारित्र है ॥४९

चौपाई

प्रथमहि अखिल जतन करि भाई, सम्यकदरशन चित्त धराई ।
ताके होत सहज ही होई, सम्यकज्ञान चरन गुन दोई ॥५०
जीवाजीवादिक नव अर्था, तिनकी श्रद्धा बिन सब व्यर्था ।
है श्रद्धान-रहित विपरीता, आतमरूप अनूप अजीता ॥५१
सकल वस्तु हैं उभय स्वरूपा, अस्ति-नास्तिरूपी जु निरूपा ।
अनेकातमय नित्य अनित्या, भगवतने भाषे सहु सत्या ॥५२
तामें संशय नाहि जु करनौ, सम्यक दरसन ही दिढ धरनौ ।
या भवमें विभवादि न चाहे, परभव भोगनिकू न उमाहे ॥५३
चक्री केशवादि जे पदई, इन्द्रादिक शुभ पदई गिनई ।
कबहू वाछै कछु हि न भोगा, ते कहिये भगवतके लोगा ॥५४
जो एकातवाद करि दूषित, परमत गुण करि नाहि जु भूषित ।
ताहि न चाहे मन वच तन करि, तै दरसन धारी उरमें धरि ॥५५
क्षुधा तृषा अर उष्ण जु सीता, इनहिं आदि सुखभाव वितीता ।
दुखकारणमें नाहि गिलानी, सो सम्यकदरशन गुणखानी ॥५६
लोकविषै नहि मूढतभावा, श्रुति अनुसार लखै निरदावा ।
जैनशास्त्र विनु और जु ग्रथा, शास्त्राभास गिनै अघपथा ॥५७
जैनसमय विनु और जु समया, समयाभास गिनै सहु अदया ।
विनु जिनदेव और हैं जेते, लखै जु देवाभास सु ते ते ॥५८
श्रद्धानी सौ तत्त्वविज्ञानी, धरै सुदर्शव आतमध्यानी ।
करै धर्मकी जो वढवारी, सदा सु मार्दव आर्जवधारी ॥५९
पर औगुन ढाकै वुधिवत्ता, सो सम्यकदरशनधर सत्ता ।
काम क्रोध मद आदि विकारा, तिनकरि भये विकलमति धारा ॥६०
न्यायमार्गतें विचल्यौ चाहे, मिथ्यामारगको जु उमाहै ।
तिनको ज्ञानी थिर चित कारे, युक्तथकी भ्रमभाव निवारे ॥ १
आप सुथिर औरें थिर कारे, सो सम्यकदरशन गुण धारे ।
दयाधर्ममें जो हि निरन्तर, करै भावना उर अभ्यतर ॥६२
शिवसुख लक्ष्मी कारण धर्मो, जिनभाषित भवनाशित पर्मो ।
तासौं प्रीति धरै अधिकेरी, अर जिनधर्मिनसूं बहुतेरी ॥६३
प्रीति करै सो दर्शनधारी, पावै लोकशिखर अविकारी ।
यथा तुरतके बछरा ऊपरि, गौ हित राखै मन वच तन करि ॥६४
तथा धर्म धर्मिनिसौं प्रीती, जाके ताने शठता जीती ।
आतम निर्मल करणो भाई, अतिशयरूप महा सुखदाई ॥६५

पुण्य पदारथ किम कहुँ ए, सुणे सुन्दरे, समकित ज्ञान व्रत सार। मा०
दान पूजा तप जप कीजिए ए, सुणे सुन्दरे श्रावक जतिय आचार। मा० ॥६५
सम दम यम नियम पालिए ए, सुणे सुन्दरे, मन वच काया निरुद्ध। मा०
पापाचार सब सवरीए ए, सुणे सन्दरे, कीजे क्रिया विशुद्ध। मा० ॥६६
सदाचार पुण्य ऊपजे ए, सुणे सुन्दरे, सुख लहे पुण्य पसाय। मा०
सुर नर खग फणपतितणा ए, सुणे सुन्दरे, मनवाछित फल थाय। मा०॥६७
पाप पदारथ हवे कहु ए, सुणे सुन्दरे, पच पातक राग रोष। मा०
शल्य गारव त्रण दड ए, सुणे सुन्दरे, सज्ञा विसनथी दोष। मा० ॥६८
पच मिथ्यात अविरति बार ए, सुणे सुन्दरे, विकथा कषाय पचवीस। मा०
पन्नर प्रमाद योग कुक्रिया ए, सुणे सुन्दरे, सेवि विषय अठावीस। मा० ॥६९
पाप विपाके प्राणी या ए, सुणे सुन्दरे, परवसि पामे दुक्ख। मा०
नरक पशू कुनर तणा ए सुणे सुन्दरे, बहुविध देइ असुक्ख। मा० ॥७०
पुण्य पाप इमउ लखी ए, सुणे सुन्दरे, सप्त तत्त्व सहित। मा०
नव पदारथ इणि परि ए, सुणे सुन्दरे, जाणे होइ जीव-हित। मा० ॥७१
षट्द्रव्य पचास्तिकाया ए, सुणे सुन्दरे, पदारथ नव परकार। मा०
सक्षेपे बखाणिया ए, सुणे सुन्दरे, आगम जाणो सार। मा० ॥७२
तत्त्व पदारथ द्रव्य तणी ए, सुन्दरे, श्रद्धाइ होइ समकित्त। मा०
जे जे जिनवर जेम कह्यो ए, सुणे सुन्दरे, ते तिम आणे चित्त। मा० ॥७३
श्रद्धा रुचि प्रतीति सु ए, सुणे सुन्दरे, निश्चय भावें भेद चार। मा०
सत्यतणें तत्त्व निश्चय ए, सुणे सुन्दरे, श्रद्धा रुचि भवतार। मा० ॥७४
श्रद्धा समकित जाणीइ ए, सुणे सुन्दरे, श्रद्धा थी शुभ ज्ञान। मा०
श्रद्धा थी शुभ चारित्र ए, सुणे सुन्दरे, श्रद्धा सर्व प्रधान। मा० ॥७५
श्रद्धाइ पुण्य, पुण्य पूजा तणू ए, सुणे सुन्दरे, श्रद्धाइ पुण्यदान। मा०
तप जप सजम श्रद्धा पणे ए, सुणे सुन्दरे, श्रद्धा गुण-निधान। मा० ॥७६
तत्त्व श्रद्धा शुभ भावना ए, सुणे सुन्दरे, श्रद्धा भावे निज ध्यान। मा०
श्रद्धा कर्म-क्षय-कारण ए, सुणे सुन्दरे, इम कहे जिन भान। मा० ॥७७
श्रद्धा विना समकित्त नही ए, सुणे सुन्दरे, श्रद्धा विना नहि तप दान। मा०
केवल काय कष्टकारी ए, सुणे सुन्दरे, होय नहि मोक्ष निदान। मा० ॥७८
इम जाणी हृदे आपणो ए सुणे सुन्दरे, श्रद्धा करो जिन तत्त्व। मा०
सशय विमोह विभ्रम टालीयए, सुणे सुन्दरे, नि शल्य भावि भवितत्त्व। मा० ॥७९
जिण-जिणे तत्त्व सरदह्या ए, सुणे सुन्दरे, तिण तेणें लह्या बहु सोक्ख। मा०
सुर नर वर पदवी लही ए, सुणे सुन्दरे, अनुक्रमे पाम्या मोक्ख। मा० ॥८०
तत्त्व अर्थ शुभ सद्दहणा ए, सुणें सुन्दरे, सम्यक्दर्शन एह। मा०
सक्षेपे एक भेद कह्यो ए, सुणे सुन्दरे, अवर बे कहु तेह। मा० ॥८१
निसग पहेलो भेद ए, सुणे सुन्दरे, दूजो अधिगम जोय। मा०
सहजि भवि रुचि उपजिए, सुणे सुन्दरे, उपदेश विना ते होय। मा० ॥८२

दर्शन ज्ञान चरण सेवन करि, केवल उतपति करनौ भ्रम हरि।
सो सम्यक परभावनि होई, पर-भावनिकौ लेश न कोई ॥६६
दान तपो जिनपूजा करिकै, विद्या अतिशय आदि जु धरिकै।
जैनधर्मकी महिमा कारै, सो सम्यकदरशन गुण धारै ॥६७
ए दरशनके अष्ट जु अगा, जे धारै उर माहि अभगा।
ते सम्यक्ती कहिये वीरा, जिन आज्ञा पालक ते धीरा ॥६८
सेवनीय है सम्यकज्ञानी, माया मिथ्या ममता भानी।
सदा आत्मरस पीवै धन्या, ते ज्ञानी कहिये नहि अन्या ॥६९
यद्यपि दरशन ज्ञान न भिन्ना, एकरूप हैं सदा अभिन्ना।
सहभावी ए दोऊ भाई, तौ पनि किंचित भेद धराई ॥७०
भिन्न, भिन्न आराधन तिनका ज्ञानवतके होई जिनका।
एक चेतनाके द्वै भावा, दरसन ज्ञान महा सुप्रभावा ॥७१
दरसन है सामान्य स्वरूपा, ज्ञान विशेष स्वरूप निरूपा।
दरसन कारन ज्ञान सु कार्या, ए दोऊ न लहै हि अनार्या ॥७२
निराकार दर्शन उपयोगा ज्ञान धरै साकार नियोगा।
कोऊ प्रश्न करे इह भाई, एककाल उत्पत्ति वताई ॥७३
दरसन ज्ञान दुहुनिको तातैं, कारन कारिज होइ न तातैं।
ताकौ समाधान गुरु भाषैं, जे धारैं ते निजरस चाखैं ॥७४
जैसे दीपक अर परकासा, एककाल दुहुं कौ प्रतिभासा।
पर दीपक है कारनरूपा, कारिजरूप प्रकाशनरूपा ॥७५
तैसैं दरशन ज्ञान अनूपा, एककाल उपजै निजरूपा।
दरशन कारनरूपी कहिये, कारिजरूपी ज्ञान सु गहिये ॥७६
विद्यमान हैं तत्त्व सर्वे ही, अनेकाततारूप फवै ही।
तिनकौ जानपनो जो भाई, सशय विभ्रम मोह नशाई ॥७७
जो विपरीत रहित निजरूपा, आतमभाव अनूप निरूपा।
सो है सम्यकज्ञान महता, निजको जानपनो विलसता ॥७८
अष्ट अगकरि शोभित सोई, सम्यकज्ञान सिद्ध कर होई।
ते धारौ भवि आठो शुद्धा, जिनवाणी अनुसार प्रबुद्धा ॥७९
शब्द-शुद्धता पहलो अगा, शुद्ध पाठ पढई जु अभगा।
अर्थ-शुद्धता अग द्वितीया, करै शुद्धअर्थ जु विधि लीया ॥८०
शब्द अर्थ दुहुकी निर्मलता, मन वच तन काया निहचलता।
सो है तीजो अग विशुद्धा, सम्यक्ता धारै प्रतिबुद्धा ॥८१
कालाध्यायन चतुर्थम अगा, ताकौ भेद सुनौ अतिरगा।
जा विरिया जो पाठ उचित्ता, सोहा पाठ करै जु पवित्ता ॥८२
विनय अंग है पचम भाई, विनयरूप रहिवौ सुखदाई।
सो उपधान है छट्टम अगा, योग्य क्रिया करिवौ जु अभगा ॥८३

निजको जानपनो हि, सम्यकज्ञान कहैं जिना।
थिरता भाव घनो हि, सो सम्यकचारित्र है ॥४९

चौपाई

प्रथमहि अखिल जतन करि भाई, सम्यकदरशन चित्त धराई।
ताके होत सहज ही होई, सम्यकज्ञान चरन गुन दोई ॥५०
जीवाजीवादिक नव अर्था, तिनकी श्रद्धा बिन सब व्यर्था।
है श्रद्धान-रहित विपरीता, आतमरूप अनूप अजीता ॥५१
सकल वस्तु हैं उभय स्वरूपा, अस्ति-नास्तिरूपी जु निरूपा।
अनेकातमय नित्य अनित्या, भगवतने भाषे सहु सत्या ॥५२
तामैं सशय नाहिं जु करनौ, सम्यक दरसन हो दिढ धरनौ।
या भवमैं विभवादि न चाहै, परभव भोगनिकू न उमाहै ॥५३
चक्री केशवादि जे पदई, इन्द्रादिक शुभ पदई गिनई।
कबहू वाछै कछु हि न भोगा, ते कहिये भगवतके लोगा ॥५४
जो एकातवाद करि दूषित, परमत गुण करि नाहिं जु भूषित।
ताहि न चाहै मन वच तन करि, तै दरसन धारी उरमैं धरि ॥५५
क्षुधा तृषा अर उष्ण जु सीता, इनहिं आदि सुखभाव वितीता।
दुखकारणमैं नाहिं गिलानी, सो सम्यकदरशन गुणखानी ॥५६
लोकविषैं नहिं मूढतभावा, श्रुति अनुसार लखै निरदावा।
जैनशास्त्र विनु और जु ग्रंथा, शास्त्राभास गिनै अघपथा ॥५७
जैनसमय विनु और जु समया, समयाभास गिनै सहु अदया।
विनु जिनदेव और हैं जेते, लखे जु देवाभास सु ते ते ॥५८
श्रद्धानी सौ तत्त्वविज्ञानी, धरै सुदर्शव आतमध्यानी।
करै धर्मकी जो वढवारी, सदा सु मार्दव आजवधारी ॥५९
पर औगुन ढाकै वुधिवता, सो सम्यकदरशनधर सता।
काम क्रोध मद आदि विकारा, तिनकरि भये विकलमति धारा ॥६०
न्यायमार्गतें विचल्यौ चाहै, मिथ्यामारगकौ जु उमाहै।
तिनको ज्ञानी थिर चित्त कारै, युक्तथकी भ्रमभाव निवारै॥ १
आप सुथिर औरें थिर कारै, सो सम्यकदरशन गुण धारै।
दयाधर्मैं जो हि निरन्तर, करै भावना उर अभ्यतर ॥६२
शिवसुख लक्ष्मी कारण धर्मो, जिनभाषित भवनाशित पर्मो।
तासौं प्रीति धरै अधिकेरी, अर जिनधर्मिनसूं वहुतेरी ॥६३
प्रीति करै सो दर्शनधारी, पावै लोकशिखर अविकारी।
यथा तुरतके बछरा ऊपरि, गौ हित राखै मन वच तन करि ॥६४
तथा धर्म धर्मिनिसौं प्रीती, जाके ताने शठता जीती।
आतम निर्मल करणो भाई, अतिशयरूप महा सुखदाई ॥६५

दर्शन ज्ञान चरण सेवन करि, केवल उतपति करनौ भ्रम हरि।
सो सम्यक परभावनि होई, पर-भावनिकौ लेश न कोई ॥६६
दान तपो जिनपूजा करिकै, विद्या अतिशय आदि जु धरिकै।
जैनधर्मकी महिमा कारै, सो सम्यकदरशन गुण धारै ॥६७
ए दरशनके अष्ट जु अंगा, जे धारैं उर माहि अभंगा।
ते सम्यक्ती कहिये वीरा, जिन आज्ञा पालक ते धीरा ॥६८
सेवनीय है सम्यकज्ञानी, माया मिथ्या ममता भानी।
सदा आत्मरस पीवैं धन्या, ते ज्ञानी कहिये नहि अन्या ॥६९
यद्यपि दरशन ज्ञान न भिन्ना, एकरूप हैं सदा अभिन्ना।
सहभावी ए दोऊ भाई, तौ पनि किंचित भेद धराई ॥७०
भिन्न, भिन्न आराधन तिनका, ज्ञानवतके होई जिनका।
एक चेतनाके द्वै भावा, दरसन ज्ञान महा सुप्रभावा ॥७१
दरसन है सामान्य स्वरूपा, ज्ञान विशेष स्वरूप निरूपा।
दरसन कारन ज्ञान सु कार्या, ए दोऊ न लहै हि अनार्या ॥७२
निराकार दर्शन उपयोगा, ज्ञान धरै साकार नियोगा।
कोऊ प्रश्न करै इह भाई, एककाल उत्पत्ति बताई ॥७३
दरसन ज्ञान दुहुनिको तातैं, कारन कारिज होइ न तातैं।
ताकौ समाधान गुरु भाषैं, जे धारैं ते निजरस चाखे ॥७४
जैसे दीपक अर परकासा, एककाल दुहुं कौ प्रतिभासा।
पर दीपक है कारनरूपा, कारिजरूप प्रकाशनरूपा ॥७५
तैसें दरशन ज्ञान अनूपा, एककाल उपजै निजरूपा।
दरशन कारनरूपी कहिये, कारिजरूपी ज्ञान सु गहिये ॥७६
विद्यमान हैं तत्त्व सबै ही, अनेकाततारूप फबै ही।
तिनकौ जानपनो जो भाई, सशय विभ्रम मोह नशाई ॥७७
जो विपरीत रहित निजरूपा, आतमभाव अनूप निरूपा।
सो है सम्यकज्ञान महता, निजको जानपनो विलसता ॥७८
अष्ट अगकरि शोभित सोई, सम्यकज्ञान सिद्ध कर होई।
ते धारौ भवि आठो शुद्धा, जिनवाणी अनुसार प्रबुद्धा ॥७९
शब्द-शुद्धता पहलो अगा, शुद्ध पाठ पढई जु अभगा।
अर्थ-शुद्धता अग द्वितीया, करै शुद्धअर्थ जु विधि लीया ॥८०
शब्द अर्थ दुहुकी निर्मलता, मन वच तन काया निहचलता।
सो है तीजो अग विशुद्धा, सम्यक्ता धारै प्रतिबुद्धा ॥८१
कालाध्यायन चतुर्थम अगा, ताकौ भेद सुनौ अतिरगा।
जा विरिया जो पाठ उचित्ता, सोहा पाठ करै जु पवित्ता ॥८२
विनय अग है पचम भाई, विनयरूप रहिवौ सुखदाई।
सो उपधान है छट्ठम अगा, योग्य क्रिया करिवौ जु अभगा ॥८३

निजको जानपनो हि, सम्यकज्ञान कहैं जिना।
थिरता भाव घनो हि, सो सम्यकचारित्र है ॥४९

चौपाई

प्रथमहि अखिल जतन करि भाई, सम्यकदरशन चित्त धराई।
ताके होत सहज ही होई, सम्यकज्ञान चरन गुन दोई ॥५०
जीवाजीवादिक नव अर्था, तिनकी श्रद्धा बिन सब व्यर्था।
है श्रद्धान-रहित विपरीता, आतमरूप अनूप अजीता ॥५१
सकल वस्तु हैं उभय स्वरूपा, अस्ति-नास्तिरूपी जु निरूपा।
अनेकातमय नित्य अनित्या, भगवतने भाषे सहु सत्या ॥५२
तामैं सशय नाहिं जु करनौ, सम्यक दरसन ही दिढ धरनौ।
या भवमैं विभवादि न चाहै, परभव भोगनिकूं न उमाहै ॥५३
चक्री केशवादि जे पदई, इन्द्रादिक शुभ पदई गिनई।
कबहू वाछे कछु हि न भोगा, ते कहिये भगवतके लोगा ॥५४
जो एकातवाद करि दूषित, परमत गुण करि नाहिं जु भूषित।
ताहि न चाहै मन वच तन करि, तै दरसन धारी उरमैं धरि ॥५५
क्षुधा तृषा अर उष्ण जु सीता, इनहिं आदि सुखभाव वितीता।
दुखकारणमैं नाहिं गिलानी, सो सम्यकदरशन गुणखानी ॥५६
लोकविषै नहिं मूढतभावा, श्रुति अनुसार लखै निरदावा।
जेनशास्त्र बिनु और जु ग्रथा, शास्त्राभास गिनै अघपथा ॥५७
जैनसमय विनु और जु समया, समयाभास गिनै सहु अदया।
विनु जिनदेव और हैं जेते, लखै जु देवाभास सु ते तें ॥५८
श्रद्धानी सौ तत्त्वविज्ञानी, धरै सुदर्शव आतमध्यानी।
करै धर्मकी जो बढवारी, सदा सु मार्दव आर्जवधारी ॥५९
पर औगुन ढाकै वुधिवता, सो सम्यकदरशनधर सता।
काम क्रोध मद आदि विकारा, तिनकरि भये विकलमति धारा ॥६०
न्यायमार्गतें विचल्यौ चाहै, मिथ्यामारगकौ जु उमाहै।
तिनको ज्ञानी थिर चित कारै, युक्तथकी भ्रमभाव निवारै ॥ १
आप सुथिर औरैं थिर कारै, सो सम्यकदरशन गुण धारै।
दयाधर्ममैं जो हि निरन्तर, करै भावना उर अभ्यतर ॥६२
शिवसुख लक्ष्मी कारण धर्मो, जिनभाषित भवनाशित पर्मो।
तासौं प्रीति धरै अधिकेरी, अर जिनधर्मिनसूं बहुतेरी ॥६३
प्रीत्ति करै सो दर्शनधारी, पावै लोकशिखर अविकारी।
यथा तुरतके बछरा ऊपरि, गौ हित राखै मन वच तन करि ॥६४
तथा धर्म धर्मिनिसौं प्रीती, जाके ताने शठता जीती।
आतम निर्मल करणो भाई, अतिशयरूप महा सुखदाई ॥६५

दर्शन ज्ञान चरण सेवन करि, केवल उतपति करनी भ्रम हरि।
सो सम्यक परभावनि होई, पर-भावनिको लेश न कोई ॥६६
दान तपो जिनपूजा करिकै, विद्या अतिशय आदि जु धरिकै।
जैनधर्मकी महिमा कारै, सो सम्यकदरशन गुण धारै ॥६७
ए दरशनके अष्ट जु अंगा, जे धारै उर माहि अभंगा।
ते सम्यक्ती कहिये वीरा, जिन आज्ञा पालक ते धीरा ॥६८
सेवनीय है सम्यकज्ञानी, माया मिथ्या ममता भानी।
सदा आतमरस पीवैं धन्या, ते ज्ञानी कहिये नहिं अन्या ॥६९
यद्यपि दरशन ज्ञान न भिन्ना, एकरूप हैं सदा अभिन्ना।
सहभावी ए दोऊ भाई, तौ पनि किंचित भेद धराई ॥७०
भिन्न, भिन्न आराधन तिनका, ज्ञानवंतके होई जिनका।
एक चेतनाके द्वै भावा, दरसन ज्ञान महा सुप्रभावा ॥७१
दरसन है सामान्य स्वरूपा, ज्ञान विशेष स्वरूप निरूपा।
दरसन कारन ज्ञान सु कार्या, ए दोऊ न लहै हि अनार्या ॥७२
निराकार दर्शन उपयोगा, ज्ञान धरै साकार नियोगा।
कोऊ प्रश्न करै इह भाई, एककाल उत्पत्ति बताई ॥७३
दरसन ज्ञान दुहुनिको तातैं, कारन कारिज होइ न तातैं।
ताकौ समाधान गुरु भाषै, जे धारैं ते निजरस चाखै ॥७४
जैसे दीपक अर परकासा, एककाल दुहुं को प्रतिभासा।
पर दीपक है कारनरूपा, कारिजरूप प्रकाशनरूपा ॥७५
तैसें दरशन ज्ञान अनूपा, एककाल उपजै निजरूपा।
दरशन कारनरूपी कहिये, कारिजरूपी ज्ञान सु गहिये ॥७६
विद्यमान हैं तत्त्व सबैं ही, अनेकांततारूप फबै ही।
तिनकौ जानपनो जो भाई, संशय विभ्रम मोह नशाई ॥७७
जो विपरीत रहित निजरूपा, आतमभाव अनूप निरूपा।
सो है सम्यकज्ञान महंता, निजको जानपनो विलसंता ॥७८
अष्ट अंगकरि शोभित सोई, सम्यकज्ञान सिद्ध कर होई।
ते धारौ भवि आठो शुद्धा, जिनवाणी अनुसार प्रबुद्धा ॥७९
शब्द-शुद्धता पहलो अंगा, शुद्ध पाठ पढ़ई जु अभंगा।
अर्थ-शुद्धता अंग द्वितीया, करै शुद्धअर्थं जु विधि लीया ॥८०
शब्द अर्थ दुहुकी निर्मलता, मन वच तन काया निहचलता।
सो है तीजो अंग विशुद्धा, सम्यक्ता धारै प्रतिबुद्धा ॥८१
कालाध्यायन चतुर्थम अंगा, ताकौ भेद सुनौ अतिरंगा।
जा विरिया जो पाठ उचित्ता, सोहा पाठ करै जु पवित्ता ॥८२
विनय अंग है पंचम भाई, विनयरूप रहिवौ सुखदाई।
सो उपधान है छट्ठम अंगा, योग्य क्रिया करिवौ जु अभंगा ॥८३

जिनभाषितको अगी करनौ, सो उपधान अगकौ धरनौ ।
सप्तम है बहुमान विख्याता, ताकौ अर्थं सुनू तजि वाता ।।८४
बहुसतकार सु आदर करिकै, जिन आज्ञा पालै उर धरिकै ।
अष्टम अग अनिन्हव धारै, ते अष्टम भूमी जु निहारै ।।८५
जा गुरुके ढिग तत्त्वविज्ञाना, पायौ अदभुत रूप निधाना ।
ता गुरुकौ नहि नाम छिपावै, बार बार महागुण गावै ।।८६
को कहिये जु अनिन्हव अगा, ज्ञानस्वरूप अनूप अभगा ।
सम्यक ज्ञान तनू आराधन, ज्ञानिनिको करनू शिव-साधन ।।८७
दरशन मोह रहित जो ज्ञानी, तत्त्वभावना दृढ ठहरानी ।
जे हि जथारथ जानैं भावा, ते चारित्र धरैं निरदावा ।।८८
बिना ज्ञान नहि चारित सोहै, बिना ज्ञान मनमथ मन मोहै ।
तातैं ज्ञान पीछे जु चरित्रा, भाष्यौ जिनवर परम पवित्रा ।।८९
सर्व पाप-मारग परिहारा, सकल कषाय-रहित अविकारा ।
निर्मल उदासीनता रूपा, आतमभाव सु चरन अनूपा ।।९०
सो चारित्र दोय विधि भाई, मुनि-श्रावक व्रत प्रगट कराई ।
मुनिको चारित सर्व जु त्यागा, पापरीतिके पथ न लागा ।।९१
ताके तेरह भेद बखानैं, जिनवानी अनुसार प्रवानैं ।
पच महाव्रत पच जु समिती, तीन गुपतिके धारक सुजती ।।९२
चउविधि जगम पचम थावर, निश्चयनय करि सब हि बराबर ।
तिन सर्वनिकी रक्षा करिवौ, सो पहलो सु महाव्रत धरिवौ ।।९३
सतत सत्य वचनकौ कहिवौ, अथवा मौनव्रतको गहिवौ ।
मृषावाद वौलै नहि जोई, दूजो महाव्रत है साई ।।९४
कौडी आदि रतन परजता, घटि अघटित तसु भेद अनन्ता ।
दत्त अदत्त न परसै जोई, तीजो महाव्रत है सोई ।।९५
पशु पछी नर दानव देवा, भववासा रमनी-रत मेवा ।
तजै निरन्तर मदन विकारा, सो चौथो जु महाव्रत भारा ।।९६
द्विविधि परिग्रह त्यागै भाई, अन्तर बाहिर सग न काई ।
नगन दिगम्बर मुद्रा धारा, सो हि महाव्रत पचम सारा ।।९७
ईर्यासमिति ऋषी जो चालै, भाषासमिति कुभाषा टालै ।
भखैं अहार अदोष मुनीशा, ताहि एषणा कहै अधीशा ।।९८
है आदान निक्षेपा सोई, लेहि निरखि शास्त्रादिक जोई ।
अर परिठवणा पचम समिति, निरखि शास्त्रादिक जोई ।
अर परिठवणा पचम समिती, निरखि भूमि डारैं मल सुजती ।।९९
मनोगुप्ति कहिये मन-रोधा, वचन गुप्ति जो वचन निरोधा ।
कायगुप्ति काया वस करिवौ, ए तेरह विधि चारित धरिवौ ।।२१००

एकदेश गृहपात चारित्रा, द्वादश व्रतरूपी हि पवित्रा।
जो पहली भाख्यौ अब तातैं, कह्यौ नही श्रावकव्रत तातैं ॥१
इह रत्नत्रय मुनिके पूरा, होवैं अष्टकम दल चूरा।
श्रावक के नहि पूरण होई, धरै न्यूनतारूप जु सोई ॥२
इह रतनत्रय करि शिव लेवै, चहुँ गतिको भवि पानी देवे।
या करि सीझे अरु सीझेंगे, यह लहि परमे नहि रीझेंगे ॥३
या करि इन्द्रादिक पद होवै, सो दूपण शुभको बुध जोवै।
इह तौ केवल मुक्ति प्रदाई, बधनरूप होय नहि पाई ॥४
बध-विदारन मुक्ति-सुकारण, इह रतनत्रय जगत उधारण।
रत्नत्रय सम और न दूजौ, इह रतनत्रय त्रिभुवन पूजो ॥५
रतनत्रय विनु मोक्ष न होई, कोटि उपाव करै जो कोई।
नमस्कार या रतनत्रयको, जो दे परम भाव अक्षयको ॥६
रतनत्रय की महिमा पूरन, जानि सकै वसु कम-विचूरन।
मुनिवर हू पूरण नहि जानैं, जिन-आज्ञा अनुसार प्रवानैं ॥७
सहस जोभ करि वरणन करई, तिनहूँ पै नहि जाय वरणई।
हमसे अल्पमती कहो कैसे, भाषै बुधजन वारहु ऐसे ॥८
त्रेपन किरिया कौ यह मूला रतनत्रय चेतन अनुकूला।
जिन धार्यो तिन आपौ तार्यो, याकरि वहुतनि कारिज सार्यो ॥९
धन्य घरी वह ह्वैगी भाई, रतनत्रयसो जीव मिलाई।
पहुचेगो शिवपुर अविनाशी, होवेगो अति आनन्द राशी ॥१०
सब ग्रन्थनि मे त्रेपन किरिया, इन करि, इन विन भववन फिरिया।
जो ए त्रेपन किरिया धारै, सो भवि अपना कारिज सारै ॥११
सुरग मुकति दाता ए किरिया, जिनवानी सुनि जिनि ए धरिया।
तिन पाई निज परणति शुद्धा, ज्ञानस्वरूपा अति प्रतिबुद्धा ॥१२
है अनादि सिद्धा ए सर्वा, ए किरिया धरिवौ तजि गर्वा।
ठौर ठौर इनको जस भाई, ए किरिया गावैं जिनराई ॥१३
गणधर गावै मुनिवर गावै, देव भाषमे शवद सुनावैं।
पचम काल माहि सुर-भाषा, विरला समझै जिनमत साखा ॥१४
तातैं यह नर-भाषा कीनी, सुर-भाषा अनुसारे लीनी।
जो नर-नारि पढै मन लाई, सो सुख पावै अति अधिकाई ॥१५
सवत सत्रासे पच्याणव, भादव सुदि वारस तिथि जाणव।
मगलवार उदयपुर माहैं, पूरन कीनी सशय नाहैं ॥१६
आनन्द-सुत जयसुतको मत्री, जयको अनुचर जाहि कहै।
सो दौलत जिन-दासनि दासा, जिनमारग की शरण गहै ॥१७

इति।

■

परिशिष्ट

क्रियाकोषोंमें उद्धृत गाथा-श्लोक-सूची

श्री किसनसिंह-कृत क्रियाकोषमें

गुण-वय-तव-सम-पडिमा दाण जलगालण च अणत्थमिय ।
दसण-णाण-चरित्त किरिया तेवण्ण सावया भणिया ।। (पृष्ठ ११५)

हेमते तीस दिणा, गिम्हे पणरस दिणाणि पक्कण्ण ।
वासासु य सत्त दिणा, इय भणिय सूय-जगेहिं ।। (पृष्ठ ११६)

इक्खु-दही-सजुत्त, भवत्ति सम्मुच्छिमा जीवा ।
अतोमुहुत्त-मज्झे, जम्हा भणति जिणणाहा ।। (पृष्ठ ११८)

चउ एइदी विण छह-अठुह त्तिण्णिणि भणति दह ।
चौरिंदी जीवड्डा वार वारह पच भणति ।। (पृष्ठ ११९)

अन्न जल किंचि ठिई, पच्चक्खाण न भुजए भिक्खू ।
घडी दोय अतरीया, णिगोइया हुति बहु जीवा ।। (पृष्ठ १४२)

संवत्सरेण-मेकत्व चैवर्तकस्य हिंसक ।
एकादश दवादाहे अपूतजल-सग्रही ।। (पृष्ठ १६२)

लूतास्यतन्तु-गलिते ये विन्दौ सन्ति जन्तव ।
सूक्ष्मा भ्रमरमानापि, नैव मान्ति त्रिविष्टपे ।। (पृष्ठ १६२)

षट्त्रिंशदङ्गुलं वस्त्र चतुर्विंशतिविस्तृतम् ।
तद्वस्त्र द्विगुणीकृत्य तोय तेन तु गालयेत् ।। (पृष्ठ १६२)

तस्मिन् मध्यस्थिताञ्जीवान् जलमध्ये तु स्थाप्यते ।
एव कृत्वा पिबेत्तोयं, स याति परमा गतिम् ।। (पृष्ठ १६२)

राहु-अरिट्ठविमाणं किंचूणा किं पि जोयण अधोगंता ।
छम्मासे पव्वन्ते चन्द रविं छादयदि कमेण ।। (पृष्ठ २०१)

स्नान पूर्वामुखी भूप, प्रतीच्या दन्त-धावनम् ।
उदीच्या श्वेतवस्त्राणि, पूजा पूर्वोत्तरामुखी ।। (पृष्ठ २०३)

अरहता छैयाला सिद्धा अट्ठेव सूरि छत्तीसा ।
उवझाया पणवीसा साहूण हुति अडवीसा ।। (पृष्ठ २२३)

●

श्री दौलतराम-कृत क्रियाकोष में

गुण-वय-तव-सम-पडिमा, दाण जलगालण च अणत्थमिय।
दसण णाण चरित्त किरिया तेवण्ण सावया भणिया॥ (पृष्ठ २२४)

भय-मूढमणायदण सकाइ वसण्ण भयमईयार।
एहिं चउदालेदे ण सति ने हुति सद्दिट्ठी॥ (पृष्ठ २६२)

आद्य शरीर-सस्कारो द्वितीय वृष्यसेवनम्।
तौर्यत्रिक तृतीयं स्यात्ससगंस्तुर्यं भण्यते॥ (पृष्ठ ३००)

योषिद्विषसकल्प पञ्चम परिकीर्तितम्।
तदङ्गवीक्षण षष्ठं सत्कार सप्तमो मत॥ (पृष्ठ ३००)

पूर्वानुभूत-सभोग स्मरण स्यात्तदष्टमम्।
नवमे भावनी चिन्ता दशमे वस्तिमोक्षणम्॥ (पृष्ठ ३००)

भोजने षट्रसे पाने, कुकुमादि-विलेपने।
पुष्पताम्बूल-गीतेषु, नृत्यादौ ब्रह्मचर्यके॥ (पृष्ठ ३३३)

स्नान-भूषण-वस्त्रादौ, वाहने शयनाशने।
सचित्त वस्तु-सख्यादौ, प्रमाण भज प्रत्यहम्॥ (पृष्ठ ३३३)

प० दौलतराम जीने भी अपने क्रिया-कोषका आधार सस्कृत क्रिया-कोषको ही बताया है। जैसा कि उनके निम्न पद्यसे स्पष्ट है—

'तातै नर-भाषा यह कीनी, सुर-भाषा अनुसारै लीनी॥
पचम काल माहि सुर-भाषा, विरला समझै जिन-मत साखा॥

इस पद्यमे 'नर-भाषा' से अभिप्राय वर्तमानमे बोली जानेवाली हिन्दी भाषासे है और सुर-भाषासे अभिप्राय देवभाषा सस्कृतसे है।

इस उल्लेखसे यह सिद्ध है कि उनके सम्मुख कोई सस्कृत क्रिया-कोष विद्यमान था।

पदम कविने अपने श्रावकाचार की प्रशस्तिमे जिन आचार्यों, भट्टारको एव ब्रह्मचारियोंका उल्लेख किया है। उनके नाम इस प्रकार है—

आचार्य—१ आ० कुन्दकुन्द, २ समन्तभद्र, ३ जिनसेन, ४ गुणभद्र, ५ अकलक, ६ अमृतचन्द्र, ७ प्रभाचन्द्र, ८ वसुनन्दि।

पडित—आशाधर।

भट्टारक—१ पद्मनन्दी, २ सकलकीर्ति, ३ भुवनकीर्ति, ४ ज्ञानभूपण, ५ विजयकीर्ति, ६ शुभचन्द्र, ७ कुमुदचन्द्र।

गुरुजन—आम्नाय गुरु—शुभचन्द्र।
आगम गुरु—विनयचन्द्र।
अध्यात्मगुरु—कर्मश्री ब्रह्म।
शिक्षागुरु—हीरब्रह्मेन्द्र।

श्रावकाचारके आधारभूत ग्रन्थोंके नाम—

१ स्वामी समन्तभद्रका रत्नकरण्ड श्रावकाचार।
२ आचार्य वसुनन्दीका श्रावकाचार।
३ प० आशाधरका सागारधर्मामृत।
४ श्री सकलकीर्त्तिका प्रश्नोत्तर श्रावकाचार।

पदम कविने त्रेपन क्रियाओके वर्णनका आधार किसी ग्रन्थको न वता करके श्रेणिकके प्रश्न पर गौतमके द्वारा श्रावकके सम्पूर्ण आचारका वर्णन कराया है। जैसा कि इसकी मगला-चरणके पश्चात् दी गई उत्थानिकासे प्रकट है।

■

कर्मतणे उपशम होइ ए, सुणे सुन्दरे, अथवा क्षय उपशम । मा०
कर्मक्षयथकी उपजे ए, सुणे सुन्दरे निसर्ग दृष्टि उत्तम । मा० ।।८३
गुरु उपदेशें पामीय ए, सुणे सुन्दरे, करता तत्त्व अभ्यास ।
भणता सुणता अधिगम ए, सुणे सुन्दरे, उपजे चित्त उलास । मा० ।।८४
जिन प्रतिमा प्रासाद देखीय ए, सुणे सुन्दरे, पेखी महिमा सासन्न । मा०
पूजा प्रतिष्ठा जात्रा आदि ए, सुणे सुन्दरे, ऋद्धि वृद्धि यति जन्न । मा० ।।८५
देवा अतिशय देखि करी ए, सुण सुदन्रे, तीव्र तप दान ज्ञान । मा०
तत्त्व जाणी अधिगम होइ ए, सुणे सुन्दरे, करता गुण-आख्यान । मा० ।।८६
श्रद्धा समकित सेवीये ए, सुणे सुन्दरे, निसर्ग दृष्टि अधिगम । मा०
निर्मल मूल गुण कारण ए, सुणे सुन्दरे, शुद्ध भावे ते उत्तम । मा० ।।८७

वस्तु छन्द

शुद्ध भाव करो, शुद्धभाव करो, भविजण इणि परे ।
श्रावक जती धर्मकारण, तारण ससार सागर निर्भर ।
स्वर्ग मोक्ष फल दायक, नायक समकित सार मनोहर ।।
अनुदिन जे जन अनुसरे, धरे जे समकित रत्न । जिन सेवक **पदमो** कहे, तेह तणो करो जत्न ।।१

अथ भास जसोधरनी

भाव धरी भव्य साभलो ए, सुभ समकितभेद । उपशम वेदक क्षायिक, जेम कह्यो जिनदेव ।।२
समकित रत्न गुणधातक, प्रकृति जाणो सात ।
मिथ्यात्व मिश्र सम्यक्त्व प्रभृति, दर्शनमोहतणी ख्यात ।।३
अनादि काल अनन्तानुबन्धी, क्रोध मान माया लोभ ।
शिला अस्थि वश तणो मूल, लाख रग सम लोभ ।।४
मिथ्यात्व उदये मिथ्यात्व हुइ, पाले नही जिनधर्म ।
मिथ्यात देव गुरु शास्त्र तणी, सेवा नीच कर्म ।।५
मिश्र प्रकृति तणे विपाके, मिश्र होइ परिणाम । देव-अदेव गुरु कुगुरु, सारिखा परिणाम ।।६
देवतणा लक्षण सुणो, देव जाणो अरिहन्त । इन्द्रादिक पूजा करे, कर्म अरि करे अन्त ।।७
चोत्रीस अतिशय निर्मला, अष्ट प्रतिहार्यवन्त । अनन्तचतुष्टय ऊजला, छियालीस गुणसन्त ।।८
समोसरण लक्ष्मी भली, सेवा करे शत इन्द्र । धर्मापदेश देइ सदा, इह वा ध्याओ जिनेन्द्र ।।९
देवदूषण थी वेगला, सुणो दोष अठार । क्षुधा तृषा नही जेह नइ, नही भय रोग लगार ।।१०
राग मोह चिन्ता नहि, जरा मृत्यु नही जन्म । खेद स्वेद मद रति नही, नही निद्रा रोगकर्म ।।११
विस्मय विखवाद जेहने नही, एह दोप अठार । अवर अवगुण पण कोय नही, ते देव भवतार ।।१२
एह वा जिनदेव सेवी ए, पूजीए जिनचरण । मुक्तिनारीवर निर्मला, भव-तारण-तरण ।।१३
गुरु आ गुरु सेवो गुणवन्त, गुरु जाणो निर्ग्रन्थ । धर्मोपदेश दीये ऊजलो, देखाडे मोक्ष पन्थ ।।१४
अभ्यन्तर बाह्यतणा नही, परिग्रह चौवीस । नग्न मुद्रा धरे निरमली, दिगम्बर जति-ईश ।।१५
चारु चारित्र धरे तेरस भेद, अट्ठावीस मूलगुण । दशलक्षणधर्म-धारक, तप बारस निपुण ।।१६
सम दम सूधो आचरइ, जीती इन्द्री मदमार । क्रोध मान माया लोभ नही, नही राग द्वेष विकार ।।१७
भव-सागर जे तरे तारे, जेम अच्छिद्रनाव । सेवो गुरु गुण उत्तम, हृदय आणी शुभ भाव ।।१८

सत्य शास्त्र ते जाणी ए, जेह मा होइ दयाधर्म । सत्य अचौर्यशील गुण, जिहा सदा शौचकर्म ॥१९
चार अनुयोग जहा निरूपिया, प्रथमानुयोग पवित्र । त्रेसठशलाका नरतणा, वास कीधा चरित्र ॥२०
त्रैलोक्यतणु जिहा वर्णन, ते करणानुयोग । श्रावक यतिव्रत व्याख्यान, जाणो ते चरणानुयोग ॥२१
षट्द्रव्य पचास्तिकाय, तत्त्व अर्थ प्रकार द्रव्यानुयोग ते निर्मलो, श्री जिनवाणी उद्धार ॥२२
देवगुरु शास्त्र नव भेद, जोइइ सत्य सुजाण । पूर्वापरहि जे विरुद्ध नही, तेहहि शास्त्र प्रमाण ॥२३
कुदेवतणु लक्षण मुणु, दीसे देह सिणगार । वस्त्र नारी करी लकर्या, हाथे छे हथियार ॥२४
गदा शख धरि चक्रपाणि हाथे छे जपमाल । गरुडगामी मोर पीछ भार, भामा भोगवे विशाल ॥२५
एक मूर्त्तिदीसे लजामणी, लिंग जोणी मझार । पुरुष नारी साथे सदा करे वृषभ विहार ॥२६
भस्म अगि कपाल हस्ति, कठे छे रुडमाल । करि त्रिशूल भुजग कठि, जटा नग्न विकराल ॥२७
अवर देव तणी विकृत, दीसे वदन ते चार । राग-रग रमे सदा, हस यान सचार ॥२८
तिलोत्तमा रागि रल्यु, दण्ड कमण्डलु पात्र । कोपीन जज्ञोपवीत कठि, अक्षसूत्री कुगात्र ॥२९
घड लेई एक नर तणो, थापी शिर एक हस्ति । तेल सिन्दूर रचना रची, एहवी कहे देवमूर्त्ति ॥३०
पदे पसू चापी रहे, करे क्रूर हथियार । रुधिर मास बलराती सदा, आगल पशु सिधार ॥३१
जक्ष-जक्षी नाग-नागिणी, गुरु गोत्रज नाम । जलमी वराही इआदे करी, देवी भीषण भाम ॥३२
धात पाषाण माटी काष्ट, देव-देवी तणा मच । मूढ जीव तणा रजक, माने मिथ्याती सच ॥३३
ए आदे देव देवी तणी, दीसे बहुमूर्त्ति । जिन-प्रतिमा थी बाहिरी, ते सहु मिथ्या विकृत्ति ॥३४
कुगुरु चिह्न हवे साभलो, पच पातक-सक्त । हिंसा असत्य चोरी आचरे, मैथुन अग जे रक्त ॥३५
मठ मन्दिर वनवासी आ, रामा रागे ते राता । कषण करे पशु-पालक, राग रोस मद माता ॥३६
विणज वीवाहे वैद ज्योतिषी, विद्या मन्त्र कुतत्र । कामण मोहण वसिकरण पाखड करे कुजत्र ॥३७
चर्मरोम ओढे घणा, वनवण कुलकारी । पचविध वस्त्र आदरे, नग्न कोपीन एक धारी ॥३८
विप्र सन्यासी कापडी, योगी दरवेश दोहिल्या । बौद्ध साख्य कुतापसी, वहुभिक्षुक बोल्या ॥३९
गोपिच्छक धवल अम्बरी, द्रावड आपली सग । पिच्छविहीना दुमती, जैनभाषा प्रसग ॥४०
जिनशासन जे वाहिरा, जिनमाग विखण्ड । ते कुगुरु मिथ्यातोया, कुवेष लिंग सहित ॥४१
कुत्सित शास्त्र हवे साभलो, जेमा कुत्सित आचार । धर्मकाज हिंसा करे, जज्ञ जीव सन्धार ॥४२
असत्य चोरी अब्रह्मचर्य, निशि भोजन पाणी । कन्दमूल मधुभक्षण, स्नान नीर अछाणी ॥४३
श्राद्ध सवच्छरीने तपण, जागर मण्डल प्रश्न । पितरपिंड उतारणा अम्बर देवी कुकृष्ण ॥४४
वड पीपल शमडीवृक्ष, काग सूकर स्थान । वापी सरोवर नदी अ कूप, पूज्य माने अज्ञान ॥४५
रवि अ शनिश्चर सक्रम, ग्रहण आदित चन्द्र । एकादशी आमास आदि, ओछी स्थापना क्षुद्र ॥४६
देवने तो दूपण दीये परनारी अपवाद । स्वामी लीला एहवी करे, एह इन्द्री उनमाद ॥४७
शीलवन्ती सती कहु, वली पच भरतार । अष्टादश पुराणमाहे, स्थापे असत्य अपार ॥४८
एक सौ असी क्रिया भेद, चौरासी अक्रियावाद । अज्ञानी सडसठे भेद, वत्तीस विनयविवाद ॥४९
त्रणसे त्रेसठ एणि परे, कुवाद कुस्थान कुमन्त । सशय विमोह कारणें, ते कुशास्त्र असत्य ॥५०
जे जिम जेणें किया, थापए ते विपरीत । कुबुद्धि वले धूत कल्पित, दीखे अवली कुरीत ॥५१

जे जिनवाणी वेगला, थाप्या बहु विभचार ।
विरुद्ध वचनें रचना रची, किम कह्यो जाय विस्तार ॥५२

सत्यदेव कुदेव तत्त्व, गुरु कुगुरुते सरिखा । शास्त्र कुशास्त्र सम लेखवे, न जाणे ते परिक्षा ॥५३

गोलख सम ते लेखवे, चिन्तामणि-सम काच । गो-महिपी अर्क थोहर दुग्ध सम एक वाच ।।५४
अमृत हलाहल विप समा, उद्योतनि अन्धकार । धर्म अधर्म सम लेखवे, भूला जीव गँवार ।।५५
मिश्रप्रकृति तणे उदये, न वि जाणे जिय भेद । शुभ अशुभ न वि उ लेखे, घणु स्यू कीजे निखेद ।।५६
सम्यक्त्व प्रकृति हवे साभलो, माने देव अरिहन्त । निर्ग्रन्थ गुरु सेवा करिये धर्म दशलक्षणवत्त ।।५७
देव शास्त्र गुरु उ लखे, करे जिनधर्म विचार । तत्त्व पदारथ सग्दहे लहे समकित सार ।।५८
सत्य देवसू प्रीति करे, नाही मनमे भ्रान्ति । देव गुरु ये मुझतणा, मुझ विघन करे शान्ति ।।५९
आदि देव अतिशयवन्त, परतो मुझ पूरे । शान्तिनाथ शान्तिकरण, द कम सकट चूरे ।।६०

समकित विना स्यु धर्म स्यु, भ्रान्ति आणे ते बाल ।
जिनशासन बोडे नही, भमे जिम घटा लाल ।।६१

क्रोध मान माया लोभने, कठिण कसाय जे चार । अनादिकाल अनन्तानुबन्धी, दु ख देई अपार ।।६२

मिथ्यात्त मिश्र समकितनाम, प्रकृति टालो ए सात ।
उदय होय जव तेह तणो, तब समकित करे घात ।।६३
ये सातो जव उपशमे, तब होय उपशम भाव ।
स्वस्ति परिणामे जीवने, शुद्ध सहज परिणाम ।।६४

कचोली कर्दम नीर सहित, कसमल दीसे तेम । कतकफल माहे तवै स्वच्छ थाइ जल जेम ।।६५
सर्वघातिस्फर्धकतणु, होइ उपशम ज्यारे । समता भावे सात पणे, लाभे दर्शन त्यारे ।।६६
सप्तमध्य छ उपशमे, उदय समकित एक । वेदक रुचि तव ऊपजे, लहे धर्म विवेक ।।६७
नदी अ वहे जिम नीरपूर, समल ते जल माहे । समकित पाके वेदक, भ्रान्ति जिन धरम चाहे ।।६८

वेदकतणी उत्कृष्ट स्थिति, जाणो छासठि समुद्र ।
निश्चल पणे जो रहे सदा, सौख्य आपे जिनधर्म ।।६९
सर्वघाती तणो क्षय होय, प्रकृति टले जब सात ।
क्षायिक समकित तव ऊपजे, नीपजे गुण व्रात ।।७०
आकाश जिम अभ्र विना, निर्मल दीसे तेज भान ।
प्रकृति क्षय क्षायिक रुचि, होय गुण-निधान ।।७१
क्षायिकतणी स्थिति उत्तम, जाणो सागर तेतीस ।
अष्ट वरस हीण वे पूर्व कोडि, अधिक भणें जगदीश ।।७२

चौथा गुणस्थान आदे करी, इग्यारमा पर्यन्त । उपशम सम्यग्दर्शन, प्राणी चढे उपशान्त ।।७३

अविरत आदि अप्रमत्त लगे, स्वामी वेदकवन्त ।
चौथा आदि चौदमा लगे, क्षायिकदृष्टि जयवन्त ।।७४
सम्यग्दृष्टी भवी अण, नरक गति न वि जाये ।
शर्करा प्रभृति आदि छ लगे, नारकी न विथा ये ।।७५

भवनवासी व्यन्तर ज्योतिपी, देव देवी ते माहि । कल्पदेवी अवर स्त्रीवेद, षढवेद न वि वाहि ।।७६
दुर्योनि न वि उपजिए हीन दीन दारिद्री । खज पग कुब्ज वामणा, न वि थाये विकलेन्द्री ।।७७

पृथ्वी अप तेज वाय तरु, बेइन्द्री तेइन्द्री चौइन्द्री ।
निगोद म्लेच्छ कुभोगभूमि, पसु असज्ञी पचेन्द्री ।।७८

वार मिथ्या उपपाद माहि, तिहा जन्म न पावें।
सम्यग्दृष्टि प्राणी आ, अल्प योनि न वि जावे ॥७९
बहिरा वारा बोबडा, बहु अन्ध विकराल। कोढी काला कुत्सित, न वि होइ मृत्यु अकाल ॥८०
एह आदे जे कष्टकारी, तिहा नही अवतार। सम्यग्दृष्टी, न वि लहे दु ख ससार ॥८१

दोहा

सम्यग्दृष्टी आतमा, उत्तम स्वर्ग अवतार। इन्द्र अहमिन्द्र ऊपजे, महर्धिक देव मझार ॥१
कामधेनु चिन्तामणी, कल्पवृक्ष निधान। देवीस्यु क्रीडा करे, भूधर चैत्य उद्यान ॥२
उत्तम नर माहे ऊपजे, भोगभूमि भागवत। दशविध कल्पतरुतणा सुख लहे महत्त ॥३
कर्मभूमि कुल महर्धिक, उपजे राज अधिराज। मडलीक महामडलीक, कान्ह केशव बलराज ॥४
चक्रवर्त्ति षट्खडतणी, तीर्थंकर पदसार। सुर नर सहु सेवा करे, आपे मोक्ष दुवार ॥५
सम्यग्दृष्टी सजनतणो, महिमा कह्यो किम जाइ। सुर नर वर सुख भोगवी, अनुक्रमे सिद्ध थाइ ॥६
इम जाणी निश्चय करी, सेवो समकित रत्न। जनमि जनमि सुखदायक, सदा करो तस जत्न ॥७

अथ भास अविकानी

सम्यग्दृष्टी जेह जीव, तेह लक्षण हवे साभलो ए।
नि शकित आदे अष्ट अग सवेग गुण ऊजलो ए ॥१
उपजे पचवीस दोष, समकित ना जत्न करो ए।
तेहतणा सुणो हवे भेद, सम्यग्दृष्टि मल परिहरि ए ॥२

मूढ त्रय मद अष्ट, छ अनायतन दुद्धर ए। सका आदि दोष, पचवीस मल निरभर ए ॥३
देवमूढ, शास्त्रमूढ लोकमूढ त्रण भेद ए। न लहे देवस्वरूप, मूर्खपणु तेहने मन मनि ए ॥४
देव एक अरिहत, तेह विना दूजो नहि ए। अवर करे जो सेव, देवमूढ मल ते सही ए ॥५
अवर सुणी जे शास्त्र, हित अहित ते नवि लहे ए।
तत्त्व अतत्त्व गुण दोष, विचार भेद ते नवि कहि ए ॥६
मारह सगीत कोकशास्त्र, मिथ्यापथ जो रोपीया ए।
ज्योतिष वेद कुवाद कुगुरुमुखे निरूपिआ ए ॥७

लोकमूढ लोकीक, कुतीर्थ जात्राए जे गमिए। गगा जमुना पुष्कर सागर-सगम जे भमिए ॥८
शीत उष्ण पडवेय, भेरव वीज ुरु त्रीजए। रक्ष सयोग पाचमि, शील सातमि आठमि दोजए ॥९
तुलीतु नवमी अहव दशमी, एक द्वादसी अमावास ए।
अे आदि कुतिथि दिन्न, वहु मूढ लोक ते भास ए ॥१०
उत्तरायण होली शिवराति, नव हस्ती नवरात्र कही ए।
गणागुरिणी गोत्राड, साचो रवि सोमवार कही ए ॥११
जाग जागरण चन्द्रायण, गुजन आदि त रोटला ए।
ग्रहण सती सक्रान्ति, कुदान पाप पोटला ए ॥१२
पच ते कुमती भाव, छन्नु पाखण्ड जे कह्या ए।
ते जाणो लोकीक मूढ, जिनशासन बाह्य रह्या ए ॥१३
अशुभ जे आचार, मिथ्यात्व पूजा पाय ए। जे जिनवाणी थी भिन्न, ते सहु मिथ्या पाप ए ॥१४

एणी परे त्रण मूढ, विवेक गुणे करि व्यजो ए। प्रौढ होय समकित्त, हितकारो सदा भजो ए ॥१५
हवे सुणो अष्ट मद, मत्सर मानें पाप उपजे ए। अहितकारी अति कष्ट, राग रोप ते नीपज ए ॥१६
जाति मद कुल मद, लक्ष्मी ज्ञान रूप मद ए। तप बऊ विज्ञान मद, आठ मद पाप प्रमाद ए ॥१७

जाति तणो एह मद, पक्ष मोटो मुझ माय तणो ए।
मोटो कीधो तेणे काज तुनुस्तुलिकसु घणु ए ॥१८

लक्ष चौरासी जीव, अनेक वार जीव ग्रही ए। जाति तणो सक्रम, परपराते कुण लहे ए ॥१९
कुल तणो करे गर्व उत्तम काज वृद्धे कर्युं ए। वश मोटे मुज तात, एम कही मद अनुसरे ए ॥२०

एक सौ साढे नवाणुं, लक्ष कोडि ते कुल कहीया ए।
वली-वली ऊपजे जीव, तात सक्रम ते कुण लहि ए ॥२१
लक्ष्मी तणो किसी गर्व, अल्परिद्धि रामी करी ए।
छिण आवे छिण जाय, वक्ष छाया छिण जिम फिरे ए ॥२२
अल्प भणी श्रुतज्ञान, मत्सर करे मूढमती ए।
ज्ञान लही केवल वोध, तो अज्ञानी कहे जती ए ॥२३

पामी शरीर सरूप, देखी मद करे तेह तणो ए। जिन चक्री काम देव, ते आगले किसू घणू ए ॥२४
पामी अग सवल, कहे शक्ति मुझ ने घणी ए, आगे हुआ कोटी भट्ट, ते सम वड काइ भणु ए ॥२५
अल्प करी उपवास, कठिण तप घणो कीयो ए। एक बेच्यारे पट् मास, ते आगलि काइ भणु ए २६
चित्र-मडण लेख कर्म, सीखी मद स्यु तणु ए। एक एक थी अधिक विज्ञान, तु रीझे किसु घणु ए ॥२७

इणि परे आठे मद, जुजुआ जोउ जुगति करी ए।
समकित ने दीये दोष, मद छाडो मार्दव धरी ए ॥२८

जे-जे कृत्रिम वस्तु, कर्म सजोगे जे मिली ए। छिण-छिण विणसे तेह, सू मद कीजे जू तेटलू ॥२९

कर्मतणे वशि जीव, ऊँच नीच गोत्र ग्रही ए।
हीन अधिक बुद्धि कुबुद्धि, शुभ अशुभ कर्म लहि ए ॥३०
कुदेव कुगुरु तणा भक्त, कुलिगी भवत तेह तणा ए।
कुशास्त्र कुशास्त्र तणा भवत, अनायतन पट् भेद भण्या ए ॥३१
दूपण-सहित कुदेव, परिग्रह-सहित कुलिगि कहीया ए।
कुत्सित आचार कुशास्त्र, पूजा भवित दूपण ग्रह्या ए ॥३२

अष्ट शकादिक दोष, भेद कहुं हवे तेह तणा ए। दोप टाले होइ गुणा, अष्ट भेद अग सुण्या ए ॥३३

जल-विन्दु जीव असख, निगोद देही अनत रासी ए।
सूक्ष्म कह्या तत्त्व भेद, शका दोप सशय भास ए ॥३४

दान पूजा तप ध्यान, अध्ययन धर्म करी ए। निदा न करी वाछे भोग, आकाक्षा दूपण वरी ए ॥३५

जती व्रती गुणवन्त, जल्ल-मल्ल अग रोग देखी ए।
सूग करे जे मूढ, विचिकित्सा दोष पेखीये ए ॥३६
देव-अदेव गुरु-कुगुरु, तत्त्व अतत्त्व जे न वि लहि ए।
धम-अधर्म अविचार, मूढ दोष इणि परि वहि ए ॥३७

सागारी अणगार, चारित्र आचरण वसि ए। मलिण देखि त्रस व्रत, अन आछादन देइ दोप ए ॥३८

उपासक यतिनाथ, कर्म वसि व्रतथी चल्यो ए।
स हि न निज राखे धम अस्थिति करण मल ठवि ए ॥३९
यती व्रती साधर्मी, वात्सल्ल भक्ति ते न वि करे ए।
न वि करे प्रीति उपगार, अवात्सल्ल दूपण वरि ए ॥४०
जिन प्रासादमा प्रतिमा, प्रतिष्ठा अतिशय लोपीय ए।
शासन महिमा करे हानि, अप्रभावना दोष रोपी ए ॥४१
ए इणी परे आठे दोष, मल उ लखी जो परिहरि ए।
तो होय उत्तम अग, नि शकादि अष्ट गुण वरि ए ॥४२
अग विहूणो दर्शन, निज काज असमर्थ कही ए।
अक्षर-हीन जिम मन्त्र, विष-वेदना टाले नही ए ॥४३
राज-अगे जिस भूप, सवल पर्णे वैरी ने जीति ए।
तिम अग-सगे सवल, दशन कुकम क्षेपीइ ए ॥४४
जिम तिम करी भव्य जत्न, दोष पचवीस दूरे करो ए।
अग गुण अष्ट समृद्ध, निर्मल समकित अनुसरो ए ॥४५
शकाकारी सात भय, दुखदाई शल्य त्रणि ए।
कपट माया मिथ्यात निदान शल्य त्यजी जन ए ॥४६
एह लोक भय परलोक, अत्राण अगुप्ति कही ए।
आकस्मिक भय रोग, मरण भय सातमो सही ए ॥४७
सवेग निर्वेद निन्दा, गर्हा, उपशम भक्ति ए। वात्सल्य अनुकम्पा, अष्ट गुणें रुचि उत्पत्ति ए ॥४८
धर्म अधम तणा फल, प्रीति रुचि सवेग गुण ए। ससार-भोग एह अग, वैराग्य निर्वेद पुण ए ॥४९
प्रमाद पर्णे करी काज, निन्दा करे ते आपणी ए।
देव गुरु शास्त्र भक्ति करि, उच्छाह भावना जोडी ए ॥५०
साधर्मी वाच्छल्ल, स्नेह धरे गो-वच्छ परि ए। दया करे परिणाम, अष्ट गुणें दृष्टि वरी ए ॥५१
अष्ट अग सवेग, सम्यग्दृष्टी जीव लक्षण ए।
समकित तणा एह मूल, जिम तिम करो एह रक्षण ए ॥५२
समकित सव प्रधान, जिम तारा माहे चन्द्रमा ए।
पसुअ माहे जिम सिंघ, देव माहे जिम इन्द्र तो ए ॥५३
तरु माहे जिम कल्प वृक्ष, रत्न माहे जिम चिन्तामणी ए।
रस माहे जिम अमृत, धर्म माहे समकित रत्न ए ॥५४

वस्तु छन्द

अगे दर्शन धरो दशन, भवि जिन भावे करी।
मद शका दोप वेगलो, मूढ अनायतननि जु कसमला,
अष्ट अगे करी दृढ पणे, सवेग गुणे करी ऊजला।
अनुदिन जि जन अनुसरे, अगे धरि अति उल्हास,
जिन सेवक पदमो कहे, ते लहे अविचल वास ॥५५

अथ ढाल सहीनी

नि शकित पहिलो निर्मलो, नि काक्षित दूजो भलो। निर्विचिकित्सा तीजो ऊजलो, सही ए ॥१
अमूढ अग चौथो कही, उपगूहन पचमो लही। सस्थितिकरण अग छट्ठो सही ए ॥२
वात्सल्य अग सातमो प्रभावना अग आठमो। आठ अगे दर्शन अति वली ए, सही ए ॥३

नि शकित गुण किणि पाल्यो, जिनशासन तें अजु धार्यु।
अजना चार कथा हवे साभलो ए, सही ए ॥४

भरत क्षेत्र एह जाणीए मगध देश मण आणी ए। राजगृही नयरी वखाणिइ ए सही ए ॥५
जिनदत्त श्रेष्ठी नाम, साधे ते धर्म अर्थ काम। दान पूजा तप जप ते गुण ग्राम ए, सही ए ॥६
चतुर्दशी पोसह कही, समसान रह्यो काउसग्ग धरी। घर सावद्ययोग सव परिहरी ए, सही ए ॥७
आकाश देव युग आवीया, अमितप्रभ पहिलो भावीया। विद्युत्प्रभ दूजो सोहावी उ ए, सही ए ॥८
प्रथम सुर सम्यग्दृष्टी, दूजो मिथ्यादृष्टि। दोय मित्र पहिला नरभव तणा ए, सही ए ॥९
विचार करी ते माहो माहे, धर्मतणी परीक्षा चाही। यमदग्नि पासे आवीया ए, सही ए ॥१०

चिडो चिडी रूप लीयो, तापस कान्ह मालो कीयो।
चिडो मूकी निज काज चिडो चालीयो ए, सही ए ॥११
चिडी कहे कहो कहीये आवसो, न वि आवो तो सम करो।
आवु नही तो कुतापस पापे लीजिए सही ए ॥१२
तदि तापस मन कोपियो, कुच मालो करि लोपियो।
तव पखी उडि आकाशे गया ए, सही ए ॥१३
क्षमा भ्रष्ट तापस देखी, कुमत धर्म तेणे उ वेखी।
चालो मित्र गुरु जोउ तुम तणा ए, सही ए ॥१४

देवे दीठो जिनदत्त श्रेष्ठी, ध्यावे निज मन परमेष्ठी। नि कम्प मेरु जिम, ऊभो रह्यो ए ,सही ए ॥१५
जैन देव ते इम कहे, सद्-गुरु वाणी तत्त जोऊ। जिन शासन श्रावक परीक्षा करो ए, सही ए ॥१६
दुद्धर उपसर्ग ते करे, देव माया विकृति धरे। बहुविधि विक्रिया भय देखविए, सही ए ॥१७
च्यार पहर कीयो उपसर्ग, निश्चल जाणो कायोत्सर्ग। परिषह सहता प्रभात हुओ ए, सही ए ॥१८
तव देव मन रीझियो, जिनशासन धर्मे भीजीयो। प्रगट थई श्रेष्ठी पाये नमे ए, सही ए ॥१९

अमितप्रभ कहु कहु अम्हो, आकाशगामिनी ल्यो तम्हो।
विद्या वले अढाई द्वीप जिन भेटीए, सही ए ॥२०
विधि-सहित्त विद्या दीधी, वस्त्र आभरण देई भक्ति कीधी।
साधर्मी परशसी ते सुर गया ए, सही ए ॥२१
श्रेष्ठी निज घर आवीयो, विद्या लाभें हृप पामीयो।
पूजा लेइ मेरु जिन जात्रा गयो ए, सही ए ॥२२
एक दिन श्रेष्ठी जात्रा जाई, सोमदत्त सेवक मन ध्याई।
विद्या मागे श्रेष्ठी पासे रुवडी ए, सही ए ॥२३
हुआ वुझी मै तम साथे, पूजा द्रव्य धरी निज हाथे।
तुम प्रसादे स्वामी जात्रा करूँ ए, सही ए ॥२४

तब श्रेष्ठी कृपावत, विद्या उपदेश देइ सत । एक मना साभल तू सोमदत्त ए, सही ए ॥२५
कृष्ण चतुर्दशी रात्रें, वे उपवास करी पवित्र । गात्र स्मसान वडतरु पूव शाखि ए सही ए ॥२६
दर्भ तणो शीको रूवडो अठोत्तर सौसरि जोडु । भूतली ऊर्ध्व मुखि खडग तीक्ष्ण ए, सही ए ॥२७
शीके वेसी निर्भयपणें, अपराजित मत्र गुणी । एकेकी सर छेदे शीकातणी ए, सही ए ॥२८
जब मत्र पूरण थाय, तब आकाश विद्या आय । मनवाछित कारज करे घणु ए, सही ए, ॥२९
श्रेष्ठि उपदेश साभली, सोमदत्त पूगीडली । विद्या साधन ते लागो बुध वली ए, सही ए, ॥३०
मत्र जपि एक सर कापी, खडग देखी मन भय व्यापी । सशय हवो तब श्रेष्ठि ने ए, सही ए ॥३१

शस्त्र ऊपर जो होसे पात, तो निश्चय होइ घात ।
इम जाणी ते चढे ऊतरे वली वली ए सही ए ॥३२
अजन चोर तिण अवसरे, आव्यो अजनसुदरि घरे ।
सन्मुख न वि दीठी ते कामिनी ए, सही ए ॥३३
चोर पूछे किम द्यामणी, गणिका कहे सुणो धणी ।
राणी तणो हार द्यो तम्हो आणी ए, सही ए ॥३४

राजा ते प्रजापाल, तस राणी कनकमाल । ते हार विना किसू जीविए ए, सही ए ॥३५
अजन चाल्यो अजन बले, हार हरयो ते छोर बले । अदृश्य रूप ते लेइ नीसर्यो ए सही ए ॥३६
हार तेजे उद्योत कीयो, कोटवाल वेगें लीयो । हार मूकी अजन नीसरी गयो ए, सही ए ॥३७

सोमदत्त कन्हे आवीयो प्रौढ, किसू आक्षेप करे छै मूढ ।
श्रेष्ठी सम्बन्ध तेणें सहुँ कह्यो ए, सही ए ॥३८

अलगो रहे ए हवु कही, शीके वेसी ते सर ग्रही । एकवार ते सघली शर छेदी ए, सही ए ॥३९
श्रेष्ठी वयण करी प्रमाण, जब आवे भूपति सू जाणि । तब आकाश देवें झेलीयो ए, सही ए ॥४०

नि शक अग प्रगट कर्यो, विमान वेंसता सचर्यो ।
जिहा श्रेष्णी छे तिहा जात्रा गयो ए, सही ए ॥४१

मेरु अकृत्रिम जिन भेटीया, पाप सकट वे छुटीया । चारण मुनि गया श्रेष्ठी पासे ए, सही ए ॥४२
तब श्रेष्ठी अचभीयो, अजन देखी मन क्षोभीयो । चोर सम्बन्ध कही थोभीयो ए, सही ए ॥४३
मुनिवर दीयो उपदेश, धर्म लीउ ते यति ईश । सीस नामी अजन एम वीनवी ए, सही ए ॥४४
स्वामी तम्हो कृपा करो, भवसायरतें उतारो । सजम देओ मुझ देव दुलभ ए, सही ए ॥४५
अल्प आयु ते जाणीउ, आसन्नभव्य मन आणीउ । श्रेष्ठें अजन गुण वखाणीयो ए, सही ए ॥४६
दीक्षा दीधी मुनिवर तणी, सह गुरु प्रशसा करे घणी । तप जप सजम अजन करी ए, सही ए ॥४७

ध्यान बले कर्म निजरी, केवल ज्ञान प्रगट करी ।
कैलाशगिरि आवी मुकति श्री वरी ए, सही ए ॥४८

धन्य धन्य मुनि अजन, सिद्ध हवो करम भजन । सुरे आवी निर्वाण पूजा करी ए, सही ए ॥४९

दोहा

नि शकित अग ऊजलो, पाल्यो अजन चोर । श्रेष्ठी वयण निश्चय करी, परिहरि सशय घोर ॥१

निश्चय विणा दर्शण नही, निश्चय विणा कोई नही सिद्धि ।
निश्चय विणा शिव सुख नही, निश्चय विणा नहि वृद्धि ऋद्धि ॥२

सात विसन ते सेवतो, करतो पाप अनन्त । कर्महणी मुकते गयो, अजन समकितवन्त ॥३
इम जाणी निश्चय करी, जिनवर-वचन प्रमाण । सुरनर सुख ते अनुसरी, अनुक्रमे लहे निर्वाण ॥४

भास वीनतीनो

उपराजो जिनधर्म, भोग वाछा नवी कीजिइ ए ।
सतोष धरी निजमत्र, नि काक्षित गुण लीजिइ ए ॥१
कुणे पाल्यो एह अग, जिनशासन माहे ऊजलो ए ।
अनन्तमती सती नाम तेह वृत्तान्त हवे साभलो ए ॥२
अगदेश मझार, चपा नयरी छै भली ए । श्रीवर्द्धन तस राय, लक्ष्मी मती राणी निर्मली ए ॥३
प्रियदत्त श्रेष्ठी नाम, अगवती नारी धणी ए । धम अर्थ साधि काम, देवागम गुरु भक्ति घणी ए ॥४
तस विहु कूखे जाणि, अनन्तमती पुत्री रूवडी ए ।
रूप सौभागनि खाणि, कनकतणी जे सीपडी ए ॥५
एक वार वनहँ मझार, धर्मकीर्ति गुरु आवीया ए ।
वन्दन चाल्यो श्रेष्ठि, निज परिवार सुहावीयो ए ॥६
वन्दे सद्गुरु श्रेष्ठी, धर्मकथा रस साभली ए ।
नन्दीश्वर दिन अष्ट, शीलव्रत लीधो वली ए ॥७
अवसर तेणें श्रेष्ठी, निज पुत्री प्रति भासीउ ए ।
बेटी लेउ तमे शील, विनोद व्रत अपादीयो ए ॥८
वदी सद्-गुरु पाय, ते सहु आव्या निज मन्दिरे ।
यौवन पामी अनुक्रमे, सयल लक्षण देखी सु दरी ए ॥९
विवाह तणी सुणि वात, तात प्रतें बेटी कहे ए ।
तम्हो देवास्यु अम्हे व्रत, शीलवती वर किम गुही ए ॥१०
बाप बोल्यो सुण बेटी, विनोद व्रत देवारीयो ए । अष्ट दिन पर्यन्त, इम कही लेवारीयो ए ॥११
वलतु कहे ते पुत्री, धर्मकाज किस्यु हासु ए ।
मुझ नियम सीमा न कीध, वली वली कहु किसु ए ॥१२
तव भाष्यो थयो साह, निश्चल मन बेटी तणु ए ।
अविचारी करे जे काज, पश्चात्ताप होइ घणु ए ॥१३
पापी करावे पाप, धर्मी नें धर्मरुचि ए । हासे लेवा सु नेम, पुण्यतणो हवे सचय ए ॥१४
धन्य धन्य पुत्री मन्न, तात कहे रहो घरे ए । सखी सजन सहित, दान पूजा तप करे ए ॥१५
एक वार वनहिं मझार, चैत्रमासे क्रीडा करे ए ।
हरषें हिंडोले हीलत, निज सखी स्यु परिवरी ए ॥१६
तिण समय ते जाण, विजयाध दक्षिण श्रेणी ए ।
किन्नर नगर को ईस, कुडल मडित विद्या धणी ए ॥१७
सुकेशी तस नार, विमान बेसी बिन्हे चालिया ए ।
शोभा जोइ भूपीठ, कन्या देखी मन हालिया ए ॥१८
काम जाग्यो मन माहे, ए कन्या विण जीववु किस्यु ए ।
पाछो आव्यो मूको घर नारि, कन्या पासे आव्यो वसी ए ॥१९

तब श्रेष्ठी कृपावत, विद्या उपदेश देइ सत । एक मना साभल तू सोमदत्त ए, सही ए ।।२५
कृष्ण चतुर्दशी रात्रें, वे उपवास करी पवित्र । गात्र स्मसान वडतरु पूर्व शाखि ए सही ए ।।२६
दर्भ तणो शीको रूबडो अठोत्तर सौसरि जोड्ड । भूतली ऊर्ध्व मुखि खडग तीक्ष्ण ए, सही ए ।।२७
शीके वेसी निर्भयपणें, अपराजित मत्र गुणी । एकेकी सर छेदे शीकातणी ए, सही ए ।।२८
जब मत्र पूरण थाय, तब आकाश विद्या आय । मनवाछित कारज करे घणु ए, सही ए, ।।२९
श्रेष्ठि उपदेश साभली, सोमदत्त पूगीडली । विद्या साधन ते लागो वुध वली ए, सही ए, ।।३०
मत्र जपि एक सर कापी, खडग देखी मन भय व्यापी । सशय हुवो तव श्रेष्ठि ने ए, सही ए ।।३१

शस्त्र ऊपर जो होसे पात, तो निश्चय होइ धात ।
इम जाणी ते चढे ऊतरे वली वली ए सही ए ।।३२
अजन चोर तिण अवसरे, आव्यो अजनसुदरि घरे ।
सन्मुख न वि दीठी ते कामिनी ए, सही ए ।।३३
चोर पूछ किम द्यामणी, गणिका कहे सुणो धणी ।
राणी तणो हार द्यो तम्हो आणी ए, सही ए ।।३४

राजा ते प्रजापाल, तस राणी कनकमाल । ते हार विना किसू जीविए ए, सही ए ।।३५
अजन चाल्यो अजन बले, हार हरयो ते छोर बले । अदृश्य रूप ते लेइ नीसर्यो ए सही ए ।।३६
हार तेजे उद्योत कीयो, कोटवाल वेगें लीयो । हार मूकी अजन नीसरी गयो ए, सही ए ।।३७

सोमदत्त कन्हे आवीयो प्रौढ, किसू आक्षेप करै छैं मूढ ।
श्रेष्ठी सम्बन्ध तेणें सहुँ कह्यो ए, सही ए ।।३८

अलगो रहे ए हवु कही, शीके वेंसी ते सर ग्रही । एकवार ते सघली शर छेदी ए, सही ए ।।३९
श्रेष्ठी वयण करी प्रमाण, जब आवे भूपति मू जाणि । तब आकाश देवे झेलीयो ए, सही ए ।।४०

नि शक अग प्रगट कर्यो, विमान वेंसता सचर्यो ।
जिहा श्रेष्णी छे तिहा जात्रा गयो ए, सही ए ।।४१

मेरु अकृत्रिम जिन भेटीया, पाप सकट वे छुटीया । चारण मुनि गधा श्रेष्ठी पासे ए, सही ए ।।४२
तब श्रेष्ठी अचभीयो, अजन देखी मन क्षोभीयो । चोर सम्बन्ध कही थोभीयो ए, सही ए ।।४३
मुनिवर दीयो उपदेश, धर्म लीउ ते यति ईश । सीस नामी अजन एम वीनवी ए, सही ए ।।४४
स्वामी तम्हो कृपा करो, भवसायरतें उतारो । सजम देओ मुझ देव दुर्लभ ए, सही ए ।।४५
अल्प आयु ते जाणीउ, आसन्नभव्य मन आणीउ । श्रेष्ठें अजन गुण वखाणीयो ए, सही ए ।।४६
दीक्षा दीधी मुनिवर तणी, सहू गुरु प्रशसा करे घणी । तप जप सजम अजन करी ए, सही ए ।।४७

ध्यान बले कर्म निजरी, केवल ज्ञान प्रगट करी ।
कैलाशगिरि आवी मुकति श्री वरी ए, सही ए ।।४८

धन्य धन्य मुनि अजन, सिद्ध हवो करम भजन । सुरे आवी निर्वाण पूजा करी ए, सही ए ।।४९

दोहा

नि शकित अग ऊजलो, पाल्यो अजन चोर । श्रेष्ठी वयण निश्चय करी, परिहरि सशय घोर ।।१

निश्चय विणा दर्शण नही, निश्चय विणा कोई नही सिद्धि ।
निश्चय विणा शिव सुख नही, निश्चय विणा नहिं वुद्धि ऋद्धि ।।२

अनन्तमती तिणि वार, कमतणा फल चिन्तवी ए।
तव आर्यिका आवी एक, पद्मश्री नामे स्तवी ए ॥४०
बाला देखी गुणवन्त, आर्या पूछे मीठी भाप ए।
सकल कह्यो सम्बन्ध, साधर्मी जाणि विश्वास कीयो ए ॥४१
आर्यिका लेई ते बाल, तेठी आवी श्री जिन गेह ए।
साहाय करे साधर्मी, साँचो सन्त गुण सस्नेह ए ॥४२
साधर्मी वरे आहार, तप जप सजम आचरि ए।
विज्ञान विजन पाक, ते कन्या चतुराई करे ए ॥४३
वम्या अन्न समान, भोग-वाछा न वि करे ए।
सन्तोप धरि निज मन्न, आर्यिका पासे ते रहे ए ॥४४
तिण समये प्रियदत्त, पुत्री-वियोगे विह्वल थयो ए।
दु ख विसामा काज, तीर्थजात्रा अजोध्या गयो ए ॥४५

ते अ नगर मझार, जिनदत्त सालो वसे ए। साह आव्यो तेह गेह सजन-सन्मान दे तस ए ॥४६
पुत्री-विरह-सम्बन्ध, परस्परि ते जाणियो ए। वात करे सुख-दु ख, कम-विपाक वखाणियो ए ॥४७
प्रभात समय श्रेष्ठि, स्नान धौत वस्त्र पहिरिए।
अष्टप्रकारी लेई पूज, जिनमन्दिरने सचरिए ए ॥४८
पूजे जिनवर-पाय, सद्गुरु स्वामी वदिया ए।
साभली श्री जिनवाणि, धमध्याने आनदिया ए ॥४९
जिनदत्त केरी नारि, कन्या तेठी प्रीते जडी ए।
अगण पूराव्यु चौक, रसोई सन्धावी रूअडी ए ॥५०
साधरमी करी काज, कन्या निज स्थानक गई ए।
तब आव्यो प्रियदत्त, जोई मडण सन्मुख थई ए ॥५१

स्वस्तिक कीधो जेण, तेतेडो चौसाल कए। विस्मय पाम्यो साह, तव अ वीते वालक ए ॥५२
जव दीठी ते वाल, साह नेत्र नीर वहे ए। हा हा तू मुझ धीह, मुझ विण तु किहा रही ए ॥५३
वाप वेटी तिण वार, कठ लागी रुदन करी ए।
सजन सहु परिवार, प्रतिवोध वाणी उचरी ए ॥५४
अहो अहो कर्म-विपाक, पापकर्मे वियोग होइ ए। शुभकर्मे सजोग, जन पडित सदा कहि ए ॥५५
पिता आगल ते पुत्री-हरण वात सवल कही ए। पछे जीम्या सज्जन, कन्या सुख तें रहो ए ॥५६
तात कहे सुणो धीय, हवे आवो आपणे घर ए। वलतु कहै ते वाल, घर सुख पूरे मुझ ए ॥५७
दीक्षा देवारो अम्ह तात, जो वाछो हित मुझ ए।
तात प्रशसि धन्य मन्न, धन्य धन्य शील तुझ तणो ए ॥५८
क्षमी क्षमावी सजन, पदमसिरि आर्जिका पासे ए।
धरियो सजमभार, अनन्तमती ध्यान धरे ए ॥५९
समकित फले तेह, ज्ञान अभ्यास सदा करि ए। तीव्र करे वहु तप, जप ध्यान धम धरी ए ॥६०
जव जाण्यो क्षीण आय, समभावे सन्यास लीयो ए।
छेदि नारीनो लिंग, समाधिमरण तेणे कीयो ए ॥६१

कन्या हरी चाल्यो खग, जिम नागिण गरुड ग्रहिए।
मनोरथ करे ते मूढ, कठिण कष्ट कन्या लहिए ॥२०
सुकेशी तत्काल, कतकेडे वेग वली ए। नारी नही अ विश्वास, आवती दीठी ते कसमली ए ॥२१
नारी तणो देखी कोप, ते कन्या खगे तजी ए।
प्राण लघबी प्रभाव, सन्नि सन्नि ते वन भजी ए ॥२२
रुदन करे अपार, एकली घोर अटवी माहि ए। दु ख देखे ते बाल, क्रूर वनचर भय बहू ए ॥२३
तब आव्यो एक भील, कन्या लेइ निज घर गयो ए।
देखी बालारूप, मोह-मयण विह्वल थयो ए ॥२४
भील कहे घणु नार, यौवन इन्द्रीफल भोगवो ए।
हूँ भीम पल्लीनाथ मुझ साथे सुख अनुभवो ए ॥२५
कन्या मन अविचल, भीम भाषा भेदे नही ए। उपसर्ग करे ते दुष्ट, राति मरम वयण कही ए ॥२६
सती अ शील प्रभाव वनदेवी आवी उचरि ए।
रे पापी भील मूढ, सती अ सग तु किम करी ए ॥२७
हवे हुँ टालु तुझ राजि, काज सहित प्राण हरू ए।
तब हुओ भील भयभीत, ते बाला दूरे करी ए ॥२८
पुष्प नामे सार्थवाह, ते कन्या आपी तस ए। देखी रूप विशाल, साह हवो काम वशी ए ॥२९
कन्या नें देखाडे लोभ, भार्या थाऊ मुझ घर तणी ए।
तू मुझ तात समान, वलती कन्या इस भणी ए ॥३०
अविचल जाण्यो तस मन्न, साह अजोध्या नयरी गयो ए।
कामसेना वेश्या गेह, कन्या आपी निश्चल थयो ए। ३१
वेश्या कहे सुणो बाल, यौवन भोग सुख अनुसरो ए।
न वि भीजे तस मन्न, निश्चल जिम मेरु सिरो ए ॥३२
नगरस्वामी सिन्धराय, कन्या आपी वेश्या कहे ए।
ए तुम्ह होसे पटदेवि, स्त्री लोभे भूप ग्रही ए ॥३३
रात्रि समये ते भूप, कामचेष्टा करे घणी ए।
आ ले वस्त्र- आभरण, देवी थाउ मुझ पटतणी ए ॥३४
माने नहि तस बोल, क्रोधे भूप उपसर्ग करी ए।
सती अ गणे नवकार, परमेष्ठी पद मनि धरी ए ॥३५
सती अ पुण्य प्रभाव, नगर देवी सहाय कीयो ए।
यष्टि मुष्टि देई प्रहार, राजा खेद-खिन्न कीयो ए ॥३६
देवी कहे भूप मूढ, अन्याय कर्मका माडीयो ए।
हवे हरू तुम राज्य-काज सहित प्राण खडु ए ॥३७
तब थयो भूप भयभीत, कन्या घर थी मोकली ए।
देवी स्यु करी क्षमितव्य, निज स्थानें गई एकली ए ॥३८
धन्य धन्य शील-प्रभाव, धन्य धन्य मन कन्या तणो ए।
आसन कम्प्या देव देवी साहाय करयो घणु ए ॥३९

परिचय

सोलापुर निवासी स्व० ब्र० जीवराज गौतमचद दोशी कई वर्षों से उदासीन होकर धर्म-कार्यमे अपनी वृत्ति लगा रहे थे। सन् १९४० मे उनकी प्रबल इच्छा हो उठी कि अपनी न्यायोपार्जित सपत्तिका उपयोग विशेषरूपसे धर्म और समाजकी उन्नतिके कार्यमे करें। तदनुसार उन्होने समस्त देशका परिभ्रमण कर जैन विद्वानोसे साक्षात् और लिखित रूपसे सम्मतियाँ इस बातकी सग्रह की, कि कौनसे कार्यमे सपत्तिका उपयोग किया जाय। स्फुट मतसचय कर लेनेके पश्चात् सन् १९४१ के गीष्मकालमे ब्रह्मचारीजीने सिद्धक्षेत्र गजपथा (नाशिक) के शीतल वातावरणमे विद्वानोकी समाज एकत्रित की और ऊहापोहपूर्वक निणयके लिए उक्त विषय प्रस्तुत किया।

विद्वान् सम्मेलनके फलस्वरूप ब्रह्मचारीजीने जैनसस्कृति तथा जैनसाहित्यके समस्त अगोके सरक्षण उद्धार और प्रचारके हेतु **'जैन सस्कृति सरक्षण सघ'** नामक सस्थाकी स्थापना की। उसके लिये रु० ३०,००० के दानकी घोषणा कर दी। उनकी परिग्रहनिवृत्ति बढती गई। सन् १९४४ मे उन्होने लगभग दो लाखकी अपनी सपूर्णसपत्ति सघको ट्रस्टरूपसे अर्पण की। इस सघके अतर्गत 'जीवराज जैन ग्रन्थमाला' द्वारा प्राचीन प्राकृत सस्कृत हिंदी तथा मराठी पुस्तकोका प्रकाशन हो रहा है।

आजतक इस ग्रन्थमालासे हिंदी विभागमे ३४ पुस्तकें, कन्नड विभागमे ३ पुस्तकें, तथा मराठी विभागमे ४४ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

प्रस्तुत ग्रन्थ इस ग्रन्थमालाका हिंदी विभागका ३४ वाँ पुष्प है।

अनन्तमती तिणि वार, कर्मतणा फल चिन्तवी ए ।
तव आर्यिका आवी एक, पद्मश्री नामे स्तवी ए ॥४०
बाला देखी गुणवन्त, आर्या पूछे मीठी भाप ए ।
सकल कह्यो सम्बन्ध, साधर्मी जाणि विश्वास कीयो ए ॥४१
आर्यिका लेई ते बाल, तेठी आवी श्री जिन गेह ए ।
साहाय करे साधर्मी, साँचो सन्त गुण सस्नेह ए ॥४२
साधर्मी घरे आहार, तप जप सजम आचरि ए ।
विज्ञान विजन पाक, ते कन्या चतुराई करे ए ॥४३
वम्या अन्न समान, भोग-वाछा न वि करे ए ।
सन्तोप धरि निज मन्न, आर्यिका पासे ते रहे ए ॥४४
तिण समये प्रियदत्त, पुत्री-वियोगे विह्वल थयो ए ।
दु ख विसामा काज, तीर्थजात्रा अजोध्या गयो ए ॥४५

ते अ नगर मझार, जिनदत्त सालो वसे ए । साह आव्यो तेह गेह सजन-सन्मान दे तम ग ॥४६
पुत्री-विरह-सम्वन्ध, परस्परि ते जाणियो ए । वात करे सुख-दु ख, कर्म-विपाक वखाणियो ए ॥४७
प्रभात समय श्रेष्ठि, स्नान धौत वस्त्र पहिरिए ।
अष्टप्रकारी लेई पूज, जिनमन्दिरने सचरिए ए ॥४८
पूजे जिनवर-पाय, सद्गुरु स्वामी वदिया ए ।
साभली श्री जिनवाणि, धमध्याने आनदिया ए ॥४९
जिनदत्त केरी नारि, कन्या तेठी प्रीते जडी ए ।
अगण पूराव्यु चौक, रसोई सन्धावी रूअडी ए ॥५०
साधरमी करी काज, कन्या निज स्थानक गई ए ।
तव आव्यो प्रियदत्त, जोई मडण सन्मुख थई ए ॥५१

स्वस्तिक कीधो जेण, तेतेडो चौसाल कए । विस्मय पाम्यो साह, तव अ वीते बालक ए ॥५२
जब दीठी ते बाल, साह नेत्र नीर वहे ए । हा हा तू मुझ धीह, मुझ विण तु किहा रही ए ॥५३
बाप बेटी तिण वार, कठ लागी रुदन करी ए ।
सजन सहु परिवार, प्रतिवोध वाणी उचरी ए ॥५४
अहो अहो कर्म-विपाक, पापकर्मे वियोग होइ ए । शुभकर्मे सजोग, जन पडित सदा कहि ए ॥५५
पिता आगल ते पुत्री-हरण वात सवल कही ए । पछे जीम्या सज्जन, कन्या सुख ते रही ए ॥५६
तात कहे सुणो धीय, हवे आवो आपणे घर ए । वलतु कहै ते बाल, घर सुख पूरे मुझ ए ॥५७
दीक्षा देवारो अम्ह तात, जो वाछो हित मुझ ए ।
तात प्रशसि धन्य मन्न, धन्य धन्य शील तुझ तणो ए ॥५८
क्षमी क्षमावी सजन, पदमसिरि आर्जिका पासे ए ।
धरियो सजमभार, अनन्तमती ध्यान धरे ए ॥५९
समकित फले तेह, ज्ञान अभ्यास सदा करि ए । तीव्र करे बहु तप, जप ध्यान धर्म धरी ए ॥६०
जब जाण्यो क्षीण आय, समभावे सन्यास लीयो ए ।
छेदि नारीनो लिंग, समाधिमरण तेणे कीयो ए ॥६१

सहस्रार बारमे स्वर्ग, महर्धिक देव ऊपजो ए।
सहज वस्त्र आभरण वैक्रियिक देह ते नीपज्यो ए ॥६२
कल्पवृक्ष विमान, देवी स्यु क्रीडा करि ए ।जिनकेवली पूजे पाय, धमरुचि सदा धरि ए ॥६३

दोहा

विनोद शील नियम ग्रही, अनन्तमती सती नार।
स्वगतणा मुख अनुभवी, ते तरसी ससार ॥६४
नि काक्षित अग ऊजलो पाले जे नरनार। स्वर्ग मोक्षसुख ते लहे, अन्त तिरे ससार ॥६५
सती-शिरोमणि सीता कही, द्रौपदी चन्दनबाल।
नि काक्षित गुण आदरी, पाम्या सुख गुण माल ॥६६
इम जाणिय दृढ मन करी, समकित पाले सार। जिनसेवक **पदमो** कहे, ते पामे भवपार ॥६७

अथ तृतीय अग लिख्यते। ढाल भद्रबाहुनी

निर्विचिकित्सा पालो अग, रोग देखी श्रावक यति सघ, सूग साधमी परिहरी ए ॥१
निर्विचिकित्सा धर्यो केणे अग, तेह तणो हवे कहु प्रसग, भूप उद्दायण कथा सुणो ए ॥२
भरतक्षेत्र माहे कच्छ देश, रौरवनयर तणो नरेश, उद्दायण भूप तणो ए ॥३
प्रभावती नगमे तस राणी, पूजे श्रीजिन सद्गुरु वाणी, दान पूजा जप तप करी ए ॥४
एक बार सौधर्म स्वगनाथ, सभा पूरी बैठो देवसाथ, धमतणा गुण वर्णवे ए ॥५
निर्विचिकित्सा समकित अग, उद्दायण पाले अभग, रग सदा जिनधम तणु ए ॥६
इन्द्र प्रशसा सुणी तब देव, विस्मय पाम्यो वासव देव, परीक्षा जोवानें चालीओ ए ॥७
वृद्ध मुनिवर तणु रूप लीधो, गलित कोढ व्रण अगते कोधो, देह दुर्गन्ध माखी भमे ए ॥८
थर-थर कापे मुनिवर-देह, मध्याह्न समय आव्यो राय-गेह, तिष्ठ तिष्ठ करी पडिगाहिआ ए ॥९
आसन देय पखाले पाय, विधि-सहित आहार देई राय, प्रभावती भक्ति करै ए ॥१०
तब मुनि वम्यो आहार, राय-अग ऊपर अपार, दुर्गन्ध अग व्यापीयो ए ॥११
हा हा भूप कहे मुनिवृद्ध, अजाणपणें अन्न दीधो विरुद्ध, भूप निन्दा करे आपणो ए ॥१२
वली मुनि वमे बीजी वार, प्रभावती छाटी सविचार, अवर जन सहु दूरे गया ए ॥१३
सूग नवि आणी राजा राणी, निमल प्रासुक लेय पाणी, मुनि अग पखालियो ए ॥१४
तब देवें प्रगट रूप लीयो, राय-राणी स्तवन बहु कीयो, धन्य धन्य इन्द्रे प्रशसिया ए ॥१५
देवे वस्त्र आभूषण आपो, समकित महिमा महीथल थापी गुण स्तवी सुर घर गयो ए ॥१६
भूप राणी सुखे करे राज्य, सारै प्रजा तणू बहु काज, न्याय विधि राज भोगवे ए ॥१७
धरम काज करता दिन जाय निमित देखी वैराग्य मन ध्याय, निज पुत्र राज थापियो ए ॥१८
श्री वधमान जिनेश्वर पासें दीक्षा लेइ ते शास्त्र अभ्यासे, ध्यान अध्ययन तप आचरि ए ॥१९
शुक्लध्याने घाती कमचूरी, केवलज्ञान ते वाछित पूरी, धम उपदेश देइ निमलो ए ॥२०
अग अघाती कर्म क्षय कियो साम्राज्य सिद्ध पद लियो, उद्दायण मुनि मुकतें गयो ए ॥२१
प्रभावती राणी तिणी वार, वैराग लीधो सयम भार, तप जप सूधो आचरि ए ॥२२
निर्मल समकित पाले चग, तब वलें टाले स्त्री लिंग, मरण समाधि साधीयो ए ॥२३
ब्रह्म स्वर्ग ते उपज्यो देव, महर्धिक वैक्रियिक नीपज्यो, वस्त्राभरण ते लंकर्यो ए ॥२४
उद्दायण भूप पाम्या मोक्ष, प्रभावती राणी देव सौख्य, निर्विचिकित्सा अग करी ए ॥२५

मुनिवर हुवा श्रीनन्दषेण, निर्विचिकित्सा अग पाल्यो तेण, दशमे स्वर्गे ते देव हुओ ए ।।२६
पछी हुओ वसुदेव सुजाण तेह कथा हरिवंशे जाण अवर जीवे अग पालियो ए ।।२७

चौथो अमूढ अग प्ररूप्यते

एह रहीयो इहा वृत्तान्त अमूढ अग कहुँ हवे सन्त, रेवती राणी कथा सुणो ए ।।२८
देव आगम गुरु परीक्षा कीजे, सगुण निर्गुण भेद लहीजे, मूरखपणु दूरे तजो ए ।।२९
विजयार्ध एह दक्षिण श्रेणी मेघकूट नयर तणो धणी, चन्द्रप्रभ खेचरपती ए ।।३०
राजरिद्धि सुख भोगवे राय, अढाई द्वीप माहे जात्रा जाय, पूजे जिन केवली पद ए ।।३१
जात्रा करतो आव्यो दक्षिण देश मथुरा एह, शशिनामे सूरी भेटीआ ए ।।३२
धर्मसुणी उपज्यो वैराग, सगतणु करि परित्याग, चन्द्रशेखर राज थापियो ए ।।३३
जात्रा काजे विद्या एक राखी, क्षुल्लक दीक्षा लीधी गुरु साखी, तप जप सजम आचरे ए ।।३४
ब्रह्म कहे सुणो, गुरु तम्हो उत्तर मथुरा जाइ अम्हो, कहोनो काई कहो छो किसु ए ।।३५
गुरु कहे सुणो वन्छ विचक्षण, सुव्रत मुनि छे शुभ लक्षण, मुझ वन्दना कहियो तम ए ।।३६
मथुरातणो स्वामी छे वरुण, तस राणी रेवती शुभ चरण, धम वृद्धि कहियो तस ए ।।३७
ब्रह्म पूछी सद् गुरु त्रण वार, अवर काई भविक है गुणधार, आज्ञा लेइ ब्रह्म मचर्यो ।।३८
तब मन चिंते ब्रह्मचारि, भव्यसेन भणे अग इग्यारि, तेहनें काइ कह्यो नही ए ।।३९
विस्मय पाम्यो ते मन माहे, तेह तणी हवे परीक्षा चाहे, कवण कारण छे तेह तणु ए ।।४०
उत्तरमथुरा वनहि मझार, सुव्रत मुनि वद्या भवतार, निज गुरु तणी वदना कहीइ ए ।।४१
ब्रह्मनें धर्मवृद्धि तेणें दीधी, गुप्त गुरु प्रतिवदना कीधी, सामाचारी जती तणी ए ।।४२
क्षुल्लक तणो वात्सल्य वहु कीयो, विनय सहित सन्मान ते दीयो माहो माहे क्षेम प्रश्न करी ए ।।४३
भव्यसेन गुनिवर छे जिहा, ब्रह्मचारि आव्यो वली तिहा, नमोस्तु करी ऊभो रह्यो ए ।।४४
वलती धर्मवृद्धि न वि दीधी, साधर्मी भणि भक्ति न वि कीधी, मिथ्या अहकारे सचर्यो ए ।।४५
विद्या गर्व-भूधर ते चढी उ, अभ्यन्तर अज्ञाने जडीउ, नडीयो मोह कर्म घणु ए ।।४६
ते मुनि उपज्यो मिथ्या मान, न वि जाणें ते भेदनें ज्ञान, ज्ञान विना शुभ गुण नही ए ।।४७
प्रभात समय मल-मोचन जाय, विनय सहित ब्रह्म साथें थाय, जलकुडी निजकर ग्रही ए ।।४८
चन्द्रप्रभ विद्याप्रभाये एकेन्द्री अकुर सहावे, हरित्त कायमय पथ कियो ए ।।४९
भव्यसेन अकुरा वाहे, एकेन्द्री कह्या आगम माहे, मन चिंतवि पण रुचि नही ए ।।५०
ते अकुरा ऊपर मुनि चाले, यत्न विना ब्रह्म दुख साले पाप प्रमादे ऊपजे ए ।।५१
ब्रह्मचारी प्रपच जव कीयो, कुण्डी जल सोसी तव लियो, दीनू कमडलु रीतो करी ए ।।५२
व्यामि जई कु डी मुनि जोई जल विना शौच किम होई मन मूकी पछे वोलीयो ए ।।५३
ब्रह्मचारी कहे भव्यसेन मृतिका शौच करो तमे तेह, सर दाखी अलगो रह्यो ए ।।५४
सरोवर जाई तेणें लीधो कृपाभाव मुनि नवि कीधो, विचार थकी ते वेगलो ए ।।५५
सुध बोध कुज्ञान ते थाइ, सूर्य तेज घूक नवि पाइ, तिम मिथ्या ते जीव दूमियो ।।५६
शुद्ध स्वाद सहजे जिम दूध, कटुकलु वी थाइ असुद्ध, मिथ्या अज्ञान ते वासीयो ए ।।५७
अभव्यसेन नामे तस दीयो, लोक माहे प्रगट गुण कीयो, ब्रह्मचारी निजस्थानक गयो ए ।।५८
एक दिन पुर पूरव पगार, ब्रह्मा रूप कीया मुख चार कमलासन कठे सूत्र धरे ए ।।५९
कोपीन करि कमडल पात्र, ब्रह्म वेद भणें वहु छात्र, गात्ररूप लोक-रजक ए ।।६०

राजा आदि पुरलोक, आव्या, अभव्यसेन आदें मुनि भाव्या, ब्रह्मा देखी मन रीझिया ए ॥६१
रेवती राणी आगल ते कहीयो, ब्रह्मा प्रत्यक्ष पिते रहीयो, प्रेरी घणु पण गई नही ए ॥६२
दूजे दिन पोलितें दक्षिण, महेशरूप कीयो रे विलक्षण, बैल बैठो गौरी साथे ए ॥६३
वरुण आदि आव्या पुरि-जन्न, चले नही रेवती मन्न, महेश देखी लोक मोहिया ए ॥६४
तीजे दिन पुर पश्चिम द्वार, बिष्णु-गोपी सोलसह कुमार, गदा शख-चक्र धरी ए ॥६५
विष्णु वन्दन बहु लोक ते जाइ, विस्मय पामी आव्यो ते राइ, कृष्ण मायाए लोक रजीया ए ॥६६
मूढलोक अचम्भो ते पाम्या, घरे रही ते रेवती रामा, भामे पहा भोला लोक ए ॥६७
दिन चौथे उत्तर दिस जाण, समोसरण जिन करे वखाण, बार सभा पुरे दीसए ॥६८
लोक सहित भूपे जई वद्या, अभव्यसेन मुनि आनद्या, जिन देखी लोक चमकीया ए ॥६९
रेवती रानी चिन्ते तिण वार, जिन चौबीस गया मोक्ष दुवार, ब्रह्मारूप ते को छै नही ए ॥७०
होइ गया ते रुद्र इग्यार, नव केशव ते गति अनुसार, जिन आगम माहे साभल्यो ए ॥७१
विद्याधर अथवा कोइ देव, कपट मायाए करावे सेव, देव दानव वैक्रिय करी ए ॥७२
चन्द्रप्रभ माया सहु छाडी, वृद्ध ब्रह्म तणु रूप माडी, कापि काया रोग घणो ए ॥७३
मध्याह्न समय तस आगण आवी, भूमि पडयो ते मूर्च्छा आवी, देखी रेवती हाहाकार करे ॥७४
शीतल जल धाली सीस नवाय सावधानी करी ब्रह्म काय, प्रासुक आहार तेणें दीयो ए ॥७५
आहार लेय वमे ब्रह्मचार, रेवती सुश्रूषा करे तिणी वार, अग पखालि निशकपणे ए ॥७६
तब चुल्लक प्रगटरूप लीयो, रेवती गुण प्रशसा कीयो, धन धन तुम अमूढगुण ए ॥७७
निज गुरुनी ते धरमवृद्धि दीधी, तुझ नामे मे जात्रा कीधी, गुण स्तवी ब्रह्मचार गयो ए ॥७८
धन धन राणी अग अमूढ, धन धन महिमा जस प्रौढ, अमूढव्रतें मन चल्यो नहीं ए ॥७९
वरुणराय तस रेवती राणी, जिन पूजे सुणें सद्-गुरुवाणी, राज रिद्धि सुख अनुभवी ए ॥८०
वरुणराय पाम्यो वैराग्य, दीक्षा लीधी करी संग त्याग, वसुकीर्त्ति राजा थापीयो ए ॥८१
रेवती राणी तप जप सजम सुद्धो पाले, मरण समाधि आप सभाले, माहेन्द्र स्वर्गे ते देव हुओ ए ॥८२
रेवती राणी सजम तप बलीउ, सम दम, तप बहु तेणे कीयो राग रोप मद परिहरो ए ॥८३
समकित बलें टाल स्त्रीलिंग, ब्रह्म स्वर्गे हुओ देव उत्तु ग, महर्धिक सपदा लकर्यो ए ॥८४
मेरें नदीश्वर जात्रा जाय जिनकेवली सदा पूजे पाय, धरम ध्याने सुखे रहे ए ॥८५

वस्तु छन्द

अमूढ अग धरो अमूढ अग धरो
भवियण इणि पर देव तत्त्व गुरु परखीय मूर्ख पणू तजि अति निभर,
रेवती स्त्रीलिंग छेदीने, पचमे स्वर्ग हुओ देव मनोहर।
अवर जीव बहु आदरो अमूढ अग गुण धार, जिन-सेवक **पदमो** कहे ले पामे भव पार ॥८६

उपगूहन अग । ढाल हेलिनी

उपगूहन पालो अग, दोष अछादु व्रती तणु हेलि। कर्म-उदय होय दोप, न कीजे तेह घणु हेलि ॥१
ढाकी पर अवगुण गुण वालो, पर उजला हेलि।
कुणे पाल्यो एह अग, तेह कथा हवे सभलो हेलि ॥२

सोरठ देश मझार, पाटलीपुर नयर थणी हेलि ।
जसोधर तस राय, सुषमा राणी तेह वणी हेलि ॥३
तस बहु कूखे पुत्र, सुवीर नामे उपज्यो हेलि । कर्म तणें प्रभाव सप्त विमन ते नीपज्यो हेलि ॥४
उत्तम कुल तस जात, मात तात तस रुवडा हेलि ।
कहिनें न दीजे दोप, पाप कर्म जीव वहु नडा हेलि ॥५
विसन वाहायो रे कुमार, राजरिद्धि मूकी नीमर्यो हेलि ।
सुवीर हूओ ते चोर अवर चोरें बहु परिवर्यो हेलि ॥६
गौडदेश इह जाण ताम्रलिप्त नयरी थणी हेलि ।
जिनेन्द्रभक्त नामे श्रेष्ठि, देव शास्त्र गुरु भक्ति घणी हेलि ॥७
सात क्षेत्र वेवे वित्त, जिन-भवन जिन-विम्ब तणा हेलि ।
चतुविधि सघनें दान, ज्ञान विस्तारे जिन भण्या हेलि ॥८
जिन गेह् मातमी भूमि, प्रासाद कीयो श्री जिन तणो हेलि ।
श्री पार्श्व जिन प्रतिमा सुण्यो जस ते घणो हेलि ॥९
प्रतिमा ऊपर त्रण छत्र, दड वैडूर्य रत्न धर्यो हेलि ।
अमोलिक मणि तेजवन्त, सत सदा रक्षा करे हेलि ॥१०
तेह ज रत्न प्रभाव, पर देशें जस विस्तर्या हेलि ।
साचो जे गुणवन्त, मत महिमा ले प्रसरे हेलि ॥११
सुवीर सुणी ते वात, निज साथी प्रति कहे ते हेलि ।
जेह ल्यावे ए रत्न, रत्न सहित जस विस्तरे हेलि ॥१२
सूपक कहे चोर, रत्न आणु इन्द्र सिर तणु हेलि ।
एह मणि कुण वात, क्षात वोलु छै किसु घणु हेलि ॥१३
आदेश लेय ते चोर, गूढ ब्रह्म वेष कीयो हेलि ।
कोपीन धरी ऊ खड वस्त्र, जल पात्र निजकर लीयो हेलि ॥१४
तप करे बहु कष्ट, क्षीण अग कीयो घणु हेलि ।
सम दम वहु धरि नेम, जस विस्तार्यो तेणें आपणो हेलि ॥१५
देश नयर द्रोण ग्राम, विहार करतो ते आवीयो हेलि ।
ताम्रलिप्त पुर पास, गुण श्रेष्ठि भावीयो हेलि ॥१६
महिमा करी तस प्रौढ, साह निज घर आणीयो हेलि ।
जिहां छै जिन रत्न विम्व, जात्रा करी गुण वखाणीयो हेलि ॥१७
रत्न देखी ते अमोल, ब्रह्म सतोप ते पामीयो हेलि ।
जिन सोनी देखे हेम, हृदय हरखे तेम पामीयो हेलि ॥१८
धूरत जीव वहु चिह्न, डभपणो कोई न वि लहे हेलि ।
गुणी जाणे गुणगत, साधर्मी भक्ति श्रेष्ठी वहे हेलि ॥१९
स्वामी रहो मुझ गेह, यत्न करो प्रतिमा तणु हेलि ।
वाल इच्छा विण ब्रह्म, कूड करे छल जोइ घणु हेलि ॥२०

एक दिवस ते श्रेष्ठि, व्यापार काजि ते सचर्यो हेलि।
निज वनि कीयो प्रस्थान, सेवक जिन बहु परिवर्यो हेलि ॥२१
व्यापार तणे ते काज, घरि जन सहु व्यग्र देखीयो हेलि।
मध्य रात्रें ब्रह्मचार, रत्न हरण समय पेखीयो हेलि ॥२२
अमोलिक लेई रत्न सन्नि-सन्नि ब्रह्म चालीयो हेलि।
तेज देखि कोट वाल चोर जाणी ते झालीयो हेलि ॥२३
नीसरी न सक्यो ते दुष्ट श्रेष्ठि पासे ते आवीयो हेलि।
रक्ष-रक्ष तू नाथ, हाथ जोडी शरण भावीयो हेलि ॥२४
तव बोल्या ते साह, कोटवाल तम्हे साभलो हेलि।
तम्हे कीउ अपराध, साधु सताप्यो ब्रह्म तणो हेलि ॥२५
हु जाऊ छु व्यापार, सार रत्न अण्याव्यो ब्रह्मो हेलि।
मुझ तणु सद्गुरु काई, सताप्यो घणो तम्हे हेलि ॥२६
कोटवाल कहे सुणा देव, अम्हे तो गुरु जाण्यो नही हेलि।
क्षमा करो अम्ह साथ, इम कही ते गयो सही हेलि ॥२७
निज रत्न लेइ साह, ब्रह्म एकान्त तिणे तेडीयो हेलि।
कवण करम तें जोडीयो रे-रे पापी दुष्ट, हेलि ॥२८
त अज्ञानी दुष्ट कपट करी मुझ बचीयो हेलि। ब्रह्मचारी लेय रूप, पाप करम तें सचीयो हेलि ॥२९
पामी जिन सासन्न, दुर्जन ने माया करे हेलि।
ते बाहि पर आप, पाप भारे भव किम तरे हेलि ॥३०
निर्भ्रान्त कीयो ते चोरि, जिन शासन थी निकालियो हेलि।
बाह्य अ आछादी दोष, उपगूहन अग माह पालियो हेलि ॥३१
जिनेन्द्र भक्त शुभ साह, उच्छाह जिन शासन करी हेलि।
ते पाम्यो शुभ स्थान उपगूहन अग धर्यो हेलि ॥३२
इम जाणि भव्य जीव, दोष म बोलो पर तणो हेलि।
ढाकी पर-अवगुण, गुण ग्रहो ते पर गुण घणो हेलि ॥३३

अथ स्थितिकरण अग

एक कथा रही इह, अवर वृत्तान्त हवे कहुँ हेलि।
सस्थितिकरण जे अग, श्री जिनशासनमे कह्यो हेलि ॥३४
सागरी अणगारी, धर्मथकी चलतो देखी हेलि।
जिम किम रहे निज ठाम, स्थितिकरण ते गुण देखी हेलि ॥३५
मगध देश मझार, राजग्रही नयरी भली हेलि।
श्रेणिकनामे भूपाल, चेलणा राणी महासती हेलि ॥३६
धर्म अर्थ वली काम, त्रण पदारथ साधक हेलि।
पाले समकित सार, जिन शासन आराधक हेलि ॥३७
तस विहु जायो पुत्र, वारिषेण नामे रूअडु हेलि।
रूप कला गणवन्त, सत सदाचार नें भलो हेलि ॥३८

चौदसि करी उपवास, पोसह लेई ते वन गयो हेलि ।
रहियो कायोत्सर्ग धर्म ध्याने निश्चल मन रह्यो हेलि ॥३९
तिण समय एक साह, वसन्त क्रीडा करवा आवीयो हेलि ।
श्रीकीर्ति तस नारि, तेह कठे हार सोहावीयो हेलि ॥४०
मगधसुन्दरि वेश्या हार, ते देखी मन क्षोभीयो हेलि ।
घर आवी ते नारि, विद्यू तस्कर ते लोभीयो हेलि ॥४१
मुझ तणो जोउ कत, तो हार आणीनें मुझ देओ हेलि ।
सर्वकला ते निपुण, हार लेवा ते नीकल्यो हेलि ॥४२
परपच करी हर्यो हार, नयर माहे लेई नीसर्यो हेलि ।
तब दीठो कोटवाल, हार तेज ते विमार्या हेलि ॥४३
तव नावो ते चोर, तलरक्षक केडे गयो हेलि ।
जिहा छै श्री वारिषेण, हार मूकी तिहा अदृश्य थयो हेलि ॥४४
कोटवाल तिणिवार, पद-आगलि हार देखीयो हेलि ।
विस्मय पाम्या घणु तेत, वारिषेण कुमर पेखीयो हेलि ॥४५
राय-आगल कही वात, वारिषेण तुम्ह नन्दन हेलि ।
गते हरी लयो हार, कायोत्सर्गे रहिउ जइ वन हेलि ॥४६
तब कोप्यो भूपाल, विचार न कीयो दुर्मति हेलि ।
कुमार-मारिवा काज, मातग मोकल्या भूपति हेलि ॥४७
ते आव्या कुमरनें पास, खडग घात कठे मेदीयो हेलि ।
कुमर-पुण्य-प्रभाव, पुष्पमाल खडग कीयो हेलि ॥४८
तव हूओ जय जयकार, सुर-असुर पुष्पवृष्टि करे हेलि ।
वाजे दुदुभि-नाद, साधु तणी महिमा हुई हेलि ॥४९
साचो पुण्य प्रभाव, समद्र ते गोष्पद थाइ हेलि ।
अग्नि जल, विष अमृत, शत्रु मित्र सम थाइ हेलि ॥५०
राजा सुणी तव वात, परिवार-सहित ते आवीयो हेलि ।
प्रशसा करे घणु भूप, धन धन्य तुम्ह गुण भावीयो हेलि ॥४१
धन्य धन्य तुझ मन्न, पुण्य प्रभाव देवे कीयो हेलि ।
विरासी ओ हुं अ मूढ, विचार विना मि दड दीयो हेलि ॥५२
जे जे मूढा जीव, काज विमासी करे नही हेलि ।
अथ हानि पश्चात्ताप, अपजस ते पामे वहु हेलि ॥५३
राय दीयो अभयदान, तव ते चोर प्रकट थयो हेलि ।
स्वामी हर्यो ए मे हार, इहा मूकी हु अदृश्य थयो हेलि ॥५४
तव ते हूओ परभात भूप कहे कुमर सुणो हेलि ।
हवे आवो निज गेह, राज-सुख भोगवो घणो हेलि ॥५५
तव वोल्यो ते कुमार, राज सुख मुझ छे घणु हेलि ।
अहार लेऊ कर-पात्र, दीक्षा-सहित में नियमु हेलि ॥५६

सहुज क्षमावी स्वजन्न, सुरदेव गुरु वंदिया हेलि ।
छाडी परिग्रह भार, संजम लेइ आनंदिया हेलि ॥५७
वारिषेण हुआ मुनीश, तप जप करे ते ऊजलो हेलि ।
ध्यान अध्ययन अभ्यास, ग्रास प्रासुक ले निमलो हेलि ॥५८
पलासकूट एह ग्राम, श्रेणिक मंत्री अग्निमित्र हेलि ।
तेह पुत्र पुष्पडाल, सोमिल्ला नारी तणो पती हेलि ॥५९
वारिषेण एक वार, आव्यो पुष्पडाल घरे हेलि ।
प्रासुक दीयो तेणें आहार, सोल गुण प्रकट करि हेलि ॥६०
मुनि बोलावा ते जाय, बालमित्र मुनिवर केडे हेलि ।
जल-कुण्डी लेह हाथ, नगर बाहर चाले जिम हेलि ॥६१
सरोवर देखाडे मित्र, आगे क्रीडा करता इहा हेलि ।
वली देखाडे अंब वृक्ष, सुख रमता आपणे इहा हेलि ॥६२
पाछो वलवा काज, भपड्यो मनोरथ करे हेलि ।
पुष्पडाल ते विप्र, सोमिल्ला नारी सू स्नेह धरे हेलि ॥६३
मुनि चाले समभाव, न वि तेहि न वि रह्यो करे हेलि ।
आव्या निज गुरु पासि, नमोस्तु करी आगलि रहे हेलि ॥६४
परसस्यो ते पुष्पडाल, बाल मित्र गुण स्नेह धरे हेलि ।
दीक्षा देवारी गुरुपासि, उल्हास विना लाजि करी हेलि ॥६५
लाज काजि भय भाव धरे, धर्म काज कीजे सदा हेलि ।
पुष्पडाल तिणि वार, भार संजम लीयो हेलि ॥६६
तप जप करे मुनीश, ध्यान ज्ञान-अभ्यास करे हेलि ।
द्रव्य दीक्षा पाले चंग, अन्तरंग सोमिल्ला साथे धरे हेलि ॥६७
बार वरस पूरा होइ वारिषेण गुरु वीनव्या हेलि ।
सद्‌गुरु आज्ञा दीध, तीर्थ जात्रा करते परठव्या हेलि ॥६८
वारिषेण पुष्पडाल, दोय मुनि विहार कर्म करे हेलि ।
आव्या समवसरण श्रीवीर, वंद्या भाव धरी हेलि ॥६९
धन धन्य तुम जिन स्वामी, काम बालापणें ते जीतियो हेलि ।
टाली करम सबल, केवल ज्ञानें गुण देखीयो हेलि ॥७०
स्तवी वंदी वधमान, पुण्य उपार्जो वारिषेण हेलि ॥
बैठा मुनिवर कोष्ठ, धरम सुणे तत्क्षण हेलि ॥७१
इन्द्र-पूजित पद पद्म, गन्धर्व देव स्तवे घणु हेलि ।
गीत नृत्य वाजित्र, सराग शब्द मुनि सुण्या हेलि ॥७२
तब चिंते पुष्पडाल, बाला-विरह दुःख उपनो हेलि ।
त्यजवा संजम भार, विकार मुनि मनि नीपनो हेलि ॥७३
विचक्षण वारिषेण, निज मित्र मन जाणीयो हेलि ।
ल्याव्यो नयर मझार, चेलणा राणी घरि आणीयो हेलि ॥७४

आवता देखी मुनि अकाल, चतुर चेलणा परीक्षा करे हेलि ।
वीतराग सराग, आसन, मुनि नें घर्या हेलि ॥७५
वैरागें आसन मुनि बैठा, चेलणा आयी नमोस्तु करे हेलि ।
गुरु देइ धर्म वृद्धि, वारिखेण वली उच्चरे हेलि ॥७६
चेलणा सुणो मुझ वात, अन्त पुर आणो मुझ तणो हेलि ।
धरीय सयल सिणगार, नारि बत्रीसे रूप घणो हेलि ॥७७
आवी ते सहु वाल, प्रणाम करी आगलि रही हेलि ।
देखाडी पुष्पडाल, विशाल वाणी गुरु कहे हेलि ॥७८
मित्र सुणो मुझ वात, युवराज तम्हे भोगवो हेलि ।
सहित सकल परिवार, सार सौख्य तमे जोगवो हेलि ॥७९
तव लाज्यो पुष्पडाल, एह वी रिद्धि गुरु परिहरी हेलि ।
अपछर-सरिखी एह वी नारि, सोय सपदा न वि अनुमरी हेलि ॥८०
अल्प रिद्धि मुझ होइ, एक नारी नेत्रकाणी हेलि ।
तेह साथे हूँ धरू मोह, धिग ते रागी प्राणीयो हेलि ॥८१
हूँ अज्ञानी मूढ, प्रौढ वाला स्नेह जडो ले हेलि ।
दु ख देखे अपार, झूरि-झूरि घणू रडोले हेलि ॥८२
तव ते कहे पुष्पडाल, तू धन धन्य गुरु निर्मलो हेलि ।
बार वरस मे कीयो कष्ट, शल्य-सहित तप कसमलू हेलि ॥८३
तव गुरु कहे सुणो वच्छ, दु ख जणित-मोह भजू हेलि ।
करम तणे विपाक, भाव विषम जीव ऊपजे हेलि ॥८४
जिन आगम अनुसार, प्रायश्चित्त गुरु आपीयो हेलि ।
विनय भक्ति-सहित व्रत शुद्धि मन थापीयो हेलि ॥८५
आवी वनहि मझार, तप जप करे ते निर्मलो हेलि ।
सस्थितिकरण अगसार, वारिषेण कीउ उज्जलो हेलि ॥८६

दोहा

पुष्पडाल व्रत थापिओ, वारिषेण मुनिराय । धर्म-स्थितिकरण तेणे की धन्य दे गुणराय ॥१
नागश्री नारी निर्मली, प्रति बोधी निज कत । व्रत स्थितिकरण तिणे कीयो, पाल्यो धर्म महत ॥२
तेह कथा तुमे जाणज्यो, जबु कुमार चरित्र । भवदेव भावदेव तणी, विस्तार सहित्त पवित्र ॥३
धर्म स्थितिकरण जेणे कियो, साहाय करी गुण धार ।
सुर नर सुख ते भोगवे, ते पाम्या भव-पार ॥४

अथ वात्सल्य अग । अथ ढाल

वाच्छल्ल अग हवे कहीइ, साधर्मी तणो विनय वहीइ, लहीइ शासन धर्म ॥१
जती व्रती साधर्मी जेह, तेह साथे धरो शुभ स्नेह, जिम प्रीति गोवच्छ तेह ॥२
साधर्मी सू म करो रोस, कहीनें न वि दीजे दोस, सतोष धरो सहु साथे ॥३
वाच्छल्ल अग केणि पाल्यो जिनशासन माहे आल्यो, विष्णु वृत्तान्त साभल्यो ॥४

भरत क्षेत्र मझार अवन्ती देश, उज्जेणी पुरी श्री ब्रह्म नरेश, श्रीमती रानी तणु ईशा ।।५
बलि वृहस्पति नाम प्रधान, प्रल्हाद, नमुचि अभिधान, ए चार मत्री राजान ।।६
राजा छै जिनधर्मी सार, मिथ्यादृष्टि मत्री गभार, सर्प व्याघ्र वदन जिम फार ।।७
नगर तणा उद्यान मझार, आव्या अकम्पन गुणधार, सात सै मुनि परिवार ।।८
सहि गुरु कहे ते ज्ञान भण्डार, सघाष्टक सहु सुणो भवतार, मौनि रहिज्यो इणि वार ।।९
कवण साथे बोलो जे सार, तो होसे सही सघार, गुरु आज्ञा मुनि धार ।।१०
गुरु-आज्ञा मानें नही जेइ, कुत्सित शिष्य जाणो तमे तेह, जनक पीडा कुमित्र ।।११
नयर जन गुरु वदन जाइ, देखी पूछे मत्री राइ, कवण काजे पुर जन्न ।।१२
वलतु बोले मत्री ते वाणि, स्वामीने गुरु आव्या जाणि, निर्ग्रन्थ गुरु गुण खानि ।।१३
तब राजाने आपनो भाब, गुरु वदू भव-सायर नाव, सजन सहित भूप चाल्यो ।।१४
केता रहीया ऊभा लेइ ध्यान, केता बैठा मन शुभ स्थान, निश्चल मेरु-समान ।।१५
गुरु देखी हरष्यो भूपाल, प्रत्येक प्रत्येक वद्या गुणमाल, आसीस न कही तिणि वार ।।१६
वदी स्तवी जाइ तिणी वार, तब ते मत्री करे अहकार, जाणे मुनि नहि काई विचार ।।१७
आवतो साम्हो दीठो मुनि ऐक, मत्री न जाणे काइ विवेक, उदर पूरी आव्यो विशेष ।।१८
तब मुनि बोल्यो स्याद्वाद, वाद करीओ तास्यो वाद, मत्री पाम्या विषवाद ।।१९
मुनि आवी गुरु बद्या जैवन्त, वाद तणु कहियो वृत्तान्त, रुडु न कीयो वच्छसभ ।।२०
जइ रहो तमे वादनें ठाम, तो टले उपसर्ग उद्दाम, सयल मुनि गुणग्राम ।।२१
श्रुतसागर तब पाछो जाय, वाद स्थाने रही निश्चल थाय, मेरु समी निज काय ।।२२
तब आव्या रात्रें परधान, मिथ्यादृष्टि ते अज्ञान, मूढ धरे बहु मान ।।२३
ऊभो रहियो ते मुनिवर देखी, क्रोध धरे ते अवरउ वेषी, तीखी खडग तणी धार ।।२४
मुनि मारेवा मत्री चार, खडग घात दीया एकी वार, मुनि कठे दु खकार ।।२५
मुनिवर स्वामी पुण्य-प्रभावे, आसन कपे पुर देव ते आवे, सार्यां काज गुण भावे ।।२६
ऊर्ध्व हस्त खडग मत्री थम्या, प्रभात समय देखी लोक अचम्या, दुवचने मत्रो क्षोभ्या ।।२७
समध सुणि आव्यो सिहा राय, मत्री देखि कोप तसथाम, प्रणमी रया मुनि पाय ।।२८
भप कहे मत्री तमो इष्ट, काइ अपराध कीयो कनिष्ट, हवे करू निज राज भ्रष्ट ।।२९
देव खमी मुकाव्या मत्री, अधम विप्र मारे किम क्षत्रो, शत्रु पणे कृपा ऊपजी ।।३०
साचा नर जे होइ साध, ते क्षमें परन्तणु अपराध, केहने करे नही वाध ।।२१
अग्नि दहन्ते अगर हरिचन्दन, सुगन्धवास करे मन नन्दन, तिम सज्जन सहतो वेदन ।।३२
अ विधि पुरी वैठा गुणधार, सुर नर वदि करे जयकार, धम वृद्धि कही भवतार ।।३३
भूपे मत्री दड बहु दीयो, निर्भ्रंछन विडबन कीयो, देश छेह करी धन लियो ।।३४
तुरत पाप लागो परवान, राजभ्रष्ट थया अपमान, पाम्या दु ख निधान ।।३५
मुनिवर स्वामी क्षमा भडार, परीषह जीती सोहता सघ मझार, घर गया जन परिवार ।।३६
कुरुजागल नामे शुभ देश, हस्तिनगर महापद्म नरेश, लक्ष्मीमतो नारी जीवेश ।।३७
पुत्र दोय हुआ पद्म बिष्णु नाम, रूप कला यौवन गुणग्राम, अनुभवे सुख उद्दाम ।।३८
महापद्म पाम्यो वैराग, पद्म राज थापी कर्यो सग त्याग, साचो सत शिव राग ।।३९
वन जाय वद्या श्रुत मुनिसागर, दीक्षा लीधी महिमा आगर, सहित विष्णु कुमार ।।४०

गजपुर आव्या ते अपराधी, मन्त्री पदम सेवा आराधी, परधान पदवी तिणे साधी ॥४१
पद्म भूप सभा एक वार आव्यु देखो पूछे मन्त्री चार, कवण चिंता मन अपार ॥४२
भूप कहे सुणो परधान, चिंता कारण दु ख निदान वैरी वरे एक मान ॥४३
कुम्भ नयर सिंहरथ भूपाल, गढ तणु बल पामी विकराल, माने नही आज्ञा विशाल ॥४४
आदेश लेय चाल्या परधान,हय गय रथ पायक सधान, परपचे गया अरि स्थान ॥४५
बुद्धि बलें वैरी जीति आव्या सिंहरथ आणि आण मनाव्या, पद्म मने मन्त्री भाव्या ॥४६
पद्म भूप कहे हवे हू तुष्ट, मन्त्रो मागो मन अभीष्ट, वलि कहे वस्तु विशिष्ट ॥४७
स्वामी वर भडार ते थापो, ज्यारे मागू त्यारे मुझ आपो, इम कहो बोल जस व्यापा ॥४८
हस्तिनागनयर तणा तेणे वन्न, सघ सु आव्या सूरि अकपन्न, जाणि क्षोम्यो मन्त्री मन्न ॥४९
मुझ तणा छै रिपुनी एह, मान भग अम्ह कीधो जेह हवे दु ख देस वह तेह ॥५०
वर माग्यो आवि भूप पासे, सात दिन रहो नारी वासे, राज देय सारा मुझ काजे ॥५१
पद्म आप्यो वरदान, राज करें ते वलि परधान, राणीवासे रहे राजान ॥५२
बलि मन्त्री उपज्यो कोप, मुनि तणो हवे करु हु लोप, ऊपर कीयो मडप गोप ॥५३
मुनि पापल कीधी वहूवाडि, चरम रोम घाल्या घणा हाड, कलेवर कीधो तस आड ॥५४
मुनि मारिवा तणी ते काज, नरमेध मार्या तिणे राज, वैरीतणो करे काज ॥५५
अग्नि धूम आकाशें व्याप्यो, यती वर निश्चल काउसग्ग थाप्यो, जिन ध्यान मन व्याप्या ॥५६
अनशन लीधी दोइ प्रकार, जो जीवसु तो लेसु आहार, न हि तो प्राण परिहार ॥५७
तिणि अवसरें मथुरा नयर, सागरचन्द्र छे ते मुनिवर, तिहा आव्या वसति दुआर ॥५८
कपतो देखी श्रवण नक्षत्रे, निमित्त जोइ ते अवधि नेत्रे, खेद करे मध्य रात्रे ॥५९
तव पूछे ते ब्रह्म पुष्पदत, खेद किस्यु करो भगवन्त, गुरु कहे सुणो वच्छ तुरन्त ॥६०
हस्तिनाग नयर उद्यान, सात सै मुनिवर छै गुणभान, उपसग करे वलि परधान ॥६१
कवण परें उपसर्ग ति जाय, ते स्वामी मुझ करो उपाय, विद्यावल मुझ थाय ॥६२
गुरु कहे गिरि धरणीभूषण, तिहा मुनि रह्यो विष्णु महन्त, विक्रिया रिद्धि शुभ लक्षण ॥६३
तव वेगे चाल्यो ब्रह्मचार, वन जाय वद्या विष्णुकुमार, भेद कह्यो मुनि सधार ॥६४
उत्पन्नी न जाणे वैक्रिय रिद्धी विष्णु मुनि परीक्षा तस कीधी, कर पूरी हुए मन शुद्धी ॥६४
राज प्रतें चाल्यो विष्णु कुमार, रात समय आव्या घर द्वार पद्मे कीधो नमस्कार ॥६६
विष्णु कहे पद्म तू परम, काइ अपराध माडयो नीच करम, न जाणो स्वामी हु मम ॥६७
पद्म भूप कहे सुनो मुझ वाणी, वरदान आप्यो मे अजाणी, हवे कसू करू तुम वाणी ॥६८
तव विष्णु विप्रवेष लीयो, वैक्रिय वामन रूप ते कीयो, आवी आसीस वलिनें दीयो ॥६९
वलि राज बोलै तस वाच, जे मागो ते आपु द्विज राज, मन वाछित करो साच ॥७०
वामन कहे सुणो भूप तुम्हो, त्रण कदम भूमि मागू अम्हो, अवर न जाचू अम्हो ॥७१
अवर हसि बोल्यो तिन वार, एहवो स्यु जाच्यो वृषभव गमार मागो अथ भडार ॥७२
उदक-सहित वाणी कहि थापी, त्रण कदम भूमि तस आपी, सर्वसाखे परतापी ॥७३
वामन वैक्रिय देह तस कीधो, एक चरण मेरु मस्तके दीधो, मानुषोत्तर दूजे पाय लीधो ॥७४
त्रीजो पद ऊचो करि उद्यम, तोली रहियो ते मागे ठाम, वलि पूठी दीयो ताम ॥७५
तव वलि खेद खिन्न वहु कीयो, स्वजन सहित मुनि शरण ते लीयो, तव अभयदान सहु दीयो ॥७६

सकल मुनि टाल्यो उपसर्ग, जय जयकार करे सुरवर्ग, गर्भ वा अण उतारे अर्घ ॥७७
प्रगट थया मुनि विष्णुकुमार, क्षमी क्षवामो सहु परिवार, कीयो वात्सल्य गुणधार ॥७८
सात सौ मुनिवर कीधो रक्षण, जाय गुरु वद्या देय प्रदक्षिण, प्रायश्चित्त लीयो व्रत ततक्षण ॥७९

दोहा

वात्सल्य अग ते पालीयो, विष्णु कुमार भवतार। ध्यान धरी कर्म निर्जरी, पहुँचा मोक्ष दुआर ॥१
वज्रकरण भूप तणो वाच्छल्ल कीयो श्रीराम । कुल देश भूषण तणो, टाल्यो उपसर्ग उछाम ॥२
जलता मुनिवर राखीया, कन्या सहित वनहि मझार ।
सुधि जाता सीता तणी, वाच्छल्ल हनुमत कुमार ॥३
तेह कथा तुम्हे जाणज्यो, पदम चरित्र मझार । अवर जीय बहु आदर्यो, ते किम कहियो जाय ॥४
साधर्मी श्रावक मुनि तणो, वाच्छल्ल करे जब जेह ।
सुर नर सुख ते भोगवी, पामे शिव-सुख तेह ॥५
जती व्रती गुणि जीवसू, रोष धरें जे मूढ । मत्सर पणें माने नही, ते दुख देखे प्रौढ ॥६
इम जाणिय भवियण सदा, वात्सल्य करो गुणधार । जिन सेवक पदमो कहे, ते पामे भवपार ॥७

आठमो प्रभावना अग । ढाल हिंडोलानी

प्रभावना अग कीजिए, जिन शासन प्रभाव ।
प्रासाद प्रतिमा प्रति प्रतिष्ठा करी, हिंडोल डारे ज्ञान, दान तप भाव ॥१
प्रभावना अग केणे कीयो, कथा कहुँ अब तेह ।
वज्रकुमार मुनि तणी, हिंडोलडा रे, प्रसिद्ध कीधो गुण जेह ॥२
हस्तिनाग नयर भलो, बलिनामे भूपाल ।
गरुड पुरोहित छै तेह तणो, हिंडोलडा रे, सोमदत्त पुत्र विशाल ॥३
वाद शास्त्र ते बहु पठ्यो, चाल्यो द्विज सोमदत्त ।
अहिछत्र नयर ते आवीयो, हिंडोलडा रे सुभूति मित्र विद्यामत्त ॥४
परहुणावार मामे कीयो, सोमदत्त कहे सुणो बात ।
दुर्मुख भूप मुझ मेलवो, हिंडोलडा रे, जिम पामू बहु ख्यात ॥५
विद्यामदे ते मातुल, माने नही तस वाणि,
उपाय रची भूप भेटीयो हिंडोलडा रे, आपणपे बुद्धि जाणि ॥६
वाद करी ते बुद्धिबले, राजसभा मझार ।
सस्कृत वचन ते उच्चरी, हिंडोलडा रे, अवर मनाव्या द्विज हार ॥७
विद्वान् सोमदत्त जाणीइ, राय थाप्यो परधान ।
साचु ज्ञान गुण अति बले, हिंडोलडा रे, विप्र पाम्यो बहुमान ॥८
सोमदत्त तिणे मातुले, सुभूति तिणी वार ।
जज्ञदत्ता कन्या रुआडी, हिंडोलडा रे, परिणावी तिणि सार ॥९
सोमदत्त ते सुखे रहे, नारी उपनो ते गर्भ ।
डोहलो हुओ आम्रफल तणो, हिंडोलडा रे, बरषा काले ते दुर्लभ ॥१०
आम्रफल जोवा चालीयो, सोमदत्त वनह मझार ।
सफल आंबो एक देखीओ, हिंडोलडा रे, विस्मय पाम्यो अपार ॥११

आम्र तरु तले रहिया, सुमित्र सूरी योगवन्त ।
ऋद्धि प्रभावे तरु फल्यो, हिंडोलडा रे, निज मन वाछे द्विज सन्त ॥१२
आम्रफल लेइ मोकल्या, सेवक साथे निजगेह ।
आम्र आस्वादी ते कामिनी, हिंडोलडा रे, सतोप पामी तव देह ॥१३
सोमदत्त वैराग हुओ, अथिर जाण्यो ससार ।
सग छाडी गुरु वीनवी, हिंडोलडा रे, लीधू ते सयम भार ॥१४
ध्यान अध्ययन तप आचरे, धर्यो आतापनयोग ।
नाभिगिरि मस्तक रूअडो, हिंडोलडा रे, कायोत्सग लीयो ध्यान भोग ॥१५
जज्ञदत्ताइ पुत्र जाइनु सवध कीउ गुरु भ्रात ।
आदी मुनिपद ऊपरें, हिंडोलडा रे, वाल मूकी कहे वात ॥१६
ए पुत्र कत तुम्ह तणु, माहरे नथी काइ काज ।
रोस धरी धरि ते गई, हिंडोलडा रे, नारी निर्गुण नही लाज ॥१७
तिणें समय रूपाचली अमरावती पुरी ईश ।
दिवाकर देव पुरन्दर, हिंडोलडा रे, सहोदर घर विद्वेप ॥१८
पुरन्दरा विद्यावले, जुद्ध कीये ज्येष्ठ भ्राति साथ ।
नयर मूकी नीसरी गयो, हिंडोलडा रे, दिवाकर दिवाखग नाथ ॥१९
यात्रा करतो आवीयो, मुनि भेंट्या सोमदत्त,
वालक देखि अचंभियो, हिंडोलडा रे, वज्र कुमार नाम दीयो सत्य ॥२०
विद्याधर इम वोलीयो, निजनारी सु सार ।
ए वालक, तुम्हे लेयो, हिंडोलडा रे, रूप कला गुणधार ॥२१
कनक नयर ते आवीयो, विमल वाहन करे राज ।
ते सालो ते खगतणो, हिंडोलडा रे, सुखे रहि करे राज ॥२२
अनुक्रमे पुत्र मोटो थयो, विद्या साधी तिण वार ।
रूप कला यौवन भरे, हिंडोलडा रे, सोहें ते वज्रकुमार ॥२३
गरुड वेग विद्याधर, गर्गावती तस नार ।
तस तणी कूखे उपनी, हिंडोलडा रे, पवन वेग कुमार ॥२४
ह्रीमन्त भूधर, मस्तके, विद्या साधी ते वाल ।
प्रज्ञसी नामे भली, हिंडोलडा रे, मत्र जपे सकुमार ॥२५
वदरी कटक वाइ पयुं, कन्या नयन मझार ।
चित्त चले नेत्र गले, हिंडोलडा रे, पावे नही नमोकार ॥२६
रमतो कुमार ते आवीयो, ते कन्या तिणि पास ।
विज्ञानी शल्य जाणीउ, हिंडोलडा रे, कटक दीयो निकास ॥२७
कन्या ध्यान जव लागीयो, विद्या हुई तस सिद्ध ।
कन्या कहे कुमार धन्य, हिंडोलडा रे, तुम्ह पसाय विद्या रिद्ध ॥२८
कन्या कहे अवर वरू नही, तु मुझ हुओ भरतार ।
भाव जाणी महोच्छव करी, हिंडोलडा रे, कन्या वरी वज्रकुमार ॥२९

विद्या बले ते चालीयो, जुद्ध करवा तिणि काज ।
काको जीति राज लीयो, हिंडोलडा रे, तात थापु निज राज ॥३०
राय राणी सु रगे रहे, बहु अर सहुँ परिवार ।
जया राणी इच्छा करे, हिंडोलडा रे, देखी ते वज्रकुमार ॥३१
ए छता मुझ पुत्रनें, राज तणु नही भार ।
इम जाणिय रोषज धरे, हिंडोलडा रे, धिग् धिग् लोभ असार ॥३२
कवण पुत्र ए जन्मीयो, कहि ने करे सताप ।
कुमर सुणी विस्मय हुओ, हिंडोलडा रे, पूछयो ते निज बाप ॥३३
तात मुझ साची कहो, कहि तणो पुत्र सत ।
नहि तो हुँ जीमू नही, हिंडोलडा रे, तातें कहो रे वृत्तान्त ॥३४
सयल सबध साभली, चाल्यो वज्रकुमार ।
निज तात गुरु वदिवा, हिंडोलडा रे, साथे खग-परिवार ॥३५
मथुरा नगरी आवीया, क्षत्रिय गुफा मझार ।
सोमदत्त गुरु वदीया, हिंडोलडा रे बैठा तिहा वज्रकुमार ॥३६
वम कथा रस सामली, पूछ्यो निज वृत्तान्त ।
सकल सम्बन्ध ते गुरु कयो, हिंडोलडा रे, जनम आदि पर्यन्त ॥३७
सह गुरु कहे वच्छ तमे लेउ ते सयम-भार ।
गुरु वचनें सग छाडियो, हिंडोलडा रे, दीक्षा लीधी वज्रकुमार ॥३८
अवर सजन बहु घरि गया, मुनि करे शास्त्र-अभ्यास ।
सम दमे सजम आचरे हिंडोलडा रे, तप जप करे गुरु पास ॥३९
मथुरा नयरी तणो धणी, पूत गन्ध भूप नाम ।
अचिणा (उर्मिला) राणी तस तणी, हिंडोलडा रे, दान पूजा गुण ग्राम ॥४०
सागर दत्त श्रेष्ठी वसे, समुद्र दत्ता नारी नाम ।
दरिद्रा नामे पुत्री हवी, हिंडोलडा रे, दारिद्र दुख तणो ठाम ॥४१
पुत्री जब उरे अपनी मरण पाम्यो तप बाप ।
धनसू कुटुम्ब क्षय गयो, हिंडोलडा रे, धिग धिग कर्म कुपाप ॥४२
दु ख देखीतें वृद्धि थई, कुत्सितई लेवें आहार ।
क्षुधा पीडी पर घरि भमे, हिंडोलडा रे, दीन दारिद्र कुमारि ॥४३
दोय मुनीश्वर सचर्या, लघु मुनि कहे तिणी वार ।
ए वर की कष्टे जीवे, हिंडोलडा रे, धिग धिग पाप अपार ॥४४
ज्येष्ठ मुनि तत्र बोलियो, वच्छ सुणो मुझ वात ।
पट्टराणी होसे भूपतणी, हिंडोलडा रे, पामिसे ए बहु ख्यात ॥४५
भिक्षा काजे वन्नक भमे धर्मश्री तस नाम ।
मुनि-वयण निश्चय करी, हिंडोलडा रे, ते लेइ गयो निज ठाम ॥४६
अन्न पान मिष्ट देई, पुष्टि पमाडी ते बाल ।
वस्त्र आभूषण आपीया, हिंडोलडा रे, यौवन थई गुणमाल ॥४७

हरपि हिंडोले हिचली, वसन्त क्रीडा चैत्र मास ।
पूतिगन्ध भूपें दीठी, हिडोलडा रे, उपनो राग-अभिलाप ॥४८
भूपे मत्री मोकल्यो कन्या जाची निजकाज ।
बुद्ध कहे भूपति सुणो, हिंडोलडा रे, जो धम लेय वुद्धराज ॥४९
तो कन्या तुम्हनें देऊ न ही तो करो सतोप ।
मूढ भूपे वोल मानीयो, हिडोलडा रे, अर्थी न देखे दोप ॥५०
चिन्तामणि तिणे परिहरी राय लीयो तव काच ।
सत्य धर्म जिन-भापित हिंडोलडा रे, किहा मन वौद्ध असाच ॥५१
महोच्छव करि कन्या वरी, राय गयो निज घरि सार ।
पट्टराणी पद थापियो हिंडोलडा रे आपी स्त्री-सिणगार ॥५२
अचिला राणी भूप तणी, सदा करे जिन धर्म ।
नन्दीश्वर अष्ट दिन हिंडोलडा रे रथ जात्रा करे परम ॥५३
आषाढ कार्तिक फागुण, वरस व्रते त्रण वार ।
रथ ऊपर जिन बिम्ब धरि, हिंडोलडा रे, महोच्छव करे गुणधार ॥५४
अचिला तणो रथ देखी ने, वुद्धि राणी करे कोप ।
प्रथम रथ चाले मुझ तणो, हिंडोलडा रे, देव छँ सारी वुद्धदेव ॥५५
अचिला कहे पहिलो मुझ तणु, जो चाले रथ सार ।
तव ते करूँ हुँ पारणो, हिंडोलडा रे, नही तो नियम-आहार ॥५६
क्षत्रिय गुफा जाइ वंदिया, मुनिवर श्री सोमदत्त ।
अनशन मागे निर्मलो, हिंडोलडा रे, मुनि पूछ्यो सयल वृत्तान्त ॥५७
तिणि अवसरि गुरु वन्दिवा, आव्या दिवाकर देव ।
वज्रकुमार भणे, खग सुणो, हिंडोलडा रे, अचिला सहाय करो देव ॥५८
तव खेचर विद्यावले, वुद्धि-रथ कीयो ध्वस ।
मिथ्याती मान चूरीयो, हिंडोलडा रे, तिमिर उगे जिम हस ॥५९
रथ चाल्यो अचिला तणो, तव हुओ जय जयकार ।
जिन बिम्ब रथ आगे हुओ, हिंडोलडा रे, गीत वाजे अपार ॥६०
जिन शासन प्रभावना, अचिला जस विस्तार ।
राय राणी ते जैन हुआ, हिंडोलडा रे जिन धर्म करे भवतार ॥६१
प्रत्यक्ष महिमा देखी ने, लोक करे जिन धम ।
मिथ्यात-विप सहु परिहरी, हिंडोलडा रे, निश्चय आणी मत परम ॥६२
वज्रकुमार ने इणी परे, कीयो प्रभावना अग ।
सहाय कीयो अचिला तणो, हिंडोलडा रे दिवाकर देव प्रसग ॥६३
निज शक्ति प्रगट करी, शासन करे जे उद्धार ।
सुर नर वर पदवी लही, हिंडोलडा रे, ते पामे भव-पार ॥६४
जिणे किणे उपाय करी, शासन करी प्रभाव ।
समकित अग सुद्धो धर्यों, हिंडोलडा रे, ते होई भवोदधि-पार ॥६५

विद्या वले ते चालीयो, जुद्ध करवा तिणि काज ।
काको जीति राज लीयो, हिंडोलडा रे, तात थापु निज राज ॥३०
राय राणी सु रगे रहे, बहु अर सहूँ परिवार ।
जया राणी इच्छा करे, हिंडोलडा रे, देखी ते वज्रकुमार ॥३१
ए छता मुझ पुत्रनें, राज तणु नही भार ।
इम जाणिय रोषज धरे, हिंडोलडा रे, धिग् धिग् लोभ असार ॥३२
कवण पुत्र ए जन्मीयो, कहि ने करे सताप ।
कुमर सुणी विस्मय हुओ, हिंडोलडा रे, पूछ्यो ते निज बाप ॥३३
तात मुझ साची कहो, कहि तणो पुत्र सत ।
नहि तो हुँ जीमू नही, हिंडोलडा रे, तातें कहो रे वृत्तान्त ॥३४
सयल सबध साभली, चाल्यो वज्रकुमार ।
निज तात गुरु वदिवा, हिंडोलडा रे, साथे खग-परिवार ॥३५
मथुरा नगरी आवीया, क्षत्रिय गुफा मझार ।
सोमदत्त गुरु वदीया, हिंडोलडा रे बैठा तिहा वज्रकुमार ॥३६
धर्म कथा रस सामली, पूछ्यो निज वृत्तान्त ।
सकल सम्बन्ध ते गुरु कयो, हिंडोलडा रे, जनम आदि पर्यन्त ॥३७
सह गुरु कहे वच्छ तमे लेउ ते सयम-भार ।
गुरु वचनें सग छाडियो, हिंडोलडा रे, दीक्षा लीधी वज्रकुमार ॥३८
अवर सजन बहु घरि गया, मुनि करे शास्त्र-अभ्यास ।
सम दमे सजम आचरे हिंडोलडा रे, तप जप करे गुरु पास ॥३९
मथुरा नयरी तणो धणी, पूत गन्ध भूप नाम ।
अचिणा (उर्मिला) राणी तस तणी, हिंडोलडा रे, दान पूजा गुण ग्राम ॥४०
सागर दत्त श्रेष्ठी वसे, समुद्र दत्ता नारी नाम ।
दरिद्रा नामे पुत्री हवी, हिंडोलडा रे, दारिद्र दुख तणो ठाम ॥४१
पुत्री जब उरे अपनी, मरण पाम्यो तप बाप ।
धनसू कुटुम्ब क्षय गयो, हिंडोलडा रे, धिग धिग कर्म कुपाप ॥४२
दु ख देखीतें वृद्धि थई, कुत्सितई लेवे आहार ।
क्षुधा पीडी पर घरि भमें, हिंडोलडा रे, दीन दारिद्र कुमारि ॥४३
दोय मुनीश्वर सचर्या, लघु मुनि कहे तिणी वार ।
ए वर की कष्टे जीवे, हिंडोलडा रे, धिग धिग पाप अपार ॥४४
ज्येष्ठ मुनि तब बोलियो, वच्छ सुणो मुझ बात ।
पट्टराणी होसे भूपतणी, हिंडोलडा रे, पामिसे ए बहु स्यात ॥४५
भिक्षा काजे वन्नक भमे धर्मश्री तस नाम ।
मुनि-वयण निश्चय करी, हिंडोलडा रे, ते लेइ गयो निज ठाम ॥४६
अन्न पान मिष्ट देई, पुष्टि पमाडी ते बाल ।
वस्त्र आभूषण आपीया, हिंडोलडा रे, यौवन थई गुणमाल ॥४७

हरषि हिंडोले हिचली, वसन्त क्रीडा चैत्र मास ।
पूतिगन्ध भूपें दीठी, हिंडोलडा रे, उपनो राग-अभिलाप ॥४८
भूपे मत्री मोकल्यो, कन्या जाची निजकाज ।
बुद्ध कहे भूपति सुणो, हिंडोलडा रे, जो धर्म लेय बुद्धराज ॥४९
तो कन्या तुम्हनें देऊ, न ही तो करो सतोप ।
मूढ भूपे बोल मानीयो, हिंडोलडा रे, अर्थी न देखे दोप ॥५०
चिन्तामणि तिणे परिहरी, राय लीघो तव काच ।
सत्य धर्म जिन-भाषित हिंडोलडा रे, किहा मन बौद्ध असाच ॥५१
महोच्छव करि कन्या वरी, राय गयो निज घरि सार ।
पट्टराणी पद थापियो हिंडोलडा रे आपी स्त्री-सिणगार ॥५२
अचिला राणी भूप तणी, सदा करे जिन धर्म ।
नन्दीश्वर अष्ट दिन हिंडोलडा रे रथ जात्रा करे परम ॥५३
आषाढ कातिक फागुण, वरस व्रते त्रण वार ।
रथ ऊपर जिन विम्ब धरि, हिंडोलडा रे, महोच्छव करे गुणधार ॥५४
अचिला तणो रथ देखी ने, बुद्धि राणी करे कोप ।
प्रथम रथ चाले मुझ तणो, हिंडोलडा रे, देव छे सारी बुद्धदेव ॥५५
अचिला कहे पहिलो मुझ तणु, जो चाले रथ सार ।
तव ते करूं हुं पारणो, हिंडोलडा रे, नही तो नियम-आहार ॥५६
क्षत्रिय गुफा जाइ वदिया, मुनिवर श्री सोमदत्त ।
अनशन मागे निर्मलो, हिंडोलडा रे, मुनि पूछ्यो सयल वृत्तान्त ॥५७
तिणि अवसरि गुरु वन्दिवा, आव्या दिवाकर देव ।
वज्रकुमार भणे, खग सुणो, हिंडोलडा रे, अचिला सहाय करो देव ॥५८
तब खेचर विद्यावल, बुद्धि-रथ कीयो ध्वस ।
मिथ्याती मान चूरीयो, हिंडोलडा रे, तिमिर उगे जिम हस ॥५९
रथ चाल्यो अचिला तणो, तव हुओ जय जयकार ।
जिन बिम्ब रथ आगे हुओ, हिंडोलडा रे, गीत वाजे अपार ॥६०
जिन शासन प्रभावना, अचिला जस विस्तार ।
राय राणी ते जैन हुआ, हिंडोलडा रे जिन धर्म करे भवतार ॥६१
प्रत्यक्ष महिमा देखी ने, लोक करे जिन धर्म ।
मिथ्यात-विप सहु परिहरी, हिंडोलडा रे, निश्चय आणी मत परम ॥६२
वज्रकुमार ते इणी परे, कीयो प्रभावना अग ।
सहाय कीयो अचिला तणो, हिंडोलडा रे दिवाकर देव प्रसग ॥६३
निज शक्ति प्रगट करी, शासन करे जे उद्धार ।
सुर नर वर पदवी लही, हिंडोलडा रे, ते पामे भव-पार ॥६४
जिणे किणे उपाय करी, शासन करी प्रभाव ।
समकित अग सुद्धो कर्यो हिंडोलडा रे, ते होई भवोदकि-पार ॥६५

शासन दोष जे ऊचरे, जिन-महिमा करे लोप ।
ते मूढ मिथ्यात्वीआ हिंडोलडा रे, भव-भव लहे कष्ट कूप ॥६६
जिणे जिणे जीवे कीयो, माहातम जिन शासन ।
ससार-दु ख दूरे करी, ते पाम्या मोक्ष भविजन हिंडोलडा रे ॥६७

वस्तु छन्द

प्रभावना अग, प्रभावना अग धारो भवियण अनुदिन ।
वज्रकुमार मुनिश्वर कीयो, शासन विलास तणो मनोहर ।
सुर नर सुख ते भोग वैं अनुक्रमे पामे शिव निर्भर ॥
आठो अग करि अति बलो, पाले जे समकित सार ।
जिन-सेवक पदमो कहे, धन धान्य ते अवतार ॥६८

अथ ढाल नरेसुआनी

समकित गुण इम वणवीए, नरेसुआ, प्रतिमा सुणो हवे भेद ।
दर्शन नामे निर्मली ए, नरेसुआ, जिम होय कर्म-तणो छेद ॥१
सात विसन दूरे टाली ए, नरेसुआ, पालीये अष्ट मूल गुण ।
श्रावक सर्वक्रिया माहीए, नरेसुआ, दर्शन धारो निपुण ॥२
द्यूत मास सुरा पान ए, नरेसुआ, वेश्या सग आखेट ।
चोरी पर नारी सेवा ए, नरेसुआ, सप्त विसन पाप मूल ॥३
जूआ खेलें योगी थया ए, नरेसुआ, पाडव हुआ राज्य-भ्रष्ट ।
द्यूत व्यसन दुख देइ ए, नरेसुआ, प्रथम नरकनें कष्ट ॥४
मास-लोलुपी पाप करे ए, नरेसुआ, जीव तणा सघार ।
वक राजा ए बापडो ए, नरेसुआ, दुर्गति सहे दुख भार ॥५
मद्यपान मति विहवल ए, नरेसुआ, न वि जाणे हेया हेय ।
नयर सु यादव क्षय गयो ए, नरेसुआ, मित पामी मद्य एह ॥६
वेश्या सगे पाप उपजे ए, नरेसुआ, अर्थ-हानि, जाय लाज ।
चारुदत्त चचल पणे ए, नरेसुआ, हार्यो निजघर-काज ॥७
आहेडे आरम्भ घणो ए, नरेसुआ, पशु अ तणो विणास ।
ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती ए नरेसुआ, सातमी नरक-निवास ॥८
चोरी व्यसन पातक घणा ए, नरेसुआ, विहू लहे पर बध ।
शिवभूति तापस आदि ए, नरेसुआ, पाम्यो दु ख तणो कध ॥९
परनारी दूरे तजो ए, नरेसुआ, तेहथी होइ महापाप ।
रावण धवल श्रेष्ठि ए, नरेसुआ, सही ते नरक-सताप ॥१०
द्यूत व्यसन पहिलो नरक ए, नरेसुआ, मास बीजो श्वभ्र जाण ।
मद्यपान तीजी नरक ए, नरेसुआ, वेश्या-सेवे चौथी जाण ॥११
आहेडे पाचमी नरक ए, नरेसुआ, चोरी कीधे छट्ठी जाय ।
पर नारीइ सातमी नरक ए, नरेसुआ, पचविध दु खते पाय ॥१२

सप्त व्यसन-सम सात नरक ए, नरेसुआ, न वि जाणे हेयाहेय।
जुजूआ सेवे जेह एकेकें विसनें करी नरेसुआ, दुख देखे वहु तेह ॥१३
एक व्यसनिजो नरक हुए नरेसुआ, सातें सेवें जे सात।
तेहना दु खनो पार नही ए नरेसुआ, किम कही जाय ते वात ॥१४
उत्तम वशे जे उपजी ए, नरेसुआ, व्यसन सेवे जे मूढ।
लाधू चिन्तामणि जे त्यजी ए, नरेसुआ, नीच गति पामे ते प्रौढ ॥१५
इम जाणिय भविजन तुम्हो ए, नरेसुआ, जो सुख वाछो देह।
तो विसन सहु परिहरो ए, नरेसुआ, घणु सू कहिए वलि तेह ॥१६
अष्टमूल गुण हवे सुणो ए, नरेसुआ, मद्य, मास मधु त्याग।
ऊँवर बड कठु वरी ए, नरेसुआ, पीपल पीपरी कुराग ॥१७
मद्य माहे जीव वहु मरे ए, नरेसुआ, मद्य पीघे नही सान।
दु ख दुर्गति होइ ए, नरेसुआ, पापी मद्य कुपान ॥१८
एक विन्दु मद्य तणा ए, नरेसुआ, थाह जो जीव विस्तार।
त्रैलोक्य माहि मावे नही ए, नरेसुआ, किम कह्यो जाइ पाप विस्तार ॥१९
अथाणा सघाणा त्यजो ए, नरेसुआ, अनन्त जीव रस काय।
कुली निगोद वहु ऊपजे ए, नरेसुआ, शास्त्र कही, ते किम खाय ॥२०
दिन विहु पूठे दही छाछ ए, नरेसुआ, वासी न स्वाद-रहित्त।
आछण फूली वस्तु त्यजो ए, नरेसुआ, मद्य-नेम-सहित ॥२१
मास-भक्षण दूरे त्यजो ए, नरेसुआ, मास मरे वहु जीव।
जिह्वा लपट पापी आ ए, नरेसुआ, अधोगति पाडे ते रीय ॥२२
चर्मघाल्या घृत तेल ए, नरेसुआ, जल हीग सरस वस्त।
सरसव शुल्वा धान त्यजो ए, नरेसुआ, दोषते मास समस्त ॥२३
चर्म-जोगे जल रस थकी ए, नरेसुआ, उपजें जीवते सूक्ष्म।
सूर्यकान्त चन्द्रकान्त मणि ए, नरेसुआ, अग्नि जल झरे तेम ॥२४
चर्म पात्रे जल त्यजो ए, नरेसुआ, शौच कर्म नहि योग्य।
तो स्नान तिणें किम कीजिए, नरेसुआ, किम पीजे जल अभोग्य ॥२५
जीव इड थी उपनो ए, नरेसुआ, म्लेच्छ ते चर्वित जाण।
मधु भक्षे सूग ऊपजे ए, नरेसुआ, नीपजे वहु जीव हाणि ॥२६
सात गाम वाले जेतलु ए, नरेसुआ, तेतलु पाप होइ ताम।
मधु विन्दु एक भक्षण करे, नरेसुआ, लोक-प्रसिद्ध एक भाष ॥२७
शरीर घाय व्रण आदि ए, नरेसुआ, नेत्र करण अयोग्य।
औपध काजे मधु त्यजो ए, नरेसुआ, कीजे नही ते प्रयोग ॥२८
पत्र पुष्प शाका त्यजो ए, नरेसुआ, विहु घडी पूठें नवनीत।
काचु दूध नीर त्यजो ए, नरेसुआ, भागो नेम-सहित ॥२९
काचा गोरस-मिश्रित ए, नरेसुआ, त्यजो ते द्विदल अन्न।
वरसाले अन्न दरया ना ए नरेसुआ त्यजो ते जिन मासी मन्न ॥३०

श्रावक व्रत तरुतणा ए, नरेसुआ, पीठ बध गुणमूल।
यत्न करो घणु ते तणो ए, नरेसुआ, दृढपणें अनुकूल ॥३१
सप्त व्यसन जे परिहरे ए, नरेसुआ, धरें जे मूलगुण अष्ट।
प्रथम प्रतिमा ते सहित ए, नरेसुआ, दर्शन नामी अभीष्ट ॥३२
जल गालण भेद सुनो ए, नरेसुआ, हृदय थई सावधान।
जे जाण्या विण जीवने ए, नरेसुआ, हुए ते बहु परिज्यान ॥३३
गाढो नूतन चीरज ए, नरेसुआ, दीर्घ अगुल छत्तीस।
दुगुणो चीर ते कीजिए ए, नरेसुआ, विस्तारे चौवीस ॥३४
विहु-विहु घडी इ जल गालिए, नरेसुआ, दिन पर ते विहु-वार।
कोमल परिणाम कीजिए ए, नरेसुआ, जीव जत्न गुणवार ॥३५
जल-बिन्दु एक माहि ए, नरेसुआ, असख्यात जीव होय।
भमर जेम वडो जो थाइ ए, नरेसुआ, त्रैलोक्य न वि माइ सोय ॥३६
अणगल नीर किम पीजिइ ए, नरेसुआ, जीव तणो होइ भक्ष।
त्रस भक्ष जो कीजिए, नरेसुआ, तो किम मूल गुण दक्ष ॥३७
काचो नीर न पीजिइ ए, नरेसुआ, पाणी गल्यो तत काल।
पवित्र भाजने ते घालिइ ए, नरेसुआ, माहे न रहे पक-सेवाल ॥३८
बेहडा कसेलो कुछठ ए, नरेसुआ चूर्ण करी पवित्र।
अधिको ऊनो न वि मूकिइ ए, नरेसुआ, निरति करीइ विचित्र ॥३९
वर्ण रुडो जव देखिइ ए, नरेसुआ, तव ग्राहीये ते नीर।
प्रासुक जल जले करो ए, नरेसुआ, प्रमाद छाडी सरीर ॥४०
गल्या जल प्रासुक पछे ए, नरेसुआ, प्रासुक पहर ते दोय।
अतिउष्ण आठ पहर लगे ए, नरेसुआ, पच्छे अ सम्मूर्च्छिम होय ॥४१
अनगल स्नान न कीजिइ ए, नरेसुआ, न वि धोइ ए ते वस्त्र।
साबु जो जल माहे पडे ए, नरेसुआ जलचर ने शस्त्र ॥४२
इम जाणि जल-जत्न करो ए, नरेसुआ, जीव-जत्ने दया होय।
जिहाँ दया तिहाँ धमज ए, नरेसुआ, धर्म निहाँ सुख जोय ॥४३
धर्मे सुर नर वर पद ए, नरेसुआ, धर्मे मनवाछित सुक्ख।
ऋद्धि वृद्धि बुद्धि घणी ए, नरेसुआ, धर्मे अनुक्रमे मोक्ष ॥४४
पाणी प्रमादे गाले नही ए, नरेसुआ, जत्न न करे जे सार।
ते पापी अज्ञानि जीव ए, नरेसुआ, भमे ते सर्वहि मझार ॥४५
पाप फले नरक पशुगति ए, नरेसुआ, नर नारी निरधार।
हीन दीन दलिद्री देखिए, नरेसुआ, पापे पर-वश गँवार ॥४६
वहिरा वाडा वोवडा ए, नरेसुआ, खज पग मुका जेह।
अवम विध वियोगीआ ए नरेसुआ पाप तणा फल एह ॥४७
इम जाणी सावधान हो ए, नरेसुआ जो सुख वाछो देह।
तो जल जत्न सदा करो ए नरेसुआ, घणु सु कहिए तेह ॥४८

प्रकाशकीय निवेदन

यह श्रावकाचार सग्रह ग्रन्थ उपासकाध्ययनागका चरणानुयोगका प्रकाशक अनुपम ग्रन्थ है। इसमे सब श्रावकाचारोका सग्रह एकत्रित किया है। श्रावक धर्मका स्वरूप क्या है आत्मधर्मके उपासककी दिनचर्या कैसी होनी चाहिये, परिणामो की विशुद्धिके लिये क्रमपूर्वक व्रत-सयमका अनुष्ठान नितात आवश्यक है इसका विस्तारपूर्वक विवरण इम ग्रन्थका पठन-पाठन करनेसे ज्ञात हो सकता है। स्व० श्रीमान् डा० ए० एन० उपाध्ये ने सब श्रावकाचार ग्रथोकी नामावली भेजकर यह ग्रन्थ प्रकाशित करनेके लिये मूलप्रेरणा दी इसलिये यह सस्था उनकी कृतज्ञ है।

श्रावकाचारके इस पाँचवें भागका सपादन एव हिन्दी अनुवाद श्री प० हीरालालजी शास्त्री ने तैयार करके ग्रथमालाको जिनवाणीका प्रचार करनेमे सहयोग दिया है, जिसके लिये हम उक्त जैनधमसिद्धातके मर्मज्ञ विद्वान्को हार्दिक धन्यवाद समपण करते हैं।

इस ग्रथका मुद्रण कार्य सुचारु रूपसे करनेमे श्री वर्द्धमान मुद्रणालय वाराणसी के सचालकवर्गने सहयोग दिया है इसलिये हम उनका भी आभार मानते हैं।

अतमे इस ग्रन्थका पठन-पाठन घर-घरमे होकर श्रावकधर्मकी प्रशस्त तीर्थप्रवृति अखड प्रवाहसे सदैव कायम रहे यह मगल भावना प्रकट करते हैं।

श्री वालचद देवचद शहा
मत्री श्री जैनसस्कृतिसरक्षक सघ
(जीवराज जैन ग्रन्थमाला, सोलापुर)

रात्रि भोजन दूरें करो ए, नरेसुआ, भेद सुणो हवे तेह ।
सूर्य उग्या घडी विहुं पुठे ए, नरेसुआ, भोजनकाल छै तेह ॥४९
दिवस दोय घडी जव होय ए, नरेसुआ तिं वार पहिलो आहार ।
सूर्य किरण मद दीसइ ए, नरेसुआ, निशा समो तिणि वार ॥५०
सध्या समें जे भोजन ए, नरेसुआ, प्रगट न दीसे भान ।
निशि-आहार ते जाणीइ ए, नरेसुआ, दिवस तणे अवसान ॥५१
अधारे अगामडे ए, नरेसुआ, जिहा नहि गोचर दृष्टि ।
असन तिहा न वि कीजिइ ए नरेसुआ जिहा दीसे नही स्पष्ट ॥५२
प्रमादी जे लोभीया ए, नरेसुआ, ते वाहे निज अक्ष ।
जिह्वा लम्पट वा पडा ए, नरेसुआ, रयणी देखे प्रतक्ष ॥५३
बुवडत्त विम्ब उ तावला ए, नरेसुआ, पशु परि करे आहार ।
भोजन करे ते वाउला ए, नरेसुआ, रुले घणु ससार ॥५४
डस कीट पतगीआ ए, नरेसुआ, वहु जीव पडे सूक्ष्म ।
अन्न रस तक्र माही ए, नरेसुआ, त्रस जीव दीसे केम ॥५५
रात्रें भोजन जो कीजीइ ए, नरेसुआ, तो ते जीव हुइ भक्ष ।
मास-आहार सम ते सही ए, नरेसुआ, दूपण दीसे समक्ष ॥५६
मूढ जे रात्रे जीमिइ ए, नरेसुआ, तेनु सरूप राक्षस जेय ।
जाति-अन्ध सम ते कहीइ ए, नरेसुआ, न वि जाणे हयाहेय ॥५७
तम्बूल सु जल मूकोने ए, नरेसुआ, जो अणसण आथमे सूर ।
भोग्य अशन फल जो लीइ ए, नरेसुआ, तो दर्शन तेहनें दूर ॥५८
रात्रि तणा राध्या जीमिइ ए, नरेसुआ, ते कहिए मूढ गवार ।
स्थूल सूक्ष्म बहु जीव मरे ए, ते नही मूल गुण धार ॥५९
निशा-आहार पापकारी ए, नरेसुआ, नरकगत्ति-अवतार ।
पल्योपम सागर तणा ए, नरेसुआ, दुःख सहे पच प्रकार ॥६०
क्रूर पशूगति ऊपजे ए, नरेसुआ, सप वीछी व्याघ्र व्याल ।
माजार कूकर सूकर ए, नरेसुआ, काक पखी विकराल ॥६१
पापी नीच नरकगति लहे ए, नरेसुआ, हीन दीन दालिद्र ।
अल्प आयु काय रोगीआ ए, नरेसुआ, विकल वियोगी क्षुद्र ॥६२
ए आदे सुर नर तणा ए, नरेसुआ, जे जे दीसे नर वहु दुक्ख ।
निशा आहार तणा फल ए, नरेसुआ, कहिय न पावे सुक्ख ॥६३
इम जाणी जे परिहरे ए, नरेसुआ, रयणी तणो आहार ।
मनवाछित सुखते लहे ए, नरेसुआ, पुण्य फलें गुणधार ॥६४
सुख सयोग सौभागिया ए, नरेसुआ, वुद्धि ऋद्धि सन्तान ।
सुर नर वर पदवी लही ए, नरेसुआ, अनुक्रमे मोक्ष निदान ॥६५
चित्रकूट नयर भलो ए, नरेसुआ, जागरी नामे चडाल ।
निशा भोजननि फल ए, नरेसुआ, विस्मय पामी विशाल ॥६६

सागर श्रेष्ठी कुल उपनी ए, नरेसुआ, पुत्री नामे श्री नाम।
रूप कला लावण्य घणु ए, नरेसुआ, यौवन देखो गुण ग्राम ॥६७
श्रीधर श्रेष्ठी ते वरी ए, नरेसुआ, सुख पामी ससार।
तप करि स्त्रीलिंग छेदीयो ए, नरेसुआ, स्वर्गे लीयो अवतार ॥६८

दोहा

निश्चल नियम जे आचरे, निशा आहार परित्याग। ससार सुख ते अनुभवि, पामे शिवपुर भाग ॥१
सूर्य साखे भोजन करो, दिन प्रति एक वे पार। अरता-फिरता खाइए नही, उत्तम नही आचार ॥२
समकित-सहित सदा धरो, उत्तम मूलगुण अष्ट। विसन भय शल्य गारव त्यजी, दर्शनप्रतिमा अभोष्ट ॥३
दर्शनप्रतिमा इणि परे, वर्णवी गुण वहुधार। व्रतप्रतिमा बीजी सुणो, सक्षेप कहु सुविचार ॥४

अथ ढाल गुणराजनी

साभलो ए व्रत शुभ वार, पच अणु व्रत पालीए, गुणव्रत त्रण प्रकार।
चार शिक्षा व्रत सभलो ए, साभलो ए व्रत शुभ वार ॥१
अहिंसा ए पहिलो अणुव्रत, सत्य व्रत बीजो सही ए।
अचौर्य ए ब्रह्म सुचर्य, सग-सख्या पाचमो कही ए ॥२
थावर ए पच प्रकार यत्न सहित विराधक ए।
गृहस्थ ए श्रावक सार, अणु व्रत आराधक ए ॥३
त्रसघात ए बहु घात जेह प्रमाद विषय सहु परिहरो ए।
बेन्द्री तेइन्द्री चौइन्द्री जीव, पचेन्द्री रक्षा करो ए ॥४
कृमि कींट ए अलसी ए जुल, सख सीपी ना बेइन्द्री ए।
कीडी कुन्थु ए जुआ की देह, माकण आदि तेईन्द्री ए ॥५
दश मशक ए माखी पतग भमर आदि चौइन्द्री ए।
नरक पशु ए माणस देव पच इन्द्री ए त्रस जीव ए ॥६
इणि परे ए उ लखी त्रस, मन वच काय रक्षा करो ए।
कृत कारित ए अनि अनुमोद, नव भेदे यत्न धरो ए ॥७
खडणि ए पीसणी चुल्लि, जलकुम्भी प्रमार्जणी ए।
गृही कर्म ए पच ए सूना, छहु इ द्रव्य उपार्जनी ए ॥८
पीसण ए करीय पवित्र, सुल्या अन्न सोधन करो ए।
जत्न सहित ए कीजे चूर्ण, वासी जत्र न फेरीइ ए ॥९
जोइ पुजीइ ए कजिए जत्न, उखले खण्डण कीजिइ ए।
सुल्या डुल्या ए हुए जे अन्न, तस घाय नवि दीजिए ॥१०
इ धण ए छाणा जेह जीव सोधि तावडे घरीइ ए।
जीव-जयणा ए कीजे, पाक सधुक्षण जतनें करीइ ए ॥११
व्यापार ए कीजे तेह, जेह थी हिंसा न उपजे ए।
अचौय ए सत्य-सहित, विन्हे आरभ न नीपजे ए ॥१२

आरभ थी ए उपजे पाप, वचन द्रोह छद्म घणु ए।
असत्य ए हुइ अन्याय, व्यापार त्यजो ते द्रव्य तणो ए ॥१३
कटोल ए धातुडी पान, साबु मेण महुडा गली ए।
विष लोह कु काष्ट ढोर अस्थि चरम वली ए ॥१४
मद्य मास ए मधु कुचीड, माखण न वि तवावीइ ए।
कण सल ए कवण व्यापार, घाणी न वि कराविइ ए ॥१५
वापी कूप ए द्रह तडाग, खाई न वि खणावीह ए।
कपावीइ ए नहि वन काष्ट, अगष्टिनीमा न चडवाइ ए ॥१६
एह आदि दुर्व्यापार, पाप आरभ उपजे वहू ए।
लाभ न दीसे ए मूल विनास, ते वाणिज्य त्यजो सहु ए ॥१७
उपार्जि ए कष्टे द्रव्य, व्यापार करे ते अति वलो ए।
कुटुम्ब ए लेवते भोग, नरके जाद्र तू एकलो ए ॥१८
इम जाणीय दुर्व्यापार, पापारभ ते परिहरो ए।
हित मित ए न्याय सम्बन्ध, जोग्य वाणिज्य ते अनुसरो ए ॥१९
खडण पीसण चुल्ली, जल स्थान ऊपर कहीइ ए।
देरासर ए समन ऊपर, चन्द्रोपक बाधो सहीइ ए ॥२०
पट् कर्म ए जत्न सहित, सदा कीजे त्रस-रक्षण ए।
जो कीजे ए जीव बहु जत्न, ते अहिंसा व्रत-रक्षण ए ॥२१
चालीइ ए जत्न-सहित, जीव जत्न करि वेसीइ ए।
सोइए ए जत्न सहित, जीभ जत्न करि भासीइ ए ॥२२
जीव जत्न ए करे आरम्भ, अल्प पाप हुए तस ए।
कोमल ए कीजे परिणाम, परिणामे पूण्य जस ए ॥२३
इम जाणिय ए आसन्न भव्य, सर्वदा जीव जत्न करो ए।
जीव जत्ने ए उपजे पुण्य, पुण्य फल स्वर्ग सचरे ए ॥२४
आपीए ए भार सोवर्ण मेरु-सहित्त वसुन्धरा ए।
जीव एक ए दीजिइ दान, ते सम नही कोइ गुणधणी ए ॥२५
वल्लभ ए एणि ससार, जीवितव्य विना अवर नही ए।
ते भणी ए जीव दया दान, जिम किम दीजे सही ए ॥२६
आपण ने ए जो जीववु इष्ट, सो परनें जीववु वल्लभ ए।
तो किम ए लीजे पर प्राण, जीव जत्न करो दुर्लभ ए ॥२७
दया विण ए नही जिन पूज, पात्र दान नही दया विन ए।
तप जप ए ध्यान अध्ययन, दया विण नही कोई गुण ए ॥२८
देव माहि ए जिम जिनदेव, ज्ञान माहे केवल ज्ञान ए।
रत्न माहि ए जिम चिन्तारत्न, तिम दान माहे जीव दया ए ॥२९
जीव दया ए लहे बहु आयु, काय निरोग रूप घणु ए।
पामीइ ए सुख सजोग, भोग वाछित निज भलपणु ए ॥३०

सुर नर ए वर पद होइ, ऋद्धि वृद्धि बुद्धि घणी ए।
जेह जेह ए उपजे सुख, ते सहु फल दया पणें ए ॥३१
तिल सम ए कन्दमूल माहे, जीव अनन्त निगोद भर्या ए।
सूक्षम ए गोचर नहि दृष्टि, केवलज्ञान श्री जिन कह्या ए ॥३२
तिल सम ए कदमूल भक्ष तो ते जोव अनन्त मरे ए।
अल्प सुख ए जिह्वा लोल, बहु जीव ते घात करे ए ॥३३
नरक पशु ए गति अवतार, हिंसा ए पामे ते वापडा ए।
क्षुधा तृषा ए सहेय सन्ताप, जन्मि जन्मि दु खे जड्या ए ॥३४
हीन दीन ए नर दारिद्र, दुखी अ दोर्भागी दोहिला ए।
रोग सोग ए कष्ट वियोग, अल्प आयु ते पामीया ए ॥३५
नर नारी ए हुइ निरधार, बन्ध्या नारी ते सही ए।
एह आदि ए हुअे बहु कष्ट, ते फल पाप हिंसा सही ए ॥३६
इम जाणिय कीजे दया जीव, जिहा दया तिहा धर्म जए।
जिहा धर्म ए तिहा होइ सुक्ख, सुक्ख तिहा शिव पद फल ए ॥३७
नर नारी ए पशु बालक, कर्ण नासा न वि वीधिअे ए।
न वि छेदी ए तस तणा अग, छेद नामे न छेधिअे ए ॥३८
भार बहु ए जे नर ढोर, मानथी अधिक न रोपीइ ए।
बापडा ए पर-वश तेह, भार-मान न वि लोपइ ए ॥३९
मानुष ए पशु ए ह्वाल, अन्न पान न वि रुवीइ ए।
निज पर ए पीडा होइ, ते वित्ती पात मन सोधीइ ए ॥४०
इण परि ए पच अतीचार, जीव दया व्रत तणा ए।
जत्न करो ए टालो निर्दोष, प्रमाद विषय ते जो घणा ए ॥४१
अतीचार ए रहित धरे व्रत, सोल मे स्वर्गे ते उपजे ए।
उत्तम ए नर पद होइ, अनुक्रमे शिव मुख सपजे ए ॥४२
प्रथम ए अणु व्रत एह, जत्न करी पालो सदा ए।
मातग यमपाल नाम, तेह कथा ह्वे साभलो ए ॥४३
सौरम्य ए देश मझार, पोदनपुर नयर वणी ए।
महाबल ए नामे भूपाल, तस पुत्र वलि दुमती ए ॥४४
नन्दीश्वर ए अष्ट दिवस, भूपें अमार आण दीधी ए।
जे कोई ए करसे जीव वध, ते मोकलु जम मन्दिरथी ए ॥४५
राजपुत्र ए बलिकुमार, भक्ष करे मास तणो ए।
वन जाइ ए तेणें मूढ, गूढपणे मीढ्यो हणो ए ॥४६
वलि जाणें ए न वि देखे कोई, जिह्वा लम्पट मास ग्रह्यो ए।
तिण समि ए चम्पा वृक्ष, ऊपर माली दर्प्पि ग्ह्यो ए ॥४७
सन्ध्या समय ए आव्यो नही मेष, राय कहे कुण कारण ए।
पूछियो ए निज कोटवाल, मीढो जुओ के तस मारण ए ॥४८

नही तो ए देऊँ तुम्हे दड, मुझ आज्ञा भाजी किणि ए।
गुप्तचर तल रक्षक ए मुकीया चार, राते घर जइ सुणें ए ॥४९
तिण समे ए माली निज गेह अति अधारे आवीयो ए।
नारी ऊ ए पूछे निजकत, असुरो तु का भावीयो ए ॥५०
मालीय ए कहे सुण वात, राजपुत्र मीढो हण्यो ए।
तिण समे ए रह्यो हुँ झप, मुझने भय घणो उपनो ए ॥५१
एहवु ए सुणी सबध, चर आयी भूपने कह्यो ए।
प्रभात ए पूछ्यो माली तेह, निर्भयपणें ते सहु लह्यो ए ॥५२
तव भूपनें ए उपनो कोप, लोप कीयो आज्ञा तणो ए।
तल रक्षक ए मलावो वार, दुष्ट खट करो घणो ए ॥५३
मातग ए यमपाल नाम आव्या तल वर तस घरे ए।
आवता ए देखी तेह, प्रच्छन्न रह्यो तिणी समे ए ॥५४
तल रक्षक ए पूछी तस नारि किहाँ गयो मातंग आज ए।
नारी कहे ए सुणो कोटवाल, घर नही, गयो निज काज ए ॥५५
तल रक्षक ए कहे तिणी वार, भाग्य नही मातग तणो ए।
राज पुत्र ए मारी ने आज, वस्त्र आभूपण द्रव्य घणो ए ॥५६
तव नारी ए उपनो लोभ, हस्त सज्ञा ते देखाडीयो ए।
घर तणें ए सुणें रह्यो तेह तव वलें तेणें काढीयो ए ॥५७
मातग ए कहे सुणो बात, घात जीव छे मुझ तिम ए।
चौदस ए दिन व्रत्त आज, कीजे कृपा कहो इम ए ॥५८
तल रक्षक ए पाम्या कोप, हठ करी ते लेगया ए।
राय आगल ए कही तस वात, घात नही विस्मय भया ए ॥५९
मातग ए कहे सुणो नाथ हाथ जोडी ऊभो रहो ए।
स्वामी मुझ ए वीनती अवधार, सार नियम कथा लही ए ॥६०
एक दिन ए मुझ डसीयो सर्प, मूर्च्छा आयी धरणी पड्यो ए।
मूकीयो ए हु लेइ समसान, सज्जन मिली घणु रुले ए ॥६१
मुनिवर ए ऋद्धि गुणवत, शरीर-स्पर्श-पवन वले ए।
निर्विष ए हुई मुझ देह, चेतना आयी मूर्च्छा वली ए ॥६२
सावधान ए हुओ तिणि वार, मुनिवर बोल्या कृपावत्त ए।
वधतणो ए मुझ दीया नेम, चौदस एक दिन गुण सत ए ॥६३
ते नियम ए पालु भवतार, मार जीव हण वातणो ए।
गुरु साक्षी ए लीयो जे व्रत, हित जीव सदा घणु ए ॥६४
प्राण त्याजे ए नांव छोडु नेम, प्राणी जन्म-जन्म घणु ए।
दुर्लभ ए जीव दया धर्म, समकारी भूपें सुण्या ए ॥६५
तव कोपे ए कहते भूप, तू चडाल अधम सही ए।
निमल ए श्री जिन धर्म, नेम तुझ योग्य नही ए ॥६६

सुर नर ए वर पद होइ, ऋद्धि वद्धि बुद्धि धणी ए।
जेह जेह ए उपजे सुख, ते सहु फल दया पणें ए ॥३१
तिल सम ए कन्दमूल माहे, जीव अनन्त निगोद भर्या ए।
सूक्षम ए गोचर नहिं दृष्टि, केवलज्ञान श्री जिन कह्या ए ॥३२
तिल सम ए कदमूल भक्ष तो ते जोव अनन्त मरे ए।
अल्प सुख ए जिह्वा लोल, बहु जीव ते घात करे ए ॥३३
नरक पशु ए गति अवतार, हिंसा ए पामे ते वापडा ए।
क्षुधा तृषा ए सहेय सन्ताप, जन्मि जन्मि दु खे जड्या ए ॥३४
हीन दीन ए नर दारिद्र, दुखी अ दोर्भागी दोहिला ए।
रोग सोग ए कष्ट वियोग, अल्प आयु ते पामीया ए ॥३५
नर नारी ए हुइ निरधार, बन्ध्या नारी ते सही ए।
एह आदि ए हुओ वहु कष्ट, ते फल पाप हिंसा सही ए ॥३६
इम जाणिय कीजे दया जीव, जिहा दया तिहा धम जए।
जिहा धर्म ए तिहा होइ सुक्ख, सुक्ख तिहा शिव पद फल ए ॥३७
नर नारी ए पशु बालक, कर्ण नासा न वि वीधिओ ए।
न वि छेदी ए तस तणा अग, छेद नामे न छेधिओ ए ॥३८
भार बहु ए जे नर ढोर, मानथी अधिक न रोपीइ ए।
बापडा ए पर-वश तेह, भार-मान न वि लोपइ ए ॥३९
मानुष ए पशु ए हवाल, अन्न पान न वि रुधीइ ए।
निज पर ए पीडा होइ, ते विती पात मन मोधीइ ए ॥४०
इण परि ए पच अतीचार, जीव दया व्रत तणा ए।
जत्न करो ए टालो निर्दोष, प्रमाद विषय ते जो घणा ए ॥४१
अतीचार ए रहित धरे व्रत, सोल मे स्वर्गे ते उपजे ए।
उत्तम ए नर पद होइ, अनुक्रमे शिव सुख सपजे ए ॥४२
प्रथम ए अणु व्रत एह, जत्न करी पालो सदा ए।
मातग यमपाल नाम, तेह कथा हवे साभलो ए ॥४३
सौरम्य ए देश मझार, पोदनपुर नयर वणी ए।
महाबल ए नामे भूपाल, तस पुत्र वलि दुमती ए ॥४४
नन्दीश्वर ए अष्ट दिवस, भूपें अमार आण दीवी ए।
जे कोई ए करसे जीव वध, ते मोकलु जम सन्निवी ए ॥४५
राजपुत्र ए वलिकुमार, भक्ष करे मास तणो ए।
वन जाइ ए तेणें मूढ, गूढपणे मीढ्यो हणो ए ॥४६
वलि जाणें ए न वि देखे कोई, जिह्वा लम्पट मास ग्रह्यो ए।
तिण समि ए चम्पा वृक्ष, ऊपर माली दीष्ठ रह्यो ए ॥४७
सन्ध्या समय ए आव्यो नही मेप, राय कहे कुण कारण ए।
पूछियो ए निज कोटवाल, मीढो जुओ के तस मारण ए ॥४८

नही तो ए देऊँ तुम्हे दड, मुझ आज्ञा भाजी किणि ए।
गुप्तचर तल रक्षक ए मुकीया चार, रातें घर जइ सुणें ए ॥४९
तिण समे ए माली निज गेह, अति अधारे आवीयो ए।
नारी रू ए पूछे निजकत, असुरो तु का भावीयो ए ॥५०
मालीय ए कहे सुण वात, राजपुत्र मीढो हण्यो ए।
तिण समे ए रह्यो हुँ झप, मुझने भय घणो उपनो ए ॥५१
एहवु ए सुणी सबध, चर आयी भूपने कह्यो ए।
प्रभात ए पूछ्यो माली तेह, निर्भयपणें ते सहु लह्यो ए ॥५२
तव भूपनें ए उपनो कोप, लोप कीयो आज्ञा तणो ए।
तल रक्षक ए मलावो वार, दुष्ट खड करो घणो ए ॥५३
मातग ए यमपाल नाम आव्या तल वर तस घरे ए।
आवता ए देखी तेह, प्रच्छन्न रह्यो तिणी समे ए ॥५४
तल रक्षक ए पूछी तस नारि किहाँ गयो मातंग आज ए।
नारी कहे ए सुणो कोटवाल, घर नही, गयो निज काज ए ॥५५
तल रक्षक ए कहे तिणी वार, भाग्य नही मातग तणो ए।
राज पुत्र ए मारी ने आज, वस्त्र आभूषण द्रव्य घणो ए ॥५६
तव नारी ए उपनो लोभ, हस्त सज्ञा ते देखाडीयो ए।
घर तणें ए सुणें रह्यो तेह तव बलें तेणें काढीयो ए ॥५७
मातग ए कहे सुणो वात, घात जीव छे मुझ तिम ए।
चौदस ए दिन व्रत आज, कीजे कृपा कही इम ए ॥५८
तल रक्षक ए पाम्या कोप, हठ करी ते डोगया ए।
राय आगल ए कहो तस वात, घात नही विस्मय भया ए ॥५९
मातग ए कहे सुणो नाथ, हाथ जोडी ऊभो रहो ए।
स्वामी मुझ ए वीनती अवधार, सार नियम कथा लही ए ॥६०
एक दिन ए मुझ डसीयो सर्प, मूर्च्छा आयी धरणी पड्यो ए।
मूकीयो ए, हु लेइ समसान, सज्जन मिली घणु रुले ए ॥६१
मुनिवर ए ऋद्धि गुणवत, शरीर-स्पर्श-पवन वले ए।
निर्विष ए हुई मुझ देह, चेतना आयी मूर्च्छा वली ए ॥६२
सावधान ए हुओ तिणि वार, मुनिवर बोल्या कृपावत ए।
वधतणो ए मुझ दीया नेम, चौदस एक दिन गुण सत ए ॥६३
ते नियम ए पालु भवतार, सार जीव हृण वातणो ए।
गुरु साक्षी ए लीयो जे व्रत, हित जीव सदा घणु ए ॥६४
प्राण त्याजे ए नांव छोडु नेम, प्राणी जन्म-जन्म घणु ए।
दुर्लभ ए जीव दया धर्म, समकारी भूपें सुण्या ए ॥६५
तव कोपे ए कहले भूप, तू चडाल अधम सही ए।
निमल ए श्री जिन धर्म, नेम तुझ योग्य नही ए ॥६६

भूपति ए दीयो आदेश, नदन मातग मारवा ए ।
क्रोधे ए नही शुद्धि वुद्धि, गुण दोष विचारवाए ।।६७
सेवक ए मिल्या वहु दुष्ट, यष्टि मुष्टि प्रहार करे ए।
वांधीयो ए वलि मातग, मारण लेइ ते सचरया ए ।।६८
विडषन ए वा देई दहु दुष सिसुमार द्रह नाखीउ ए ।
राजपुत्र ए हिंसा पाप दुर्गति दुख ते दाखीया ए ।।६९
मातग ए नेम प्रभाव जल देव आसन कपीया ए ।
जल उपरे ए कमल आसन, तिहाँ मातग आरोपिया ए ।।७०
नीपनो ए जय जयकार, गीत नृत्य वाजित्र घणा ए ।
सुर नर ए करे पुष्प वृष्टि, प्रातिहार्य भूते सुण्या ए ।।७१
निगर्व ए थयो तव राइ, अन्याय कीयो मे मूढपणो ए ।
आपीयो ए मातग पास, क्षमितव्य करे वली-वली घणो ए ।।७२
सुर नर ए देय सनमान, वस्त्र आभूषण आपीया ए ।
मातग ए आण्यो निज गेह, महोत्सव करि जस थापीया ए ।।७३
धन धन्य ए नेम प्रणाम, सुघन धन्य जस घणो ए ।।
जाव जीव ए पालियो नियम निश्चल मन करी आपणो ए ।।७४
इहि लोक ए पामीउ सुख, मरण समाधि साधीयो ए ।
मातग ए पाम्यो देव लोक, महर्धिक पद आराधीयो ए ।।७५
जुओ जुओ ए पुण्य प्रभाव, किहा मातग नीच जाति ए ।
उपनो ए ते देवलोक, ऋद्धि वृद्धि गुण ख्यातिय ए ।।७६
उत्तम ए नरपति वश, बलि कुमार हिंसा करी ए ।
पामीयो ए अपजस दुक्ख, पापे नीच गति अणुसरी ए ।।७७
इमि जाणि ए धर्म उत्तम, उत्तम वन्दो सुरोझीये ए ।
धर्म हाणि ए जाइ नीच गति गुणीअ गुणीनें वुझीये ए ।।७८
धनश्री ए जार कु नारि, जार लक्षीते पापिणी ए ।
मारीयो ए गुणपाल पुत्र, अपकीर्त्ति पामी आपणी ए ।।७९
भूपति ए दीयो बहु दड, खर-आरोहण बिडवण ए ।
धनश्री ए जीव-हिंसा पाप, दुर्गत्ति पामी खडण ए ।।८०

दोहा

जीव दया व्रत निर्मलो मातग नाम जमपाल । स्वर्ग तणो सुख पामीयो, धन धन्य दया गुण माल ।।१
जीव-हिंसा करि पापिणी, धनश्री नामि कुमार । दुख दुरगति ते सही, धिग हिंसा असार ।।२
हिंसा समु कोइ पाप नही, हूवो होसे वर्तमान । दया समो कोइ धर्म नही, एहवो कह्यो जिन भान ।।
इम जाणीय निश्चल करो, दया पालो गुणधार । सुर नर सुख ने भोगवे, पामे मोक्ष भवतार ।।४

ढाल

अहिंसा अणुव्रत वर्णव्यो ए, हवे अ कहुँ सत्य व्रत तो।
बीजो अणुव्रत निमलो ए, थूलपणें जीव हित तो ।।१

झूठा वचन न बोलिये ए, कडुआ कठिण कठोर तो।
कूट कपट कडक सत्य जो ए, मरम मोसा घनघोर तो ॥२
अलिय वयण नवि बोलीये ए छल छद्म वचन द्रोह तो।
परपच पर वचन ए, सच न पाप सदोह तो ॥३
असत्य वाणी तमे परिहरो ए, कूडी साख कुबोल तो।
निन्दा अपजस विस्तरे ए, ते टालो निटोल तो ॥४
पर पीडाकारी वचन, पर-पैशुन्य अपवाद तो।
जिणे बोले अधर्म होइए, तेऊ तजो विसवाद तो ॥५
जो बोले आप पीडिये, ते किम पर सोहाय तो।
निर्लज्जपणें न वि बोलीए, जिणें उपजे पर दाह तो ॥६
तीव्र कोपकारी त्यजु ए, मान मायाने लोभ तो।
राग द्वेष मद उपजे ए, जिणे होइ पर क्षोभ तो ॥७
जिण बोले हिंसा होय ए, उपजे असत्य अपवाद तो।
मरम बोलवाडी त्यजो ए, सूल समी जे भास तो ॥८
जिणें साचे दुख उपजे ए, वध वन्ध हुई परछेद तो।
विष था विष समी तज्यो ए, वेदनाकारी न खेद तो ॥९
अविचार्युं न वि बोलीए ए, न वि दोजे केइतें आल तो।
आर्त्त रौद्र दु ध्यान करी ए, केहतें न दीजे गाल तो ॥१०
आपण झूठू न बोलीये ए, बोलावी जे नही कोई तो।
अनृत न वि अनुमोदीये ए, मन वच कायाइ जोइ तो ॥११
सत्य वचन सदा बोलीये ए, हित मित कारी सिष्ट तो।
जेणें बोले जस होइ ए, आपण पर होइ इष्ट तो ॥१२
असत्य बोले पाप उपजे ए, पापें सहि ते सताप तो।
नरक पशू गति ते लहिए, रहे दुखे अति व्याप तो ॥१३
सत्य बोले पुण्य उपजे ए, पुण्ये होइ बहु सुक्ख तो।
सुर नर वर पद पायीइ ए, कहीये न वि देखे दुक्ख तो ॥१४
इम जाणी सत्य बोलीइ ए, टालीए पच अतिचार तो।
स्थूल सुव्रत तेह तणा ए, हवे सुणो तेह प्रकार तो ॥१५
मिथ्या उपदेश न वि दीजीइ ए, एकान्त होइ जे वात तो।
ते तो न वि प्रकाशीये ए, न वि कीजे तेह वात तो ॥१६
कूट लेख न वि कीजिये ए, तेणें होइ विश्वास घात तो।
थापण मोमो हरीइ नही ए, न्यासापहार ते जाति तो ॥१७
साकार मत्र तुम त्यजो ए, न वि कीजे मरम प्रकाश तो।
पर ईर्ष्या न वि कीजीइ ए, ईर्ष्या पाप-निवास तो ॥१८
इणि परि पच भेद धरो ए, छोडो दोप अतिचार तो।
निर्मल सत्य व्रत पालीइ ए जिम तरीए ससार तो ॥१९

सत्य व्रत किणें पालीयो ए, कहुँ अ तेह व्रतान्त तो।
धनदेव श्रेष्ठि तणो ए, कथा सुणो तुम्हे सन्त तो ॥२०
जम्बूद्वीप सुहावणो ए, मेरु तणी पूर्व विदेह तो।
पुष्कलावती क्षेत्र नाम तो ए, पुडरीकिणी पुरी एह तो ॥२१
धन देव श्रेष्ठी वसे ए, अल्प ऋद्धि तणो नाथ तो।
जिनदेव दूजो श्रेष्ठि ए, बहुधन जन बहु साथ तो ॥२२
एक दिवस ते जिनदेव ए, करवा चाल्यो व्यापार तो।
धन देव साथे लीयो ए, सच कीयो तिणें वार तो ॥२३
वणिज-वित्त जे बाध तो ए, तेह माँहें भाग आधो आध तो।
माहो माँहि ते सच कीयो ए, साखि न कीयो कोई साध तो ॥२४
ए हवु कहो ते सचर्या ए, परदेसें पुण्य पसाइ तो।
द्रव्य घणो उपराजीयो ए, जिनदेव मन लोभ थाइ तो ॥२५
कुशल क्षेम पुरी आवीया ए, धनदेव मागे निज भाग तो।
जिनदेव आपे नही ए, लोभ करे द्रव्य राग तो ॥२६
जिनदेव आपे झूठो बोलीयो ए, अल्प देइ तस वित्त तो।
सत्यवादी धनदेवनो ए, भाग मागे निज हित्त तो ॥२७
माहो माहे झगडो करे ए, बुझे नही निज बुद्धि तो।
प्रजा लोके प्रीच्छ्या नही ए, पछे गया राज-सान्निध्य तो ॥२८
अग्निदेव तिहाँ कीयो ए, सुघ पाम्यो धनदेव तो।
सत्यपणे साहस बल ए, जय पाम्यो ते सेवि तो ॥२९
सत्यपणें अग्नि जल थाइ ए, सतो सर्प पुष्प माल तो।
सत्ये सुर नर पूजा करे ए, सत्ये जय बाल गोवाल तो ॥३०
जिनदेव अशुद्ध होवो ए, राजसत्ता मझार तो।
झूठू बोलें ते बापडा ए, सहु मिली कियो धिक्कार तो ॥३१
तस भूपें न्याय विधि ए, वित्त अल्पावु, तरु सर्वतो।
वस्त्र आभूषण पूजिया ए, लेइ आव्यो घर द्रव्य तो ॥३२
धनदेव जय पामीयो ए, सत्य बोली इह लोक तो।
जस महिमा गुण विस्तर्यो ए, सुख पाम्यो परलोक तो ॥३३
जिनदेव झूठु बोलीयो ए, द्रव्य लीयो सहु तेह तो।
अने वली अपजस पामीयो ए, पार्वे परभव कष्ट तो ॥३४
पर्वत झूठी साख भरी ए, वसु नामे मूढ राइतो।
निंदा अपजस पामीयो ए, सातमे नरकें जाय तो ॥३५
सत्यघोष विप्रतणी ए, पवत वसु भूपाल तो।
तेह कथा तम्हे जाण ज्यो ए, महापुराण विशाल तो ॥३६
झूठू बोलें जे जीवडा ए, भड कहे तस लोक तो।
ख्याति पूजा जाइ तस ए, परभवे दुःख सहे तेह तो ॥३७

इम जाणी सत्य सदा ए, जे बोले सुख खाणि तो ।
सुर नर वर पद भोगवे ए, अनुक्रमे पामे निर्वाण तो ॥३८
अचौय व्रत हवे साभलो ए, तीजो अणुव्रत नाम तो ।
स्थूल पर्णे ते वर्णवु ए, स्तेय विरति गुण ग्राम तो ॥३९
अण आप्पो जे पर तणु ए, चेतन-अचेतन द्रव्य तो ।
आपण पै जे लीजीइए ते चोरी पाप सर्व तो ॥०४
पर द्रव्य जो चोरीइ ए तो होइ विश्वास-घात तो ।
विश्वासघाते हिंसा होइ ए, हिंसाथी पापवन्त होइ तो ॥४१
आपणपे न वि चोरिये ए, चोरी दीजे न वि अन्य तो ।
परलेता द्रव्य देखीये ए, न वि कीजे अनुमित्त तो ॥४२
वाटे पडियो पर द्रव्य ए, थापण वीसरे चित्त तो ।
ते किम्हे न वि राखीये ए, मन वचन काया करी चित्त तो ॥४३
पडी देखी वस्तु बहु मूल्य ए, उलघे न हि,जेह तो ।
तो सहुँ समक्ष लेई मूको ए, पूज्य काज जिन गेह तो ॥७४
चोरी करे पातक बहु ए कूट कपट दुख खाणि तो ।
निन्दा अपजस विस्तरे ए, निजधम गुण होइ हाणि तो ॥४५
वध वधन छेदन करे ए राजा देइ बहु दड तो ।
खर-आरोहण विडवण ए, दुख देखाडे प्रचड तो ॥४६
चोरी आणें पर वस्तु तो ए, जो दीजे लेइ मोल तो ।
माहो माँहि मर्म कही ए, भय देखाडे अतोल तो ॥४७
जो राजा लीधो जाणें ए, तो हरे मूल सहित तो ।
यष्टि मुष्टि प्रहार करी ए, कष्ट पमाड अहित तो ॥४८
जीवितव्यथी वालो घणु ए, धन जाता मूकी प्राण तो ।
तो ते धन किम लीजिये ए, हिंसाकारी ते जाण तो ॥४९
त्रण आदें रत्न लगे ए, सधणी होइ जे वस्तु तो ।
अण पूछे जो लीजिये ए, ते चोरी सम।तुल्य तो ॥५०
ज करता इम जाणीइ ए, पर देखे रखे कोइ तो ।
तेह काज नवि कीजिये ए, कारण विना व्रत जाइ तो ॥५१
धन चोरे तु एक लो ए, धन कुटुम्ब सहु खाइ तो ।
वध वधन सहे तु अकेलो ए, एकलो नरकें जाइ तो ॥५२
विष भखवा सारु सही ए, विष हरे एक भव-प्राण तो ।
चोरी पाप दुख-दाहिलु ए, जनमि जनमि दुख खाणि तो ॥५३
इम जाणिय चोरी त्यजो ए, न्यायविधि करो व्यापार तो ।
हित मित्त सुख कारीया ए, सतोप धरो मन सार तो ॥५४
जे हवु कर्म उदय आपणु ए, ते हवु फल देई सोय तो ।
लाभ-अलाभे समप्रीति ए, नवि कीजे राग द्वेप तो ॥५५

चोरी उपदेश न दीजिये ए, लीजे नही चोरी आणी वस्तु तो।
राजनीति न विलोपी ए, रोपीये प्रगट प्रशस्त तो ॥५६
तुला मान निरता राख तो, अधिक ओछो न वि कीजीइए तो ।
सखर निखर वस्तु मभेल तो, घाट वस्तु न वि दीजिए तो ॥५७
इणि परे पचे भेद लीउ ए, अतीचार दोष टाल तो।
थूल पणें त्रीजो अणुव्रत ए, मन वचन कायाइ सभाल तो ॥५८

दोहा

अचौर्य अणुव्रत आचरी, पच रहित अतिचार। सुर नरवर पूजा लही, श्री वारिषेण कुमार ॥१
श्रेणिक भूपति-नन्दन, चेलणा उरि अवतार।
स्तेय विरती व्रत फल लही, वारिषेण पाम्यो भवपार ॥२
तेह कथा मे पहिली कही, स्थितिकरण अग मझार।
ते सम्बन्ध तिहाँ जाणजो, सक्षेपैं कहियो सार ॥३
जिण-जेणें चोरी आदरी, इहि लोक देखी दुक्ख।
पर भवि ते दुरगति गया, कही न वि पायी सुक्ख ॥४
इम जाणिय चोरी परिहरि, धरइ जे अचौय भवतार।
जिन सेवक **पदमो** कहे, ते पामे भवपार ॥५

भास वैरागी

अचौर्यव्रत इम वर्णवी हा, हवे सुणो शीलव्रत।
चौथौ अणुव्रत उजलो हो, थूल पणें जीव-सहित, हो जीवडा ॥१
ब्रह्मचर्य दृढ पालो, पर-नारी सगति टालो हो, जीवडा।
अग्नि साखे जे नारी वरी हो, तेह सु कीजे सयोग।
काम-रोग शान्ति हेतु हो, सन्तान-काजे सेवा भोग, हो जीवडा ॥२
स्वदार-सन्तोष कीजिये हो, निवृत कीजे परदार।
एह वु अणुव्रत गृहमेधी हो, थूल ब्रह्मचय वार, हो जीवडा ॥३
पर-नारी सहु परिहरो हो, वृद्ध यौवन रूप वाल।
मात बहिन पुत्री समी हो, लेखवो ते सकोमाल, हो जीवडा ॥४
नारी परायी दूरि तजो हो, घृणि भजो तेह सग।
काम क्रीडा न वि कीजिए हो, दोजे नही दृष्टि रग, हो जीवडा ॥५
हास्य वहु आले तजो हो, मूकीए नही निजलाज।
मरम वयण न वि वोलिए हो, मयण चेष्टा तणी काज, रे जीवडा ॥६
वात गोष्ठी सगति तजो हो, झुणि चिन्तु सराग।
रूप निरीक्षण नारी तणो हा, घृणु म चिंतो सोभाग, रे जीवडा ॥७
पर नारी सापणि-समी हो, राग विप विकराल।
दृष्टि विपसम दूर करी हो, साधी वाल गोपाल, हो जीवडा ॥८

पुरुष मन नवनीत समो हो, पर-रामा अग्नि कुज्वाल ।
राग तापि तल तले हो, नर पतग बाले बाल, हो जीवडा ॥९
दूर रहि नारी देखीइ हो, पुरुप मन विनाश ।
जिम कणक काकडि गध हो, वेगे थाइ ते निराश, हो जीवडा ॥१०
हाव भाव विभ्रम करी हो, पुरुप तणो मन पाडि ।
कपट माया मेणो देइ हो, भोला नर रमाड, हो जीवडा ॥११
पर-नारी सगे पाप होइ हो, झटके लोक दे आल ।
निन्दा अपजस विस्तरे हो, भूप दडे ततकाल, हो जीवडा ॥१२
मन वचन कायाइ करी हो, पर नारी सग टाल ।
कृत कारित्त अनुमोदना हो, नव भेदे शील पाल, हो जीवडा ॥१३
वेश्या सग तम्हो परिहरो हो, जेह् वु उच्छिष्ट अन्न ।
रजक शिला-समी सही हो, चरखी ऊच नीच जन, हो जीवडा ॥१४
मास भक्षण करे पापिणी हो, करे ते मद्य कुपान ।
ते वेश्या किम सेवीइ हो, सेवे लम्पट ते खान, हो जीवडा ॥१५
धनवत नर ने आदरे हो निर्द्रव्य करे परिहार ।
द्रव्य काजि ते स्नेह धरे हो, भोला भूला गवार, हो जीवडा ॥१६
जेणे नर वेश्या आदरी हो, ते थया लाज-भ्रष्ट ।
धन यौवन नें गुण तजी हो पाम्या नरक निकृष्ट, हो जीवडा ॥१७
इम जाणी रामा पर तजो हो, छोडो वेश्या तणु सग ।
सधणी निधणी नारी तजो हो, पालो शील अभग, हो जीवडा ॥१८
ब्रह्मचर्य व्रत तणा हो, छोडो पच व्यतिपात ।
तेह भेद हवे साभलो हो, जेह थी पाप-सघात, हो जीवडा ॥१९
पर विवाह पहिलो भेद हो, इत्वरीया-गमन दूजो होइ ।
पर गृहीत अनगृहीत हो, त्रीजो भेद ते जो दूरे, हो जीवडा ॥२०
अनग क्रीडा भेद चौथो हो, अभिनिवेश तीव्र काम ।
इणें दोषे पाप उपजे हो, पच अती चार एह नाम, हो जीवडा ॥२१
पर विवाह न वि कीजीये हो, कीधे न होइ जस पुन्न ।
इत्वरिका दासी जे नारी हो, न कीजे तेह गेह गम्य, हो जीवडा ॥२२
परगृहीत अनगृहीत नारी, तस घर गमन त्यजानि ।
योनि विना अवर अगे हो, अग क्रीडा न वि कीजे, हो जीवडा ॥२३
तीव्र काम जेणें उपजे हो, नीपजे उद्रेक राग ।
तेह वस्तु न वि सेवियें हो, दोप करो परित्याग, हो जीवड ॥२४
इणि परे पच भेद हो, छोडो व्रत अतिचार ।
स्थूल अणुव्रत पालिये हो, नव ब्रह्मचर्य गुणधार, हो जीवडा ॥२५
निर्मल ब्रह्मचर्य जे धरे हो, दृढ मने भवतार ।
ते धन्य ते पुण्यवन्त हो, तेह गुणनो नही पार, हो जीवडा ॥२६

चोरी उपदेश न दीजिये ए, लीजे नही चोरी आणी वस्तु तो।
राजनीति न विलोपी ए, रोपीये प्रगट पशस्त तो ॥५६
तुला मान निरता रारा तो, अधिक ओछो न वि कीजीइए तो ।
सखर निखर वस्तु मभेल तो, घाट वस्तु न वि दीजिए तो ॥५७
इणि परे पनै भेद लीउ ए, अतीचार दोष टाल तो।
थूल पणे तीजो अणुव्रत ए, मन वचन कायाइ सभाल तो ॥५८

दोहा

अचौर्य अणुव्रत आचरी, पच रहित अतिचार। सुर नरवर पूजा लही, श्री वारिषेण कुमार ॥१
श्रेणिक भूपति-नन्दन, चेलणा उरि अवतार।
स्तेय विरती व्रत फल लही, वारिषेण पाम्यो भवपार ॥२
तेह कथा मे पहिली कही, स्थितिकरण अग मझार।
ते सम्बन्ध तिहां जाणजो, सक्षेपें कहियो सार ॥३
जिण-जेणे चोरी आदरी, इहि लोक देखी दुक्ख।
पर भवि ते दुरगति गया, कही न वि पायी सुक्ख ॥४
एम जाणिय चोरी परिहरि, धरइ जे अचौर्य भवतार।
जिन सेवक पवमो कहे, ते पामे भवपार ॥५

भास वैरागी

अचौर्यव्रत इम वणवी हो, हवे सुणो शीलव्रत।
चौथो अणुव्रत उजलो हो, थूल पणे जीव-सहित, हो जीवडा ॥१
ब्रह्मचर्य दृढ पालो, पर-नारी सगति टालो हो, जीवडा।
अग्नि साखे जे नारी वरी हो, तेह सुं कीज सयोग।
काम-रोग शान्ति हेतु हो, सन्तान काजे सेवा भोग, हो जीवडा ॥२
स्वदार-सन्तोष कीजिये हो, निवृत्त कीजे परदार।
एह वु अणुव्रत गृहमेधी हो, थूल ब्रह्मचर्य धार, हो जीवडा ॥३
पर-नारी सहु परिहरो हो, वृद्ध यौवन रूप बाल।
मात बहिन पुत्री समी हो, लेखवो ते सकोमाल, हो जीवडा ॥४
नारी परायी दूरि तजो हो, पुणि भजो तेह सग।
काम क्रीडा न वि कीजिए हो, दोजे नही दृष्टि रग, हो जीवडा ॥५
हास्य बहु आल तजो हो, मूकीए नही निजलाज।
मरम वगण न वि बोलिए हो, मगण चेष्टा तणो काज, रे जीवडा ॥६
वात गोष्ठी सगति तजो हो, सुणि निनुत सराग।
रूप निरीक्षण नारी तणो हो, पुणु म चितो सोभाग, रे जीवडा ॥७
पर नारी सापणि-समी हो, राग विष विकराल।
दृष्टि विषसम दूर धरी हो, नाधी वाल गोपाल हो जीवडा ॥८

पुरुष मन नवनीत समो हो पर-रामा अग्नि कुज्वाल ।
राग तापि तल तले हो, नर पतग वाले वाल, हो जीवडा ।।९
दूर रहि नारी देखीइ हो, पुरुष मन विनाश ।
जिम कणक काकडि गध हो, वेगे थाइ ते निराश, हो जीवडा ।।१०
हाव भाव विभ्रम करी हो, पुरुप तणो मन पाडि ।
कपट माया मेणो देइ हो, भोला नर रमाड, हो जीवडा ।।११
पर-नारी सगे पाप होइ हो, झटके लोक दे आल ।
निन्दा अपजस विस्तरे हो, भूप दडे ततकाल, हो जीवडा ।।१२
मन वचन कायाइ करी हो, पर नारी सग टाल ।
कृत कारित अनुमोदना हो, नव भेदे शील पाल, हो जीवडा ।।१३
वेश्या सग तम्हो परिहरो हो, जेह वु उच्छिष्ट अन्न ।
रजक शिला-समी सही हो, चरवी ऊच नीच जन, हो जीवडा ।।१४
मास भक्षण करे पापिणी हो, करे ते मद्य कुपान ।
ते वेश्या किम सेवीइ हो, सेवे लम्पट ते खान, हो जीवडा ।।१५
धनवत नर ने आदरे हो निर्द्रव्य करे परिहार ।
द्रव्य काजि ते स्नेह धरे हो, भोला भूला गवार, हो जीवडा ।।१६
जेणें नर वश्या आदरी हो, ते थया लाज-भ्रष्ट ।
धन यौवन नें गुण तजी हो पाम्या नरक निकृष्ट, हो जीवडा ।।१७
इम जाणी रामा पर तजा हो, छोडो वेश्या तणु सग ।
सधणी निधणी नारी तजो हो, पालो शील अभग, हो जीवडा ।।१८
ब्रह्मचर्य व्रत तणा हो, छोडो पच व्यतिपात ।
तेह भेद हवे सामलो हो, जेह थी पाप-सघात, हो जीवडा ।।१९
पर विवाह पहिलो भेद हो, इत्वरीया-गमन दूजो होइ ।
पर गृहीत अनगृहीत हो, त्रीजो भेद ते जो दूरे, हो जीवडा ।।२०
अनग क्रीडा भेद चौथो हो, अभिनिवेश तीव्र काम ।
इणें दोषे पाप उपजे हो, पच अतो चार एह नाम, हो जीवडा ।।२१
पर विवाह न वि कीजीये हो, कीवे न होइ जस पुन्न ।
इत्वरिका दासी जे नारी हो, न कीजे तेह गेह गम्य, हो जीवडा ।।२२
परगृहीत अनगृहीत नारी, तस घर गमन त्यजानि ।
योनि विना अवर अगे हो, अग क्रीडा न वि कीजे, हो जीवडा ।।२३
तीव्र काम जेणें उपजे हो, नीपजे उद्रेक राग ।
तेह वस्तु न वि सेविये हो, दोप करो परित्याग, हो जीवड ।।२४
इणि परे पच भेद हो, छोडो व्रत अतिचार ।
स्थूल अणुव्रत पालिये हो, नव ब्रह्मचर्य गुणधार, हो जीवडा ।।२५
निमल ब्रह्मचर्य जे धरे हो, दृढ मने भवतार ।
ते धन्य ते पुण्यवन्त हो, तेह गुणनो नही पार, हो जीवडा ।।२६

चोरी उपदेश न दीजिये ए, लीजे नही चोरी आणी वस्तु तो।
राजनीति न विलोपी ए, रोपीये प्रगट प्रशस्त तो ॥५६
तुला मान निरता राख तो, अधिक ओछो न वि कीजीइए तो ।
सखर निखर वस्तु मभेल तो, घाट वस्तु न वि दीजिए तो ॥५७
इणि परे पचे भेद लीउ ए, अतीचार दोष टाल तो।
थूल पणें त्रीजो अणुव्रत ए, मन वचन कायाइ सभाल तो ॥५८

दोहा

अचौर्य अणुव्रत आचरी, पच रहित अतिचार। सुर नरवर पूजा लही, श्री वारिषेण कुमार ॥१
श्रेणिक भूपति-नन्दन, चेलणा उरि अवतार।
स्तेय विरती व्रत फल लही, वारिषेण पाम्यो भवपार ॥२
तेह कथा मे पहिली कही, स्थितिकरण अग मझार।
ते सम्बन्ध तिहाँ जाणजो, सक्षेपै कहियो सार ॥३
जिण-जेणें चोरी आदरी, इहि लोक देखी दुक्ख।
पर भवि ते दुरगति गया, कही न वि पायी सुक्ख ॥४
इम जाणिय चोरी परिहरि, धरइ जे अचौर्य भवतार।
जिन सेवक **पदमो** कहे, ते पामे भवपार ॥५

भास वैरागी

अचौर्यव्रत इम वणवी हा, हवे सुणो शीलव्रत।
चौथो अणुव्रत उजलो हो, थूल पणें जीव-सहित, हो जीवडा ॥१
ब्रह्मचर्य दृढ़ पालो, पर-नारी सगति टालो हो, जीवडा।
अग्नि साखे जे नारी वरी हो, तेह सु कीजे सयोग।
काम-रोग शान्ति हेतु हो, सन्तान-काजे सेवा भोग, हो जीवडा ॥२
स्वदार-सन्तोष कीजिये हो, निवृत कीजे परदार।
एह वु अणुव्रत गृहमेवी हो, थूल ब्रह्मचय धार, हो जीवडा ॥३
पर-नारी सहु परिहरो हो, वृद्ध यौवन रूप वाल।
मात बहिन पुत्री समी हो, लेखवो ते सकोमाल, हो जीवडा ॥४
नारी परायी दूरि तजो हो, घृणि भजो तेह सग।
काम क्रीडा न वि कीजिए हो, दोजे नही दृष्टि रग, हो जीवडा ॥५
हास्य वहु आले तजो हो, मूकीए नही निजलाज।
मरम वयण न वि वोलिए हो, मयण चेष्टा तणी काज, रे जीवडा ॥६
वात गोष्ठी सगति तजो हो, झुणि चिनुत सराग।
रूप निरीक्षण नारी तणो हा, घृणु म चिंतो सोभाग, रे जीवडा ॥७
पर नारी सापणि-समी हो, राग विप विकराल।
दृष्टि विपसम दूर धरी हो, साखी वाल गोपाल, हो जीवडा ॥८

पुरुप मन नवनीत समो हो पर-रामा अग्नि कुज्वाल ।
राग तागि तल तले हो, नर पत्तग ज्ञाले वाल, हो जीवडा ॥९
दूर रहि नारी देखीइ हो, पुरुप मन विनाश ।
जिम कणक काकडि गध हो, वेगे थाइ ते निराश, हो जीवडा ॥१०
हाव भाव विभ्रम करी हो, पुरुप तणो मन पाडि ।
कपट माया मेणो देइ हो, भोला नर रमाड, हो जीवडा ॥११
पर-नारी सगे पाप होइ हो, झटके लोक दे आल ।
निन्दा अपजस विस्तरे हो, भूप दडे ततकाल, हो जीवडा ॥१२
मन वचन कायाइ करी हो, पर नारी सग टाल ।
कृत्त कारित अनुमोदना हो, नव भेदे शील पाल, हो जीवडा ॥१३
वेश्या सग तम्हो परिहरो हो, जेह वु उच्छिष्ट अन्न ।
रजक शिला-समी सही हो, चरवी ऊच नीच जन, हो जीवडा ॥१४
मास-भक्षण करे पापिणी हो, करे ते मद्य कुपान ।
ते वेश्या किम सेवीइ हो, सेवे लम्पट ते खान, हो जीवडा ॥१५
धनवत नर ने आदरे हो निर्द्रव्य करे परिहार ।
द्रव्य काजि ते स्नेह धरे हो, भोला भूला गवार, हो जीवडा ॥१६
जेणे नर वेश्या आदरी हो, ते थया लाज-भ्रष्ट ।
धन यौवन ने गुण तजी हो पाम्या नरक निकृष्ट, हो जीवडा ॥१७
इम जाणी रामा पर तजो हो, छोडो वेश्या तणु सग ।
सधणी निधणी नारी तजो हो, पालो शील अभग, हो जीवडा ॥१८
ब्रह्मचर्य व्रत तणा हो, छोडो पच व्यतिपात ।
तेह भेद हवे सामलो हो, जेह थी पाप-सघात, हो जीवडा ॥१९
पर विवाह पहिलो भेद हो, इत्वरीया-गमन दूजो होइ ।
पर गृहीत अनगृहीत हो, त्रीजो भेद ते जो दूरे, हो जीवडा ॥२०
अनग क्रीडा भेद चौथो हो, अभिनिवेश तीव्र काम ।
इणें दोषे पाप उपजे हो, पच अतो चार एह नाम, हो जीवडा ॥२१
पर विवाह न वि कीजीये हो, कीवे न होइ जस पुन्न ।
इत्वरिका दासी जे नारी हो, न कीजे तेह गेह गम्य, हो जीवडा ॥२२
परगृहीत अनगृहीत नारी, तस घर गमन त्यजानि ।
योनि विना अवर अगे हो, अग क्रीडा न वि कीजे, हो जीवडा ॥२३
तीव्र काम जेणें उपजे हो, नीपजे उद्रेक राग ।
तेह वस्तु न वि सेवियै हो, दोप करो परित्याग, हो जीवड ॥२४
इणि परे पच भेद हो, छोडो व्रत अतिचार ।
स्थूल अणुव्रत पालिये हो, नव ब्रह्मचर्य गुणधार, हो जीवडा ॥२५
निमल ब्रह्मचय जे धरे हो, दृढ मने भवतार ।
ते धन्य ते पुण्यवन्त हो, तेह गुणनो नही पार, हो जीवडा ॥२६

शीले अग्नि ते जल थाइ हो, शीले सर्प पुष्पमाल।
शीले केशरी मृग थाइ हो, शीले व्याघ्र सियाल, हो जीवडा ॥२७
शीले विष अमृत होइ हो,समुद्र गोष्पद थाय।
शीले वन भवन होइ हो, महिमा कह्यो किम जाय, रे जीवडा ॥२८
शीले शत्रु सहु मित्र थाइ हो, शीले सकट विनाश।
शीले सुर नर पूजा करे हो, शीले अतिचल वास, रे जीवडा ॥२९
इम जाणी शील सदा पालीइ हो, टालो दोष तुरन्त।
शील व्रत किणें पालीयो हो, तेह कहुँ वृत्तान्त, हो जीवडा ॥३०
आरजखण्ड एह रूअडो हो, लाड विषय विशाल।
भृगुकच्छ नयर भलो हो, राजा तिहा वसुपाल, हो जीवडा ॥३१
जिनदत्त श्रेष्ठी तिहा वसे हो, जिनदत्ता स्त्री भरतार।
तस तणी कूखें उपनी हो, पुत्री नीली नाम धार, हो जीवडा ॥३२
रूप यौवन ते सचरी हो, जिनधर्म करे भवतार।
निज सहेली पर वरी हो जिन गेह गई एक वार, हो जीवडा ॥३३
अष्ट भेदे जिन पूजिया हो, जल आदि फलपर्यन्त।
जाप जपी स्तवन भणी हो, कायोत्सग लेइ रही सन्त, हो जीवडा ॥३३
अवर श्रेष्ठि तिहा वसे हो, समुद्रदत्त तस नाम।
सागरदत्ता नारी ते भणी हो, पुत्र सागरदत्त अभिराम, हो जीवडा ॥३५
रूप यौवन ते मडीयो हो, क्रीडा करे अ कुमार।
तें कन्या तेणें दीठी हो, लावण्य गुणह भडार, हो जीवडा ॥३६
स्वर्ग तणी ए अपछरा हो, अथवा नाग कुमारी।
चन्द्रतणी ए रोहिणी ए रोहिणी हो, अथवा खेचर ते नारी, हो जीवडा ॥३७
कन्या रूपें नर मोहीयो हो, आव्यो ते निज गेह।
प्रियदत्त मित्रनें कहे हो, मन तणी वात सहुँ तेह, हो जीवडा ॥३८
निज तातें ते साम्भल्यो हो, साह बोले तिणी वार।
वच्छ, आपण बौद्धधर्मी हो, ते जैन गुणधार, हो जीवडा ॥३९
आपणनें ते लेखवे हो, मातग लोक समान।
तो कन्या तुझ किम दीये हो, ते श्रावक गुणमान, हो जीवडा ॥४०
कपटपणें ते श्रावक थयो हो, पूजे जिन गुरु पाय।
शास्त्र सुणें व्रत आचरे हो, कूट जाण्यो किम जाय, हो जीवडा ॥४१
कन्या मागु तिणे कीयो हो, साधरमी थइ ते माह।
निष्कपटी जिनदत्त श्रेष्ठी हो, जन जाणि कीयो उच्छाह, हो जीवडा ॥४२
ते कन्या तेह नें दीधी हो, परण्यो सागरदत्त।
वहु अर निज घरि आदोआ हो, साचा धम फल सत्य, हो जीवडा ॥४३
मुक्यो तेणे धम जिन तणा हो, वली थयो बौद्ध भक्त।
नारी निज मन चिन्तवे हो, दैवे कीधो अयुक्त, हो जीवडा ॥४४

जिनदत्त श्रेष्ठी इ साभल्यो हो, कन्या धूती गयो धूर्त्त ।
प्रपच रचि विवाही गयो हो, कपट पणे बौद्ध वृत्त, हो जीवडा ॥४५
हा, कन्या रत्न मुझ तणु हो, लेइ गयो बौद्ध भाग ।
जाने समुद्र माहे पड्यो हो, अथवा कूप अथाग, हो जीवडा ॥४६
कन्या रत्न मुझ तणो हो, देवे उदा लीने लीध ।
मिथ्याती घरि काइ पड्यो हो मोटो पातक कीध, हो जीवडा ॥४७
जैन विना निज पुत्री नें हो, मिथ्याती नें जे देय ।
ते अज्ञानी महापापी आ हो, बहु जन्म दुख ते लेय, हो जीवडा ॥४८
कूप माहे घालें वावारु हो, अथवा दीने वारु विष ।
एक भव ते दुक्ख दीये हो, मिथ्याती वहु भव दु ख, रे जीवडा ॥४९
मिथ्याती नें जो दीजिइ हो, तो करे मिथ्यात वृद्धि ।
जिनधर्मी नें जो दीजिइ हो, तो होइ धर्म सन्तान शुद्धि, हो जीवडा ॥५०
जो जैन नें परिहरि हो, द्रव्य तणो करि लोभ ।
मिथ्यादृष्टि नें जो देइए हो, तो होय निजधर्म क्षोभ, हो जीवडा ॥५१
इम जाणी जत्न करी हो, कन्या रत्न मनाख ।
साधर्मी दानज दीजिये हो, अथवा दीक्षा काजे राख, हो जीवडा ॥५२
सुसरो केहो बहु धर्म करो, हो, बौद्ध तणी करो सेव ।
ज्ञानवत गुरु अम्ह तणा हो, परतक्ष जाणें सहु हेव, हो जीवडा ॥५३
भोजन काजे नोतरा हो, आव्या बौद्ध ततकाल ।
एकेकी पगखरी तणो हो, कीधो व्यजन रसाल, हो जीवडा ॥५४
जीम करी ते सचर्या हो, एकेकी खरीउ न वि देख ।
पूछे कहो किहा पगखुरी हो, अरू परू इम जोइ रे, हो जीवडा ॥५५
नीली कहे तम्हे ज्ञानें जोउ हो, निज उदर छै मझार ।
अन्न वमी तिणें जोइयो हो, देख्या खड तिणी वार, हो जीवडा ॥५६
तव लाज्या ते वापडा हो, बौद्ध गया निज मट्ठ ।
बौद्ध मान भग जाणीनें हो, सजन करे तस हट्ठ, रे जीवडा ॥५७
जुदी उ रीते मूकिया हो, रहे ते स्त्री भरतार ।
निश्चल मन नीली तणु हो, धर्म न मूके सार, हो जीवडा ॥५८
कत पिता मणी सहोदरी हो, रोसे दीओ तस आल ।
नीली ए पर नर सेवियो हो, जाणे उवी विषझाल, हो जीवडा ॥५९
हलुअे हलुअे दोष विस्तरे हो, नीली तणो लोक माहि ।
नीली निज कानें साभल्यो हो, कर्म तणा फल चाहि, हो जीवडा ॥६०
जिन-आगल कायोत्सर्ग धरी हो, द्विविध लीयो सन्यास ।
यो दोष टले तो पारणु हो, नही तो प्राण-विनास, रे जीवडा ॥६१
पुर देवी आसन कपीयो, सती य शील प्रभाव ।
अवधिज्ञानें जाणीने हो, नीली पासे देवी आव, रे जीवडा ॥६२

सेनें प्राण तम्हो तजो हो, सती सुणो मुझ बात ।
नयर प्रतोली हु जड़ु हो, आलउ तारु प्रभात, रे जीवड़ा ॥६३
राजा प्रधान श्रेष्टीनें हो, सरखु सुपन देखाड़ि ।
सतो तणें वाम पाय हो, नयर-पोल उघाड, रे जीवड़ा ॥६४
एहवु कहि मन थिर करी हो, देवी गई निज ठाम ।
तिणी रात्रें स्वप्न देख्यु हो, देवाणी पोल उदास, रे जीवड़ा ॥६५
नयर क्षोभ ते साभली हो, रुधी पुरी-पोल चार ।
राजा आदि सहु आवीया हो, रात्रें स्वपन सभार, रे जीवड़ा ॥६६
नयर नारी सहु तेडीआ हो, देवाड्यो वाम पाय ।
प्रतोली न वि उघडी हो, लाजी ते पाछी जाय, रे जीवड़ा ॥६७
पछे सती नीली आणी हो, देवाड्यो डावो कदम ।
चारी पोल तब उघडी हो, लोक तणो गयो भरम, रे जीवड़ा ॥६८
जय जयकार तब नीपनो हो, देव करे पुष्प वृष्टि ।
सयल सती माहे शिरोमणि हो, नीली सती उत्कृष्ट, रे जीवड़ा ॥६९
वस्त्र-आभूषण भूप दीया हो, पुहती कीधी निज गेह ।
गीत नृत्य महोच्छव करे हो, कलक ठल्यो सहु तेह, रे जीवड़ा ॥७०
इहि लोके सुर पूजा लही हो, परलोके पायी पद देव ।
शील व्रत फल्या सती हो, नीली जस गुण हेव, रे जीवड़ा ॥७१
सती सीता शील बल हो, अग्निकुड जल पूर ।
सूरजें पण पूजा कही हो, सोलमे स्वर्ग हुओ सुर, रे जीवड़ा ॥७२
द्रौपदी चन्दन बाला आदि हो, शीलतणा फल जोइ ।
इहि लोके जस गुण पायीने हो, परलोके देव पद होइ, रे जीवड़ा ॥७३
सुदर्शन श्रेष्ठी भलो हो, तेहनो गुण प्रसिद्ध ।
सुर नर पूजा पायीने हो, शील फल हुवो सिद्ध, रे जीवड़ा ॥७४
जयकुमार सेनापति हो, शील प्रशसा इन्द्र कीध ।
देव आदी परीक्षा करी हो, जस कीर्ति जय लीध, रे जीवड़ा ॥७५
सुकेत श्रेष्ठी आदें करी हो, जिणें जिणे शील पाल ।
सुर पूजा महिमा लही हो, ससार तणा दु ख टाल, रे जीवड़ा ॥७६
तेह कथा तमे जाण ज्यो हो, जिन शासन मझार ।
शील महिमा किम वणवु हो, किम कह्यो जाइ पार, रे जीवड़ा ॥७७
शील जिणे न वि पालीयो हो, तेह तणी कहु वात ।
जमदडी माता शिवा हो, भूपे कियो तस घात, रे जीवड़ा ॥७८
दु ख देखि दुर्गति गयो हो, जमदडी कोटवाल ।
लपटपणे माता सेवी हो, पाम्यो वहु कष्ट जाल, रे जीवड़ा ॥७९
रावण तिहु खडे राजीया हो, सीता तणे अभिलाप ।
निन्दा अपजस पायीयो हो, पाम्यो नरक निवास, रे जीवड़ा ॥८०